

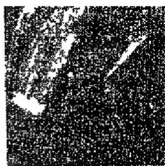
इन्दिरा गाँधी
बहुआयामी व्यक्तित्व





जवाहरलाल नेहरू और कमला नेहरू बेटी इन्दिरा के सा





श्रावणी मुखर्जी

दिरा गाँधी

हुआयामी व्यक्तित्व



प्रकाशक : त्रिमूर्ति प्रकाशन
सी-8/174, यमुना विहार,
दिल्ली-110053
आवरण : विवेक कौशिक
हिन्दी संस्करण : प्रथम, 2004
शब्द-संयोजन : राजेश लेज़र प्रिंट्स
शाहदरा, दिल्ली-110032
मुद्रक : बी. के. ऑफसेट,
नवीन शाहदरा, दिल्ली-32
ISBN 81-901528-0-7

मूल्य : 250.00

अनुक्रम

दो शब्द

यहाँ भारतीय नदियो का उद्गम है। पर्वतीय भूखण्डों मे जन्म लेती वे उतनी ही स्वच्छ होती है, जितने निष्कलुष नवजात शिशु इस ससार में आते हैं। कलकल करते निर्मल झरने ढलानो को पार करते हुए मैदानो मे उतरते हैं, विशाल दूरियॉ पार करते हुए वे गहरी-चौडी जलधाराओ का रूप धारण करते है, जो मद गति से वहती हैं और थक-हारकर अपनी यात्रा के अन्त में महासागर मे विलीन हो जाती हैं।

प्राचीन काल में उत्तर की दिशा से हिमालय की तलहटी पर आकर बसे लोगो मे नेहरू वंश अस्तित्व में आया था।

दो सौ वर्ष से अधिक समय पहले उस वंश का एक मेधावी पूर्वज आलीशान मुगल दरबार में यश एवं सुख की तलाश में कश्मीर की पहाड़ी वादी से उतरकर मुगल साम्राज्य की राजधानी दिल्ली पहुँचा था।

इन्दिरा नेहरू (गॉधी) की उन्मुक्त मुस्कान उम्र-भर सूर्यस्नात कश्मीर की कोमल धूप की छाप लिये रही और उनके आकर्षक मुखमण्डल पर निष्कपट खुली दृष्टि तथा गरिमा, पश्चिमी और पूर्वी जातियों के लक्षणों का मनमोहक मेल नजर आता था।

वह नर्तकी बनना चाहती थी, फिर उन्होंने लेखिका के रूप मे विख्यात होने का सपना देखा, मगर उनके भाग्य मे तो कुछ और ही लिखा था। कठिन सघर्ष और अग्नि-परीक्षाओं से भरपूर जीवन की द्वन्द्वात्मकता ने उनमे राजनीतिक कार्यकर्ता की असाधारण योग्यताओ को निखार दिया, उन्हें महान् एशियाई देश के नेतृत्व की 'हिमालय सदृश' बुलन्दियों पर पहुँचा दिया।

इन्दिरा गॉधी भारत के सभी बच्चो का पेट भरने, देश के सदियों से चले आए पिछड़ेपन का अन्त करने, उसकी जनता की गरीबी हटाने का सपना जीवन-भर अपने दिल मे सँजोये रही और उस स्वप्न को मूर्तरूप देने की चेष्टा करते हुए उन्होने लम्बा और कठिन मार्ग तय किया।

स्वतन्त्र, एकजुट तथा प्रजातन्त्रीय भारत के निर्माण के हेतु वह सदा अपना सर्वस्व न्योछावर करने को तत्पर रहीं ताकि देश में साम्प्रदायिक द्वेष के लिए कोई स्थान न हो और सभी भारतवासियों की एकजुट, स्वाधीन और शक्तिशाली मातृभूमि महान् राष्ट्रीय आदर्शो से देदीप्यमान् रहे।

इस महान् लक्ष्य हेतु वह नवोदित भारत के विदेशी और आन्तरिक

शत्रुओ का सदा साहसपूर्वक विरोध करती रही, उन शक्तियों का पर्दाफाश तथा भर्त्सना करती रही, जो आज भी राष्ट्रो की शान्ति और स्वतन्त्रता को खतरे मे डालती हे।

उदात्त राजनीतिक नैतिकता, अन्तर्राष्ट्रीय मामलों मे ईमानदारी और निष्कपटता के कारण उन्हें भारतीय जनगण, संसार के सभी सद्भावनापूर्ण लोगों के बीच सम्मान और महान् प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। मगर इन्दिरा गाँधी के अनेक शत्रु भी थे। विश्व शान्ति तथा अपने देश की सुख-समृद्धि के उदात्त विचारो से प्रेरित इस निर्भीक महिला के खिलाफ उन्होंने साजिश का जाल बुना था।

तरह-तरह की अविराम धमकियो का इन्दिरा गाँधी ने शान्त भाव से और साहसपूर्वक उत्तर दिया—"जीने की लालसा आज जितनी प्रबल मेरे मन मे है पहले कभी नही थी और वह मुझे ये पंक्तियाँ लिखने के लिए बाध्य करती है, जो एक प्रकार का वसीयतनामा है।

"अगर हिसा के फलस्वरूप मेरी मृत्यु हो गई, जिसकी कुछ को आशंका है ओर जिसका कुछेक मसूवा वना रहे है, तो मैं नहीं, बल्कि भाडे के हत्यारो के विचार और कृत्य हिंसा के शिकार होगे, क्योंकि दुनिया मे ऐसी कोई भी कुत्सित घृणा नहीं है, जो अपनी जनता और देश के प्रति मेरे प्रेम को कुण्ठित कर सके, ठीक इसी तरह कोई भी ऐसी शक्ति नहीं है, जो मुझे देश को आगे बढ़ाने का अपना लक्ष्य छोड़ने को बाध्य कर सके।

"एक कवि ने अपनी प्रियतमा के बारे में कभी कहा था—'तुम्हारे सामने मै अपने को कितना तुच्छ महसूस करता हूँ।' भारत के प्रति मेरे मन मे ऐसी ही भावना बसी है।

"मैं यह नहीं समझ पाती कि भारतीय होते हुए इस पर गर्व भला कैसे न किया जाए—हमारी समृद्ध विरासत की विविधता इतनी अधिक है, हमारी जनता की आत्मा इतनी महान् है कि दरिद्रता और दुःख-कष्टो के बीच भी वह अपनी आस्था पर अडिग रहती है और हॅसते-हॅसते सभी मुसीबतों व अपार दुःख-कष्टों का सामना कर सकती है।"

31 अक्टूबर, 1984 को दिल्ली में गोलियाँ चली। हरी घास पर भारत की सुपुत्री का गरम रक्त वहा। रक्त गिरा, प्रभातकालीन ओस की बूँदों से घुल-मिल गया, धरती में समा गया, ऊँचे-ऊँचे पेड़ों की गहरी जडों तक पहुँचा, जिनकी शीतल छाया मे वह अपने जीवन के अन्तिम दिन तक जनसाधारण से मिला करती थी, जो देश के कोने-कोने से उनके निवास-स्थान पर पहुँचा करते थे।

सारा भारत [illegible] कर उठा [illegible] दुनिया के देशों और महाद्वीपों पर मातम छा

उस भूमि से उन्हे अगाध प्यार था, वह सपना देखती थीं कि कभी यहॉ आकर सदा के लिए बस जाएँगी, लकडी के छोटे-से घर मे बचे-खुचे वर्ष शान्ति से बिताएँगी, वह चाहती थी कि पहाडो से चली आई हवा शाश्वत हिम की महक से सुवासित रहे और चारो ओर फूल-ही-फूल खिले हुए।

परन्तु वह जनगण की शान्ति और सुख की खातिर लडी। जीते-जी उनके हृदय मे सघर्ष की आग धधकती रही। विश्राम और पुष्पो का तो वह केवल सपना देखती थी।

'इन्दिरा गॉधी जिस तरह जीयी, उसी तरह उन्होंने दम तोडा : निर्भीक होकर, अडिग साहस के साथ,' उनके पुत्र प्रधानमन्त्री राजीव गॉधी ने जनता के नाम सन्देश मे कहा—"उनका नाम, उनके कृत्य अमर है।

"इन्दिरा गॉधी हिमालय पर आसक्त थी, उसके प्रति श्रद्धा-भाव रखती ओर उससे शक्ति पाती थीं। वह अपने को पहाड़ों की बेटी मानती थीं। जब कभी उनसे पूछा जाता था कि वह कहॉ रहना चाहती है, वह जवाब देती कि हिमाच्छादित पहाडो की गोद मे। अन्य लोगो को खडी चढाइयॉ थका देती हैं। इन्दिरा गॉधी को उनसे ताजगी और स्फूर्ति मिलती थी।

"एक बार उन्होने कहा था कि हम भारतवासियों के लिए हिमालय मात्र विशाल पर्वतमाला नही है। यह भारतीय लोकमानस का अभिन्न अंग, सनातन मूल्यो का प्रतीक है। पर्वतो की विशाल भव्य छटा, ऊँचे शिखरों की शान्ति हमें अपने को और अपनी चिन्ताओं को विशिष्टपरिप्रेक्ष्य मे देखने में सहायता देती है। विनाश और सृजन करने की अपनी सभी क्षमताओ के बावजूद हम कितने तुच्छ और अक्षम हे, ब्रह्माण्ड के अनन्त विस्तार मे हम कितने असहाय हैं। लेकिन फिर भी हमारे पास वह है, जो हमारा नैसर्गिक गुण है—अजेय मनोबल। यह वह गुण है, जिसके फलस्वरूप लोग असम्भव को सम्भव बना देते है।

"इन्दिरा गॉधी ने यह कामना प्रकट की थी कि मृत्यूपरान्त उनकी राख हिमालय में बिखेर दी जाए। अपनी माता की अस्थियॉ मै इस महान् हिम साम्राज्य को अर्पित करता हूँ। गगा के स्रोत के निकट पावन गगोत्री मे, हिमालय के ऊपर फूल बिखेरे जाऍगे और इस प्रकार इन्दिरा गॉधी की इहलौकिक जीवन-यात्रा समाप्त हो जाएगी। मगर जनता का जीवन अभियान जारी है। आइए, साहस और लक्ष्य के प्रति निष्ठा के साथ सब मिलकर अपने मार्ग पर दृढतापूर्वक तथा विश्वासपूर्वक कदम बढाऍ।"

—प्रकाशक

1

परिवार और काल

19 नवम्बर, 1917 को प्राचीन इलाहाबाद नगर मे भारत के प्रसिद्ध नेहरू कुटुम्ब मे स्थानीय ज्योतिषियो के अनुसार 'कोमलता' और 'जीवन्त शक्ति' के शकुन मे एक लडकी का जन्म हुआ।

हर परिवार में बच्चे का जन्म असाधारण घटना होती है। नवजात शिशु का जीवन कैसा होगा ? स्वभावतया मन में यह सवाल पैदा होता। लेकिन उसका जवाब देने का साहस भला कौन कर सकता है सिवाय किसी ज्योतिषी, नजूमी के ? मनुष्य का भाग्य क्या है ? परिस्थितियो का संयोग ? अनपेक्षित अवसर, पूर्वनिर्णीत अवश्यम्भावी परिणाम या आकस्मिकताओ का फेर ? अपने सपने को साकार बनाने के लिए मनुष्य के सोद्देश्य कार्यकलाप और साथ ही इन सभी सांयोगिक तत्त्वों का मेल ? जो भी हो, कार्यकरण के अनन्त फेर मे उसके भाग्य का पूर्वानुमान कैसे लगाया जाए ?

मगर प्रत्येक मानव का अपना विशिष्ट भाग्य होता है। इस ससार मे आकर लोग अपना जीवन जीते है, अपना अनन्य मार्ग तय करते है। दो बिलकुल एक-समान व्यक्ति दुनिया मे कभी नही हुए है, कभी नहीं होगे। ध्यान देने की बात है कि यह असमानता न केवल शक्लसूरत में, बल्कि जो कही अधिक महत्त्वपूर्ण है, प्रत्येक व्यक्ति के अनुपम आन्तरिक ससार में, भावनाओ, मानसिक व बौद्धिक क्षमताओ, स्वभाव, रुचियो-रुझानो, अलग-अलग दृष्टिकोणों के मौलिक समागम मे भी विद्यमान होती है। परन्तु सभी लोग मानव-जाति के अंग है और मनुष्य होने के नाते प्रत्येक व्यक्ति की सर्वोपरि पूर्वनियति इन सबको सूत्रबद्ध करती है।

नवजात बालिका और उसके सभी समवयस्को के भाग्य मे मनुष्य जाति की ऐसी पहली पीढ़ी बनना बदा था, जिसे मानव समाज के इतिहास के युगान्तरकारी दौर मे—समाजवादी तथा राष्ट्रीय मुक्ति क्रान्तियों, ससार में नयी समाजवादी सभ्यता के आविर्भाव के काल में—जीना था।

सुखी और खुशहाल परिवार मे शान्त-निश्चिन्त जीवन का आनन्द भोगना नवजात शिशु के भाग्य मे नही लिखा था, हालॉकि शुरू-शुरू में यही सम्भव लगता था।

हिन्दू रीति के अनुसार की पत्नी कमला को प्रसव-काल के लिए

मायके जाना था। लेकिन चिन्ताशील ससुर मोतीलाल नेहरू को यह मजूर नही था और उन्होंने आग्रह किया कि बहू उनके घर में ही रहे, जहाँ उसकी अच्छी देखभाल की जा सकती थी और आधुनिकतम डॉक्टरी सहायता उपलब्ध थी। इसके सिवा, हिन्दूधर्म के अनुसार, बच्चे का भाग्य इस बात पर निर्भर होता है कि उसने कैसे घर मे जन्म लिया है। प्राचीन ग्रन्थ में लिखा हुआ है कि 'कुशल शिल्पियो द्वारा घर समतल स्थान पर बनाया जाना चाहिए। उसकी खिड़कियाँ पूर्व अथवा उत्तर की ओर होनी चाहिए, उसे सुन्दर और मजबूत होना चाहिए।'

मोतीलाल नेहरू का आलीशान आनन्द भवन इन अपेक्षाओ के सर्वथा अनुरूप था। उसे पवित्र स्थान मे निर्मित किया गया था, जहाँ, दन्त-कथा के अनुसार, कभी राम अपने भाई भरत से मिले थे। पुराणों के अनुसार, वहाँ 'रामायण' के रचयिता महर्षि वाल्मीकि रहते थे।

वेदों के निर्देश के अनुसार, एक अनुकूल दिन में, जब सूर्य मंगलकारी नक्षत्र राशि मे पहुँचा, प्रसूता के लिए घर के उत्तरी भाग में विशेष कमरा चुन लिया गया। हिन्दू धर्मपंथी उत्तरी तथा पूर्वी दिशाओं को पवित्र एव सुखमय मानते हैं और दक्षिणी दिशा तथा पश्चिमी दिशा को मृत्यु तथा दुर्भाग्य सूचक माना जाता है।

प्रसूता के ससुर और पति अंधविश्वास अथवा पूर्वाग्रहों से बहुत दूर थे, मगर वे परिवारजनों की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाना नही चाहते थे और धर्मनिष्ठ महिलाओ तथा बहुत-से सगे-सम्बन्धियों के धार्मिक संस्कारो में विघ्न नहीं डालते थे, जिन्होने पूजा-पाठ किया और बच्चे के जन्म के सम्बन्ध मे हिन्दू धर्म मे निर्दिष्ट अनुष्ठान पूरे किए। मगर धार्मिक संस्कारों तथा तैयारियों और दौड़-धूप के बावजूद घर मे तनाव का वातावरण बना रहा। प्रसूता की सास स्वरूप रानी भगवान् से प्रार्थना करते हुए मन-ही-मन चिन्तित और आशंकित रहती थी—"बहू इतनी कमजोर है। आपत्ति आने से भगवान् बचाए। राम, राम !" घर में चहलकदमी करते हुए वह बुदबुदा रही थीं।

आखिर को उस हाल में, जहाँ परिवारजन तथा सगे-सम्बन्धी इकट्ठे हुए थे, स्कॉटलैंडी डॉक्टर ने प्रवेश किया। उसके बिखरे हुए लाल बाल आग-जैसे उज्ज्वल थे और होठो पर ऐसी उन्मुक्त मुस्कान खेल रही थी, जैसी सूर्य के बाल-चित्रों मे होती है। उसके बड़े बलिष्ठ हाथ कपड़े में लपेटे हुए नन्हे कोमल शरीर को थामे हुए थे।

"यह लीजिए, सर," सन्नाटे को भग करके डॉक्टर ने बुलन्द आवाज में कहा और उत्तेजित, घबराए हुए पिता की ओर बच्चे को बढ़ा दिया। "लड़की है.. जी हाँ, स्वस्थ और फूल-सी सुन्दर लड़की।" और डॉक्टर का मुँह फिर से हार्दिक मुस्कान से आलोकित हुआ।

"मगर...लड़का होने वाला था...हमें लड़के की प्रतीक्षा थी," स्वरूप रानी के मुख से ये शब्द निकले।

दादा मोतीलाल ने तेवर चढ़ाए कड़े स्वर में बोले 'यह मेरे पुत्र

की पुत्री है और वह हजार पुत्रों से अच्छी होगी।"

पल-भर की निराशा से सँभलकर स्वरूप रानी ने आदर और कृतज्ञतापूर्वक सहमति मे सिर हिलाया। उनकी ऑखे डबडबा आई। क्षण-भर का मौन भंग हुआ और हर्षोल्लास का बॉध टूट गया। तालवाद्य बज उठे, सितार के तार झंकृत हुए, अगरबत्तियो की सुगन्ध फैल गई, आरती उतारी गई और नवजात बच्ची के लिए मगल कामना करते हुए सभी लोगों ने हवन-कुण्ड में चावल और तिलहन डाले। ब्राह्मणों ने मन्त्र पढे। आनन्द भवन के स्वामी मोतीलाल नेहरू ने उपस्थित लोगो को कीमती उपहार भेंट किए। एक तरफ खडे, सहमे हुए और सुखी जवाहरलाल को सभी ने बधाइयॉ दी।

कहने की आवश्यकता नही कि स्वरूप रानी वहुत चाहती थी कि उनके बेटे की पहली सन्तान लडका हो—वेदों के अनुसार, तब मोतीलाल का इकलौता पुत्र जवाहरलाल वश-वृद्धि के कर्तव्य से निवृत हो जाता। "खैर, कोई बात नही," वह अपने को सान्त्वना देती थीं—"वेदो मे यह भी कहा गया है कि पुत्री का जन्म तथा विवाह पिता का धार्मिक सुकृत्य है।"

प्रथा के अनुसार, दस दिन की अवधि पूरी होने पर लडकी का नामकरण हुआ। ब्राह्मण की पुत्री का नाम असम संख्यक मात्राओ से बनना चाहिए, सहजोच्चारित तथा कर्णप्रिय होना चाहिए और उसके अन्त में लम्बी स्वर-मात्रा होनी चाहिए।

लडकी के मॉ-बाप से परामर्श करके दादा ने अपनी स्वर्गीय मॉ—बहुत गुणी, सुन्दर, बुद्धिमान, साहसी, दृढ और न्यायप्रिय महिला—के सम्मान मे कन्या को इन्दिरा नाम देने का निश्चय किया। आगे चलकर विधवा बन जाने और पूरी सम्पत्ति से वचित हो जाने, ढेरो कष्टों और परीक्षाओ से गुजरने के बावजूद अपनी अद्भुत अडिगता और कर्मठता की बदौलत इन्दिरा भारतीय समाज मे नेहरू वश का परम्परागत विशिष्ट स्थान सुरक्षित रखने में सफल हुई थी।

इन्दिरा नाम जवाहरलाल को भी अच्छा लगा—पुरातन काल मे भारत इन्दु का देश कहा जाता था और इन्दिरा नाम का लघु रूप भी इन्दु है। भारत में बच्चों को दूसरा नाम भी दिया जाता है और इन्दिरा का दूसरा नाम बना प्रियदर्शिनी।

उन दिनों आनन्द भवन में भारत की लब्धप्रतिष्ठ कवयित्री और जन-नेत्री सरोजिनी नायडू का पत्र आया। जवाहरलाल नेहरू के नाम पत्र में उन्होंने लिखा—"आपकी पुत्री को भारत की नयी आत्मा बनना होगा।"[1] तब उस भविष्यवाणी की पूर्ति बहुत दूर भविष्य की बात थी और कदाचित् दादा को छोड़कर किसी ने भी उन शब्दों को कोई महत्त्व नहीं दिया।

इन्दु के एकाकी बचपन के वर्ष, बाल्यावस्था में गम्भीर निर्णय लेने की आवश्यकता, चिन्ताओ और आशंकाओं के वर्ष अभी आगे थे। अभी तो नेहरू घराने

---

1 Indira Gandhi, *My Truth*, *New Delhi, 1980*

का जीवन सुख-समृद्धि से भरपूर और आनन्दमय था। घर में हमेशा अनेक रिश्तेदार रहते थे और वे सभी सफल-सम्पन्न नेहरू वश के प्रमुख की पौत्री की ओर पूरा-पूरा ध्यान और स्नेह देने को तत्पर रहते थे।

मोतीलाल नेहरू धनी, विशाल हृदय वाले, नेक, विनोदी, दृढसकल्पवान, प्रखरबुद्धिसम्पन्न और हाजिरजवाव व्यक्ति थे। उच्च ललाट, निर्भीक दृष्टि, सीधी नाक, उभरी हुई ठोडी। जवाहरलाल नेहरू ने लिखा कि उनके पिताजी प्राचीन यूनान के किसी सम्राट् की प्रतिमूर्ति थे।

मोतीलाल नेहरू भारतीय राष्ट्रवाद के प्रवर्तकों मे से एक थे। गत सदी के अन्त मे उन्होने भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस की स्थापना में भाग लिया था।

कुल मिलाकर उनके दृष्टिकोण काफी हद तक रूढिवादी थे। मगर प्रौढावस्था के बावजूद उनके विचारों की लाक्षणिकता थी अस्थिरता और अन्तर्विरोध। तर्क-वितर्क की अपेक्षा वह हमेशा सक्रिय कार्रवाइयों को वरीयता देते थे। रूढिवादी मनोवृत्ति का विरोध की भावना से, गरम मिजाज का आत्मनिग्रह से, नैसर्गिक आशावाद का राजनीतिक निराशावाद से, भावुक राष्ट्रवाद का ब्रिटिश परम्पराओ के प्रति लगाव से, अहकार का परोपकारिता से, आर्थिक सूझबूझ का फिजूलखर्ची से अनोखा मेल उनके व्यक्तित्व मे मौजूद था। उदाहरण के लिए, परिवार के खर्च पर कडी नजर रखते हुए, किफायत से काम लेने की कोशिश करते हुए वह समाज मे अपनी प्रतिष्ठा की खातिर बहुत भारी रकमे खर्च करने को तैयार रहते थे।

इन्दिरा के दादा का व्यक्तित्व सजटिल था। मगर अपने पुत्र जवाहरलाल से प्रेम का उनके जीवन मे सर्वोपरि स्थान था। यह विचार एक बार महात्मा गाँधी ने प्रकट किया। उनकी पैनी दृष्टि से यह छिपा नही रहा कि भारत से मोतीलाल का प्रेम प्रत्यक्ष नही, अपितु परोक्ष था, पुत्र जवाहरलाल के प्रति अनुराग के माध्यम से वह प्रकट होता था।

इस असीमित वात्सल्य भाव से नन्ही इन्दिरा लाभान्वित हुई। उसने भी बाल हृदय का स्नेह अपने दादा को दिया। परन्तु जिस तरह पौधे के लिए प्रकाश और हवा जरूरी है, उसी तरह नन्हीं इन्दिरा को भी माँ की कोमल ममता दरकार थी और वह उसे प्राप्त हुई। कदाचित् केवल माँ ही जानती है कि कब और कैसे बच्चे का सिर सहलाया जाए, उसकी ऑखो मे कैसे झॉका जाए, क्या बात कही जाए और किस तरह उसे तसल्ली दी जाए। धर्मपरायण हिन्दू महिला कमला, पतिव्रता और चिन्ताशील माँ स्नेह और कोमलता की जीती-जागती प्रतिमा थी।

कमला सत्रह वर्ष की थी, जब वह जवाहरलाल के साथ विवाह के सूत्र मे बँधी थी। तत्कालीन भारतीय समाज की मान्यता के अनुसार यह आयु विवाह के लिए औसत से अधिक थी।

जवाहरलाल ने अप्रैल, 1912 में पहली बार अपने पिता से कमला का जिक्र सुना। लन्दन भेजे गए पत्र में मोतीलाल ने लिखा कि दिल्ली में कश्मीरी ब्राह्मण

जवाहरमल कौल के घर मे उन्होने उनकी वेटी, तेरह वर्षीया रूपसी को देखा और अपने पुत्र के लिए वह उससे श्रेष्ठ वधू की कल्पना नही कर सकते।

जवाहरलाल तुरन्त समझ गए कि मॉ-वाप ने उनकी मगेतर को खोज लिया हे। उन्हे कोई विशेप उत्साह नही हुआ, मगर ग्लानि भी नहीं हुई। मगेतर का फोटो नौजवान जवाहरलाल को पसन्द आया। पत्रोत्तर मे उन्होने लिखा : "इस रूपवती को देखकर बहुत प्रभावित हुए विना भला कौन रह सकता है। मैं सोचता हूँ कि आपका यह कहना उचित ही है कि मानव का रूप उसके अन्तर्य को प्रतिबिम्बित करता हे, यद्यपि कभी-कभी ऐसा नहीं भी होता।"

भारत मे अल्पायु विवाह, यहॉ तक कि बाल-विवाह भी, वहुत प्रचलित थे, लेकिन ब्रिटेन में सात वर्ष रह चुके और परिवार के प्रति यूरोपीय दृष्टिकोण अपना चुके जवाहरलाल ने अपने पिता को लिखा "दिल्ली की वह युवती मेरे लिए बहुत कम आयु की है। मेरी उम्र दस वर्प अधिक है, यह अन्तर बहुत अधिक है। मै उसके साथ शायद ही उससे पहले विवाह कर सकूँ, जब तक वह 18-19 वर्प की नही हो जाती, अर्थात् 6-7 वर्प बाद।"[1]

जब जवाहरलाल यह पत्र लिख रहे थे, वह लगभग 23 वर्प के हो चुके थे। वह अपनी औपचारिक शिक्षा पूरी कर चुके थे। पिताजी भारी धन खर्च करने को तैयार थे, ताकि पुत्र इग्लैण्ड के सबसे प्रतिष्ठित शिक्षा-सस्थानों में पढ़ सके। पहले लन्दन के निकट हैरो में उन्होने ब्रिटिश अभिजात वर्ग के बालकों के विशिष्ट बोर्डिग स्कूल मे शिक्षा पाई। इस स्कूल के छात्रो मे पिट, पाल्मरस्टन, बॉल्डविन, चर्चिल थे, जिन्होने ग्रेट ब्रिटेन के प्रधानमन्त्रियों का कार्यभार सँभाला था। फिर वह विश्वविख्यात कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी के ट्रिनिटी कॉलेज में पढे और अन्ततः लन्दन के इन्नर टेम्पल वकील एसोसिएशन में शिक्षा प्राप्त की। अब जवाहरलाल के पास प्रमाणपत्र था, जिसकी बदौलत उन्हे वकील की प्रेक्टिस शुरू करने का अधिकार मिला। पुत्र को पिता के पदचिह्नो पर चलना था।

सन् 1912 के शरत्काल मे जवाहरलाल ने दिल में हल्की-सी कसक महसूस करते हुए, लेकिन किसी खास अफसोस के बगैर कुहासे में लिपटे लन्दन से विदा ली और सूर्यस्नात हिन्दुस्तान में वापस लौटे। पिता के घर का प्यार-स्नेह और आराम-सुविधा उन्हें बहुत भायी, लेकिन अपना वतन उन्हें अपरिचित संसार प्रतीत हुआ, जिसकी खोज करना अभी बाकी था। एक बात युवा नेहरू के लिए स्पष्ट थी—यह ससार, जिस रूप में उन्होंने उसे देखा, मानवोचित स्वतन्त्र जीवन के योग्य नही है। अपने देशबन्धुओं की गुलामो जैसी दशा देखकर उनके मन मे तीक्ष्ण ग्लानि पैदा हुई और अदम्य राष्ट्रवादी भावना जागी। उनके लिए अपने पिता के ऑफिस मे काम करना असहनीय हो गया। कुछ कर दिखाने की उत्कट इच्छा चैन की साँस नहीं लेने देती

---

1 *Selected Works of J Nehru*, New Delhi, O--ent Longman Ltd 1972-76

थी और उन्हे यह बिलकुल गवारा न था कि वह "निरर्थक तथा निष्फल रहन-सहन के नीरस छोटे-मोटे कामो के जाल मे फँसते जाएँ।"

दिसम्बर, 1912 में युवा नेहरू ने पहली बार भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के बाँकीपुर अधिवेशन में भाग लिया। पार्टी की सदस्यता स्वतन्त्र थी और इसके लिए केवल इतना ही काफी रहा कि मोतीलाल ने कांग्रेस के कतिपय कर्णधारों से अपने पुत्र का परिचय कराया।

अधिवेशन का वातावरण युवा नेहरू को बहुत अखरा। उसमे नरम विचार रखने वाले कांग्रेस सदस्य इकट्ठे हुए, इतना ही नहीं, वे मुख्यतः अंग्रेजपरस्त थे ओर हिन्दुस्तान को ब्रिटिश साम्राज्य से अलग करने की बात सोचते तक नही थे। ये भारतीय बुर्जुआ, जमीदार और राष्ट्रीय बुद्धिजीवी वर्ग के प्रतिनिधि थे, जिसका अंग नेहरू परिवार भी था। कांग्रेस का वामपक्ष उस समय उपनिवेशवादी शासको के क्रूर दमन-चक्र का शिकार बना और बाल गंगाधर तिलक समेत उसके अधिकांश सदस्य जेलों मे बन्द थे।

अंग्रेजी भाषा, फैशनेबुल यूरोपीय वेशभूषा, परिष्कृतविदेशी चाल-ढाल, ब्रिटिश राजतन्त्र का आदर और ब्रिटिश साम्राज्य की महिमा की स्वीकृति—अधिवेशन में यह प्रवृत्ति विद्यमान थी। वास्तविक संघर्ष की उत्कट इच्छा रखने वाले, आत्मबलिदान की भावना से प्रेरित जवाहरलाल को कहीं कोई हलचल अथवा तनातनी नजर नही आई—सब कुछ कायदे-करीने से, शान्त भाव से हो रहा था, हर कोई किसी को तकलीफ न देने की चेष्टा करता था। एक चीज थी, जिससे वक्ता क्षुब्ध थे। यह थी तिलक की उग्रवादी भावना। अधिवेशन शान्त, उदासीन, हलचल रहित वातावरण मे हुआ, औपनिवेशिक उत्पीड़न का बोझ उठाए करोडो भारतीय जनगण की दुर्दशा से ये लोग, लगता था, तनिक भी विचलित नही हुए।

"अभिजात सोसाइटी !", "निकम्मे अफसराना वर्ग का खेल !"—कांग्रेस के अधिवेशन के बारे मे अपने पिता के साथ बाते करते हुए जवाहरलाल नेहरू ने टिप्पणी की।

पिता ने बहुत पहले अपने पुत्र में खतरनाक उग्रता की प्रवृत्ति देखी थी, जो इंग्लैण्ड में शिक्षा प्राप्ति के काल मे प्रकट हो चुकी थी। तब मोतीलाल ने यह भी सोचा था कि शायद पुत्र की शिक्षा भंग की जाए, उसे घर बुलाया जाए और इस प्रकार समाजवादियो के कुप्रभाव से उसे बचाया जाए।

अब जवाहरलाल घर पर थे, परन्तु वस्तुतः यह स्थिति नही बदली—पिता का जीवन अधिक शान्त नहीं हो पाया। इतना ही नही; चिन्ताओं का बोझ बढ़ गया। कांग्रेस पार्टी के उग्रपंथी तत्त्वों का अनुसरण करते हुए जवाहरलाल देश के शासको की दो-टूक कटु आलोचना करने लगे।

मोतीलाल को लगता था कि राजनीति के मामलों मे पुत्र का उग्रवादी रुझान युवावस्था का लक्षण है शादी करेगा बच्चे हो जाएँगे और सब कुछ ठीक हे

जाएगा। घर-परिवार के लोगो के प्रति उत्तरदायित्व की भावना युवाओ के जोश को ठण्डा कर देती है, जोखिम उठाने की प्रवृत्ति पर अकुश लगाती है।

जवाहरलाल की मंगेतर दिल्ली में रहती थी और अपने घर से बाहर बिलकुल नही निकलती थी। सभी रिश्तेदार विवाह तक बाकी बचे महीने और दिन बडी उत्सुकता से गिन रहे थे। वर के भारत लौटने के बाद लगभग चार वर्ष बीत गए। वक्त हो चुका था।

आखिरकार 8 फरवरी, 1916 को वसन्त पचमी के दिन, जो साथ ही सरस्वती-पूजा का दिन भी है, इलाहाबाद और फिर दिल्ली में हिन्दू रीति-परम्परा के अनुरूप विवाह-समारोह शानदार ढंग से सम्पन्न हुआ।

व्यक्तिगत परिचय के बिना रिश्ता तय होने की हालत में भी विवाह सुखी साबित होते है। धीरे-धीरे, बिना किसी विशेष भावावेग के अपनी नाजुक सुकोमल पत्नी के प्रति प्रणय की भावना ने जवाहरलाल के हृदय में पूर्णत और सदा के लिए घर कर लिया। शुरू-शुरू मे सत्तरहवर्षीया कमला निरी किशोरी प्रतीत होती थी और जवाहरलाल को यह स्थिति कुछ हद तक असह्य लगती थी। कालान्तर मे उन्होने लिखा—"बाद मे भी नवयुवती जैसी सूरत बनी रही, मगर ज्यो ही उसका स्त्रीत्व उभरा, उसकी ऑखों मे गहराई तथा आतश प्रकट होनी लगी, वे शान्त चश्मों जैसी थीं, जिनके अन्दर खलबली मची रहती थी...मूलत वह खालिस हिन्दुस्तानी लड़की, या यूँ कहे कि कश्मीरी बाला थी, भावुक और गर्वीली, नट-खट और सयानी, खुशदिल और सजीदा। जिन लोगों को वह नहीं जानती थी अथवा जो उसे पसन्द नहीं थे, उनसे वह बडे संयम और तकल्लुफ से पेश आती, लेकिन जान-पहचान के पसन्दीदा लोगों के बीच उसकी सहज खुशी और बेतकल्लुफी देखने लायक थी। लोगो के बारे मे वह जल्द ही राय कायम करती थी, यह राज हमेशा पूरी तरह जायज भी नहीं होती थी, लेकिन अपने दिल की पसन्द या विरक्ति पर वह हमेशा डटी रही। छलकपट से वह पूरी तरह मुक्त थी। अगर कोई व्यक्ति उसे पसन्द न था, तो सभी के लिए यह साफ था और उसने खुद अपनी भावना छिपाने की कभी कोशिश नही की। कोशिश करती भी तो शायद ही वह कामयाब हुई होती। अपनी जिन्दगी में मुझे बहुत कम ऐसे व्यक्ति मिले, जिनका स्वभाव इस कदर खुला और निश्छल था।"[1]

कमला के मॉ-बाप पुराने रिवाज के कायल थे, जिसके अनुसार लड़की का स्कूल जाना मना था। इसलिए उसने जितनी शिक्षा प्राप्त की, वह घर पर ही, मुख्यतया अपने माता-पिता से पाई थी। वह हिन्दी, उर्दू और अंग्रेजी पढ़ती-लिखती थी। *वेद, महाभारत* व *रामायण* अच्छी तरह जानती थी, लेकिन फिर भी जवाहरलाल के साथ बातें करते हुए वह ज्ञानाभाव अनुभव करती थी और इससे उसे बडा दु:ख होता था। खैर, जैसा कि कहा जाता है, कोई भी व्यक्ति दूसरे से बहुत कुछ सीख

---

1 Nehru, *The Discovery of India*, N Y The John Day Company 946

सकता है और जो अधिक ज्ञान देता है, वह स्वयं अधिक बुद्धिमान हो जाता है। पति-पत्नी पर यह बात खासतौर से लागू होती है।

सौन्दर्य, शील स्वभाव और सहजबुद्धि ने निश्चित हद तक औपचारिक शिक्षा न होने की कसर पूरी की। वह बहुत खूबसूरत थी। सुडौल शरीर, ऊँचा कद, उत्तरी भारत के ब्राह्मण वर्ण के लिए लाक्षणिक गोरा रंग। काले केश और बड़ी-बड़ी बादामी ऑखे। साथ ही उसकी जन्मजात सुरुचि का भी उल्लेख किया जाना चाहिए, जो विनयशीलता, सहज नफासत तथा सयम-सन्तुलन मे प्रकट होती थी। महारानी की-सी शालीनता से वह सादी खादी साड़ियाँ पहनती थी। जेवर बहुत कम पहनती थी और मेकअप बिलकुल नहीं करती थी।

नेहरू घर में कमला के प्रवेश के एक वर्ष बाद इन्दिरा का जन्म हुआ और फिर लगभग एक-दो वर्ष तक आनन्द भवन का जीवन पहले जैसे ढर्रे पर चलता रहा, रहन-सहन का इन्तजाम बडे ठाठ-बाट से किया गया, जो इलाहाबाद के हाईकोर्ट मे राजाओं, बड़े भूस्वामियों तथा धनी व्यापारियों की नागरिक तथा सम्पत्ति सम्बन्धी याचिकाओ की पैरवी करने वाले मशहूर वकील के लायक था।

कचहरी मे मोतीलाल नेहरू का काम छोटे-मोटे मुकदमों से शुरू हुआ था, परन्तु कालान्तर में वकालत चमकी और धन्नासेठो के लाखो के मुकदमे सँभालते हुए वह पारिश्रमिक की बहुत मोटी रकमें पाते थे, जो पॉच अंकों वाले आँकड़ों में गिनी जाती थीं।

भरा-पूरा घर, अतिथि-सत्कार, गृहस्वामी का विलक्षण व्यक्तित्व उस जमाने के बहुत-से असाधारण व्यक्तियों को आनन्द भवन की ओर आकृष्ट करता था। उनमे राजनीतिक तथा सार्वजनिक कार्यकर्ता, साहित्यकार, वकील और ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासन के कतिपय उच्च पदाधिकारी भी थे।

नेहरू वंश हिन्दू था, लेकिन वह फारसी तथा फिर ईसाई संस्कृति से बहुत प्रभावित हुआ और साथ ही उस पर तत्कालीन पाश्चात्य दार्शनिक विश्वदृष्टिकोण की भी गहरी छाप पड़ी।

मोतीलाल के व्यापक दृष्टिकोण, धार्मिक एवं नसली सहिष्णुता की बदौलत उनके घर के बैठकखाने में भारतीय और यूरोपवासी, हिन्दू और मुसलमान, आस्तिक और नास्तिक, विभिन्न जातियो और धर्म-विश्वासों के लोग इकट्ठे होते थे। आनन्द भवन में प्रवेश पाने की एकमात्र शर्त थी—व्यक्ति की ईमानदारी और मिलने-जुलने की इच्छा।

नामी-गिरामी लोगों की संगति में जवाहरलाल की दिलचस्पी जल्दी ही उठ गई। फुरसत का सारा समय उन्होंने स्थानीय भारतीय संगठनो, मुख्यतया कांग्रेस पार्टी, में राष्ट्र के हितकारी कार्यो मे लगाया। शीघ्र ही उन्होंने कांग्रेस के एक प्रमुख कार्यकर्ता के रूप में नाम कमाया।

1915-1917 में उनका कार्यकलाप मुख्यत ब्रिटिश [illegible] के विरुद्ध

संघर्ष की विधियो के चयन के बारे में भाषण देने तथा गरमागरम बहसों में भाग लेने तक ही सीमित रहा। बाद में जवाहरलाल नेहरू ने लिखा—"उन वर्षो में हमारे घर में राजनीतिक मसलो पर शान्तिपूर्वक विचार-विमर्श करना असम्भव था। ज्यों ही राजनीति की चर्चा छिड जाती—और प्राय यही होता था—वातावरण फौरन विस्फोटक बन जाता था। पिताजी मेरी बढ़ती हुई उग्रवादी भावना की ओर बड़ा ध्यान देते थे और कान खड़े करके वाक्‌युद्ध की नीति पर मेरी आलोचनात्मक टिप्पणियॉ तथा कुछ कर दिखाने की मेरी अपीले सुनते थे।"[1]

सन् 1916 मे कश्मीर से लौटकर, जहॉ उन्होंने कमला के साथ हनी-मून बिताया, जवाहरलाल तुरन्त ही मोण्टेग्यू-चैम्सफोर्ड सुधारविरोधी आम आन्दोलन में शरीक हुए। इस सुधार का, जिसे हिन्दुस्तान के शासनमण्डल के इन दो सदस्यों का नाम दिया गया, बडे जोर-शोर के साथ प्रचार किया जाता था और उसे युद्ध के वर्षो मे ब्रिटिश साम्राज्य के प्रति सुकार्यो के लिए भारतीय जनगण को 'स्वराज्य' का उदार वरदान बताया गया।

मोतीलाल और जवाहरलाल दोनों उन लोगों की राजनीतिक बगुला-भगती से क्षुब्ध थे, जिन्होने इस सुधार को स्वय ब्रिटिश शासको द्वारा हिन्दुस्तान में बनी 'रक्तहीन क्रान्ति' के रूप मे पेश किया। वास्तव मे, सुधार ने वाइसराय के निरंकुश अधिकारों को जरा भी सीमित नही किया, उसके तत्त्वावधान में हिन्दुस्तान के बड़े बुर्जुआ वर्ग, जमीदारो और धार्मिक-साम्प्रदायिक क्षेत्रो के प्रतिनिधियो की दो सदनों वाली संसद बनाई गई। मगर 'स्वराज्य' की यह संस्था भी वाइसराय की अनुमति के बिना कोई कानून पास नहीं कर सकती थी। निर्वाचन श्रेणियो पर आधारित दिखावटी चुनावों का कपटपूर्ण प्रयोजन था। भारतीय जनता में फूट डालना और साम्प्रदायिक द्वेष भडकाना। उस वक्त जवाहरलाल ने पहली बार इलाहाबाद में हुई एक विराट सभा में भाषण देकर लन्दन की नीति की कटु आलोचना की और जेल मे बन्द होने का जोखिम उठाया।

पिता के नाते मोतीलाल को यह अच्छा लगा कि उनका पुत्र मौलिक बुद्धि का धनी है, तर्क-वितर्क करने में निपुण है और गतिविधियों का सही मूल्यांकन करने की क्षमता रखता है। पर इसके साथ ही जीवन का अत्यधिक अनुभव अर्जित कर चुके पिता अपने पुत्र के कुछ उग्रवादी विचारों, साहसिक निष्कर्षो और विशेष रूप से उसके जोखिम-भरे कार्यो से चौकन्ने हो जाते थे, हालाँकि मन-ही-मन वह प्रायः अपने पुत्र से सहमत रहते थे। तत्कालीन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की राजभक्ति और शासकों से सविनय अनुरोध करने की नीति प्रौढ़ वकील को अखरती थी, क्योंकि देश के शासन में भाग लेने का अधिकार हासिल करने के भारतीय समाज के विशिष्ट वर्ग

---

1 J Nehru, *An Autobiography With Musings on Recent Events in India,* London The Bod ey Head, 1953

के व्यर्थ प्रयत्नों की अंग्रेज शासक खुलेआम खिल्ली उड़ाते थे। मोतीलाल नेहरू कर्मठ व्यक्ति थे। वह उदारपंथियों की भीरुता की निन्दा करते थे और इस कार्यनीति को अपमानजनक और निरर्थक मानते थे। लेकिन जब इकलौते बेटे के भाग्य-पथ का सवाल उठता था, तो इतना दृढ निश्चय कर पाना आसान नही था।

मोतीलाल नेहरू उस समय विशेष रूप से आशंकित व चिन्तित हो उठे, जब जवाहरलाल ने अखिल भारतीय हड़ताल करने की महात्मा गाँधी की अपील का उत्साहपूर्वक समर्थन किया। इस प्रकार औपनिवेशिक प्रशासन द्वारा मार्च, 1919 में स्वीकृत दमनकारी 'रौलेट कानून' का विरोध किया गया।[1]

महात्मा गाँधी और उनके सहयोगियो ने इस कानून के बहिष्कार का व्यापक आन्दोलन चलाया, जबकि कानून का उल्लंघन करने वाले के फौरन गिरफ्तार होने का अन्देशा था।

गाँधीजी की साहसपूर्ण कार्रवाई ने जवाहरलाल को उत्प्रेरित व उत्साहित किया और उन्होने निःसंकोच उनका पक्ष लेने का निश्चय कर लिया।

"आखिरकार गतिरोध से निकलने का रास्ता मिल गया," जवाहरलाल ने खुश होकर कहा—"सीधी, खुली और सम्भवतः प्रभावी कार्रवाई की विधि खोज ली गई है।"

पिता ने आपत्ति की, गैरजरूरी जोखिम और अनुचित बलिदानो की चर्चा की। मगर पुत्र टस से मस नहीं हुए, नाजायज कानून की अवज्ञा के सिद्धान्त की खातिर वह जेल जाने को भी तैयार थे।

"बहुत-से लोगो के नजरबन्द होने से भला क्या फायदा हो सकता है ? सरकार पर इसका क्या दबाव पड़ेगा ?" मोतीलाल ने एतराज किया।

"बहुत ही भारी दबाव पडेगा," जवाहरलाल ने तैश में आकर जवाब दिया—"कोई भी सत्ता आम जनता की अधीनता पर आधारित होती है। जनता स्वेच्छा से अथवा विवश होकर अनुशासित रहती है। अधीनता की आदत भी पड जाती है या फिर उसका कारण स्वतन्त्रता प्राप्त करने के जनता के सगठित संकल्प का अभाव भी हो सकता है। गाँधीजी का व्यवहार बिलकुल ठीक है, जब वह औपनिवेशिक अधिकारियो के प्रति नाफरमानी का रवैया अपनाने की जनता से अपील करते हैं। अगर अभी तक हम विदेशी गुलामी को बर्दाश्त कर रहे हैं, तो यह खुद हमारा कसूर है। लगता है कि यही गुलामी हमें गवारा है," जवाहरलाल ने चुटकी ली—"आजादी की खातिर कुर्बान होने का उदाहरण यदि हम बुद्धिजीवी पेश न करें, तो कौन पेश करे ? सारा हिन्दुस्तान जेल में नहीं डाला जा सकता। उपनिवेशवादियों की सेवा करते हुए, उनकी

---

1. ब्रिटिश जज रौलेट के नाम से पास हुए इस कानून में खासतौर पर भारत के स्वतन्त्रता सेनानियों को गिरफ्तार तथा निर्वासित करने के वाइसराय तथा गवर्नर के अधिकार का किया गया था

प्रशासनिक संस्थाओं, अदालतों, पुलिस में नौकरी करते हुए हम खुद उपनिवेशवादियों को इसमें मदद देते हैं कि वे हमारे देश को अपने वश मे रखें, मनमाने ढंग से उस पर शासन चलाते रहे।"

पुत्र के जेल जाने की सम्भावना वास्तविक बन रही थी। मोतीलाल घबराए हुए थे। वह आराम-सुविधा के आदी हो चुके थे और जेल में रहने की हालतों का अन्दाजा लगाने के लिए उन्होंने एक रात नंगे फर्श तक पर बिताई। इस परीक्षण ने उन्हें हतोत्साहित किया। यह कष्ट उठाने की भला क्या जरूरत है? उम्र-भर कठिन परिश्रम करके उन्होंने अपने परिवार को खुशहाल बना दिया था और जब अपनी इच्छा से इन सभी सुविधाओ को त्यागना उन्हें पागलपन, बचकाना नासमझी लगता था, न कि ऐसे धीर-गम्भीर इन्सान का खूब सोचा गया कदम, जो अब खुद भी परिवार का पालन बन चुका था।

पुत्र के विचार बदलने मे स्वय असमर्थ होकर मोतीलाल ने जवाहरलाल की माँ, पत्नी और दूसरे रिश्तेदारों की सहायता से उन्हें प्रभाावित करने की चेष्टा की। कहना न होगा कि स्वरूप रानी ने मोतीलाल का पूरी तरह पक्ष लिया। परन्तु कमला अपने पति पर प्रभाव डालने की सलाह मानने को राजी नहीं हुई। उसने साफ-साफ कह दिया कि उसे आर्थिक सुविधाएँ नही चाहिए, वह अपने पति की आकाक्षाएँ समझना चाहती है और सभी दुःख-दर्द उसके साथ बाँटने को तैयार है। कमला ने जता दिया कि पति का निर्णय उसका भी निर्णय है। वह पति की राह में आड़े नही आएगी, बल्कि उसकी यथाशक्ति सहायता करेगी।

जमाना तेजी से बदल रहा था, लोग बदल रहे थे। नेहरू परिवार में भी बड़े-बड़े परिवर्तन हो रहे थे।

इन्दिरा बडी हो रही थी। पहली मुस्कान, पहले कदम, पहले शब्द—सब कुछ पहला था। लड़की एक बरस की, दो बरस की हो गई, परन्तु वर्ष मनुष्य के जीवन का एकमात्र मापदण्ड नहीं होता। मानव का जीवन है उसके विचारो व भावनाओ का जटिल विकास, उसके कार्यो का योग, दूसरे लोगो, सम्पूर्ण विशाल संसार के साथ सम्पर्क, ज्ञानार्जन, अनुभव, स्मृति-भण्डार का निर्माण।

प्रायः बच्चों के बारे मे कहते हैं कि वे नासमझ है, लेकिन यह ठीक नहीं है : उनके निर्मल, संवेदनशील हृदय कभी-कभी बालिग लोगो की अपेक्षा अधिक सूक्ष्मता से सच्चा और झूठ को अनुभव कर लेते हैं। नन्हीं इन्दु भी परिवार की घटनाओ मे भागीदार होती थी, अपने सगों की मनोभावनाओं को उसका कोमल बाल-हृदय भाँप लेता था।

आनन्द भवन का सुख-समृद्धि से परिपूर्ण छोटा ससार मोतीलाल के पुत्र को सन्तुष्ट नहीं कर सकता था। नेहरू परिवार के लक्ष्य और आनन्द के स्रोत बदल गए। सबसे पहले यह बात कमला पर लागू होती थी जिसकी पतिभक्ति और ममता उसका धर्म बन गई थीं तथा जिसने को जीवनानन्द में परिणत किया

जवाहरलाल और उनके पिता, जिन्होने भारत की स्वतन्त्रता के हेतु संघर्ष के आदर्श हृदयंगम कर लिये थे, अपनी हवेली के सजे-धजे बैठकखाने में सायोगिक तथा प्रतिष्ठित अतिथियों के बीच नहीं, बल्कि विराट विरोध-सभाओं, हजारों प्रदर्शनकारियो के बीच, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशनों मे जीवन के सच्चे अर्थ की खोज करने लगे। महात्मा गाँधी के आगमन के बााद कांग्रेस ने राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के लिए सघर्ष मे भारतीयो के आम जुझारू संगठन का रूप धारण किया। उन्होंने देखा कि सच्चाई भारत के विशिष्ट अभिजात वर्ग की कोठियों में नहीं बसती थी, वह तो नगरो की सडको तथा मैदानों, किसानो के खेतो मे जीते, कष्ट उठाते, संघर्ष करते जनसाधारण के जीवन मे व्याप्त थी।

मोतीलाल नेहरू के भावुक हृदय में बसे गर्वीले भारतीय ने उसमे घर किए अग्रेजीयत को खदेड दिया। वात्सल्य-भावना ने मोतीलाल को अपने ऊपर विजय पाने मे सहायता दी। गाँधीजी द्वारा चलाए गए सविनय अवज्ञा एव नागरिक असहयोग आन्दोलन मे शामिल होने का निर्णय मोतीलाल ने यकायक नही, बहुत सोच-विचार, सन्देह-संकोच के बाद लिया था। जवाहरलाल नेहरू ने इस बारे में कहा कि असहयोग का मतलब जम चुकी वकालत को छोडना, पहले के जीवन से पूरी तरह नाता तोडना और उसे पुनर्व्यवस्थित करना था, जो षष्टिपूर्ति के निकट आ रहे व्यक्ति के लिए आसान काम नहीं था। उन्हे राजनीतिक कार्यकलाप के अपने पुराने साथियो, अपने व्यवसाय, उस जीवन-पद्धति से सम्बन्ध-विच्छेद करना था, जिसके वह आदी हो चुके थे।

प्रथम विश्वयुद्ध समाप्त हुआ। हिन्दुस्तान यो भी गरीब देश था। परन्तु युद्ध तो उसके लिए भुखमरी, हैजे, प्लेग तथा चेचक जैसी महामारियाँ, आर्थिक बर्बादी साथ लाया था।

अनगिनत बलिदान लेने वाले और अपार कष्ट पहुँचाने वाले युद्ध ने दिखा दिया कि राष्ट्रों और मानवता के विरुद्ध उसके सभी अपराधों के पीछे एक ही घृणित उद्देश्य था—युद्धलिप्सु साम्राज्यवादी हलकों का निहित स्वार्थ। धोखे और उत्पीड़न के शिकार बने जनगण के लिए यह सीधी सच्चाई साफ हो गई कि पूँजीवादी व्यवस्था का मानवीयता, सामाजिक नैतिकता के नियमों, राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के आदर्शो से कोई मेल नही है।

लन्दन के शासक हिन्दुस्तान में अपनी औपनिवेशिक व्यवस्था को रद्द करने की बात कतई नहीं सोचते थे और न ही वे यह चाहते थे कि यह देश उनके चगुल से छूट जाए। विशाल उपनिवेश में वर्गीय तनाव बेहद तीक्ष्ण हो गया था, जिसे विदेशी आधिपत्य ने और अधिक बढ़ा दिया, युद्ध में विजय पाने से जुड़ी आशाओं पर पानी फिर गया और स्पष्ट हो गया कि जनसाधारण के सब्र का प्याला भर चुका है, सामाजिक विस्फोट, पुरानी व्यवस्था का पतन अवश्यंभावी है।

युद्ध की समाप्ति पर रूस में महान् क्रान्ति सम्पन्न हुई परन्

मानव-जाति के इतिहास मे इस युगान्तरकारी परिवर्तन के प्रति सभी ने एक जैसा दृष्टिकोण नहीं अपनाया। बहुत-से भारतीय राजा-रजवाड़ो, बड़े सामन्तों तथा विदेशपरस्त बुर्जुआ, धार्मिक समुदायों के प्रतिगामी प्रमुखों तथा अभिजात वर्ग के दूसरे तबको, यानी हिन्दुस्तानी समाज के परोपजीवी तत्त्वों ने ब्रिटिश औपनिवेशिक शासनतन्त्र के बहुत सारे अफसरो-नौकरों से मिलकर सोवियत देश से अपनी वर्गीय घृणा नही छिपाई। महान् अक्टूबर समाजवादी क्रान्ति से, स्वयं अपनी जनता से भयभीत होकर उन्होने सोवियत रूस को बदनाम करने, उस पर कीचड़ उछालने की हरचन्द कोशिश की, तथाकथित 'रक्षात्मक बाडे' खडे किए, ताकि हिन्दुस्तान को 'लाल प्लेग' से बचाया जाए, 'निरीह', 'धर्मपरायण' जनता को क्रान्तिकारी हिंसा की 'क्रूरता', 'अधर्मी बोल्शेविको' से सुरक्षित किया जाए।

राष्ट्रवादी भावनाएँ रखने वाले बुर्जुआ वर्ग, आंशिक रूप से बुद्धिजीवी वर्ग, काग्रेस के नरम पक्ष ने रूस मे हुए परिवर्तनो के प्रति दोहरा रवैया अपनाया। एक ओर तो उन्होने रूस द्वारा घोषित राष्ट्रो के आत्मनिर्णय के अधिकार का स्वागत किया (ब्रिटेन से उन्होने यही मॉग की)। परन्तु, दूसरी ओर, जहॉ तक मजदूरों तथा किसानो द्वारा राज्य सत्ता-ग्रहण किए जाने, सर्वहारा अधिनायकत्व की स्थापना किए जाने का सम्बन्ध था, उस गतिविधि से वे सतर्क तथा आशंकित हुए।

जो भी हो, उनमे से बहुत-से लोगों ने, साथ ही मोतीलाल नेहरू ने भी, रूसी क्रान्ति का स्वागत किया। कांग्रेस की विख्यात कार्यकर्त्री एनी बेसेण्ट ने सन् 1917 मे काग्रेस-अधिवेशन में ऐलान किया कि रूसी क्रान्ति ऐसी ऐतिहासिक घटना है, जो हिन्दुस्तान की स्थिति को मूलतः बदल देती है।

राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के रेडिकल पक्ष के प्रतिनिधि, जिनमे जवाहरलाल नेहरू भी थे, रूस में समाजवादी क्रान्ति के मूल्यांकन को उसके अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व तक ही सीमित नहीं करते थे। वे उससे कहीं आगे बढे और उन्होंने यह माना कि रूसी क्रान्ति का न केवल राष्ट्रीय मुक्ति के लक्ष्य की प्राप्ति, बल्कि तीक्ष्ण सामाजिक समस्याओ के समाधान की दृष्टि से भी भारत के भाग्य पर प्रभाव पडेगा।

भारत के राजनीतिक जीवन का विकास अक्टूबर क्रान्ति से अवश्य प्रभावित होगा--किसी-न-किसी रूप में इस पर सभी सहमत थे--वे भी, जिन्होंने उस क्रान्ति का स्वागत किया और वे भी, जो उसकी निन्दा करते थे। हिन्दुस्तान के मामलो के ब्रिटिश सरकार के मन्त्री लार्ड मोंटेग्यू और भारत के वाइसराय लार्ड चैम्सफोर्ड ने ब्रिटिश संसद के लिए तैयार की गई रिपोर्ट में लन्दन के वास्ते चिन्ताजनक, मगर सच कहा जाए, तो काफी हद तक सही तस्वीर पेश की। वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि "हिन्दुस्तान में रूसी क्रान्ति को निरंकुश शासन पर विजय के रूप में देखा गया है. .उसने हिन्दुस्तान की राजनीतिक आकाक्षाओं के विकास को प्रेरणा दी है।"

उस समय भारत में शायद ही ऐसा कोई घर रहा हो, जिसमें इन्कलाब और आजादी की चर्चा न हुई हो कुछ लोग उत्साह और श्रद्धा भाव से ये शब्द बोलते थे

दूसरों को उनका तात्पर्य डरा देता था, लेकिन फिर भी किसी अज्ञात, परन्तु वांछनीय चीज की तरह वे आकर्षित करते थे।

आनन्द भवन में भी हलचल का वातावरण था। छोटे-बड़े सभी सदस्य अपने काम में जुटे हुए थे।

नये जमाने के आसार ठोस अभिव्यक्तियो के रूप में नन्हीं इन्दु के कोमल, सवेदनशील बाल-हृदय पर अकित हो जाते थे। घर में नये, अपरिचित लोग आने लगे। ये सीधे-सादे लोग थे, वे भरतीय ढग के कपड़े पहनते थे, उनकी ऑखों में वह घमण्ड तथा स्वाभिमान नहीं था, जो मोतीलाल के पुराने अतिथियों की आँखों मे झलकता था। स्वय दादाजी भी, जो इन्दु की नजरो में विनम्र महाबली थे, अब ऊँचे गिलास से ह्विस्की नहीं पीते थे, जोर-जोर से हँसते नही थे और शानदार दावतो के बाद अपने अतिथियों को घोड़े, नयी मोटरकार, स्वीमिंग पूल, टेनिस कोर्ट और दूसरी महँगी चीजे तथा वैभव के साधन नही दिखाते थे, जिन पर कुछ ही समय पहले वह बहुत गर्व करते थे।

समय-समय पर आनन्द भवन की लाइब्रेरी मे बहुत-से लोग इकट्ठे होते थे। वे बहस करते थे, बड़े जोश से भाषण देते थे। अक्सर पिताजी बोलते थे और दूसरे लोग गौर से उनकी बातें सुनते थे।

ऐसे दिनों में इन्दिरा कौतूहल के कारण चुपके-चुपके भाग आती और पर्दे के पीछे से अजनबी लोगों को देखती रहती, तय कर लेती कि उनमें से कौन उसे पसन्द है और कौन नहीं। पिताजी को देखना उसे सबसे ज्यादा अच्छा लगता था। वह शान्त भाव से, सयत ढंग से बोलते थे, लेकिन लड़की उनकी मानसिक उद्विग्नता को स्पष्टतः महसूस करती थी, हालॉकि पिता ने उसे छिपाने की चेष्टा की और तब सहानुभूति से वह छटपटाने लगती थी।

ये लोग किस विषय पर बहस करते थे, इन्दिरा नहीं समझती थी, लेकिन वह भली-भॉति जानती थी कि उनमें से कौन सही बात कहता है—वही, जो पिताजी का साथ देता है।

आखिरकार माँ आती, इन्दु को पर्दे के पीछे से निकाल लेती, उपस्थित लोगो से क्षमा माँगकर बेटी को सदा ताजे गुलाबों की सुगन्ध से सुवासित अपने आरामदेह कमरे में ले जाती थी।

"तू शरारत करने से कभी बाज आएगी भी ? पिताजी और दादाजी के काम मे क्यो टॉग अड़ाती है ?" कमला उसे डॉट पिलाती थीं।

"मैं नहीं अड़ाती हूँ टॉग इन्दु रूऑसी हो जाती "मैं भी काम करना चाहती

"अखबार तैयार कर रहे है।"

"अख-बार ?" इन्दिरा असमंजस मे पड़ जाती। "अखबार क्या चीज है ?"

"पापा या दादाजी से पूछ। वे तुझे समझा देंगे।"

"जरूर पूछूँगी," इन्दिरा कहती और बाद में अवश्य यह पूछती।

इस प्रकार अप्रत्यक्ष ढंग से, साक्षात् अनुभूतियों के साहचर्य से माता-पिता के हितो और चिन्ताओं ने बच्ची के आलोडित-विलोडित आत्मिक जगत् में प्रवेश पाया। पिताजी ने अपनी जिज्ञासु बेटी को बताया कि अखबार क्या है। इन्दिरा की आयु वह थी, जब "क्यों ?" शब्द उसकी जबान पर हर वक्त रहता था और माँ-बाप को बेटी के नाना सवालो के जवाब जैसे-तैसे देने पडते थे।

मोतीलाल और जवाहरलाल नेहरू उन वर्षों मे अपने धन से 'इडिपेडेट' समाचारपत्र प्रकाशित करते थे। वे स्वय सम्पादन कार्य करते, लेख लिखते और पत्र के वितरण का प्रबन्ध भी करते थे। 'इंडिपेंडेंट' के देशभक्तिपूर्ण रुख, उसमे छपने वाले तीक्ष्ण उपनिवेशवाद विरोधी लेखो के कारण उसकी ख्याति इलाहाबाद के बाहर भी दूर-दूर तक फैल गई और 'इंडिपेंडेंट' से होड़ करने वाले, उपनिवेशवादियो के साथ सहयोग की दुहाई देने वाले उदारपथी काग्रेसियों के अखबार 'लीडर' के पाठको की संख्या घटने लगी थी।

कम-उम्र लड़की तब यह सब नहीं जानती थी, लेकिन इन्दिरा के स्मृति-पटल पर कुछ घटनाएँ हमेशा के लिए अकित हो गई—पिता का ताजा अखबार, जिससे छपाई के रग की बू आती थी, लेकर घर आना, किसी सफल लेख पर पिता का प्रसन्न होना तथा बहुत-सी दूसरी बातें। कालान्तर में उन वर्षो को स्मरण करते हुए वह उन तथ्यो और घटनाओं का सार समझेगी, वे उसके जीवन मे अपना स्थान बना लेगे। शीघ्र ही 'वतन', 'आजादी', 'लोकतन्त्र' जैसे शब्दों की उसके मन मे जोरदार प्रतिध्वनि पैदा होगी, इन धारणाओं का गूढ अर्थ स्पष्ट हो जाएगा, अपार देश-भक्ति उसके हृदय में जग उठेगी और फिर जीवन-भर उसके मानसिक दृष्टिकोण की नीव, उसकी साधना और सभी कार्रवाइयो की प्रेरक शक्ति बन जाएगी।

भारत में जागरण काल शुरू हुआ। गुलामी के कारण उत्पन्न उदासीनता का वातावरण खत्म हुआ, औपनिवेशिक दुःस्वप्न टूट गया और राष्ट्रीय चेतना का अपूर्व उत्थान हुआ। भारतवासी अपने भारतीयपन पर गर्व करने लगे और उनके परिवारो ने आम उद्धत शत्रु—ब्रिटिश राज—के सम्मुख एकजुट राष्ट्र की जुझारू इकाइयो का रूप धारण किया।

उन वर्षो में आनन्द भवन भारतीय राष्ट्रवाद का एक प्रकार का मुख्यालय बन गया।

सन् 1919 में काग्रेस के अमृतसर क्रिसमस अधिवेशन मे मोतीलाल नेहरू को काग्रेस का अध्यक्ष चुना गया आन्दोलन के उत्थान के उस काल में तीन विलक्षण भारतीयों ने काग्रेस का नेतृत्व सँभाला इस सिलसिले में देशभक्त हलकों

में मजाक के रूप मे 'होली ट्रिनिटी' का जिक्र किया जाता था—फादर (मोतीलाल), सन (जवाहरलाल) और होली स्पिरिट (महात्मा गॉधी)।

नेहरू घर के वातावरण पर संघर्षरत राष्ट्र की सफलताओ और पराजयों, जनता के सुख-दुःख की छाप पडती रही और इस वातावरण में संवेदनशील लडकी इन्दिरा बड़ी हो रही थी।

वह दिन आया, जब महात्मा गाँधी आनन्द भवन पधारे। उनके आगमन से पहले सभी लोग आनन्दविभोर और उत्साह से ओतप्रोत थे। विशेष तैयारियॉ तो नही की गई, लेकिन बडी हलचल मची हुई थी। मोतीलाल नामी-गिरामी व्यक्तियो से मिलने के आदी हो चुके थे, लेकिन वह भी अधीरता से अपने कमरे मे चहलकदमी कर रहे थे, जब तब पूछ लेते कि अतिथि नजर तो नही आए और कहते कि ज्यों ही अतिथि दिखाई दे, उन्हे आगाह किया जाए, ताकि वह वक्त पर ग्राउण्ड फ्लोर पर उतर आएँ और प्रवेशद्वार पर अतिथि का आदरपूर्वक स्वागत कर सकें।

निश्चित समय पर पार्क की पगडंडी पर हाथ मे छड़ी लिये एक अधेड आदमी की झुकी हुई दुबली-पतली आकृति दिखाई दी। वह खादी की धोती और खड़ाऊँ पहने हुए था। घर से निकले मोतीलाल को देखकर गॉधीजी के होठों पर उन्मुक्त स्नेहभरी मुस्कान खिल उठी और कुछेक बचे-खुचे दाँत नजर आए।

उस दिन इन्दिरा ने पहली बार महात्मा को देखा। लडकी उनकी गोद मे बैठी नवागन्तुक का शान्त मुख देख रही थी। उनके बड़े-बड़े कान थे और स्नेह-भरी ऑखे। वह उन साधारण गरीब लोगों जैसे ही थे, जिन्हे इन्दिरा ने अपनी माँ के साथ गंगा-तट पर घूमते हुए देखा था।

भारत उस काल से गुजर रहा था, जिसके बारे में जवाहरलाल नेहरू ने लिखा—"और तब गाँधीजी आए। वह ताजी हवा के झोंके के समान थे, जिसने हमें कमर सीधी करने और गहरी साँस लेने के लिए विवश किया। प्रकाश की किरण की भॉति उन्होने घुप्प अँधेरे को भगा दिया और हमारी ऑखों पर से पर्दा उठा। आँधी की तरह उन्होंने हमे आलोडित कर दिया और सबसे पहले मानवीय चिन्तन को झकझोर दिया। गॉधी का आकाश से अवतरण नही हुआ, वह कोटि-कोटि भारतीय जनसाधारण के बीच से निकले, वह उनकी भाषा बोलते थे और उन पर तथा उनकी दुर्दशा पर अपना ध्यान केन्द्रित किए हुए थे।"[1]

मोहनदास कर्मचन्द गाँधी के बारे में नेहरू परिवार के लोग तब बहुत कुछ नहीं जानते थे। मालूम था कि वह गुजराती थे, पश्चिमी भारत के एक छोटे राज्य में उनका जन्म हुआ, उनके पिता राजा के दरबार में मुख्यमन्त्री थे और वह वैश्य जाति के थे। मोहनदास गॉधी ने कोई बीस वर्ष पहले लन्दन यूनिवर्सिटी और लॉ स्कूल की शिक्षा पूरी की, कई वर्ष तक वह दक्षिणी अफ्रीका में रहे और वहाँ वकालत करते रहे। नेहरू

1 J Nehru, *The Discovery of India*

पिता-पुत्र ने सन् 1916 में काग्रेस के लखनऊ अधिवेशन में गॉधीजी को पहली बार देखा था, जब वह दक्षिणी अफ्रीका से स्वदेश लौट चुके थे। उस समय ये दोनों उनसे तनिक भी प्रभावित नही हुए। यहॉ तक कि युवा जवाहरलाल कुछ निराश भी हुए। उन्हें आशा थी कि दबग जननेता से मुलाकात होगी, जिसने दक्षिणी अफ्रीका मे भारतीय खान मजदूरों के विरोध मार्च का सचालन करके दुनिया में सनसनी पैदा कर दी थी। भारतीय मजदूरों ने तब दक्षिणी अफ्रीका की नसलवादी हुकूमत के भेदभावमूलक कानूनों का विरोध किया। परन्तु आज उनके सामने था शान्त, विनयशील और, जैसा कि उस समय लगा, राजनीति से दूर रहने वाला साधारण मनुष्य। विश्वास ही नहीं होता था कि यह आदमी हजारो हताश देशबन्धुओं का नेता बन सकता था।

तब शायद ही किसी ने सोचा होगा कि ये दो सर्वथा भिन्न व्यक्ति कालान्तर मे भारत की स्वतन्त्रता के लिए सघर्ष मे निकटतम सहयोगी बनेगे, कि महात्मा गाँधी जवाहरलाल नेहरू को भारत भूषण कहेंगे और नेहरू उन्हे बापू तथा राष्ट्रपिता नाम से सम्बोधित करेंगे।

आनन्द भवन मे भेट के बाद महात्मा गॉधी और मोतीलाल नेहरू के बीच मानसिक सामीप्य स्थापित हुआ और वे आपसी लगाव के बन्धनों से जुड गए। इन दो पुरुषों के व्यक्तित्व असयोज्य प्रतीत होते थे। इसके बावजूद शीघ्र ही उनके बीच ऐसे हार्दिक सम्पर्क स्थापित हुए, जिन पर सगे भाइयों को भी ईर्ष्या हो सकती थी।

गॉधीजी ने न केवल मित्र, अपितु सर्वमान्य गुरु के रूप में भी नेहरू परिवार मे प्रवेश किया।

गर्वीले और रोबीले मोतीलाल ने, जिनका स्वभाव प्रतिष्ठा-नाशवादी था, गाँधीजी की मान-प्रतिष्ठा निःसंकोच स्वीकार कर ली। इसका अर्थ यह नहीं था कि मोतीलाल ने अपने विचार व दृष्टिकोण त्याग दिए थे और वह हर मामले में अपने मित्र की राय का सहारा लिया करते थे। नहीं, दोनों के विचारों और भावनाओं मे बडा अन्तर था और उनकी दोस्ती पर किसी एक का बोलबाला नहीं था, लेकिन उनके सहृदय सम्बन्धों को नये, भावी भारत मे दृढ विश्वास से सशक्त प्रेरणा मिलती रही। जवाहरलाल के भी गाँधीजी के साथ ऐसे ही हार्दिक सम्बन्ध स्थापित हुए।

शुरू में नेहरू परिवार के सदस्यो मे से कोई भी गाँधीजी के सभी आह्वानो का अन्धानुसरण करने को तैयार नही हुआ, विशेष रूप से राजनीति मे नैतिक मापदण्ड लागू करने के उनके प्रयत्नो को तथा सादगी और आत्मनिग्रह के प्रचार को उन्होने स्वीकार नही किया। लेकिन गॉधीजी ने आम जनता को आन्दोलित करने का जो आह्वान किया, राजनीति के मामलो में लम्बे-चौडे भाषणों से, जिनसे सब तंग आए हुए थे, इन्कार करने और ठोस कार्रवाई करने पर उन्होंने जो जोर दिया, उनका तकाजा यह था कि प्रत्येक भारतवासी निश्चय करे कि वह लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सघर्ष करने को वास्तव मे तैयार है अथवा पहले की तरह उसके बारे मे केवल लम्बी-चौड़ी बातें करने का इरादा रखता है

उपनिवेशवादियो के विरुद्ध राजनीतिक सघर्ष के जिस रूप को महात्मा गाँधी ने सत्याग्रह नाम दिया, उसका अर्थ केवल सविनय अवज्ञा तथा नागरिक असहयोग ही नहीं था, वह बहुत-सी वैयक्तिक सुविधाओं के परित्याग की भी अपेक्षा करता था। हर सत्याग्रही का कर्तव्य था ब्रिटिश शासकों से प्राप्त हुई उपाधियो, पदवियों तथा पुरस्कारो को स्वेच्छया अस्वीकार करना, प्रशासनिक संस्थाओ तथा अदालतो मे नौकरी छोड़ना, ब्रिटिश शिक्षणालयों का बहिष्कार करना। उससे पहले फैले स्वदेशी आन्दोलन में शामिल होना सत्याग्रही का एक मुख्य कार्य था। चरखा, करघा चलाना, खादी कपडा बुनना हिन्दुस्तान के बाजार में विलायती माल की भरमार के विरुद्ध सघर्ष का उत्तम व अचूक उपाय माना गया। चरखा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के पार्टी के तिरगे पर अकित हुआ और काग्रेसी खादी टोपी सत्याग्रही का प्रतीक बन गया।

नेहरू परिवार के लिए गाँधीजी का कार्यक्रम स्वीकार करने का अर्थ था सब कुछ—आदतों, आराम-सुविधाओं, ससर्ग, जम चुकी जीवन-पद्धति—का परित्याग करना।

जवाहरलाल अभी युवा थे, उनके लिए नया जीवन आरम्भ करना कही आसान था। उनके आगे भविष्य था। परन्तु मोतीलाल पर बहुत मुश्किल गुजरी। परिवार की खुशहाली के लिए और वकील के तौर पर तरक्की पाने के लिए उन्होंने अपने जीवन के श्रेष्ठ वर्ष बिताए थे और अब पता चला कि यह सब कुछ व्यर्थ था। उनके मन में ग्लानि हुई, पुत्र के व्यवहार से ठेस लगी, जिसने पिता के प्रयत्नों का समुचित मूल्यांकन नहीं किया। अभी हाल ही में जो कुछ परिवार का गौरव था, परिवार प्रमुख की मान-मर्यादा का प्रमाण था, सहसा अर्थशून्य और मूल्यहीन हो गया, इतना ही नहीं, कडवा पश्चात्ताप बनकर रह गया। अपने बीते जीवन पर सोचते हुए मोतीलाल का मन व्यथा से भर उठता था।

भविष्य का पूर्वानुमान लगाया जा सकता है, उसकी कल्पना करना, योजनाएँ बनाना और, हो न हो, किसी दुर्घटना के लिए उसका बीमा कराना भी सम्भव है, परन्तु जो हुआ सो हुआ, उसे बदला नही जा सकता, न ही उसका बीमा कराया जा सकता है। हाँ, जब तक इन्सान जिन्दा है, वह खुद भी कुछ कर सकता है। यह उसके बस मे है कि वह अपने भूतपूर्व जीवन पर पुनर्विचार करे, उसका पुनर्मूल्यांकन करे, लेकिन इसके लिए महँगी कीमत चुकानी होती है—अपना वर्तमान और बाकी बचा जीवन अर्पित करना पड़ता है। बहुत समय तक सन्देह व दुविधा में पड़े रहने, पुत्र के साथ वाद-विवाद करने के बाद मोतीलाल नेहरू ने यही रास्ता अपनाने का निश्चय किया।

आने वाले परिवर्तनो की सबसे तीक्ष्ण अनुभूति आनन्द भवन की महिलाओं को हुई। पुरुषों के कामकाजी और सार्वजनिक हितों और रुचियों की परिधि घर से कही अधिक व्यापक थी, जबकि नारियों का सारा जीवन घर-गृहस्थी पर केन्द्रित रहा। राजनीतिक विचारों और उनसे सम्बन्धित चिन्ताओं तथा कष्टों का अर्थ उनकी समझ में नहीं आता था यह सब उन्हें भावुकतापूर्ण दुस्साहस लगता था जो

सम्भवतः पुरुषों का नैसर्गिक गुण है।

मुश्किल यही नहीं थी कि नेहरू घराने की औरतों को, जो गरीबी और असुविधाओ से नितान्त अपरिचित थी, अब यह सब कुछ झेलना पड रहा था। आर्थिक कठिनाइयो से वे बहुत डरती नही थीं, उनके लिए सबसे मुश्किल वे दुःख-मुसीबतें देखना था, जिनका खतरा उनके प्रियजन स्वेच्छया और, उनके ख्याल मे, बिना सोचे-समझे मोल ले रहे थे। यह सोचकर कि जवाहरलाल और सम्भवतः मोतीलाल भी पुलिस अत्याचार का शिकार बन सकते हैं, जेल मे बन्द हो सकते हैं, वहाॅ बीमार पड़ सकते है और यहाॅ तक कि दम तोड़ सकते हैं, स्वरूप रानी और कमला को दहशत होती थी। इसका ख्याल आने पर जवाहरलाल की छोटी बहन कृष्णा के भी प्राण सूख जाते थे।

गहरी नींद में डूबी नन्ही इन्दु को छाती से लगाए बेचैन कमला ने न जाने कितनी राते ऑखों-ही-ऑखों मे काटी—आखिरकार उस समय बच्ची की किस्मत का भी तो फैसला हो रहा था। बेटी को पलंग पर लिटाकर कमला खिड़की के पास बैठ जाती और तारे जडित काले आकाश की ओर टकटकी बॉधे रहती थी। सुहागरात को याद करते हुए वह आकाश में ध्रुव तारा खोज लेती—निष्ठा व धैर्य का प्रतीक। जवाहरलाल ने उस रात कहा था कि अगर उन्हे कभी बिछुडना पड़ेगा, तो वे दोनो आकाश मे यह तारा खोज लेगे, एक-दूसरे की सोचेंगे और मन कुछ हल्का हो जाएगा, मानो मिलन हो गया हो।

इस विचार ने तब कमला को अपनी सरलता से आश्चर्यचकित कर दिया। ध्रुव तारे का टिमटिमाता प्रकाश दिल मे आशा पैदा करता था, नयी शक्ति का संचार करता था और उसका दिल सहानुभूति की ऊष्म भावना से भर जाता। पतिव्रता नारी की तरह वह चाहती थी कि जवाहरलाल दैनन्दिन जीवन की छोटी-मोटी चिन्ताओं से मुक्त हो। उनकी उदात्त आकांक्षाओं, उनकी कल्पना की उड़ान मे कुछ भी बाधक न हो। वह उसकी ऑखों में झलकते ऑसू कभी न देखे, उससे और अपनी बेटी से कभी कोई उलाहना न सुनें। यह निश्चय करके कमला ने आनन्द भवन की महिलाओ मे सबसे पहले अज्ञात भविष्य के मार्ग पर बेधडक कदम रखा।

अमृतसर की त्रासदी का दिन आया। 13 अप्रैल, 1919 को बैसाखी के दिन शहर के चौक मे करीब 20 हजार नगरवासी तथा आसपास के गॉवों के किसान इकट्ठे हुए। सभा में वक्ताओं ने मॉग की कि 'रौलेट कानून' रद्द किया जाए। चौक के ऊपर आसमान "इन्कलाब जिन्दाबाद !" नारे से गूँज उठा। अधिकारियों के हुक्म पर फौजियो ने चारो तरफ से ऊॅची दीवार मे घिरे चौक से निकलने का एकमात्र रास्ता बन्द किया और उसके बाद ब्रिटिश जनरल डायर ने गोलियॉ चलाने का हुक्म दिया। चेतावनी दिए बिना निहत्थे लोगों का कत्लेआम शुरू हुआ, जो आखिरी कारतूस के खत्म होने तक जारी रहा। फिर लोगों की चीख-चीत्कारो और खून-खराबे से पागल हुए सिपाहियों ने घायल लोगों को संगीनों और बन्दूकों के कुन्दों से मारना शुरू

किया।

सारे प्रान्त मे मार्शल लॉ लागू किया गया। फॉसी देने, कोड़े मारने, निर्दोष लोगो को भोंडे ढंग से अपमान करने का दौर-दौरा चला। पिस्तौलो से डराकर स्त्री-पुरुपो को कीडो की तरह पेट के बल जमीन पर रेंगने के लिए मजबूर किया जाता था। साफ था कि उपनिवेशवादियो ने जनता को बेइज्जत करने, उसका मनोबल तोड़ने का इरादा रखा। जोर-जुल्म का यह दौर-दौरा उनकी बर्बर राजनीतिक मनोवृत्ति का सबूत था। दिल्ली मे ब्रिटिश जनरल ड्रेक ब्रोकमन ने ऐलान किया—"ये एशियाई सिर्फ ताकत को पहचानते हैं।" 'पुराने भले' इग्लैण्ड के इस 'योग्य' प्रतिनिधि ने इस तरह खुलेआम स्वीकार किया कि कत्लेआम ब्रिटिश लोकतान्त्रिक व्यवस्था का आदर कराने का एक साधन है।

अमृतसर गोलीकाण्ड ने सारे देश को आन्दोलित कर दिया, हर भारतवासी का दिल राष्ट्रीय अपमान से तिलमिला उठा।

वाइसराय को विरोध पत्र भेजकर महात्मा गॉधी ने वे सभी पदक वापस लौटा दिए, जो बोअर युद्ध में भाग लेने के लिए ब्रिटिश सरकार द्वारा उन्हे दिए गए थे। ब्रिटिश ऑर्डरों तथा दरबारी पदवियो से सम्मानित अन्य विख्यात भारतीयों ने भी महात्मा गॉधी का अनुसरण किया। नोबल पुरस्कार से विभूषित प्रथम पूर्वी लेखक रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने ब्रिटिश राजशाही द्वारा प्रदान की गई बैरन की उपाधि का परित्याग किया। राजकीय संस्थाओं के भारतीय कर्मचारी इस्तीफे देने लगे। गाँधीजी द्वारा घोषित नागरिक असहयोग आन्दोलन जोर पकडता जा रहा था। देश के कोने-कोने में अलाव जल रहे थे, जिनमे कीमती अंग्रेजी कपड़े स्वाहा हो रहे थे और लगता था कि सारे हिन्दुस्तान ने खादी कपड़े पहन लिये।

देश ज्वालामुखी के समान था, जिसके मुँह से जनाक्रोश का धधकता लावा फूट निकला। ब्रिटिश राज की ठोस बुनियाद हिल उठी। जो भय पहले आम जनता को जकडे हुए था, अब वह उपनिवेशवादियो के महलो पर छा गया।

कोटि-कोटि जन के जाने-माने नेता महात्मा गाँधी बढ़ते हुए जन-आन्दोलन पर नजर रख रहे थे, राष्ट्रीय स्तर पर शान्तिपूर्ण जन विद्रोह का आह्वान करने के लिए मुनासिब वक्त का इन्तजार कर रहे थे।

हिंसा-अहिंसा के प्रश्नों पर चिन्तन-मनन करते हुए गाँधीजी निर्णय नही कर पा रहे थे, 'हिमालय जैसी भारी गलतियो' की स्वीकारोक्ति करते, किसी ऐसे सामाजिक-राजनीतिक उपाय की खोज करते रहते, जो तमाम जनता—गरीब और अमीर तबकों—के हित मे हो, वह इस बात से बहुत दुःखी थे कि ऐसा कोई उपाय नहीं सूझ रहा था।

इन दो-तीन वर्षो में आनन्द भवन में अभिजात वर्ग की रीति-नीति और वैभवपूर्ण जीवन-यापन की परम्पराएँ नष्ट हो गई, स्वातन्त्र्य भाव का वातावरण उत्पन्न हुआ जिसमें देशभक्तिपूर्ण भावनाओं और भारतीय राष्ट्रवाद के नैतिक मूल्यों

को प्रधानता दी जाती थी।

घर में ठाकुर की ओजभरी कविताएँ गूँजा करती थीं।

बहुत-से नौकरो के न रहने और सीधे-सादे रहन-सहन ने परिवार को पहले से भी अधिक एकजुट किया। आनन्द भवन मे अब बहुमूल्य कालीन और चित्र, चाँदी और चीनी मिट्टी के कीमती बर्तन नहीं थे, वैभव की पहले जैसी शोभा नही रही, आधे खाली कमरो में फ्रांसीसी इत्र की सुगन्ध नहीं फैली रहती थी, मगर अपने घर से उसके निवासियो का लगाव तनिक भी कम नहीं हुआ। अब घर मे देश की स्वतन्त्रता की भावना का वास था। नेहरू परिवार के लिए यह आनन्द का अक्षय स्रोत था।

यह सब एक दिन बड़े नाटकीय ढंग से, होली जैसी उमगपूर्ण भावना के साथ हुआ।

उस दिन की घटनाएँ छोटी इन्दिरा के स्मृति-पटल पर सदा के लिए अकित होकर रह गई। उत्साहित-उत्तेजित दादाजी के चुस्त निर्देशन मे घर के लोगों ने चौड़े खुले बरामदे पर अपनी बेहतरीन पोशाको तथा विलायती वैभव की चीजों का ढेर लगा दिया। टेल कोट, सिलिंडरनुमा टोपियाँ, बढ़िया जूते, मखमल व रेशम के रग-बिरगे कपडे, मानचेस्टरी ऊन, मुलायम चमडे की वस्तुएँ, छोटी-बडी सब महँगी चीजे—वह सब कुछ, जो कभी यूरोप से खरीदकर लाया गया था, अब फिजूल, उपेक्षित सामान के ढेर के रूप मे फर्श पर बिखरा पड़ा था।

लन्दन से लाई गई खूबसूरत गुडिया को छाती से लगाए इन्दिरा आश्चर्यचकित होकर यह भगदड़ देखती रही। इस गुड़िया से लडकी पल-भर को भी अलग नही होती थी, सोते वक्त भी उसे अपनी बगल मे लिटाती थी। गुड़िया के साथ वह बाते करती थी, अपने छोटे-मोटे राज उसे बताती, उससे सलाह माँगती, उसे गीत सुनाया करती और उसे खिलाना-पिलाना भी नही भूलती थी। यह सब कुछ खेल-ही-खेल मे होता था, लेकिन क्या अपने असली कामों में लोग प्रायः बिलकुल साफदिल होते है ?

संध्या का समय था। आकाश में लालिमा फैल गई, मगर यह अरुण आभा जल्द ही बुझ गई और अँधेरा छा गया, आकाश मे पहले तारे टिमटिमाने लगे।

बड़ो ने चीजो के ढेर पर लकड़ियाँ डालीं, उसके नीचे पार्क से लाई गई सूखी टहनियाँ डाल दी और आग लगा दी।

किसी ने कहा कि इन्दिरा के सोने का वक्त आ गया। यह अनोखा तमाशा बगैर देखे वह जाना नहीं चाहती थी, जिद करने लगी और हमेशा की तरह ऐसी हालतो में दादाजी से मिन्नत-समाजत करने लगी। उन्होंने लड़की को गोद में उठा लिया, लेकिन फिर भी उसे मना-समझाकर सोने के लिए भेज दिया। जब तक आँख नहीं लगी, इन्दिरा खिडकी में देखती रही, जिसके बाहर रात के अँधियारे में आग की लपटें नाच रही थी।

इस घटना के कुछ समय बाद चार वर्षीया इन्दु को कठोर परीक्षा पास करनी पड़ी—जीवन में पहली बार दूसरों के प्रति कर्तव्य की पूर्ति के लिए सचेत होकर भारी

व्यक्तिगत बलिदान देना पड़ा।

विदेश यात्रा से वापस लौटी एक रिश्तेदार आई। वह पेरिस से इन्दिरा के लिए उपहार के रूप मे बहुत ही सुन्दर सजीला फ्रॉक लाई थी।

"मेरी तरफ से इन्दिरा के लिए यह चीज स्वीकार करे," खूबसूरत कशीदाकारी से सजी फ्रॉक पेश करते हुए उसने कमला से कहा।

"माफ कीजिए," घबराते और सकुचाते हुए कमला बोली—"मगर यह शानदार तोहफा हम स्वीकार नही कर सकते...हमारे परिवार मे सभी लोग सिर्फ खादी कपडे पहनते है।"

अतिथि ने कमला पर निगाह डाली, जो रूखे खद्दर की सादी साड़ी पहने थी।

"आप लोग पागल हो गए क्या ?" वह आग-बबूला हो गई। "खैर, आप बालिग है, अपनी खुद सोचें, लेकिन बच्ची के साथ ऐसा दुर्व्यवहार क्यों, उसका भला क्या कसूर है ?"

कमला से रहा नही गया।

"इन्दु, इधर आ जा," उसने गुड़िया के साथ खेलने वाली बिटिया को बुलाया। "आण्टी तेरे लिए विदेशी फ्रॉक लाई है। वह बहुत सुन्दर है, तू उसे ले सकती है और पहन सकती है। लेकिन पहले उस बडे अलाव की सोच, जिसमें हमने तमाम विलायती कपडे जला दिए थे। यह भी सोच कि क्या तू यह सुन्दर कीमती फ्रॉक पहनना चाहेगी, जबकि घर के सभी दूसरे लोग खादी पहने हुए हैं ?"

लड़की ने खूबसूरत फ्रॉक ललचाई हुई ऑखों से देखा। प्रलोभन बहुत ज्यादा था। उसने फ्रॉक छूने को हाथ भी बढाया, लेकिन फौरन सकपकाकर हाथ खीच लिया।

"यह फ्रॉक ले जाइए, मैं नही पहनूँगी," उसने कड़ाई से कहा।

"पर क्यों ? तुझे सुन्दर चीजे अच्छी नहीं लगती हैं क्या ?" महिला ने इसरार किया।

"अच्छी लगती हैं। फ्रॉक बहुत सुन्दर है।" इन्दिरा ने माना। "लेकिन भारतवासियों को विदेशी चीजों को इस्तेमाल नही करना चाहिए," उसने बड़ों के मुँह से सुनी बात दोहरायी।

महिला ने हाथ नचाये और उसे कुछ नही सूझा बजाय चुटकी लेने के—"तू इत्ती बड़ी देशभक्त निकली, तो अपनी इस विदेशी गुडिया की होली क्यों नहीं जला देती ?"

यह सुनकर लडकी हतप्रभ रह गई। उसका मुँह पीला पड़ गया, वह और कुछ नहीं बोली और कमरे से भाग गई।

कमला ने अतिथि पर उलाहना-भरी दृष्टि डाली। "इतनी क्रूरता क्यो ?" उसकी ऑखो मे प्रश्नसूचक असमंजस झलक रहा था।

तब से इन्दिरा गुड़िया के साथ लोगों के सामने नहीं आती थी बोलती-चालती

कम थी और गुमसुम रहती थी। लगता था कि वह कोई कठिन आन्तरिक समस्या हल करने की कोशिश कर रही थी और फिर एक दिन गुडिया को लेकर वह एक खाली ऊपर वाले छज्जे पर चढ़ी। वहॉ पर छोटे अलाव के लिए खपचियो, टहनियों का ढेर लगा था। इन्दिरा ने अलाव पर गुडिया को रख दिया, कॉपते हुए हाथों से आग लगा दी और बौखलाकर इस मनहूस जगह से भाग गई।

शाम होते-होते उसे वुखार चढा, वह रात-भर तडपती और कराहती रही। करीव दो हफ्ते वीमार रही। वहुत दुबली हो गई। आँखें धँस गई और उन पर उदासी की ऐसी छाप पडी, जो मुस्कराते वक्त भी नहीं मिटती थी।

इन्दिरा को जवर्दस्त मानसिक धक्का लगा, उसके बाल-जगत् की होली जल गई।

कई दशक बीतने पर इन्दिरा स्वीकार करेगी कि उसी दिन से जीवन-भर दियासलाई की तिल्ली के जलने की आवाज उनसे बर्दाश्त नहीं होती थी।

2

शब्द और लोग

अगर बच्चों को दु ख, पीडा, एकाकीपन की यातना सहनी पडती है, अगर उन्हें अपने हमउम्रों के साथ विनोद-प्रमोद के बजाय बालिग लोगों की चिन्ताएँ बॉटनी पडती है, तो वे बहुत जल्दी सयाने हो जाते है।

दुबली-पतली, लम्बी लड़की। कटे बाल। बड़ी-बडी गम्भीर ऑखें, जिनमें कभी शान्ति व ऊहापोह, तो कभी आन्तरिक भाव-विह्लता की ज्योति झलकती थी, बताती थी कि इन्दिरा तिरस्कार और अपमान सहने को तैयार नहीं है।

व्यक्तिगत अनुभव, सगे-सम्बन्धियों की संगति और जीवन की परिस्थितियॉं इन्दिरा के चरित्र-निर्माण के निर्णायक तत्त्व थे। वह मुख्य बात जानती थी—भारतवासियो का देश अपमानित है—और विश्वास करती थी कि उसकी मान-मर्यादा की पुनर्स्थापना करना आवश्यक है।

कम-उम्र लड़की औपनिवेशिक शासकों द्वारा दमन और पुलिस अत्याचार की साक्षी बनी। एक बार वह इलाहाबाद में अदालत के कमरे मे दाखिल हुई, जिसमें उसके दादा पर मुकदमे की सुनवाई हो रही थी—उन पर सरकारविरोधी कार्रवाइयों का आरोप लगाया गया था। इन्दिरा उनकी गोद में जा बैठी और नन्हीं देशभक्त अपने को अदालती कार्यवाही का अग महसूस करने लगी। वह गर्व अनुभव कर रही थी और मोतीलाल नेहरू अपनी पोती को गोद में लेकर मानो यह दिखा रहे थे कि उपनिवेशवादी न केवल उन पर, बल्कि पूरे उदीयमान नूतन भारत पर अदालती अत्याचार कर रहे है।

समय-समय पर पुलिस आनन्द भवन पर छापे मारती थी। इन्दिरा की आँखों के सामने घर की तलाशी ली जाती थी, अदालती फैसले पर हरजाने के भुगतान के तौर पर जायदाद जब्त की जाती थी, परिवार के लोगों को भोडे ढंग से अपमानित किया जाता था।

इन्दिरा 10 वर्ष की भी न हो पाई थी कि उसके पिता को पाँच बार गिरफ्तार करके जेल की सजा दी जा चुकी थी। यह सब कुछ झेलना लड़की के भाग्य में बदा था।

इन्दिरा बच्चों के साधारण खेल नहीं खेलती थी। उसका मनपसन्द खेल था उपनिवेशवादियो के विरुद्ध संघर्ष। वह घर के सभी लोगों को एक कमरे में इकट्ठा करके किसी ऊँची जगह पर खड़ी होकर बडे जोश-खरोश से भाषण देती थी। भाषणो का अर्थ कोई नहीं समझता था, लेकिन खेल का प्रयोजन साफ था—इन्दिरा जन-समूह के सामने भाषण देने वाले अपने पिता की नकल करती थी।

गाँधीजी की सलाह पर आठ वर्षीया इन्दिरा ने इलाहाबाद में बाल करघा क्लब स्थापित किया। बच्चे आनन्द भवन मे जमा होकर सत्याग्रहियो के लिए रूमाल और गाँधी टोपियाँ बनाते थे।

इन्दिरा की नजरों में यह काम स्कूल की पढाई से कहीं अधिक आकर्षक था। स्कूली शिक्षा व्यवस्था, जो अंग्रेजों के हाथों में थी, नेहरू परिवार में व्याप्त भावना के सर्वथा प्रतिकूल थी। स्कूल के शिक्षक बच्चों की नजरो में भारत में ब्रिटिश शासन की अटल बुनियाद की प्रशसा करना, साम्राज्य की महिमा का गान करना अपना कर्तव्य मानते थे।

इन्दिरा बडी मुश्किल से अपने को स्कूल जाने के लिए विवश करती थी, स्कूली व्यवस्था के विरुद्ध उसका मन विद्रोह करता था। पढ़ाई के विषय उसे नीरस प्रतीत होते थे और वह किताबें पढ़ने में वक्त लगाती थी। भाषाओं के अध्ययन में वह तेज थी और अंग्रेजी मे आसानी से पढती थी।

भारतीय जगलो में जानवरों के जीवन के बारे मे रुड्यार्ड किपलिंग की रोचक कहानियाँ उसे बहुत पसन्द थी। चार्ल्स डिकिंस की पुस्तके पढते हुए वह अपने को लन्दन के गरीब मुहल्लो मे पाती, जहाँ छोटा दिलेर ओलिवेर ट्विस्ट बडे धीरज से भाग्य के प्रहार सहता था। ज्यूल वेर्न के नायकों के साथ वह सागरों-महासागरो को पार करते हुए लम्बे दिलचस्प सफर करती थी, एच. जी. वेल्स की कहानियों के काल्पनिक नायको के बारे मे बडी जिज्ञासा के साथ पढती थी, वाल्टर स्कॉट के उदार, साहसी सूरमाओं के कारनामों पर मुग्ध होती थी, टॉम सॉयर तथा हेकलबरी फिन की मजेदार हरकतों के बारे मे पढ़ते हुए हँस-हँसकर लोट-पोट हो जाती थी।

विक्तोर ह्यूगो की पुस्तको में जनसाधारण के दूभर जीवन के यथार्थवादी वर्णन ने उसे मन्त्रमुग्ध कर दिया था। उपन्यास 'उपेक्षित जन' और 'हँसने वाला आदमी' ने इन्दिरा का दिल झकझोर दिया और उसके मन पर अमिट छाप छोडी। आम लोगो की गरीबी और मुसीबतों से फायदा उठाकर अपनी जेबें गरम करने वाले परोपजीवियो के प्रति घृणा की भावना उसके मन मे और अधिक उग्र बन गई।

अपने पिताजी की प्रिय पुस्तक—इटली के जन वीर जुजेप्पे गैरिबाल्दी के बारे में एम. त्रेवेल्यान की रोचक किताब, दक्षिणी अमरीका में स्पेनी उपनिवेशों की जनता के संघर्ष के नेता सिमोन बोलिवार के बारे मे कहानियाँ इन्दिरा बारम्बार पढ़ती थी, लेकिन सबसे अधिक वह जोन ऑफ आर्क के बारे मे किताबो से प्रभावित हुई, जिसने 15वीं सदी में अंग्रेज हमलावरों के विरुद्ध फ्रांसीसी जन-सघर्ष की अगुआई की

रात को विशाल, सुनसान घर में सोते समय इन्दिरा के सामने जोन ऑफ आर्क के जीवन की घटनाओ के दृश्य उभरते थे। वह देखती थी कि किस तरह इस वीरागना ने अंग्रेज सैनिकों की घेरेबन्दी से ओर्लेआन नगर को मुक्त किया, कैसे बुर्गुन्दी वालों ने उसके साथ विश्वासघात किया और उसे चुड़ैल बताया, किस तरह अलाव की अग्निशिखाओं से घिरी वह सिर ऊँचा किए खड़ी थी। 'कितना सार्थक जीवन बिताया उसने और कितने साहसपूर्वक मौत को गले लगाया,' इन्दिरा सोचती थी और जोन ऑफ आर्क जैसा पराक्रम करने का सपना देखती थी।

सन् 1925 का पतझड़ आया। बाग मे घास झुलस गई थी, पेड़ो की पत्तियाँ मुरझा गई थी और लगता था कि आनन्द भवन में आनन्द का स्रोत सूख चुका है।

कमला की धँसी हुई ऑखो की चमक मे से अस्वस्थता टपकने लगी थी। समयपूर्व प्रसव के कारण उसने खाट पकड ली, बुरी तरह खॉसती थी और सॉस लेने मे दर्द अनुभव करती थी।

नवजात बच्चा सिर्फ दो दिन जिया। भाई की मौत से इन्दिरा बहुत दुःखी थी, लेकिन मॉ की तेजी से बिगड़ती हालत को देखकर दिल और ज्यादा दर्द करता था।

जेल से लौटे जवाहरलाल ने अपनी पत्नी को बहुत नाजुक हालत मे पाया।

"लेडी को स्वीट्ज़रलैण्ड जाना चाहिए," कमला की जॉच करके डॉक्टर ने कहा। "वहाँ अच्छा जलवायु, ताजी हवा, अनुभवी डॉक्टर है।" और जवाहरलाल को एक तरफ ले जाकर फुसफुसाए—"यह तपेदिक है.. आप समझते हैं कितनी खतरनाक बीमारी...वसन्त आएगा, तो हालत और बिगड़ जाएगी...पहाडों में उसे कुछ राहत मिलेगी। यदि हो सके, तो जल्दी-से-जल्दी जाइए।"

डॉक्टर का परामर्श सुनकर परिवारजनों ने निश्चय किया कि जरूर जाना चाहिए। यात्रा के लिए धन जुट गया—रिश्तेदारों ने मदद दी और पहली मार्च, 1926 को जवाहरलाल, कमला और इन्दिरा मुम्बई से वेनिस के लिए समुद्री-यात्रा पर रवाना हुए, वेनिस से रेल द्वारा जेनेवा पहुँचे। इन्दिरा के लिए यह अनोखा अनुभव था। लडकी के सामने बिलकुल दूसरी दुनिया के द्वार खुल गए। उसके रंग, गध, लय, सगीत, लोगो की भाषा, उनके मुँह और कपड़े—सब कुछ असामान्य और आश्चर्यजनक था। उसके कुछ पहलू बहुत अच्छे लगते थे, हर्षोल्लास पैदा करते थे, दूसरे पहलू भयभीत कर देते थे, कुछ चीजे अपनी ओर आकर्षित करती थीं, दूसरी अखरती थी।

जेनेवा के उपनगर में पिताजी ने एक छोटा साधारण फ्लैट किराये पर ले लिया। माँ अभी बहुत कमजोर थी और इन्दिरा को घर का सारा कामकाज सँभालना पड़ा—बाजार व दुकानों से सौदा खरीदना, खाना बनाना, सफाई करना उसकी जिम्मेदारी थी। इलाज के प्रबन्ध के अलावा पिताजी को और भी बहुत-से काम थे। वह भारतीय राजनीतिक प्रवासियों से मिलते थे, विभिन्न सार्वजनिक संगठनों तथा समाचार-पत्रों के सम्पादकों के साथ पत्र-व्यवहार करते थे, स्थानीय पुस्तकालयों मे काम करते थे कई बार भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के काम के सिलसिले में कुछेक दिनों

के लिए वह पेरिस, बर्लिन तथा लन्दन हो आए, अपनी पार्टी के अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्क स्थापित तथा विस्तृत करने मे लगे रहे, परन्तु बहुत व्यस्त रहने के बावजूद पिताजी मॉ का बड़ा ख्याल रखते थे, पहले से कही अधिक स्नेह व ध्यानपूर्वक उसकी चिन्ता करते थे। रोगग्रस्त होते हुए भी मॉ सुखी लगती थी और मालूम पडता था कि बीमारी का जोर कुछ कम होने लगा। साथ ही तपेदिक के लिए सबसे खतरनाक वसन्त काल भी गुजर गया।

जेनेवा मे गर्मियों का सूखा सुहाना मौसम था। कभी-कभी लुभावनी सध्या के समय परिवार सैर के लिए निकलता था। सरोवर के तटबंध पर टहलते हुए वे मोन-रेपो पार्क की राह पकड़ते थे, 'पर्ल द्यू लक' रेस्तराँ में खाना खाते थे, जो जेनेवा सरोवर के तट पर बने लकड़ी के मकान में अवस्थित था। वहॉ बहुत स्वादिष्ट मछली परोसी जाती थी और बाद मे बढ़िया स्विस पनीर पेश की जाती थी।

मगर आराम-मनोरजन के लिए वक्त पूरा नही पड़ता था। पिताजी ने इन्दिरा की पढाई का प्रबन्ध किया, ताकि यूरोप निवास का समय बेकार बर्बाद न हो। पैसो की कमी थी, लेकिन बेटी की उचित शिक्षा के लिए माँ-बाप ने जरूरी धन जुटाया। किफायत से काम लिया, कमला के बचे-खुचे आभूषण बेचकर अन्तर्राष्ट्रीय स्कूल मे इन्दिरा की शिक्षा की फीस अदा की।

इन्दिरा को बहुत मुश्किल पडी—उसे फ्रासीसी भाषा सीखनी पडी, लेकिन अपनी लगन तथा सफलता से उसने माँ-बाप के हृदयो को गद्‌गद कर दिया।

शरत्काल में चिकित्सकों की सलाह पर कमला को मोंटान पहाड़ी सेनेटोरियम मे दाखिल किया गया और इन्दिरा उस सेनेटोरियम के निकट एक स्कूल में पढने लगी। क्लास जाना उसके लिए समारोह के समान था, कई हमउम्र बच्चो के साथ उसकी दोस्ती हो गई। वह फर्राटे से फ्रासीसी बोलती थी।

स्कूल की प्रिंसिपल मिस हैम्मेरलीन इस गम्भीर, संयत भारतीय लड़की के साथ सहज संसर्ग स्थापित करने, उसका दिल जीतने मे सफल हुई। इसी संवेदनशील तथा बुद्धिमान महिला ने इन्दिरा के मन मे फ्रासीसी भाषा तथा संस्कृति के प्रति लगाव के बीज रोपे थे। प्रधानमन्त्री बनने पर भी इन्दिरा गॉधी ने अपनी भूतपूर्व अध्यापिका के साथ पत्र-व्यवहार जारी रखा।

मोंटान की स्वच्छ शीतल हवा, सनोबर पेड़ों की मादक सुगन्ध, पर्वतों की शाश्वत निस्तब्धता, स्की, स्केट्स और स्लेज से दौड, युवाजन्य उल्लास के साथ बर्फ से खेलते हुए पिता, मॉ का सुखी मुख—इन सभी सजीव छापो, महको व रंगो की तस्वीर इन्दिरा के स्मृति-पटल पर उसके बचपन के सबसे उजले और निश्चिन्त दिनो के दृश्य के रूप मे अकित होकर रह गई।

परन्तु पिताजी का स्वभाव ही ऐसा था कि जेलखाने की दीवारों को छोडकर और कोई चीज उन्हें बहुत देर तक एक जगह पर रोके नही रख सकती थी। ज्यो ही माँ की तबीयत कुछ सुधरी वह बर्लिन चले गए जहाँ लीग के

सदस्य उत्पीड़ित जनगण की अन्तर्राष्ट्रीय काग्रेस की तैयारियों कर रहे थे। कालान्तर मे सन् 1927 में उन्होंने ब्रसेल्स में उस काग्रेस के काम में भाग लिया।

उस वर्ष नेहरू परिवार के लगभग सभी लोग यूरोप में इकट्ठे हुए। स्वयं मोतीलाल नेहरू वहाँ पहुँचे और इन्दिरा की मौसी कृष्णा पहले ही आ चुकी थी। वैसे तो इन्दिरा की ओर वे खास ध्यान नहीं देते थे। सभी के अपने-अपने फौरी काम थे। मगर सच बात तो यह है कि इन्दिरा असाधारण ढग की स्वावलम्बी बालिका थी, बालिगों की सरपरस्ती की जरूरत महसूस नहीं करती थी। करीब-करीब सारा समय पढ़ाई में लगाती थी और हर रविवार के दिन तथा शाम को माँ के साथ रहती थी, उसे माँ का अमूल्य संसर्ग मिलता था, जब बत्ती की मद रोशनी मे वे बीते सप्ताह की घटनाओं के बारे में बातें करतीं, विभिन्न विषयों की चर्चा करतीं तथा बारम्बार इतनी दूर स्थित आनन्द भवन को याद करती। दोनों स्वदेश, घर लौटने को बेताब थी।

इस बीच पिताजी पूर्व के उत्पीडित जनगण के साथ यूरोपीय देशों की मजदूर पार्टियों की एकता को बढ़ाने के विचार से प्रेरित होकर, मानो बाकी सब कुछ भूल गए थे, समय, शक्ति और खर्च की परवाह न करते हुए पेरिस, ब्रसेल्स, बर्लिन, प्राग, वियेना और लन्दन की यात्रा करते रहते थे।

सन् 1927 के नवम्बर महीने के आरम्भ मे विदेशो के साथ सांस्कृतिक सम्पर्कों के अखिल सोवियत समाज के निमन्त्रण पर नेहरू परिवार ने महान् अक्टूबर समाजवादी क्रान्ति की 10वी जयन्ती के समारोह के सिलसिले में बहुचर्चित रहस्यपूर्ण मास्को की सैर की। केवल इन्दिरा नहीं जा पाई—स्वदेश लौटने से पहले उसे स्कूल की पढ़ाई पूरी करनी थी। निःसन्देह उसे बहुत बुरा लगा, लेकिन माँ-बाप का निर्णय स्वीकार करना पडा। गर्वीली और स्वाभिमानी लड़की कभी नाहक जिद्द नहीं करती थी और मन की ठेस जाहिर होने नहीं देती थी।

स्टीमर पर सवार होकर मार्सेई से स्वेज तक, फिर कोलम्बो से होकर मद्रास तक वे लोग भारत लौट आए।

इन्दिरा को एक बार फिर नये देश और नगर देखने, समुद्री विस्तार की स्वच्छ ताजी हवा में जी-भर साँस लेने का अवसर मिला, जो कारखानों की चिमनियो के कड़ुवे धुएँ से दूषित नहीं थी।

नगरवासियों के जीवन में प्रकृति घर की चहारदीवारी, सड़कों, छोटे पार्कों के चौखटे में सीमित रह जाती है, अतः कुछ लोगों की नजरों मे विशाल विश्व सिमटकर उनके फ्लैट, सड़क अथवा चौक की संकीर्ण परिधि में समा जाता है, जिस पर वे प्रतिदिन एक ही मार्ग से गुजरते रहते है।

घण्टों तक इन्दिरा ऊपरी डेक पर खड़ी रहती। सागर के रंगों और उनकी — — में निरन्तर परिवर्तन होता रहता था सागर कभी उमडता था तो

कभी शान्त हो जाता था, लेकिन वह सदा गतिशील रहता था।

"पापा, यह संसार कैसे बन गया ? किसने उसे बनाया ?" वह पिताजी से पूछती थी।

कवि जैसे भावुक और जिज्ञासु इतिहासज्ञ पिता यह भूलकर कि उनके सामने एक मासूम बच्ची है, जो बहुत कुछ समझ नही सकती, गूढ ज्ञान को सुबोध बनाने की चेष्टा न करते हुए गम्भीरतापूर्वक अपनी पुत्री को चार हजार वर्ष से अधिक समय पहले लिखित वेदों के बारे में बताते थे।

पिताजी के ख्याल मे, वेद देववाणी नहीं है, जैसा कि बहुत-से हिन्दू विश्वास करते हैं। यह विश्व को समझने तथा उसकी व्याख्या करने के मानव के प्रयत्नो का फल है। वेदों में अतीत काल के लोगों का ज्ञान एकत्रित हुआ है। सम्भवतः, ये मानव-जाति के प्राचीनतम ग्रन्थ हैं।

"इन्दु, वेदो में मानव विवेक की आरम्भिक अभिव्यक्तियाँ, काव्यात्मक प्रेरणा, प्रकृति के सौन्दर्य तथा रहस्यों के प्रति श्रद्धा भाव के प्रमाण विद्यमान हैं," जवाहरलाल ने कहा। "इनमे लोगों की साहसपूर्ण खोजो की अभिव्यक्तियॉ देखने को मिलती है, जिन्होंने अनादिकाल से विश्व का अर्थ समझने और उसमें मनुष्य के स्थान व महत्त्व का बोध करने का यत्न किया था। सुदूर अतीत में भारत ने मानसिक खोजों के मार्ग पर पॉव रखा था, आज भी वह उस पर बढ़ रहा है और हमेशा बढता रहेगा।"

इन्दिरा बड़े ध्यान से पिताजी की रोमांचकारी बातें सुनती थी, उनमें कुछ वह समझती थी, कुछ नहीं समझ पाती थी, लेकिन उसे तनिक भी सन्देह नहीं था कि यह अकाट्य सत्य है। यह सोचती थी कि समय आएगा और वह सब कुछ समझेगी। ऐसे क्षणों में इन्दिरा का मन हर्षित-पुलकित हुआ करता था।

चंचल-चपल डोल्फिन मछलियो का झुण्ड जहाज का पीछा कर रहा था और समुद्र दूरस्थ क्षितिज तक अपनी विराट लहरे फैला रहा था, जहाज को हिला-डुला रहा था। गुजायमान जलधाराएँ जहाज के पीछे रह जाती थीं।

लड़की को लगता था कि उसका अस्तित्व ब्रह्माण्ड के महान् रहस्य का अंग है। चिरन्तन सजीव नीले जल का विस्तार, ये अद्‌भुत डोल्फिन मछलियॉ, आकाश और सूर्य--वह अपने को इस जीते-जागते, प्रकाशमान् तथा गूँजते विश्व के साथ एकाकार होती अनुभव करती थी।

"वेद के रचयिता की प्रतिभा कितनी विलक्षण थी," पिताजी के कथन को इन्दिरा सुनती ही नहीं, हृदयंगम करती थी--"यदि मानव सभ्यता के उषाकाल मे केवल अन्तर्ज्ञान के आधार पर उसने यह निष्कर्ष निकाला था कि केवल आस्था मनुष्य के लिए काफी नहीं है, आस्था के सिवा विश्वास भी होना चाहिए और ऋग्वेद के प्रसिद्ध नासदीय सूक्त मे ईश्वर-तत्त्व के बिना विश्वोत्पत्ति का विवेचन करने का पहला प्रयास किया गया था।

अर्थात् विश्व के सृजन के बाद देवताओं का आविर्भाव हुआ वेदों में कह

गया है। तुम समझती हो, इन्दु, इसका मतलब क्या है ? मतलब यह कि भगवान् ने इन्सान को नहीं बनाया, बल्कि इन्सान ने अपनी कल्पना में देवताओं को जन्म दिया।"

जब सूरज ऊपर चढ़ता था, मुसाफिर धूप से बचने के लिए अपने केबिनो मे चले जाते। जवाहरलाल इससे लाभ उठाते हुए तब सोवियत संघ की यात्रा के बारे मे शब्दचित्र लिखने के लिए समय निकाल लेते थे। मगर जिज्ञासु इन्दिरा उनका पीछा नही छोड़ती थी। क्रेमलिन के कक्ष में प्राव्दा समाचार-पत्र पढ़ते हुए लेनिन का फोटो देखकर वह पिताजी से बहुत सारे सवाल पूछती थी और वह बड़े धीरज से विस्तारपूर्वक सभी प्रश्नों के उत्तर देते थे।

"हाँ, इन्दु, लेनिन के निबन्ध पढ़कर और सोवियत संघ की यात्रा करके अब मै अन्तर्राष्ट्रीय मामलो को बेहतर समझने लगा, आज की बदलती हुई दुनिया की गतिविधियों का सार मेरे लिए ज्यादा साफ हो गया है।"

पति के कन्धे पर अपना पतला सुन्दर हाथ रखकर माँ भी बातचीत में शामिल होती थी।

माँ-बाप को साथ देखकर इन्दिरा का मन मयूर की भाँति नाचने लगता था। वह देखती थी कि यह संग-साथ उन्हे पसन्द है। इसलिए वह भी बहुत प्रसन्न होती थी और लड़की का दिल इन दो व्यक्तियों के प्रति स्नेह की भावना से भर जाता था, जिन्होंने उसे यह सुखद जीवन दिया है।

अपने मन की बातों को मुखरित करते हुए पिताजी सोवियत सघ में हुई भेंट-मुलाकातों की याद करते थे। वह सोवियत संसद के अध्यक्षमण्डल के अध्यक्ष कलीनिन, लेनिन की विधवा क्रूप्स्काया, विदेश मन्त्री चिचेरिन, सोवियत सस्कृति और शिक्षा के कार्यकर्ताओं से मिले, मास्को में 'सोवियत संघ के मित्रो' की कांग्रेस में सुन सिन लिंह, अनरी बर्ब्यूस, क्लारा जेटकिन, सेन कतायामा और अनेक अन्य व्यक्तियो से बाते कीं, जिनसे वह उससे पहले साम्राज्यवादविरोधी लीग मे मिलकर काम करने के समय परिचित हो चुके थे।

पिताजी ने बताया कि सोवियत सघ में सामाजिक तथा आर्थिक समस्याओ के समाधान का अनुभव हिन्दुस्तान के लिए अमूल्य है। सोवियत रूस शीर्षक अपनी पहली पुस्तक में उन्होंने लिखा कि अगर रूस इन समस्याओं का समुचित हल निकाल लेगा, तो हिन्दुस्तान में हमें अपने काम में सहूलियत होगी।

दिसम्बर, 1927 के अन्त में नेहरू परिवार भारत के दक्षिणी बन्दरगाह मद्रास पहुँचा।

लोग ठीक ही कहते हैं कि हर देश की अपनी खास महक होती है। इन्दिरा ने तुरन्त ही अपने देश की सुरभित साँस महसूस की।

हिन्दुस्तान के दक्षिण में तब तक इन्दिरा कभी नहीं गई थी वह उत्तरी भारत से बिलकुल भिन्न है लेकिन उस पर भारतीयपन की आम छाप है उसमें इस

विविधरूपी देश के लिए लाक्षणिक रंगों, ध्वनियों, सुगंधों का अनुपम मेल विद्यमान है।

मातृभूमि के मौलिक स्वरों से वातावरण गुंजायमान था, उनका जादू मन पर छा जाता, नारियो के चॉदी के कगनों की झनक, नारियल के पेडो की पत्तियों की सरसराहट, बाजारो की चहलपहल की स्वर-लहरियो, प्राचीन मन्दिरो की अनगिनत मूर्तियों की मुद्राओ से यह मनमोहक सगीत फूट रहा था।

रंग-बिरंगे भित्तिचित्रों की विविधता, हिन्दू मन्दिरों की परिष्कृत आकृतियॉ, प्राचीन स्मारको की शाश्वत निस्तब्धता भारतीय सभ्यता के पुरातन इतिहास की याद दिलाती थी।

पुरातन काल में विदेशी हमलावरों की चढ़ाई के कारण उत्तरी भारत के मूलनिवासी दक्षिण जाकर दुर्गम वनखण्डों के पीछे शरण लेने के लिए विवश हुए थे। इस प्रकार उपमहाद्वीप का दक्षिणी भू-भाग भारत के प्राचीन आत्मिक व नैतिक मूल्यो का योग, अतीत के 'स्वर्णयुग' के आदर्शो का संरक्षक बन गया था।

परन्तु उत्तर की दिशा मे आए विजेता प्राचीन भारत की सभ्यता का हनन करने मे समर्थ नही हुए, स्थानीय जनता के साथ उनका विलय हो गया और कालान्तर मे स्वाभाविक विकास-क्रम के फलस्वरूप वे भी राष्ट्रीय स्वरूप की दृष्टि से वास्तविक भारतवासी बन गए।

यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति से पहले भारत अपने सुविकसित हस्तशिल्पो और व्यापार के लिए प्रसिद्ध था, वह दूसरे देशों, इंग्लैण्ड को भी नाना चीजों का निर्यात करता था। इग्लैण्ड के लिए भारत मे अन्य वस्तुओ के अलावा समुद्री जहाज तक बनाए जाते थे। उदाहरण के लिए, नेपोलियन युद्धों के काल मे ब्रिटिश नौसेना का फ्लैग जहाज भारतीय कारीगरो द्वारा निर्मित था। उत्पादन तथा व्यापार के स्तर और वित्तव्यवस्था की दृष्टि से उस समय भारत किसी भी यूरोपीय राज्य से पीछे नही था और कई किस्मो के माल की गुणवत्ता की दृष्टि से तो वह उनसे आगे ही था।

अग्रेजों के प्रत्यक्षदर्शी वृत्तान्तो के अनुसार, हिन्दुस्तान के मुर्शिदाबाद अथवा ढाका जैसे हिन्दुस्तान के अपेक्षाकृत छोटे शहर तक लन्दन से अधिक बडे और धनी थे। अग्रेज 17वी सदी मे हिन्दुस्तान आए, जब ब्रिटिश सरकार द्वारा पारित किए गए कई चार्टरों के फलस्वरूप ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने तेजी से अपना प्रभाव-क्षेत्र बढाना शुरू किया था। सन् 1698 में कई व्यापारियो ने द्वितीय ईस्ट इण्डिया कम्पनी कायम की। फिर सन् 1708 में ये दोनों कम्पनियॉ सम्मिलित हुई और भारत मे उसका कारोबार तेजी से बढने लगा।

18वीं शताब्दी में अंग्रेजो ने मद्रास में सेण्ट जार्ज फोर्ट और बन्दरगाह का निर्माण किया। तब तक यह ब्रिटिश कम्पनी भारत में सबसे धनी कम्पनी बन चुकी थी।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी का व्यापारिक कार्यकलाप (जो वस्तुतः लूट-खसोट ही था उतनी प्रबल उत्पीडक शक्ति सिद्ध हुई जो भारत के सभी पूर्ववर्ती विजेताओं के पास नहीं थी

यहॉ, मद्रास मे, जहॉ से अग्रेज उपनिवेशीकरण का आरम्भ हुआ, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नियमित अधिवेशन का आयोजन किया जा रहा था, जिसमें भाग लेने के लिए जवाहरलाल नेहरू अत्यन्त इच्छुक थे।

भारत के जनसाधारण बड़ी घटनाओ की प्रतीक्षा कर रहे थे और जवाहरलाल नेहरू काग्रेस के कार्यकलाप को नयी दिशा देने के लिए दृढसकल्प थे। वह चाहते थे कि काग्रेस समाज के सम्पन्न वर्गो की सकुचित राष्ट्रवादी आकांक्षाऍं अभिव्यक्त करने वाली संस्था तक ही सीमित न रहकर भारत की पूर्ण राष्ट्रीय स्वतन्त्रता की दूरगामी मॉग पेश करे। कांग्रेस अधिवेशन मे उन्होंने आजादी के लिए संघर्ष का साहसपूर्ण प्रस्ताव रखा। मगर जवाहरलाल नेहरू की नजर मे यह सही दिशा मे उठाया गया केवल पहला कदम था। अतः उन्होंने स्पष्ट रूप से घोषणा की कि "सामाजिक स्वतन्त्रता और समाज तथा राज्य की समाजवादी व्यवस्था के बिना न तो देश और न ही मानव का स्वतन्त्र विकास हो सकता है।"[1]

कांग्रेस अधिवेशन के दिनों में नेहरूजी बड़ी देर से होटल लौटते थे, बहुत थके हुए और उत्तेजित होते थे। बेटी और पत्नी उत्सुकता से उनकी प्रतीक्षा करती थी, बारम्बार खाना गरम करती थीं। लेकिन लौटने पर भी उन्हे फुरसत का समय नही मिलता था। खाना खा चुकने पर वह मेज के पास बैठकर देर तक काम करते थे। और सुबह के समय इन्दिरा भारत और यूरोप के नाना स्थानों के लिए चिट्ठियों का मोटा पुलिन्दा डाकघर ले जाती थी।

मॉ और पिताजी की बातचीत से लड़की समझती थी कि काम ठीक तरह से चल रहा है और पिताजी प्रसन्न हैं, मगर कांग्रेस के 'पुराने गार्ड' ने उनका विरोध किया और महात्मा गॉधी ने भी उनकी 'क्रान्तिकारी जल्दबाजी' के सिलसिले मे असन्तोष प्रकट किया। गॉधीजी ने कहा कि इतनी बुनियादी मॉगे पेश करने का समय अभी नही आया, कि नदी में पॉव रखने से पहले पानी की गहराई को मापना चाहिए, आदि।

अपनी तरफ से जवाहरलाल ने हिचकिचाहट और ढीले नेतृत्व का उल्लेख करके गॉधीजी को उलाहना दिया, जिसके जवाब में गाँधीजी ने कहा कि "उनके आदर्शो मे बडा अन्तर है।"[2]

"हमारा मतभेद इतना व्यापक और महत्त्वपूर्ण हो गया कि सम्भवतः हम सयुक्त कार्यक्रम से वंचित हो रहे हैं," गॉधीजी ने लिखा। "मै आपसे यह नहीं छिपा सकता हूॅ कि मै यह सोचकर दुःखी हूॅ कि आप जैसे दृढ, निष्ठावान, योग्य और ईमानदार साथी को खो रहा हूॅ। लेकिन लक्ष्य-प्राप्ति हेतु साहचर्य का कभी-कभी बलिदान करना आवश्यक होता है।"[3]

---

1 A Gorev, V Zimyanin, *Javaharlal Nehru*, Moscow, Progress Publishers, 1982
2. Ibid.
3 Ibid

अपने गुरु का यह विषादपूर्ण पत्र पढकर जवाहरलाल के हृदय को ठेस पहुँची। वह नहीं चाहते थे कि महात्मा गाँधी से नाता टूट जाए, जो कोटि-कोटि भारतीय जनसाधारण के सर्वमान्य नेता बन चुके थे और जिनकी सच्ची देशभक्ति में वह पूरा विश्वास रखते थे।

माँ भी बहुत दु खी हुई, नेहरू परिवार के साथ गाँधीजी के स्नेहपूर्ण सम्बन्ध की वह बड़ी कद्र करती थी।

उस दिन नेहरूजी काम नहीं कर सके और यह कहकर कि उन्हें मन बहलाना चाहिए, उन्होने कमला और इन्दिरा के सामने सैर करने का सुझाव रखा।

उन्होंने सेंट जार्ज फोर्ट का भ्रमण किया, जिसे उपनिवेशवादियो ने बनाया था। यह एक पूरी नगरी है, मजबूत दीवारों से घिरे किले के परिसर में अनेक सडके-गलियाँ, रिहायशी मकान और ऑफिसो की इमारते, बैक, फौजी बैरके और यहाँ तक कि जेलखाना भी है।

इन्दिरा को लगता था कि ऐसा कोई भी विषय नहीं है, जिससे पिताजी अनभिज्ञ हो। अब उसने उनसे उस फोर्ट का इतिहास सुना, 'ब्रिटिश साम्राज्य के एक संस्थापक' रोबेर्ट क्लाइव की कहानी सुनी, जिसे शरोपशायर काउण्टी में 'शिक्षको का शाप' कहते थे। उसने कई स्कूल बदले थे, मगर वह कहीं भी विषय का ज्ञान प्राप्त नहीं कर पाया। उसे दर्जी का काम सिखाने का प्रयत्न भी असफल रहा और तब निराश होकर उसके बाप ने अपने पुत्र को हिन्दुस्तान भेज दिया। सन् 1743 मे ईस्ट इण्डिया कम्पनी के छोटे क्लर्क (वार्षिक वेतन 15 पौड) के रूप मे क्लाइव मद्रास पहुँचा। और कई वर्ष बाद लार्ड, प्लासी के बैरन तथा जनरल की पदवियाँ पाकर उसने ब्रिटिश संसद में दम्भ-भरे स्वर में कहा कि सोना-चाँदी तथा हीरे-जवाहरात से भरे भण्डारों के द्वार उसके सामने खुले थे। रोबेर्ट क्लाइव दुनिया का एक सबसे अमीर व्यक्ति बन गया। लोग कहते थे कि जब कोई गरीब उससे भीख माँगता था, तो वह तिरस्कार से जवाब देता था—"इस वक्त मेरी जेब में छोटे-मोटे हीरे नहीं है।"

दुस्साहसवादी लुटेरा क्लाइव औपनिवेशिक आधिपत्यकारी युग की सन्तान था। छलकपट और विश्वासघात के सहारे क्लाइव ने मुगल राजवश के आपस मे लडते-झगड़ते शासकों को बिना किसी खास दिक्कत के हरा दिया। और भारत के आम लोग निश्चिन्त बने रहे—अनगिनत दरबारी षड्यन्त्रों, सत्ता-परिवर्तनों, रिश्वतखोरी, लूट के बँटवारे और खून-खराबे से उनका भला क्या वास्ता था? उनका धर्म खेतीबारी और दस्तकारी था। वे मेहनत करते थे, निर्माण करते थे, देश की सम्पदा का सृजन करते थे और देशी तथा विदेशी उत्पीड़को के विरुद्ध क्रोध की प्रबल भावना उनके हृदयों से संचित हो रही थी।

जैसा कि जवाहरलाल नेहरू ने कहा हिन्दुस्तान के सोने के दरख्त को बराबर धक्के दिए जाते रहे और भारतीय सम्पदा की अजस्र धारा इग्लैण्ड की औद्योगिक क्रान्ति को पोषित करती रही

ब्रिटिश बुर्जुआ वर्ग ने यो ही क्लाइव का गुणगान नही किया था—अगर इग्लैण्ड 'दुनिया का लुहारखाना' बन गया, तो उसमें उसका भी अशदान रहा। लन्दन मे इण्डियन डिपार्टमेण्ट के फाटक के सामने क्लाइव का स्मारक स्थापित किया गया, जो कि कुख्यात ब्रिटिश उपनिवेशवाद का स्मारक था।

नेहरू परिवार ने दक्षिणी भारत का भ्रमण किया।

दक्षिण भारतीय स्त्रियों के बड़े समूह के सामने अपनी माँ को भाषण देते हुए देखकर और सुनकर इन्दिरा का दिल गद्‌गद हो उठा।

माँ नारी सुलभ हार्दिकता और सहजता से बोली, बहुत विश्वासपूर्वक और दिल खोलकर उसने बहुत सारे सवालो के जवाब दिए। उसका भाषण बहुत सफल रहा।

अपनी माँ पर गर्व, उसके साहस, विवेक, सौन्दर्य की प्रशसा से इन्दिरा का मन पुलकित हो गया।

"माँ, मैं तुम्हें प्यार करती हूँ," वह माँ के कान मे फुसफुसाती थी और उसके सलोने चेहरे, हर्षाश्रुओ से भरी उनकी आँखें देखकर लड़की भावुक हो जाती थी।

स्वयं कमला भी खुश थी। उसने पक्का निश्चय कर लिया था कि वह भी अपना जीवन उसी ध्येय के लिए न्योछावर करेगी, जिसकी सेवा उसके पति कर रहे है। पूरी जनता का यह ध्येय अब उसका अपना ध्येय बन गया था और इसी ध्येय को उसकी पुत्री के भी नये भविष्य का मार्ग प्रशस्त करना था। अब उसका मन गुजरी सदियों के अन्धविश्वासों तथा पूर्वाग्रहों के भारी बोझ से मुक्त हो गया था, जिनके कारण भारतीय महिलाएँ सार्वजनिक जीवन मे भाग लेने के अधिकार से वचित रही थी।

जवाहरलाल यही चाहते है, स्वय कमला की भी यह हार्दिक इच्छा है, ऐसा है उसका सौभाग्य।

"मैं तुम जैसी बनूँगी, माँ," कमला से लिपटकर इन्दिरा फुसफुसाती है। "जरूर तुम जैसी ही बनूँगी...।"

इलाहाबाद जाते समय वे अद्‌भुत जनोत्साह के साक्षी बने, जो सारे भारत मे व्याप्त था। ध्यान रहे, यह देशव्यापी जन-आन्दोलन अराजकतापूर्ण तथा अव्यवस्थित नहीं था, यह जनसाधारण का सचेत सगठित आन्दोलन था। सभी लोग भली-भाँति जानते थे कि उपनिवेशवादियो के विरुद्ध किस तरह सघर्ष करना चाहिए और उस संघर्ष का लक्ष्य क्या है।

कांग्रेस तथा उसके नेता महात्मा गाँधी के आह्वान पर सत्याग्रह सघर्ष का उपाय बन गया। सत्याग्रह आन्दोलन का उद्देश्य साइमन आयोग का बहिष्कार था, जिसे ब्रिटिश ससद ने हिन्दुस्तान मे प्रशासन की व्यवस्था की जाँच करने तथा यह पता लगाने का आदेश दिया था कि निर्वाचित प्रतिनिधिमूलक संस्थाओ के अधिकार-क्षेत्र का विस्तार करना उचित है अथवा नहीं।

साइमन जहाँ कहीं भी गया वहाँ सर्वत्र काले झण्डे लहराते नजर आते थे

विराट शान्तिपूर्ण प्रदर्शनो मे इकट्ठे होने वाले लोग नारे बुलन्द करते थे—"साइमन, वापस जाओ !"

लोगो में साहस और दृढसकल्प था, लेकिन कोई भी हिसा पर नही उतरा। पुलिस ने प्रदर्शनकारियो पर लाठियाँ चलाई, हर तरह से उन्हे उकसाया, ताकि हुडदग मचे और प्रदर्शनकारियों पर गोलियाँ चलाने, उन्हे भयभीत करने का कानूनी मौका मिल जाए, परन्तु सच्चा वीर सत्याग्रही वही माना जाता था, जो कोई भी कष्ट उठाने, कोई भी जुल्म सहने, जरूरत पडने पर अपना जीवन भी देने को तैयार रहता था, मगर किसी भी हालत में जवाबी वार नही करता था।

इतने तनाव-भरे काल में जवाहरलाल आनन्द भवन में कैसे बैठे रह सकते थे ? वह लखनऊ गए, जिसकी जनता साइमन आयोग के आगमन पर उसके विरोध की तैयारियाँ कर रही थी—उसका समुचित सत्कार करना आवश्यक था।

लखनऊ के निवासियो के साहस, सयम तथा धैर्य और स्वय जवाहरलाल नेहरू के व्यवहार ने, जिन पर पुलिस ने शारीरिक प्रहार किया था, सारे देश को आन्दोलित कर दिया। साइमन आयोग विफल रहा।

नेहरू की सरगर्मियाँ देखने लायक थी। पता नही वह कब सोते और कब खाते थे, घर के लोगों को मालूम नही होता था कि कल वह कहाँ जाएँगे—मुम्बई, दिल्ली, अमृतसर, लाहौर अथवा कलकत्ता। हर जगह वह विराट सभाओ मे भाषण देते थे, जन-प्रदर्शनो, प्रान्तीय काग्रेस अधिवेशनो, ट्रेड यूनियन सभाओ में भाग लेते थे। सुबह के अखबारो में ही कमला और इन्दिरा को उनका अता-पता मिल पाता था।

जवाहरलाल नेहरू की शोहरत बढ़ी, सारे देश मे नेहरू परिवार की चर्चा हो रही थी।

आनन्द भवन आने वाले परिवार के मित्र कहते थे कि अधिकारी जवाहरलाल को फिर से गिरफ्तार करना चाहते हैं। मगर नेहरू परिवार किसी भी परीक्षा के लिए तैयार था और अपनी जीवन-सगिनी को संघर्ष में साथी मानते हुए जवाहरलाल नेहरू सुस्पष्ट रूप से कहते थे कि उनके भाग्य मे चाहे कुछ भी लिखा हो, उनके लिए शान्त-निश्चिन्त जीवन बिताना असम्भव है।

गिरफ्तारी और अत्याचार की निरन्तर आशंका ने नेहरू परिवार में ऐसा अनोखा वातावरण पैदा किया कि अब हर दिन अमूल्य वरदान प्रतीत होता था, उसे विजय का दिन माना जाता था, जो शान्त, निरापद जीवन-यापन के कई महीनो से कहीं अधिक मूल्यवान था।

जब जीवन का तनाव और भावातिरेक चरम सीमा पर पहुँचता है, तो महान् लक्ष्य को पूर्णतः समर्पित व्यक्ति की नजर मे रोजमर्रा के छोटे-मोटे निजी मामले तुच्छ और नगण्य तथा लक्ष्य की ओर अभियान मे बाधक प्रतीत होते हैं और उन्हे नजरदाज किया जाता है, हालाँकि ये निजी मामले उस व्यक्ति के लिए उतने ही महत्त्वपूर्ण और प्रिय होते हैं जितना कि स्वय जीवन परन्तु सघर्ष के आदर्शों का मूल्य ऐसे व्यक्ति

के लिए सर्वाधिक होता है।

युवा नेहरू के विपरीत कांग्रेस के 'पुराने गार्ड', साथ ही मोतीलाल नेहरू ने भी संविधान का ऐसा मसविदा तैयार किया, जिसके अनुसार भारत को ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत डोमिनियन का दर्जा दिया जाना चाहिए था। उधर, जवाहरलाल संघर्ष के उस मूल प्रश्न पर कोई रियायती समझौता करने को तैयार नही थे, पूरी आजादी के अलावा उन्हें कुछ भी मंजूर नहीं था।

काग्रेस के अन्दर उग्र मतभेद का नेहरू परिवार के वातावरण पर भी प्रभाव पडा, जो पहले नहीं होता था। एक बार घर मे वाद-विवाद के समय मोतीलाल नेहरू आग-बबूला हो गए। उनकी ऑखें लाल हो गई थीं, वह पुत्र के सामने उठ खड़े हुए। पिता और दादा के क्रोध से विकृत मुख देखकर सहमी इन्दिरा ने हथेलियों से ऑखें बन्द कर ली, उसे विश्वास नहीं हो रहा था कि ऐसा भी हो सकता है। पिता और पुत्र मानो कट्टर शत्रुओ की तरह एक-दूसरे के सामने खडे थे। स्पष्ट था कि जवाहरलाल टस से मस नही हो रहे थे। डरी-सहमी कमला पति के पास आ खडी हुई। कुछ बोले बिना उसने उनका हाथ थाम लिया और साथ ही ससुर की ओर स्नेह-भरी निगाह डाली। इन्दिरा मॉ-बाप से लिपट गई। परिवार के रोबीले मुखिया के सामने उनके प्रियजन मोर्चा बनाकर खडे थे। बुजुर्ग की ऑखों मे क्रोध उतर आया, श्वेतकेशी भारी सिर लटकाए वह कुर्सी पर बैठ गए। दादा की मानसिक पीड़ा को देखकर लड़की प्यार से उनसे जा लिपटी।

कांग्रेसी कार्यकर्ता नये अधिवेशन के लिए तैयारियॉ कर रहे थे, जो सन् 1929 के अन्त मे लाहौर मे होने वाला था।

अधिवेशन से पहले जवाहरलाल नेहरू आनन्द भवन में काम कर रहे थे, प्रस्ताव का मसविदा और दूसरे दस्तावेज तैयार करने में जुटे हुए थे। इन्दिरा को पिताजी के अध्ययन-कक्ष में आने और थोडी-बहुत मदद देने की भी इजाजत दी गई, जैसे कि अधिवेशन सम्बन्धी दस्तावेज पढ़ना तथा उनके बण्डल बनाना, लिफाफे बन्द करना तथा डाक भेजना, पिताजी और उनके साथ काम करने वाले टाइपिस्ट के लिए चाय लाना।

बालिगों की बातों से इन्दिरा को मालूम हुआ कि महात्माजी ने स्वयं कांग्रेस अध्यक्ष का पद सॅभालने से इन्कार करते हुए सुझाव दिया कि यह कार्यभार जवाहरलाल नेहरू को सौपा जाए। महात्मा गॉधी ने उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की, कहा कि वह स्फटिक जैसे निर्मल हैं, उनकी सत्यनिष्ठा में तनिक भी सन्देह नही हो सकता है और उनके नेतृत्व मे राष्ट्र का भाग्य सुरक्षित रहेगा।

जब मुख्य प्रस्ताव का मसविदा तैयार हुआ, जवाहरलाल ने बेटी को बुलाया और यह दस्तावेज पढकर सुनाने को कहा। इन्दिरा पढ़ने लगी, लेकिन पिताजी को शायद पढ़ने का अन्दाज पसन्द नहीं आया। उन्होंने बीच में टोककर कहा कि वह और पढ़े अब ठीक है उन्होंने कहा 'जो कुछ तुमने

पढा है, इन्दु, वह तुमसे भी सीधा वास्ता रखता है।"[1]

इन्दिरा के गाल लाल हो गए, आँखे खुशी से चमक उठीं—पिताजी के इन शब्दो का मतलब था कि वह इन्दिरा को भावी घटनाओ में सहभागी मानते है।

"पापा, मैं कांग्रेस मे भर्ती हो सकती हूँ ?"

"अभी उसका समय नहीं आया, इन्दु," पिताजी बोले। "लेकिन युवा स्वयसेवकों के दल मे शामिल होकर तुम हमारी मदद जरूर कर सकती हो। काम सभी के लिए काफी है।"

कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन में भाग लेने के लिए सारा नेहरू परिवार रवाना हुआ।

अधिवेशन के प्रतिनिधि और अतिथि लाहौर के एक बडे मैदान मे इकट्ठे हुए। शहर के लगभग सभी लोग सडकों पर निकले।

दिसम्बर का अन्त था। उस साल सर्दी की लहर दौड़ी और लोग शाले, कम्बल आदि ओढ़े थे।

सभापतिमण्डल तथा सम्मानीय अतिथियों के लिए मंच बनाए गए और शामियाने ताने गए।

कमला और इन्दिरा एक घर के बरामदे में खड़ी थी, जहॉ से सारा मैदान और सभापति का मच अच्छी तरह दिखाई देता था।

आखिरकार सभी तैयारियाँ पूरी हो चुकीं, हजारो लोगों की निगाहें काग्रेस अध्यक्ष के आगमन की प्रतीक्षा करने लगी।

युवा, चुस्त-फुरतीले जवाहरलाल नेहरू सफेद घोड़े पर सवार शहर की सडको पर जा रहे थे, वह भूरे रंग की शेरवानी पहने हुए थे। सिर पर सफेद गॉधी टोपी थी, जो आमतौर पर कम लोगो पर फबती थी, लेकिन जवाहरलाल पर बहुत जँचती थी।

कई जगहों पर शौकिया वाद्यवृन्द बज रहे थे। एक आर्केस्ट्रा के साजिन्दे ब्रिटिश राष्ट्र गान की धुन बजा रहे थे—"भगवान सम्राट् की रक्षा करें !" बहुत अजीब लगता था, इसमे व्यंग्य का पुट था, लेकिन किसी ने इस ओर ध्यान नहीं दिया—सबसे बड़ी बात यह थी कि साजिन्दे हर्षोल्लास का वातावरण उत्पन्न करने मे योग दे रहे थे। सगीत की स्वर-लहरियॉ लोगों में उत्साह संचारित कर रही थीं।

नेहरूजी मंच पर आए और हाथ उठाकर उन्होने अभिवादन के तूफान को शान्त किया।

"वह दिन अब दूर नहीं, जब हिन्दुस्तान और सारा एशिया भी यूरोपीय आधिपत्य को खत्म कर देगा,"[2] वह बुलन्द आवाज में बोले और "इन्कलाब जिन्दाबाद !" के नारे से आसमान गूँज उठा।

---

1 Indira Gandhi, *My Truth*.

2 A. Gorev V Z op cit.

"मै समाजवादी और लोकतन्त्रवादी हूँ," उन्होने बात जारी रखी—"और मै बादशाहो, राजाओं मे यकीन नही रखता, न ही मै उस व्यवस्था का कायल हूँ, जिसे आज के औद्योगिक धन्नासेठ कायम करते है। जनसाधारण की नियति पर उनका अधिकार पुराने जमाने के बादशाहों से भी ज्यादा है, लेकिन उनके तौर-तरीके उतने ही वहशीपन-भरे हैं।"[1]

और फिर हाथ के इशारे से नेहरूजी ने जय-जयकार रोक दी, उन्होने हिन्दुस्तान की आजादी के लिए सघर्ष की अहिसात्मक विधियो, सत्याग्रहियो के धैर्य की प्रशसा की, नागरिक असहयोग आन्दोलन के प्रभाव की चर्चा की और साथ ही जोर दिया कि सघर्ष के अहिसात्मक तरीको को कुछ व्यावहारिक कारणो से चुना गया।

जवाहरलाल ने कहा कि संगठित बल-प्रयोग के लिए कांग्रेस के पास आर्थिक साधन और अनुभवी कार्यकर्ता नहीं हैं और यदि कभी-कभी कुछ अलग-अलग व्यक्ति हिसा पर उतर आते है, तो यह घोर हताशा की ही अभिव्यक्ति है। अगर कालान्तर मे काग्रेस अथवा जनता इस नतीजे पर पहुँचेगी कि हिसा के माध्यम से हमे गुलामी से छुटकारा मिलेगा, तो नि सन्देह कांग्रेस हिंसात्मक विधियों का अनुमोदन करेगी। हिंसा बुरी चीज है, लेकिन गुलामी उससे बदतर है।

ठण्डी तेज हवा चल रही थी, लेकिन वह भी हजारो लोगों के धधकते हृदयो के ताप को ठण्डा करने मे समर्थ नही थी। विशाल जन-समूह मे असीम उमग थी, करतलध्वनियो और जय-जयकारो से मैदान गूँज रहा था। लोगो का जमाव किसी ऐसे विशाल वाद्यवृन्द जैसा था, जो मानो कोई देशभक्तिपूर्ण सिम्फनी संगीत प्रसारित कर रहा हो। उस संगीत की मुख्य धुन नेहरू का भाषण और प्रमुख विषय स्वाधीनता थी, परन्तु जैसा कि प्रत्येक सिम्फनी रचना में होता है, प्रमुख विषय के सिवा अन्य विषय भी साथ-साथ गुजायमान हो रहे थे—असन्तोष, भय और अनिश्चय।

इन्दिरा के मन मे नाना भाव उत्पन्न हो रहे थे, वह माँ की घबराहट महसूस कर रही थी, उसके तरुण संवेदनशील शरीर की नस-नस में उस अनोखे संगीत की प्रतिध्वनि हो रही थी और उसमें घुली, दबी हुई, पर फिर भी सुनाई देने वाली विरोध की अनुगूँज को सुनते हुए वह कुछ चिन्तित भी थी। इन्दिरा जानती थी कि पिताजी के अनेक विरोधी हैं और उसे आशंका थी कि अभी कोई सामने आकर पिताजी का प्रतिवाद करेगा और भव्य देश-भक्ति का हवा मे मॅंडराता हुआ सगीत धरती पर गिरकर टुकडे-टुकडे हो जाएगा, बिखरकर खामोश हो जाएगा।

एकाएक शोर-शराबा खत्म हो गया, ॲंधियारे मे सन्नाटा छा गया, यहाँ तक कि मैदान के ऊपर उड रहे उल्लू के पंखो की फडफड़ाहट भी सुनाई दी। सफेद कपडे पहने अहिंसा के प्रवर्तक महात्मा गाँधी सर्चलाइट की रोशनी मे नजर आए। राष्ट्रपिता क्या कहेंगे ? क्या कांग्रेस अध्यक्ष के भाषण की वह सराहना करेंगे ?

---

1 A. Gorev V Zimyanin, op cit.

गॉधीजी ने बड़े शांत व सहज ढंग से अपने भाषण में कहा कि स्वराज का प्रस्ताव पास करना चाहिए, जिसका मतलब होगा पूरी आजादी। उन्होंने आशा प्रकट की कि कांग्रेस के सभी सदस्य उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए यथासम्भव प्रयास करेंगे।

और तब देशभक्तिपूर्ण सिम्फनी पराकाष्ठा पर पहुँच गई।

जन-समूह के अनगिनत हाथ एक साथ ऊपर उठे। महात्मा गॉधी के सीधे-सादे शब्दों का समर्थन करते हुए ये लोग चाहते थे कि वे हवा की तेजी से दसो दिशाओ मे उडते हुए हिन्दुस्तान के कोने-कोने मे यह शुभ समाचार पहुँचा दें। "स्वराज ! स्वराज लेके रहेगे !" लाहौर की सडको पर यह नारा रात-भर गूँजता रहा। हजारो लोगो ने, जो अभी कुछ समय पहले तक नहीं जानते थे कि वे क्या करें, सत्य की खोज कहाँ करें, सहसा प्राणदायी सत्य का भव्य प्रकाश देखा। साधारण शब्द 'स्वराज' ने तुरन्त ही नया अर्थ ग्रहण कर लिया, वह देश की आजादी का, मानवोचित जीवन का पर्यायवाची बन गया।

यह घटना 31 दिसम्बर को घटी, जब घड़ी ने आधी रात बजाकर नये सन् 1930 के आगमन की सूचना दी।

अभी हाल ही मे पिता के आग्रह से आनन्द भवन मे इन्दिरा ने जिस प्रस्ताव का मसविदा पढकर सुनाया था और उसका अर्थ समझने की कोशिश की थी, वह समस्त राष्ट्र, करोडो लोगो के सकल्प की अभिव्यक्ति बन गया, एक ठोस भौतिक शक्ति के रूप में परिणत हुआ, जिसने विशाल ब्रिटिश साम्राज्य, उसके सम्राट् और उसकी सेना को चुनौती दी।

पता चला कि सही, समयोचित नारा, जो मानव-बुद्धि की अल्प ऊर्जा का रचनात्मक परिणाम मात्र है, समूचे राष्ट्र को आन्दोलित कर सकता है, तोपो से, नदियों तथा वायु की अकूत ऊर्जा से अधिक बडा प्रभाव मानव-जाति के भाग्य पर डाल सकता है।

स्पष्ट शब्द रूप में प्रकट न होकर भी कुछ ऐसा विचार इन्दिरा के मन में कौंध गया—लोगों के लिए शब्दो का कितना अधिक महत्त्व हो सकता है, अगर शब्दो के बाद कार्रवाई की जाए !

3

चिन्तामय किशोरावस्था

सन् 1930 के आरम्भ मे सौभाग्य से सारा नेहरू परिवार आनन्द भवन मे इकट्ठा हुआ। उन दिनो इलाहाबाद मे कुम्भ मेला हो रहा था।

यमुना, गगा तथा भूमिगत सरस्वती के सगम स्थल पर बारह वर्षो मे एक बार मनाया जाने वाला यह समारोह ससार में अद्वितीय और देखने लायक होता है।

प्राचीन काल मे इलाहाबाद प्रयाग कहलाता था। यूनानी इतिहासज्ञ हेरोदोत (5वीं सदी ईसा पूर्व) ने उसका उल्लेख किया था। मुगल बादशाहों ने हिन्दुसतान में इस्लाम का प्रसार किया और नगर को इलाहाबाद नाम दिया, लेकिन वे भी पुरातन हिन्दू प्रथा को बदलने मे समर्थ नही हुए। जिस तरह सहस्र वर्षो से बनी हुई सहजवृत्ति से प्रेरित होकर पक्षियो के झुण्ड वार्षिक उडाने भरते हैं, उसी तरह हिन्दुस्तान उपमहाद्वीप के कोने-कोने से लाखो तीर्थ-यात्री इलाहाबाद आकर पवित्र गंगा-जल की पूजा करते हैं।

पुस्तको और पिताजी की कहानियो से इन्दिरा को अपने नगर के इतिहास का अच्छा ज्ञान प्राप्त हो गया था, लेकिन किस कहानी से वह रोमाच हो सकता है, जो प्राचीन रहस्यों के साथ प्रत्यक्षत· साक्षात्कार से पैदा होता है—उदाहरण के लिए, लम्बी सुरंग से गुजरकर भूमिगत मन्दिर पाताल पुरी में दाखिल होना; पवित्र गूलर वृक्ष की ऐंठी हुई जड़ो पर पानी डाला जाना, जिसकी छाया में बैठकर कभी गौतम बुद्ध ने सम्भवतः चिन्तन-मनन किया था; किले की दीवारो पर बादशाह अकबर के अभिलेख पढने-समझने की कोशिश करना, उन पत्थरों पर पॉव रखना, जिन पर कभी मुगल रिसाले के घोड़े दौड़ करते थे, सहस्र वर्ष पुराने बरगद वृक्ष की मोटी शाखाओं को छूना, जो किसी महाबली की बलिष्ठ बॉहों की भॉति गंगा के मटमैले जल के ऊपर फैली हुई है। कितने ही हिन्दुओ ने इस पुरातन वृक्ष से आगे बढकर पवित्र गंगा जलधारा मे छलॉग लगाई, ताकि संसार के माया-मोह से मोक्ष प्राप्त किया जाए। उन्हें विश्वास था कि गंगा के साथ उनकी आत्मा भी स्वर्ग पहुँच जाएगी।

भारत के कोने-कोने से हजारों पैदल तीर्थ-यात्री कुम्भ मेले में शामिल होने के लिए कई महीनों की यात्रा पर निकलते थे बीच रास्ते में अपने और

रिश्तेदारो को खो देते थे और मजिल पर पहुँचने तक भूखे-प्यासे, थके-हारे, मगर धार्मिक कर्तव्य-पूर्ति की भावना से सन्तुष्ट उनमें से बहुत-से लोग स्वय भी यहाँ दम तोडते थे।

इलाहाबाद में हिन्दू पर्व ने अखिल भारतीय उत्सव का रूप धारण किया। 'एक देश--एक परम्परा' का आदर्श मूर्तिमान हुआ। गतिमान, उमड़ती हुई भीड़ में सब तरह के लोग थे--मुँड़े सिर वाले केसरी वस्त्र पहने बौद्ध भिक्षु, पगड़ी पहने दाढीदार सिख, चौड़ी सलवार पहने मुसलमान, जैन धर्मावलम्बी और अर्द्धनग्न साधु-संन्यासी...।

हर जगह बेशुमार फकीर, साधु-सन्त, सँपेरे, मदारी, ज्योतिषी, भिखारी, गायक-वादक और छोटे व्यापारी तथा फेरी वाले...मेले में अनुपम समा बँधा हुआ है।

असंख्य दुकानो के पास से गुजरते हुए गर्वीले, हट्टे-कट्टे, लम्बे केशों वाले योगी टहलते है। उनकी शान्त, निष्कपट आँखों में, जो केवल पूर्णत: स्वस्थ लोगो के पास होती हैं, नैतिक निर्मलता और निर्भयता टपकती है, उन्हे अस्तित्व के गूढ रहस्यों का ज्ञान होता है, वे प्रकृति के अंग बन चुके हैं। उनकी बगल में विकलांग भिखारी, बावले, कोढ़ी अपने विकृत हाथ पसारे मिलते हैं। सिर से पैर तक राख मे सना कोई साधु दिन-भर एक टॉग को ऊपर उठाए दूसरी पर खड़ा रहता है।

जरी की खूबसूरत रेशमी साड़ी पहने अमीर घराने की कोई महिला नौकरों के साथ गुजरती है, सिर ऊँचा उठाए, हिकारत से इधर-उधर नजर दौड़ाता कोई दुबला-पतला फिरंगी चला जा रहा है, घण्टी बजाता हुआ कोई अछूत सड़क के किनारे सरक जाता है, ताकि उच्च जाति के किसी हिन्दू को संयोगवश स्पर्श करके उसे अपवित्र न कर दे।

शोर-शराबे से भरा और सतरंगी छटा बिखेर रहा है बाजार। मसालों, चमेली के फूलों, मल, पसीने, अगरबत्तियों की खुशबू से सिर चकरा रहा है।

छोटी-बडी दुकानों में, छज्जो के नीचे और बैलगाड़ियो तथा जमीन पर बिछी दरियों पर अखरोटो, गिरियो, फलों, मिठाइयों के ढेर लगे हुए हैं, लाल मिर्चो की लडियाँ और ढेर, बैगन, नीबू-नारंगियाँ, आम, सन्तरे, केले, पीले अनन्नास, प्याज, लहसुन, अनार, पपीते, धनिया, लौंग, अदरक, फूलों के ढेर और पुष्पहार--यह सब रगो के इस मेले को चार चाँद लगा देते हैं। सर्वत्र ताँबे, पीतल के बर्तन, बड़ी-बडी नक्काशीदार तश्तरियाँ, सुराहियाँ, घड़े और साथ ही बनारस के रेशमी कपड़े, कश्मीरी कालीने और शालें, चमारो, मोचियो, ठठेरों के माल, देव-मूर्तियाँ, तावीजें, पूजा का सामान नजर आ रहे हैं।

बाजार में बन्दरों की धमाचौकडी देखते ही बनती है, लावारिस गायें घूम रही हैं, जिन्हें कोई नही भगा रहा है और जो साग-सब्जियो तथा फलो पर मुँह डालते हुए अपने पेट भरती है।

बहुत-से ढाबों से उपलों का धुआँ निकल रहा है दाल चावल मक्के के

व्यजन घी और वनस्पति तेल मे पकाए जा रहे हैं, उनमे मिर्च-मसाले भी खूब झोंके जा रहे है और यह सब कुछ इतना तेज होता है कि मुँह मे लगी आग पानी से भी नही बुझती, दही पीकर कुछ राहत मिलती है।

पेड़ो की छाया मे बैठे नाई तीर्थ-यात्रियों के सिर मूँड रहे है।

चॉदी से समृद्ध भूपरतों से होकर गगा बहती है, उसके तटो पर चिताएँ जलती है, लोग पवित्र गगा-जल मे स्नान करते है। गगा सब कुछ स्वीकार करती है, अपनी गोद मे ले लेती है और वस्तुतः पवित्र काम करती है--रोगाणुओ तथा सडियल कीटाणुओं को मारकर जीवन की सफाई तथा रक्षा करती है, उसे सहारा देती है।

गगा के लिए धर्म, जात-पाँत, अमीर-गरीब, बीमार-स्वस्थ, जीवित-मृत का कोई फर्क नही है—वह सभी की सेवा करती है। पवित्र गगा मैया।

सूर्य का दहकता हुआ चक्र आकाश से लुढक गया और क्षितिज रेखा के पार डूब गया, दिन का उजाला बुझ गया, कोमल झुट-पुटा छा गया और शीतल हवा मे ताजी घास, फूलो और पेडों-झाडियों की सुगन्ध फैल गई। नेहरू परिवार के लोग घर से निकले और नदी के किनारे लाखो तीर्थ-यात्रियो के डेरे देखते रहे।

इन्दिरा नदी के तट पर आ खडी हुई और अन्य हिन्दू नारियों की तरह उसने भी गुलदस्ते को हल्के से झटककर गुलाब की पखुडियॉ बहती हुई जलधारा मे बिखेर दीं। नदी का जल जेनेवा सरोवर के पानी जैसा शान्त व पारदर्शी नही था, वह परिश्रमी जल, उसके देश का जल था।

"काश कि इस विशाल जन क्षमता, लोगों के इस अपार विश्वास का एक अश आजादी के लिए संघर्ष में लगाना सम्भव होता..." जवाहरलाल बोले और बेटी के कन्धों पर हाथ रखकर वह डेरा-नगरी की ओर मायूसी-भरी निगाहो से देखते रह गए, जहॉ हजारों बातियाँ झिलमिला रही थी।

"पापा, लाहौर में जो हुआ, आप भूल गए क्या उसे ?" पिता की ओर मुडकर और उनकी ऑखों में झॉकते हुए इन्दिरा ने पूछा।

बेटी के मुँह से बालिगो जैसा यह सवाल सुनकर जवाहरलाल नेहरू आश्चर्यचकित रह गए, उसे ध्यानपूर्वक देखकर वह सहसा स्नेहपूर्वक मुस्कराए। नही, लाहौर के निवासियो तथा कांग्रेस अधिवेशन के प्रतिनिधियों द्वारा अद्‌भुत हार्दिक स्वागत-सत्कार वह नही भूले थे। वह भली-भॉति समझते थे कि उस असाधारण जनोत्साह का कारण उनका व्यक्तिगत प्रभाव नहीं, बल्कि देश की आजादी का आकर्षक विचार था और उस समय यह सोचते हुए वह चिन्तित हो रहे थे कि कोई प्रस्ताव चाहे कितना ही अच्छा क्यो न हो, एक प्रस्ताव मात्र पर्याप्त नही होता, सारे देश के पैमाने पर जन-आन्दोलन चलाना चाहिए। लाहौर कांग्रेस अधिवेशन के आह्वान पर अधिकांश कांग्रेसियो ने राजकीय सस्थाओं मे अपने पद त्याग दिए, अदालतों तथा विधायी सस्थाओं का बहिष्कार किया, लेकिन अब आगे क्या किया जाए ? उपनिवेशवादियो के विरुद्ध उठ खडे होने की जनता की को परखने के लिए फैसला किर

गया कि 26 जनवरी, 1930 को स्वतन्त्रता दिवस मनाया जाएगा। यह दिन निकट आ रहा था और नेहरूजी की चिन्ता बढ रही थी—देश की जनता की किस तरह की श्रेणियॉ वर्ग सघर्ष मे शामिल होंगी और भावी घटनाओं मे वे किस तरह पेश आएँगे ?

"तुम बडी समझदार हो, इन्दु," जवाहरलाल ने बेटी की तारीफ की। "यह सही है, नये विचारों ने भारतवासियों के दिलों में घर कर लिया है। लेकिन यह भी तो देखो कि इस असगठित जन-समूह में, जिसे भगवान् मे आस्था के सिवा और कोई चीज एकजुट नही करती, कितने अधिक ऐसे लोग है, जिनसे हमारे ध्येय को कोई लाभ नहीं हो सकता—भिखारी, दगाबाज, नकली साधु-सन्यासी, जो जनता के अधविश्वासों से फायदा उठाते हुए अपनी जेबे गरम करने पर आमादा हैं।"

पिताजी की साफगोई इन्दिरा के मन मे यह उमग-भरी भावना पैदा कर रही थी कि वह वयस्कता की अवस्था में प्रवेश कर रही है, वह कृतज्ञता अनुभव करती थी और पहले से भी अधिक पिता की ओर आकर्षित हो रही थी, उनके ससर्ग में आने की चेष्टा करती थी।

पिताजी का चिन्तित होना इन्दिरा की ऑखों से छिपा नहीं था—वह यह सोचकर चिन्तित हो रहे थे कि नागरिक असहयोग की अपील का लोग कैसा जवाब देगे, क्या लाहौर मे बुलन्द किए गए नारों से जनता परिचित है ? उनसे मिलने आने वाले कांग्रेसियों, दादाजी और माँ के साथ घर पर वह अक्सर इस विषय पर बातें करते थे। लेकिन इन्दिरा स्वयं जनता के बीच अपने पिताजी की अद्भुत लोकप्रियता की साक्षी थी। इलाहाबाद के कुम्भ मेले में पहुँचे बहुत-से तीर्थ-यात्री आनन्द भवन के सामने एकत्रित होकर नारे लगाते थे, जो लाहौर में गूँजे थे। अतः वे कांग्रेस के प्रस्तावो के बारे में जानते थे और उनको स्वीकार कर चुके थे।

लगभग हर दिन पिताजी तीर्थ-यात्रियो के बडे ग्रुपो तथा प्रतिनिधिमण्डलो से मिलते थे, उनके सम्मुख भाषण देते थे, उनके प्रश्नो के उत्तर देते थे।

प्रेम और प्रशंसा भाव से परिपूर्ण ऑखों वाले ये गरीब लोग कुछ नहीं मॉगते थे, कोई अनुरोध नहीं करते थे, वे कांग्रेस के लब्धप्रतिष्ठ नेता पर महज एक नजर डालना चाहते थे। उनकी बातों को वे शायद पूरी नही समझ पाते थे, लेकिन बडे ध्यान से, प्रसन्नता और कृतज्ञतापूर्वक सुनते थे। वे एक बात जानते थे—यह आदमी उनकी हित-चिन्ता करता है, उनकी खुशहाली के बारे मे सोचता है और उनके लिए इतना ही काफी था। आनन्द भवन जाकर वे गरीबो के हितैषी ब्राह्मण के सामने नतमस्तक होते और आदर से उसे पण्डितजी कहते थे।

मुश्किल से मुश्किल घड़ी में भी आनन्द भवन में विनोद-परिहास की धारा नही सूखती थी। दादी स्वरूप रानी को छोड़कर, जो अपने बेटे की खिल्ली उडाने की हर कोशिश का कड़ा विरोध करती थी, कमला, जवाहरलाल की बहने और परिवार के दूसरे लोग मुलाकातियों की नकल करते हुए तनिक व्यग्यपूर्ण ढग से को 'भारत भूषण' अथवा 'त्यागमूर्ति' कहकर पुकारते थे जिससे उन्हें

हॅसी आती थी। हास्य-विनोद की नेहरूजी बड़ी कद्र करते थे और मजाक करने वालो का मजाक से जवाब देते थे। सभी खुश होते थे, इन्दिरा को भी यह बहुत अच्छा लगता था।

लेकिन बहुत देर तक परिवार के लोग इकट्ठे नही रहे। जनवरी के अन्त मे मोतीलाल और जवाहरलाल काग्रेस के काम के सिलसिले मे दूसरे शहर चले गए। कमला और जवाहरलाल की बहन कृष्णा इलाहाबाद की स्त्रियों, नौजवानों, छात्रो, बुद्धिजीवियों के बीच प्रचार करती रहती थी, काग्रेस में भर्ती होने वाले नये स्वयंसेवको को उपनिवेशवादियो के अहिसात्मक प्रतिरोध के शान्तिपूर्ण उपायों का सार समझाती थीं, सूचना देने के तरीके, सभा-सम्मेलनों तथा जुलूसो के स्थल तय करती थीं।

इन्दिरा ने भी वक्त नहीं गँवाया। उसने इलाहाबाद मे 14 से 17 वर्ष तक के किशोर-किशोरियो का दस्ता संगठित किया, जिसे 'वानर सेना' नाम दिया गया।

'वानर सेना' के सदस्य राष्ट्रीय झण्डे बनाते तथा नगर मे लगा देते थे, प्रदर्शनकारियों तथा सरकारविरोधी सभाओं मे भाग लेने वाले लोगो के लिए खाना पकाते थे, पीने का पानी लाते थे, अनपढ़ लोगो की फरमाइश पर उनके नजरबन्द रिश्तेदारों के लिए चिट्ठियॉ लिखते थे, पुलिस के लाठी-चार्ज के शिकार बने कांग्रेसी स्वयंसेवको की मरहम-पट्टी करते थे। कभी-कभी 'वानर सेना' के सैनिको को अधिक गम्भीर काम भी सॅभालने पड़ते थे, बड़ा जोखिम उठाना पड़ता था।

शान्तिपूर्ण प्रदर्शनकारियों पर हिंसात्मक अत्याचारों के बाद गोलियॉ लगने से घायल हुए तथा मारे-पीटे गए लहू-लुहान लोग मैदानो और सडको पर धूप में पड़े रह जाते। घायल विद्रोहियों की मदद करना भारतीय डॉक्टरों के लिए सख्त मना था। तब इन्दिरा के फुर्तीले और साहसी तरुण साथी उनकी सहायता को आते थे। इन्दिरा की देख-रेख में ये लोग मोतीलाल नेहरू के पुराने घर में ले जाए जाते थे, जिसे उन्होने स्वराज भवन नाम दिया और काग्रेस के हवाले कर दिया था। उन दिनों यह घर काग्रेसी अस्पताल बन गया। कमला, कृष्णा और इन्दिरा उसमें मुख्य नर्स थी।

'वानर सेना' में बहुत-से अनाथ बालक और गरीबो के बच्चे शामिल थे। वे अपने मुहल्लो के 'दादा' थे, उन्हे शहर का घर-घर, सभी दरवाजे, दीवारों में छेद, सभी तहखाने तथा सूराख मालूम थे।

उनकी पहुॅच हर जगह थी, वे पुलिस थानों, कैदखानों, अग्रेज अफसरो के घरो, तारघर तथा डाकखाने में दाखिल होते थे, बातचीते सुनते हुए वे भावी तलाशियो, गिरफ्तारियों, पुलिस छापो तथा घातों का पता लगाते थे और समय रहते कांग्रेस के कार्यकर्ताओं को आगाह करते थे।

ये साहसी भारतीय बालक कांग्रेस के स्काउट तथा सन्देश-वाहक थे, वे स्थानीय जनता के बीच कांग्रेस के नारे और अपीलें प्रसारित करते थे।

नागरिक असहयोग आन्दोलन हिन्दुस्तान मे मैदानो में फैलता जा रहा था सख्या में नगर तथा गॉव उसकी परिधि में आ रहे थे जब

महात्मा गाँधी ने नमक सत्याग्रह आन्दोलन की घोषणा की।

जवाहरलाल नेहरू और कांग्रेस के अन्य नेता गाँधीजी की इस अपील से निराश हो गए और असमजस में पड़ गए। उन्होंने सोचा कि आजादी के लिए सघर्ष के उदात्त आदर्शो का नमक जैसी मामूली चीज से भला क्या वास्ता हो सकता है ?

परन्तु महात्मा गॉधी टस से मस नही हुए। हाथ मे डंडा लेकर वह अपने अनुयायियों की लम्बी कतार की अगुवाई करते हुए अपने आश्रम से निकले और समुद्र-तट की ओर रवाना हुए। 6 अप्रैल, 1930 को, सन् 1919 में अमृतसर में शहीद हुए लोगों की स्मृति के दिन, दाडी-तट पर उन्होंने समुद्री पानी खौलाकर मुट्ठी-भर कडवा नमक तैयार किया। इस प्रकार अखिल भारतीय नमक सत्याग्रह शुरू हुआ।

'नमक' शब्द ने तुरन्त ही एक सशक्त मन्त्र का रूप धारण किया। लगता था कि देश की तमाम जनता दुकानो में नमक खरीदने से इन्कार करके तरह-तरह के तरीको से अपना 'देसी' नमक बनाने मे लग गई।

कहना न होगा कि आनन्द भवन की सभी महिलाएँ—कमला, जवाहरलाल की दोनो बहनें, 'वानर सेना' के अपने साथियो समेत इन्दिरा और यहॉ तक कि दादी स्वरूप रानी भी—नमक सत्याग्रह आन्दोलन मे बड़े उत्साहपूर्वक शामिल हुई।

इन्दिरा अब अपनी मॉ को पहचान भी नहीं पाती थी, क्योंकि उसके व्यक्तित्व का एक नया अपरिचित पक्ष उभरकर सामने आया—अक्सर खाट पकड़े रहने वाली यह अबला स्फूर्ति की साक्षात् प्रतिमा बन गई। यह देखकर इन्दिरा आश्चर्यचकित और हर्षित-पुलकित हो जाती कि उसकी मॉ प्राय' सभी घटनाओं का केन्द्र-बिन्दु बन गई है। वह नगर की स्त्रियो का नेतृत्व करती थी और वे उसके साहसपूर्ण निर्णयो का पालन करती थीं, उसके आदेश पूरे करती थी तथा उसके विवेकपूर्ण परामर्श को स्वीकार करती थीं।

कमला के विलक्षण चरित्र मे नारी-सुलभ कोमलता, निर्भीकता, ईमानदारी, दृढ सकल्प, विचारों की तर्कसगतता, हार्दिकता तथा सद्भावना जैसे गुण उसे अन्य नारियो से अलग कर देते थे, उसे महिला-समुदाय की स्वाभाविक नेत्री बना देते थे।

14 अप्रैल को नमक व्यापार के एकाधिकार सम्बन्धी कानून के उल्लंघन के कारण अधिकारियों ने कांग्रेस को नेतृत्वहीन करने की कोशिश करते हुए जवाहरलाल नेहरू को गिरफ्तार किया और उसी दिन अदालत ने उन्हें छ महीने की जेल की सजा दी।

आनन्द भवन के निवासियों को साध्य समाचार-पत्रों से यह सूचना मिली। हालॉकि नेहरूजी की गिरफ्तारी अनपेक्षित अथवा अपूर्व घटना नही थी, वास्तव मे यह अवश्यम्भावी था, कमला उदास और अन्यमनस्क हो गई। चाय उँडेलते हुए उसने प्लेट गिरा दी। प्लेट टुकडे-टुकडे हो गई। सब लोग खामोश होकर चाय पी रहे थे और के बारे में चिन्ता सभी के मन में छाई हुई थी

इन्दिरा को सबसे ज्यादा मॉ पर दया आती थी चुपके-चुपके वह मॉ के उतरे

हुए मुँह को ताकती और यह देखकर दिल मे टीस उठती थी कि माँ की आँखो मे फिर वही आग झलक रही है, जो उसे अन्दर से खाए जा रही थी।

"प्यारी अम्मा, दुनिया में सबसे बुद्धिमान और नेक, सबसे अच्छी," इन्दिरा के मन मे ये शब्द अपने आप जन्म लेते थे, लेकिन किसी ने उन्हे सुना नहीं, उसके काँपते होठो से वे झडे नहीं, बल्कि लडकी के दिल में ही रह गए, यह हार्दिक निर्मल भावना किसी बाहरी प्रभाव से अछूती रही।

मई के आरम्भ मे महात्मा गाँधी और कांग्रेस के सैकडो कार्यकर्ता गिरफ्तार किए गए। मगर उपनिवेशवादियो ने जितना अधिक क्रूर दमन किया, आम लोगों का मनोबल उतना ही मजबूत बन गया। जेल, गोलियो तथा लाठी-चार्ज के परिणामस्वरूप सत्याग्रहियों की संख्या बढती गई। जनता ने शासको की आज्ञा का पालन करने से इन्कार किया, वह काबू में नहीं रह गई।

कांग्रेस अध्यक्ष के पद पर जवाहरलाल नेहरू का स्थान मोतीलाल नेहरू ने ले लिया--यह गाँधीजी, काग्रेस के नेताओ की इच्छा थी, जो करीब सबके सब नजरबन्द हो चुके थे।

उच्च रक्तचाप तथा दमे से पीडित मोतीलाल ने नागरिक असहयोग आन्दोलन के संचालन का दायित्व सँभाला। अपने पुत्र को और अब स्वयं उन्हें काग्रेस द्वारा सौपा गया यह उत्तरदायित्वपूर्ण कार्यभार सँभालने से वह कैसे इन्कार कर सकते थे ? क्या जेल मे कैद जवाहरलाल के साथ विश्वासघात करना और स्वतन्त्रता का झण्डा उसके हाथ से अपने हाथ मे न लेना उनके लिए सम्भव था ?

मोतीलाल ने देशभक्त तथा स्नेहपूर्ण पिता का दायित्व निभाया। उनका दृढ सकल्प, दबग स्वभाव तत्कालीन राजनीतिक परिस्थिति की माँगों के अनुरूप था। जिस तरह वज्रपात हो चुकने पर तूफानी बादलो की बची-खुची विद्युत् ऊर्जा गोल बिजली मे संचित हो जाती है, इसी तरह मोतीलाल अपनी सारी शक्ति तथा क्षमता सकेन्द्रित करने तथा नागरिक असहयोग आन्दोलन को पराकाष्ठा पर पहुँचाने मे समर्थ हुए।

मोतीलाल की सेक्रेटरी की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेकर कमला ने संगठनात्मक कार्यो मे अपने ससुर को अमूल्य सहायता दी। स्वरूप रानी के साथ उन्होंने वृद्ध पुरुष के कन्धो पर पड़ा भारी बोझ कुछ हद तक हल्का करने की भरसक कोशिश की और मोतीलाल की सेवा करने मे कोई कसर उठा नहीं रखी।

मोतीलाल नेहरू की सबसे कम-उम्र तथा सबसे प्रिय सहायिका इन्दिरा को भी बहुत चिन्ता करनी पडी। दादाजी की हर इच्छा पूरी करने को वह तत्पर रहती थी।

किन्तु शीघ्र ही स्वय परिवार के प्रमुख की भी बारी आई। स्वरूप रानी तथा कमला के साथ वह मुम्बई से लौटे ही थे कि अगले दिन, 30 जून को, तडके-सवेरे, जब शहर सोया हुआ था और को क्रोधित भीड़ के जाम होने का डर नहीं था मोतीलाल को गिरफ्तार करके नैनी जेल ले जाया गया जिसकी 'कुत्ताघर'

बैरक मे उनकी मुलाकात अपने पुत्र से हुई।

जनता से अलग किए हुए कांग्रेस के लगभग सभी नेतागण जेलो में बन्द थे, लेकिन नागरिक असहयोग आन्दोलन जारी था।

शहरो के मध्य वर्ग का जोश तो कुछ ठण्डा पड़ गया, लेकिन कही अधिक प्रभावशाली शक्ति सघर्ष में सक्रिय हो गई—उदीयमान कम्युनिस्ट पार्टी के संचालन मे औद्योगिक केन्द्रो के मजदूर, रेलवे मजदूर, ग्रामीण खेतिहर मजदूर उठ खड़े हो रहे थे।

सामाजिक मुक्ति के लिए संघर्ष से मिलकर राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आन्दोलन उपनिवेशवादियो तथा भारतीय सामन्ती एव बुर्जुआ विशिष्ट वर्ग के लिए खतरनाक स्वरूप धारण कर रहा था।

काग्रेस तथा अन्य बुर्जुआ-राष्ट्रवादी पार्टियो, खासतौर पर हिन्दुस्तान के उदारपथी दलो तथा अभिजात वर्ग के साथ समझौते की सम्भावना पर लन्दन में गम्भीरतापूर्वक विचार-विमर्श होने लगा। हिन्दुस्तान के वाइसराय लार्ड इरविन ने सुलह कराने का प्रस्ताव रखा और सुझाव दिया कि 'गोलमेज कॉन्फ्रेन्स' बुलाई जाए, जिसमें भारतवासियो की राय भी सुनी जा सकती है। कुछ लोगों को यह प्रस्ताव आकर्षक प्रतीत हुआ, क्योकि इतिहास में पहली बार ब्रिटिश अधिकारियो ने भारतीय प्रतिनिधियो के साथ वार्ता करने की तत्परता प्रकट की थी। मगर नेहरू परिवार में किसी को यह भ्रम नही हुआ। कदाचित् मोतीलाल की बहन को छोडकर, जो हर वक्त बडबड़ाती रहती थी कि ये लोग नाहक अपनी जिन्दगी बर्बाद कर रहे है और परिवार की सभी मुसीबतो का कारण जवाहरलाल की जिद और कमला की लापरवाही है। वृद्धा की बड-बड सुनते हुए इन्दिरा अपनी नाराजगी नहीं छिपाती थी।

बुरी तरह बीमार मोतीलाल नेहरू को शासकों ने दस हफ्ते 'कुत्ताघर' मे बन्द रखा और फिर यह समझकर कि कांग्रेस के इस लोकप्रिय नेता का जेल मे देहान्त होने से सरकार की सभी योजनाएँ चकनाचूर हो सकती हैं, वाइसराय ने उन्हे 'बख्शने' तथा जेल से रिहा करने का फैसला किया।

मोतीलाल ने यह अपना अपमान समझा और उन्होंने वाइसराय को तार भेजा, जिसमें लिखा कि यह इनायत उन्हें नहीं चाहिए, परन्तु रोग मोतीलाल के मजबूत शरीर को खाए जा रहा था। डॉक्टरों के कहने पर उन्हें मसूरी ले जाया गया, जहाँ का जलवायु उनके स्वास्थ्य के लिए अच्छा था। मसूरी मे उन्होने अपने को पत्नी, बहन तथा पोती के स्नेह व चिन्ता से घिरा पाया। उनके जी में जी आया। उनके हृदय मे वह समय देखने की उत्कट इच्छा बनी हुई थी, जब हिन्दुस्तान आजाद होगा, यह जानने की उत्कण्ठा थी कि प्रियजनो—जवाहरलाल तथा इन्दिरा—का क्या होगा, जिन्हे वह इस दुनिया मे छोड़ जाएँगे। यह सोचकर कि वे उनके जीवन के ध्येय को जारी रखेंगे, मोतीलाल को कुछ सात्वना होती और मृत्यु का अंधकार इतना भयानक प्रतीत नहीं होता था महानिद्रा निकट आने की पूर्वानुभूति हृदयविदारक पीडा पैदा करती थी कोई निर्मम दुष्ट शक्ति कलेजे में घुसकर गला घोंट रही थी दिल में टीस

पैदा होती थी, सॉस लेने मे कठिनाई होती थी और वह सब कुछ जी-भर देखने की सम्भावना नही मिल रही थी, जो हर मनुष्य के सर्वाधिक सरल, किन्तु परम सुख का स्रोत होता है—आकाश, धरती, बच्चे।

सजा भुगतने पर जवाहरलाल जेल से रिहा हो गए। आनन्द भवन मे वह कमला से मिले और अगले ही दिन मसूरी रवाना हुए।

परिवार के सभी लोग पुनः इकट्ठे हुए। एकाकीपन का मानसिक दु:ख सहन कर चुकी इन्दिरा के मुख पर रौनक छा गई, परन्तु सुख की वेला अल्पकालिक रही। तीन दिन गुजरने पर मॉ-बाप इलाहाबाद चले गए, ताकि 19 अक्टूबर को जिले के किसान सम्मेलन मे भाग लें। पुलिस अफसर ने जवाहरलाल को नोटिस सौंप दी—दण्ड संहिता की धारा 144 के तहत उनके लिए सार्वजनिक भाषण देना मना था। पुलिस अधिकारी के देखते-देखते जवाहरलाल ने नोटिस फाड़ दी और इस तरह साफ-साफ जता दिया कि वह आदेश का पालन करने का इरादा नहीं रखते हैं। जेल का खतरा फिर से उनके सिर के ऊपर मॅडराया। मौसी बड़बडाने, हाय-हाय करने लगी। मोतीलाल नेहरू चुप रहे। फिर उठकर उन्होने पुत्र को गले लगाया। मन-ही-मन उन्हे विश्वास था कि बेटे से अन्तिम विदा ले रहे है। उनकी ऑखे डबडबा आई।

"पापा, चिट्ठियाँ लिखिए, जैसा कि आपने वायदा किया," कॉपती हुई आवाज मे इन्दिरा ने अनुरोध किया और मुस्कान के पीछे अपना दु ख छिपाने की कोशिश की।

जो होना था, वह हो गया। जवाहरलाल नेहरू केवल दो-तीन सभाओ में भाषण दे पाए और कुछ दिन बीतने पर सरकारविरोधी विध्वंसकारी कार्यो के लिए अदालत ने उन्हें दो वर्ष के कड़े कारावास और भारी जुर्माने की सजा दी। जुर्माने की वसूली के तौर पर आनन्द भवन की कुछ सम्पत्ति फिर से जब्त की गई।

निजी मुसीबत इन्सान पर उतनी भारी नही गुजरती है, जितनी कि सगों की दुर्दशा। शायद इसीलिए अत्याचार हुकूमतो ने हमेशा दण्डित मनुष्य के परिवार पर आतक ढाया।

जेल की कोठरी में चिन्तन-मनन के लम्बे यातनापूर्ण दिनों में जवाहरलाल ने अपने को उलाहना दिया कि वह बेटी की शिक्षा की ओर समुचित ध्यान नही दे पाए है और उसका मार्ग-निर्देशन नही कर सके हैं और लड़की असाधारण रूप से योग्य तथा प्रतिभाशाली है, जिज्ञासु है, बहुत पढती है, इतिहास तथा सामाजिक ज्ञान में बडी रुचि लेती है, परन्तु इसका मार्ग-निर्देशन कौन करेगा, आवश्यक ज्ञान कौन प्रदान करेगा ? स्कूल ? नहीं, यह बेकार है।

मसूरी में एक बातचीत के समय इन्दिरा ने स्कूल के दमघोंटू वातावरण की फिर से शिकायत की—अंग्रेजियत परस्त शिक्षक उसके साथ बुरा व्यवहार करते थे और उसे संदिग्ध दृष्टि से देखते थे वह राजकीय अपराधी की बेटी थी

ने इन्दिरा को वचन दिया कि वह उसकी शिक्षा कम-से-कम विश्व

इतिहास की शिक्षा का निर्देशन करेगे।

जेल में खाली समय बहुत था और नेहरूजी ने अपनी पुत्री के लिए विश्व इतिहास का पाठ्यक्रम तैयार करना शुरू किया।

वह उच्चतम आत्मिक संस्कृति के व्यक्ति, गहन आलोचनात्मक, दार्शनिक बुद्धि के धनी तथा चिन्तक थे और पुत्री के नाम अपने पत्रों को उन्होने मौलिक वैज्ञानिक-साहित्यिक निबन्ध का रूप दिया, जिसमें मानव-समाज के भूतकाल तथा वर्तमान काल, दार्शनिक विचारो के विकास तथा आधुनिक राजनीति का बडे परिष्कृत एव सहज ढग से ताना-बाना बुना हुआ था। नेहरूजी के ये पत्र सूक्ष्म भावनाओ से ओतप्रोत थे और उनमें इतिहास की शक्तिशाली अनुगूँज तथा वर्तमान संसार की गतिविधियों की व्याख्या का जो सयोजन हुआ, उसने उनकी पुत्री के मन मे प्रचण्ड भावनात्मक प्रतिध्वनि उत्पन्न की।

19 नवम्बर, 1930—इन्दिरा का जन्म-दिन था, वह तेरह बरस की हो चुकी थी।

बधाइयॉ प्राप्त कर चुकने और मॉ तथा दादी द्वारा तैयार किया नाश्ता कर चुकने के बाद इन्दिरा अपने कमरे मे चली गई। उसका मन भारी था। उसने किताब खोली पर पढने का जी नहीं कर रहा था। वह बरामदे मे आ गई।

रात को पानी बरसा था। धरती ने अँगडाई ली और अब वह उँन्मुक्त गहरी सॉसें ले रही थी। आसपास के गॉवों के किसान, जो बैलगाड़ियों पर साग-सब्जियॉ लादकर आए थे, अपना माल बेच चुके थे और लौटने के लिए तैयारियॉ कर रहे थे। दुबले-पतले, धूप से झुलसे, धोतियॉ पहने किसान बैलों की साज जॉच रहे थे, जो अपने मालिकों जैसे ही कृशकाय और थके-मॉदे मालूम पडते थे। ये इन्सान और पशु एक जैसी जिन्दगी जीते हैं—कड़ी धूप में, पसीने से तर-बतर वे जमीन जोतते हैं, असह्य धूप से बचने के लिए थके-हारे वे गॉव के तालाब के सडियल पानी मे स्नान करते हैं, सब मिलकर जीते, सोते, खाते है और उनकी महज एक ही आम खुशी है—जोती हुई जमीन तथा पैदा की हुई फसल।

देहाती इलाकों के दौरे से लौटकर एक बार पिताजी ने कहा था—"किसान हमारे पालक-पोषक हैं, इन्दु, और पशुओ जैसी उनकी जिन्दगी को सुधारना हमारा फर्ज है। वे हमारी जनता का आधार है। उन्हीं की खातिर, न कि अपनी भलाई के लिए, हम लोग, जो ब्रिटिश शासन की हालत में भी भले-चंगे है, संघर्ष कर रहे हैं और कुरबानियॉ दे रहे है।"

मॉ की हल्की जानी-पहचानी पदचाप सुनकर इन्दिरा ने मुड़कर देखा।

"लो, बिटिया, तुम्हारे लिए एक और उपहार," माँ का मुख खिला हुआ था।

"हाय मॉ !" इन्दिरा उसकी तरफ लपकी और केन्द्रीय नैनी जेल की मुहर लगी चिट्ठी छाती से लगाकर वह बरामदे से खिसक गई और अपने कमरे मे जा बैठी।

'जन्म-दिन के अवसर पर तुम उपहार तथा शुभकामनाएँ स्वीकार करने की आदी हो चुकी हो अबकी बार भी तुम्हें ढेर सारी " मिलेंगी मगर नैनी

जेल से मै तुम्हे भला कौन-सा उपहार भेज सकता हूँ?" पिताजी का पत्र यूँ शुरू हुआ। "मेरे उपहार किसी ठोस पदार्थ के बने नही हो सकते हैं, वे तो केवल अभौतिक अतिसूक्ष्म भावनाओं तथा विचारों के बने हुए ही हो सकते है।"[1]

पिताजी ने लिखा कि वह उस घमण्डी भारतवासी की तरह लोगों को नसीहते देना पसन्द नहीं करते है, जो अपने को महाज्योति समझकर और अपने सिर पर दीया जलाकर घूमता-फिरता है, ताकि अन्धकार मे डूबे गँवार-जाहिल लोगों का रास्ता रोशन करे। पिताजी ने बताया कि यह व्यग्य कहानी महान् चीनी पर्यटक स्युआन दूजान ने अपनी पुस्तक में सुनाई, जिन्होने 13 सदियों पहले भारत की यात्रा की थी।

"मैने हमेशा यह माना है," इन्दिरा ने पढ़ा—"कि झूठ-सच का फर्क मालूम करने का सबसे अच्छा तरीका दूसरों को आदेश नही देना, बल्कि बातचीत, विचार-विनिमय, बहस करना है। तुम्हारे साथ बातचीत करना मुझे पसन्द था, हमने बहुत-सी बातों पर गौर किया, मगर ससार विशाल है...इसलिए हमें कभी भी ऊब महसूस करना या उस मूर्ख तथा घमण्डी व्यक्ति की तरह, जिसका किस्सा स्युआन दूजान ने बताया, यह नही सोचना चाहिए कि हम सभी समुचित विषयो का ज्ञान प्राप्त कर चुके है और बहुत बुद्धिमान बन गए है। कदाचित् यह अच्छा भी है कि हम बहुत अधिक बुद्धिमान नहीं बन पाते है, क्योंकि बड़े ज्ञानी लोगों को कभी-कभी यह सोचकर ग्लानि महसूस होती होगी कि उनके लिए ज्ञानार्जन करने को कुछ नहीं रह गया। उन्हे नवीनता की खोज तथा अध्ययन के सुख का अभाव अखरता होगा, जिसका अपूर्व अनुभव कोई भी कर सकता है, जो इच्छा रखता है...।

"तुम्हे याद है कि जोन ऑफ आर्क की कहानी से तुम किस तरह वशीभूत हुई, जब तुमने पहली बार यह कहानी पढी और जब जोन के समान बनने की उत्कण्ठा तुम्हारे दिल मे पैदा हुई? साधारण स्त्री-पुरुष आमतौर पर वीर नही होते। वे रोजी-रोटी, अपने बच्चो, घर-गृहस्थी आदि की सोचते रहते है, परन्तु ऐसा समय आता है, जब समस्त जनता महान् ध्येय मे आस्था से परिपूर्ण हो जाती है और तब सबसे साधारण स्त्री-पुरुष भी सच्चे वीर बन जाते है तथा इतिहास महत्त्वपूर्ण घटनाओ से भरा-पूरा हो जाता है। महान् नेताओ मे कुछ ऐसा है, जो सम्पूर्ण जनता को उत्साहित करता है और उसे महान् पराक्रमों के लिए उत्प्रेरित करता है...।

"यह बडे सौभाग्य की बात है कि हम इस तूफानी काल में जी रहे हैं, जब हममें से प्रत्येक महान् घटनाओ मे भाग ले सकता है और देख सकता है कि किस प्रकार न केवल भारत, बल्कि सारी दुनिया में बुनियादी परिवर्तन हो रहे है। तुम सुखी लड़की हो। तुम्हारा जन्म उसी वर्ष और महीने में हुआ, जब रूस मे महाक्रान्ति ने नये युग का शुभारम्भ किया और अब तुम स्वय अपने देश मे हो रही क्रान्ति की साक्षी हो और शीघ्र ही उसमें भाग ले सकोगी।

1. J Nehru, *Glimpses of World History* N Y The John Day Company 1942

"आज भारत में हम इतिहास के सर्जक हैं। तुम्हें और मुझे उसकी परिणति देखने और इस महान् ड्रामा में कुछ हद तक भाग लेने का भी सौभाग्य प्राप्त हुआ. ।

"हम हिन्दुस्तान के सिपाही हैं, अतः हमें उसकी इज्जत की रक्षा करना है और यह दायित्व पवित्र है. .।

"हमारे पास छुपाने को कुछ नहीं है। हम जो कुछ करते और कहते है, हमे उसका डर नहीं है। हम सौर प्रकाश मे अपना काम कर रहे है...नि.सन्देह, हमारे कुछ रहस्य है और होने भी चाहिए, लेकिन यह तुच्छ बातों को लेकर बडे राज बनाने के बराबर नही है। अगर तुम भी ऐसा करोगी, तो प्रकाश की सन्तान के रूप में बडी हो जाओगी, निर्भय, निश्चिन्त और अविचल रहोगी, चाहे कुछ भी क्यो न घटित हो ।

"जैसा कि मैं बता चुका हूँ, तुम सौभाग्यशाली हो, क्योकि तुम अपने देश मे हो रहे महान् स्वतन्त्रता सघर्ष की साक्षी बनी। यह भी तुम्हारा सौभाग्य ही है कि एक अत्यन्त साहसी विलक्षण महिला तुम्हारी मॉ है और यदि कभी शकाएँ तथा चिन्ताएँ तुम्हे घेर लेगी, तो उनसे बेहतर मित्र की कल्पना भी नही की जा सकती।

"अलविदा, मेरी छोटी बेटी, हिन्दुस्तान की साहसी सिपाही बनो...।"[1]

शाम को मोतीलाल के अध्ययन-कक्ष मे बहुत-से लोग इकट्ठे हुए। बेटी सहित कमला भी उपस्थित थी। धीर-गम्भीर इन्दिरा ने ऐसा व्यवहार किया, जैसे वह उस सम्मेलन की पूर्णाधिकार प्राप्त सदस्य हो।

उच्च रक्तचाप से पीडित मोतीलाल नेहरू आरामकुर्सी पर अधलेटी मुद्रा में थे। उनका चेहरा सूजा हुआ था और वह भारी सॉसें लेते हुए बोल रहे थे।

"जवाहरलाल ने व्यर्थ ही अपनी आजादी की कुरबानी नहीं दी," वह बोले। "किसानो के बीच कर न देने का जो आन्दोलन उसने छेड़ दिया है, वह दावानल की तरह एक के बाद दूसरे इलाके मे फैलता जा रहा है। अब गॉव सघर्ष का केन्द्र बन रहा है। यह अच्छा है, लेकिन शहरों मे भी नागरिक असहयोग आन्दोलन में ढील नही आने देनी चाहिए। हमारे पुराने नारो के साथ अब नये नारे भी बुलन्द करने चाहिए : 'महात्मा गाँधी आजाद हो !', 'जवाहरलाल नेहरू आजाद हो !' "

सम्मेलन में एकत्र लोगो ने इस सुझाव का समर्थन किया।

"ठीक है। जनता ये नारे जरूर लगाएगी ! इससे आन्दोलन में जान आएगी !"

"14 नवम्बर को जवाहरलाल का जन्म-दिन है," मोतीलाल ने वात्सल्य भाव से द्रवित होकर कहा। "यह विरोध जन-प्रदर्शनो के लिए अच्छा अवसर है। और यही काग्रेस अध्यक्ष को हमारा उपहार होगा।"

फौरन काम शुरू हुआ। सभा-सम्मेलनो तथा प्रदर्शनों का आयोजन करते हुए कमला दिन-भर शहर में घूमती रहती थी। भारतीय महिलाएँ, जो सदियो से घर की

1 J Nehru, *Gl mpses of World History* N Y The John Day Company 1942

चहारदीवारी मे बन्द रही थीं और राजनीति के मामलो के प्रति पूरी तरह उदासीन थीं, बडे साहसपूर्वक शहरो की सड़को और मैदानो मे उमड़ पर्डी। उनके दृढ़ सकल्प, धीरज और वीरता के सामने गुस्से से लाल-पीले हो रहे पुलिस वाले नही टिक पा रहे थे। जहॉ पुरुषो को मुँह की खानी पड़ती थी, वहॉ स्त्रियो और उनका साथ देने वाले इन्दिरा की 'वानर सेना' के हिम्मती फुर्तीले किशोर-किशोरियो को सफलता मिलती थी।

जवाहरलाल नेहरू तथा महात्मा गाँधी को रिहा करने की मॉग के साथ जन-प्रदर्शन देश के कोने-कोने में फैल गए। ये प्रदर्शन इतने जबर्दस्त थे कि ब्रिटिश ससद मे भी उन पर बहस की गई। लेकिन रियायत देकर सरकार के साथ समझौते से इन्कार करने वाले काग्रेसी नेता जेलों मे बन्द रहे।

सन् 1931 की पहली जनवरी को कमला को भी गिरफ्तार करके जेल में डाला गया। गिरफ्तारी के वक्त उसने पुलिस के सामने दो-टूक ऐलान किया—"यह जानकर मुझे अपार सुख और गर्व अनुभव हो रहा है कि मै अपने पति के पदचिह्नों पर चल रही हूँ ...।"

इन्दिरा वह रात करीब नही सो पाई। उसे माँ पर गर्व था और उसके स्वास्थ्य के बारे मे चिन्ता भी थी। वह मॉ के पास रहना, उसके साथ मिलकर सभी कष्ट उठाना चाहती थी और आवश्यकता पडने पर अपना जीवन भी बलिदान करने को तैयार थी।

उस रात को मोतीलाल नेहरू के कलकत्ते से लौटने के बाद आनन्द भवन में कोई नहीं सोया। दादी स्वरूप रानी दादाजी के सिरहाने बैठी रहीं। उन्हें दमे का दौरा पड़ा, वह बड़ी मुश्किल से सॉस ले रहे थे और पुत्रवधू की प्रशंसा करते नही थक रहे थे—"कितनी अच्छी स्त्री है...जवाहरलाल को ऐसी ही योग्य पत्नी चाहिए थी...नहीं, मुझसे गलती नही हुई, जब मैंने यह रिश्ता तय किया था...शाबाश..." वह ये शब्द दोहराते रहे और उनसे पीडा का निवारण हो रहा था और इन्दिरा ये उद्‌गार सुनते हुए दादाजी के प्रति कृतज्ञता अनुभव करती और उसे उनके साथ आध्यात्मिक एकात्म्यता की अनुभूति हो रही थी। मोतीलाल को भी कुछ ऐसी ही सुखद अनुभूति होती थी। उन्हें लगता था कि उनके शरीर की मंद जीवन-शक्ति को मानो नयी गति मिली है, उसका संचार तेज हो गया और पोती के तरुण हृदय में प्रबल वेग से स्पन्दित हो रहा था। उन क्षणों में अमरत्व का विचार मानो वास्तविकता में परिणत हो रहा था। मोतीलाल ने इन्दिरा को जाकर सो लेने के लिए नही कहा, वह उसे देखते रहे और उसे मानो अपना ही अवतार मान रहे थे, जो उनका जीवन एवं संघर्ष जारी रखने को तैयार है।

"प्रियदर्शिनी," मोतीलाल ने यह शब्द इतने गहन स्निग्ध भाव से उच्चारित किए, मानो वह उनके हृदय से मुखरित हुआ हो

पौ फटने के समय जब झींगुरों की गुनगुनाहट की जगह पक्षियों के कलरव ने

ले ली थी और सूर्य की पहली किरणों ने कमरे में झाँका, इन्दिरा कपड़े उतारे बिना गहरी नीद सो गई थी और जब ऑख खुली, तो पलंग के सिरहाने पर पड़ा लिफाफा देखा। "पिताजी का पत्र है," वह खुश हो गई और उनीदापन काफूर हो गया।

दो महीने से अधिक समय से कोई पत्र नही आया था। लेकिन जनमत और कुछेक प्रभावशाली व्यक्तियों, साथ ही कुछ अग्रेजो के भी दबाव के कारण अधिकारियों ने कारावास के कडे नियमो को थोडा ढीला कर दिया और जवाहरलाल नेहरू को बेटी के साथ चिट्ठी-पत्री करने की इजाजत दे दी। इन्दिरा ने सोचा कि शायद मॉ-बाप से मिलने का भी मौका दिया जाएगा।

पिता का पत्र आशावादी भावना से ओतप्रोत था, उन्होने इन्दिरा को सूचित किया कि अब विश्व इतिहास का पाठ्यक्रम शुरू करने की सम्भावना मिली है, जिसका वह वचन दे चुके थे।

"इतिहास विषयक पुस्तकें पढना अच्छा है, लेकिन इतिहास के सर्जन में योग देना कहीं अधिक रोचक है," पत्र मे लिखा था। "और तुम जानती ही हो कि आजकल हमारे देश में इतिहास की रचना हो रही है। भारत का इतिहास बहुत पुराना है, उसका आरम्भ प्रागऐतिहासिक काल के कुहासे मे खोया हुआ है.. लेकिन आज हमें फुरसत ही कहाँ मिलती है कि अतीत पर सोच-विचार किया जाए। हमारे मन-मस्तिष्क का वास्ता भविष्य से, जिसका हम निर्माण कर रहे हैं, और वर्तमान से है, जिसमें हमारा सारा वक्त और शक्ति लगी है।

"...मेरे विचार अन्यत्र हैं, मैं जेल के बाहर चल रहे महान् सघर्ष और इसके बारे मे सोच रहा हूँ कि अन्य लोग क्या कर रहे है और यदि मैं उनके साथ होता, तो क्या करता। वर्तमान और भविष्य के बारे में विचारों ने मुझे इस कद्र घेर रखा है कि भूतकाल के बारे में सोचने को मन नही करता है। मगर मै महसूस करता हूँ कि यह ठीक नहीं है... ।"

"तुम्हे एक राज बताऊँ ? मुझे सन्देह होने लगा है, क्या मै इस कद्र जानता हूँ कि तुम्हें कुछ सिखाऊँ ? तुम इतनी जल्दी बड़ी हो रही हो और बुद्धिमान, सयानी बन रही हो कि स्कूल अथवा कॉलेज मे और उसके बाद मैंने जो कुछ सीखा था, वह तुम्हारे लिए अपर्याप्त, और नहीं तो कम-से-कम पुराना पड़ चुका साबित हो सकता है... ।"[1]

पिताजी ने शिकायत की कि जेल मे उनके पास जरूरी किताबे और सन्दर्भ ग्रन्थ नहीं हैं, जिनके बिना इतिहास के बारे मे लिखना मुश्किल है। उन्होंने बताया कि विश्व का सम्पूर्ण इतिहास सूत्रबद्ध है और किसी एक देश के अतीत को समझना असम्भव है, अगर विश्व के दूसरे भागो में इतिहास की गतिविधियों का ज्ञान प्राप्त न हो।

1 J Nehru, *Gl of World History* N Y The John Day Company 1942

"..मसूरी मे तुम मुझसे सैकडो मील दूर थी। मगर तब मै तुम्हे जितने चाहता था, पत्र लिख सकता था और जब तुम्हे देखने की बडी इच्छा होती, तुमसे मिलने जा सकता था। इधर एक-दूसरे के इतने निकट, जमुना के दो तटो पर रहते हुए भी हम नही मिल सकते है, क्योकि नैनी जेल की ऊँची दीवारे हमें एक-दूसरे से अलग किए हुए है। पखवारे में एक बार मुझे एक चिट्ठी तुम्हे भेजने की इजाजत है और मै तुमसे पखवारे में एक चिट्ठी प्राप्त कर सकता हूँ तथा पखवारे मे एक बार तुमसे बीस मिनट की मुलाकात करने की अनुमति है...।

"कहना कठिन है—ये पत्र तुम्हे पसन्द आऍगे भी या नहीं, जब तुम उन्हे पढोगी। लेकिन मैने अपनी खुशी के लिए ये पत्र लिखने का फैसला किया। वे तुम्हे मेरे समीप लाते हैं और मुझे कुछ ऐसा महसूस होता है, मानो मैंने तुम्हारे साथ बाते की। मै अक्सर तुम्हारे बारे मे सोचता हूँ और आज तो तुम्हारे खयाल ने क्षण-भर को भी मेरा साथ नहीं छोड़ा। आज नव वर्ष का दिन है। पौ फटने से पहले बिस्तर पर लेटे हुए मै आकाश के तारो को एकटक देखता रहा और विगत विलक्षण वर्ष के बारे मे, उसकी सभी आकाक्षाओं, दुःख-दर्द तथा खुशियों, उसमे सम्पन्न हुए सभी महान् पराक्रमो की बाबत सोचता रहा। मुझे गॉधीजी का ख्याल आता रहा, जिन्होने यरवदा जेल की कोठरी मे बन्द रहकर भी, मानो जादुई छड़ी से हमारे देश को यौवन और शक्ति व उत्साह लौटा दिया। मै दादू और कई दूसरे व्यक्तियो के बारे में सोचता रहा। और खासतौर से मेरा ध्यान तुम्हारी मॉ और तुम पर केन्द्रित रहा। फिर सुबह को खबर मिली कि तुम्हारी मॉ को हिरासत मे ले लिया गया और जेल मे बन्द कर दिया गया. .मुझे तनिक भी सन्देह नहीं कि तुम्हारी मॉ पूरी तरह सुखी और सन्तुष्ट होगी।

"लेकिन तुम अपने को अकेली महसूस कर रही होगी। दो हफ्तों में एक बार तुम माँ से और दो हफ्तो मे एक मर्तबा मुझसे मिल सकती हो और हमे एक-दूसरे की खबर दे सकती हो। पर मै कलम और कागज लेकर बैठूँगा तथा तुम्हारे बारे मे सोचूँगा। इस प्रकार तुम नि-शब्द मेरे पास आओगी और हम बहुत-सी बातो के बारे मे बातचीत करेगे। हम भूतकाल पर निगाह डालेगे और भविष्य को अतीत से अधिक महान् बनाने के उपायों की खोज करेंगे। तो आओ, नव वर्ष के इस दिन तय कर ले कि जब यह वर्ष बुढाकर चला जाएगा, तब तक हम भविष्य के बारे में अपने सुन्दर सपने को वर्तमान के कुछ निकट लाने में सफल होगे और भारत के इतिहास मे उज्ज्वल पृष्ठ जोड़ देंगे।"[1]

कदाचित् इस प्रकार इन्दिरा के मन मे एक बडे सर्वव्यापी सपने का बीज बोया गया। इस बीज ने गहरी जड जमाई, उससे होनहार अंकुर फूटा और इन्दिरा ने अपनी जनता के भावी जीवन के आकर्षक दृश्य देखने शुरू किए—मानव योग्य सुन्दर जीवन

1 J Nehru, *Glimpses of World History* N Y The John Day 1942.

के दृश्य, जब देश के हर नागरिक का व्यक्तित्व निखर जाएगा और देश एकजुट, स्वतन्त्र, लोकतान्त्रिक तथा शान्तिप्रिय राज्य के रूप में सामने आएगा, जो विश्व के राष्ट्र समुदाय के विकास, उसकी सामाजिक प्रगति में समुचित योग दने मे समर्थ होगा।

जवाहरलाल नेहरू ने शायद जेल के अधिकारियो की नजरो मे छुपा कोई रास्ता खोज निकाला होगा, जिसके जरिए वह आनन्द भवन को सन्देश भेज सकते थे। जनवरी के पहले दस दिनो में उन्होने अपनी बेटी को सात चिट्ठियाँ भिजवा दी।

इलाहाबाद के निवासियो तथा आसपास के गाँवों के किसानो की भीड मे शामिल होकर, जो राजनीतिक बन्दियो की रिहाई की माँग करती थी, इन्दिरा कई बार नैनी जेल की मनहूस दीवारो के करीब पहुँचती थी। इन्दिरा की गरमजोशी उसे भीड के आम लोगो से अलग करती थी। एक बार तो वह पुलिस के लाठी-चार्ज का शिकार बनने से बाल-बाल बची।

रात को जब इन्दिरा घर लौटी, स्वरूप रानी ने, जिन्हें इसका गुमान तक नहीं था कि पौत्री इतना भारी जोखिम उठाती है, उसे जवाहरलाल नेहरू का नया पत्र सौपा। वह 7 जनवरी को लिखा गया था।

"प्रियदर्शिनी—इसलिए और भी प्रिय कि तुम्हे देखने की सम्भावना से मै वंचित हूँ !" पिताजी ने लिखा था। "आज जब मै यह चिट्ठी लिखने के लिए बैठ गया, मुझे कही दूर से आती दबी हुई चीखें सुनाई दी, जो कही दूर बादल गरजने जैसी मालूम पडती थी। शुरू-शुरू मे तो शब्द मै समझ नहीं पाया, लेकिन ये शब्द निश्चय ही जाने-पहचाने थे और मेरे दिल मे वे अनुगूँज पैदा कर रहे थे।"

ये पक्तियाँ पढ़कर इन्दिरा पुलकित हो उठी—क्या पिताजी ने उसकी आवाज पहचान ली ? नहीं, आगे की बातें पढकर वह समझ गई।

"धीरे-धीरे चीखें नजदीक आई, जोरदार बन गई और जल्द ही कोई सन्देह नहीं रह गया—'इन्कलाब जिन्दाबाद ! इन्कलाब जिन्दाबाद !' का नारा गूँज रहा था। इस नारे से जेल की दीवारे काँपने लगी और हमारे दिल खुशी से बाग-बाग हो उठे। मुझे नहीं मालूम, वे कौन लोग थे, जिन्होने जेलखाने के सामने हमारा नारा बुलन्द किया—शहर के निवासी या गाँवों से आए किसान। मैं यह भी नही जानता कि आज ही क्यो यह प्रदर्शन हुआ। लेकिन जो भी हो, इन लोगों ने आज हमारे हौसले बढा दिए और हमने मन-ही-मन उन्हे अपनी शुभकामनाएँ भेंट कीं।"[1]

इन्दिरा का मुख हर्षोल्लास, गर्व और सन्तोष की भावना से चमक उठा—"इन्कलाब जिन्दाबाद !" हजारो लोगों के उस समवेत स्वर मे, जिसे उसके पिता ने सुना था, उसकी आवाज भी शामिल थी।

"...समय-समय पर बडे विप्लव होते है, बड़ी क्रान्तियों सम्पन्न होती है, जेसे कि 140 वर्ष पहले हुई महान् फ्रासीसी क्रान्ति अथवा 13 वर्ष पहले रूसी क्रान्ति, इस

1 J Nehru, *Glimpses of World History* N Y The John Day Company 942

वक्त हमारे देश मे भी क्रान्ति हो रही है। नि सन्देह हमे आजादी चाहिए। लेकिन हम उससे भी अधिक हासिल करना चाहते है। हम सड़ाँध भरा जल साफ करना और हर जगह ताजा, स्वच्छ जल भरना चाहते हैं। हमे सारी गन्दगी हटानी, अपने देश मे गरीबी को खत्म करना चाहिए. .।

"हम क्रान्ति की दहलीज पर खड़े हैं। भविष्य मे क्या होगा, अभी हम नही बता सकते। लेकिन आज भी हमारी मेहनत के ठोस फल निकल रहे है। हिन्दुस्तान की स्त्रियों को देखो—कितने अभिमान से वे सबसे आगे संघर्ष के लिए उठ खडी हो रही हैं। इतनी कोमल, मगर इतनी दृढ़ तथा निर्भीक ये अबलाएँ दूसरे लोगो के सामने उदाहरण पेश करती हैं। पर्दे की प्रथा, जो हमारी साहसपूर्ण तथा सुन्दर नारियो के मुख छिपाती थी, जो स्त्रियो तथा देश के लिए अभिशाप थी, आज नहीं रही।"[1]

वर्तमान काल की चर्चा करते हुए जवाहरलाल नेहरू सयत तथा तर्कसयत ढग से सुदूर अतीत की याद दिलाते थे, रोजमर्रा के छोटे-मोटे मामलो को महान् कार्यभारो से जोड़ते थे। सब कुछ वह बडे सुबोध और रूपात्मक ढंग से समझाते थे। उस पत्र में इन्कलाब शब्द की व्याख्या की गई, जो उस समय हिन्दुस्तान मे हर जगह गूँज रहा था और प्रदर्शनकारियों की भीड मे स्वय इन्दिरा भी प्राय 'इन्कलाब जिन्दाबाद।' का नारा लगाती थी, लेकिन इस शब्द के अर्थ पर वह बहुत ज्यादा नही सोचती थी। अब उसे पता चला कि पुरातन पर नवीनता की विजय का नियम होता है, कि सामाजिक विरचनाएँ एक-दूसरे की जगह लेती हैं और ससार के क्रान्तिकारी नवीनीकरण की प्रक्रिया निरन्तर जारी रहती है।

मौसम सुहाना था। भूले-बिसरे बाग में लाल गुलाब अरुण छटा बिखेर रहे थे। माँ को कुछेक गुलाब भेट किए जाएँ, तो अच्छा होता। बेचारी का हाल कैसा है ?

मोतीलाल नेहरू कमला की हालत से बहुत चिन्तित थे। उनकी सहन शक्ति अद्भुत थी और पत्नी तथा डॉक्टरों के मना करने के बावजूद वह खाट से उठे, उस जेल तक पहुँचे, जिसमें कमला बन्द थी, और उससे मिल आए। बहू से भेंट करके जब वह प्रसन्नचित्त आनन्द भवन लौटे, तो पलंग पर लेट गए और यही दोहराते थे—"शाबाश ! हमारी बहू खरा सोना है !"

इन्दिरा सिरहाने खडी थी। दादू के उभरे हुए ललाट पर हथेली रखकर वह महसूस कर रही थी कि फूली हुई शिराओ मे दादू का रुग्ण हृदय कैसे धकधक कर रहा था।

और अगले दिन इन्दिरा को पिता से नयी चिट्ठी मिली—उन्हे विपदा की पूर्वानुभूति हो रही थी और वह करीब प्रतिदिन पत्र लिखते थे।

1 J Nehru, *Glimpses of World History* N Y The John Day Company 1942.

"कल हिन्दी पत्र 'भारत' में, जिसके माध्यम से हफ्ते में दो बार हमें बाहरी दुनिया की छुट-पुट खबरे मिलती है, मैंने पढ़ा कि जेल मे मॉ के साथ दुर्व्यवहार किया जाता है और यह भी कि उसे लखनऊ जेल में स्थानान्तरित करने का इरादा है," पत्र मे सबसे पहले उन्होने पारिवारिक मामलों की चर्चा की। "खुद असुविधाओं तथा कष्टो को झेलना बहुत मुश्किल नहीं है। लेकिन अपने आत्मीयों के दु:ख-दर्द की बात सोचते हुए, खासतौर पर जब तुम खुद उनकी हालत सुधारने के लिए कुछ भी नही कर सकते हो, बडा दु:ख होता है। इसलिए 'भारत' ने जो आशंका मेरे मन मे पैदा कर दी, उससे मैं बेचैन हो गया हूँ। तुम्हारी मॉ दिलेर है, उसने शेरनी का दिल पाया, लेकिन वह कमजोर है और मैं नहीं चाहता हूँ कि वह और अधिक दुर्बल बने...।

"आज यह जानकर बड़ी खुशी हुई कि दादू इलाहाबाद मे लौट आए और उनकी हालत बेहतर है। यह खबर मिलने पर भी मैं खुश हुआ कि वह जेल मे मॉ से मिल आए। किस्मत यदि साथ दे, तो हो सकता है कि कल आप सभी से मेरी मुलाकात हो जाए। कल मुलाकात का दिन है, जो कि जेल मे बड़ा दिन होता है। करीब दो महीनो से दादू से मेरी मुलाकात नही हुई। मुझे आशा है कि उनसे मिल सकूँगा और यकीन कर सकूँगा कि उनकी हालत असल मे बेहतर हो गई...।"

और फिर अपना वचन पूरा करते हुए पिताजी ने मिस्र, इराक, फारस की प्राचीन सभ्यताओ, चीन तथा भारत के राजवशों के बारे मे रोचक कहानी जारी रखी।

"सम्भवत: हम उन लोगो के वशज हैं, जो प्राचीन काल में उत्तर-पश्चिम की दिशा मे पहाडी दर्रों से गुजरकर उस देश की मुस्कराती घाटियां में उतरे, जिसे कालान्तर मे ब्रह्मवर्त्त, आर्यावर्त्त, भारतवर्ष तथा हिन्दुस्तान नाम दिया गया। जरा कल्पना करो तो किस प्रकार अपनी गाड़ियो सहित वे पहाड़ी दर्रो से उनके सामने फैली अज्ञात वादियो मे उतर आए। ये हिम्मती लोग थे, जो साहसिक कारनामों की खोज में आगे बढे और सभी खतरो का सामना करने को तैयार थे...जरा हमारे उन वंशजों के बारे में सोचो, जो आगे बढते गए और आखिरकार महान् गंगा के तट पर पहुॅचे, जो बड़ी शालीनता से समुद्र की ओर बह रही है। इस नदी को देखकर उनकी खुशी का वारपार नहीं रहा होगा। तो फिर आश्चर्य ही क्या है, अगर उन्होंने इस नदी के सामने सिर नवाया और अपनी समृद्ध तथा मधुर भाषा मे गगा की प्रशसा करने लगे।

"यह सोचकर रोमांच हो आता है कि हम इन विगत सदियो के उत्तराधिकारी है। मगर हमें आत्मतुष्टि से बचना चाहिए—यदि हम इन बीती सदियो के उत्तराधिकारी है, तो हमें उनसे अच्छा भी और बुरा भी उत्तराधिकार मे प्राप्त हुआ है। आज भारत मे बहुत कुछ ऐसा है, जो हमारे विकास मे बाधक रहा, जिसने हमारे महान् देश को गरीबी मे रहने के लिए मजबूर कर दिया, उसे दूसरों के हाथों मे खिलौना बना रखा है, परन्तु क्या हमने उस सबका अन्त करने का निर्णय नहीं लिया ?"[1]

1 J Nehru, *Glimpses of World History* N Y The John Day Company 1942

अगले दिन कोई आदमी नैनी जेल से चिट्ठी लाया। "आपमे से कोई भी मिलने नही आया और मुलाकात का दिन बेकार रह गया," पिताजी ने लिखा। "बडी निराशा हुई। लेकिन उससे भी अधिक दु:ख वह कारण जानकर हुआ कि मुलाकात क्यो नहीं हो पाई। हमें बताया गया कि दादू अस्वस्थ हैं, इससे अधिक कोई जानकारी नही मिली।"[1]

आमतौर पर इन्दिरा पिताजी से मिले पत्रों का साराश दादू को बताया करती थी। अबकी बार भी यह न सोचकर कि दादाजी की शान्ति भग हो सकती है और उनकी ऊर्जस्विता का 'ज्वालामुखी' फट सकता है, उसने बता दिया कि पिता उनका बहुत इन्तजार कर रहे थे और उनके स्वास्थ्य से चिन्तित है।

इतना ही कहना काफी था, अब कोई भी मोतीलाल को पलग पर नही रख सका। अगले दिन उन्होने पूरा परिवार इकट्ठा किया और फैसला सुनाया—"सब मिलकर जवाहरलाल के पास जा रहे है। मुलाकात की इजाजत मुझे मिल चुकी है।"

मुलाकात भावभीने वातावरण मे हुई, लेकिन कुल मिलाकर उनमे केवल परेशानी हुई। भेट अल्पकालीन थी। बताने को इतना अधिक था, परन्तु सलाम-दुआ और बहुत मामूली बातचीत हुई। ज्यादातर निगाहो के जरिए ही सम्पर्क रहा--ऐसे क्षणो मे ऑखो मे वह सब कुछ देखा और समझा जा सकता है, जिसे शब्दों मे व्यक्त करना कठिन है।

इस भेंट के बाद जवाहरलाल ने इन्दिरा के नाम पत्र में लिखा—"कल आप लोगो से मिलकर प्रसन्नता हुई। मगर दादू को देखकर दिल सिहर गया। वह इतने बीमार और कमजोर दिखाई देते थे। उनकी खूब देखभाल करें, ताकि वह स्वस्थ हो जाएँ। कल मै आप लोगो से बहुत कम बाते कर पाया। इतनी छोटी मुलाकात के वक्त भला क्या बातचीत हो सकती है ? इन चिट्ठियो के जरिए मै यह कसर पूरी करने की कोशिश करता हूँ, हालॉकि यह मुश्किल है और आत्मवचना जल्दी ही भग हो जाती है.. ।

"आओ, प्राचीन काल की चर्चा जारी रखे।"[2]

पिता के पत्रो से इन्दिरा को अपने देश 5 हजार वर्ष पूर्व भारत के उत्तर-पश्चिम मे पनपी मोहनजोदडो सभ्यता, धर्मो, साहित्य, भाषाओं के बारे मे बहुत सारी रोचक जानकारी प्राप्त होती थी। जवाहरलाल नेहरू मातृभाषा के जोशीले समर्थक थे, वह लिखते थे कि "केवल मातृभाषा जनता के विकास तथा बच्चों के शिक्षण का एकमात्र मार्ग प्रशस्त करती है।"[3]

नागरिक असहयोग आन्दोलन कमजोर नही हो रहा था, इतना ही नही, कांग्रेस मे शामिल हुए जनसाधारण के प्रभाव से देश की आजादी की मॉग के साथ-साथ मजदूरो

1 J Nehru, *Glimpses of World History*, N Y , The John Day Company, 1942
2 Ibid.
3 Ib d.

और किसानों ने सामाजिक तथा आर्थिक परिवर्तनों की माँगें भी पेश करनी शुरू कर दी थीं। राजनीतिक परिस्थिति के ऐसे विकास से उपनिवेशवादी तो भयभीत हुए ही, साथ ही हिन्दुस्तान के धनी-सम्पन्न वर्ग भी घबरा गए, जो लोकप्रिय राष्ट्रवादी लिबास पहने थे, मगर अपने मुनाफो तथा खास सुविधाओं से हाथ धोने को तैयार नही थे।

पर काग्रेस के नेतृत्व ने वाम दिशा पकड ली। अपने पुत्र की देखा-देखी काग्रेस के दिग्गज मोतीलाल नेहरू ने भी उपनिवेशवादियो के साथ किसी भी प्रकार के समझौते के प्रति कट्टर नकारात्मक रुख अपनाया।

लन्दन के शासक नि सन्देह समझते थे कि हिन्दुस्तान के प्रमुख राजनीतिक दल—कांग्रेस—की शिरकत के बिना भारतीय उदारपथी समुदाय के चुनिन्दा दलो के साथ कोई भी समझौता व्यर्थ होगा। वाइसराय इरविन ने कांग्रेस के नेता महात्मा गाँधी के साथ सुलह के सम्बन्ध मे सहमति हासिल की, जिसका मतलब नागरिक असहयोग आन्दोलन को रोकना था।

कांग्रेस को भग करने तथा उसके नेताओं के साथ 'गोलमेज' कांफ्रेंस मे समझौता करने के इरादे से सरकार ने कांग्रेस के सभी कार्यकर्ताओ को जेलो से रिहा करने का आदेश दिया।

नैनी जेल मे यह आदेश उस वक्त पहुँचा, जब जवाहरलाल नेहरू को खबर मिली कि उनके पिता मृत्युशय्या पर पड़े हुए हैं।

जेलो से रिहा होने पर जवाहरलाल, कमला, महात्मा गाँधी तथा मोतीलाल नेहरू के अन्य नजदीकी लोग और काग्रेस के प्रमुख कार्यकर्ता इलाहाबाद के लिए रवाना हुए।

दस दिन तक मोतीलाल नेहरू मृत्यु से जूझते रहे, यह उनका अन्तिम सघर्ष था।

कालान्तर मे ये दुखद दिन स्मरण करते हुए जवाहरलाल नेहरू ने एक बार अपनी पुत्री से कहा कि अपने जीवन में उसके दादा ने "बहुत-से संघर्ष किए और अनेक विजयें प्राप्त की। वह घुटने टेकना नहीं जानते थे और मौत का सामना होने पर भी आत्मसमर्पण करना नहीं चाहते थे।"

जब उन्हें आखिरी बार होश आया, मोतीलाल समझ गए कि उनका देहान्त होने वाला है और गाँधीजी तथा खाट के पास खडे अन्य लोगों से उन्होंने कहा—"अपने देश को आजाद देखना मुझे नसीब नही होगा, लेकिन मैं यकीन रखता हूँ कि आप विजय की दहलीज पर खडे हैं और जल्द ही हिन्दुस्तान आजाद हो जाएगा।"

मोतीलाल नेहरू का अन्तिम सस्कार राष्ट्रीय सम्मान के साथ हुआ। सध्या समय गंगा घाट पर अत्येष्टि-क्रिया सम्पन्न की गई।

चिता की लौ हजारों भारतवासियों के अवसादपूर्ण चेहरे आलोकित कर रही थी जो गगा के दोनों तटों पर खडे थे

कुछेक घण्टे बीतने पर कांग्रेस के तिरंगे झण्डे में लपेटा भारत के स्वतन्त्रता सेनानी का पार्थिव शरीर जलकर भस्म हो गया और गंगा की पवित्र जलधारा उसे महासागर मे विसर्जित करने के लिए बहा ले गई।

बडे उजले घर का स्वामी नही रहा, जिसने यह घर बनवाया था और उसे आनन्द भवन नाम दिया था। घर अनाथ हो गया और उसके निवासी लम्बे-चौडे बरामदों मे दबे पॉव चलते थे, फिजूल बाते न करने की कोशिश करते थे और इस तरह दबी हुई आवाजों मे बातचीत करते थे, मानो इस घर में कोई अदृश्य तत्त्व व्याप्त था और वे इस तत्त्व की पुनीत शान्ति को भग करना नहीं चाहते थे।

युवाजन मृत्यु को स्वीकार नही करते हैं, भले ही वह अपरिहार्य तथ्य के रूप में सामने आए। इसलिए दु:ख और पीडा उनके मानस को और अधिक ठेस पहुँचाती है और उनका स्वभाव इस नियम को स्वीकार करने से इन्कार करता है कि पृथ्वी पर प्रत्येक मनुष्य के जीवन का अन्त होता है। इन्दिरा के लिए दादा मोतीलाल घर की नेक, सर्जक, निर्धारक-शक्ति के समान थे, जिसका घर के सभी लोग स्वेच्छया तथा आदरपूर्वक आज्ञापालन करते थे, इन्दिरा भी उसे मानती थी और उसके स्नेह का पात्र थी।

तीन महीने बीतने पर पिताजी ने इन्दिरा को भेजे गए पत्र में लिखा—"उनके न रहने से हम दु:खी हैं। कदम-कदम पर उनका अभाव महसूस होता है। दिन बीत रहे है, परन्तु हमारा दु:ख कम नहीं हो रहा है, दादू की अनुपस्थिति को सहना पहले की तरह कठिन है। लेकिन मैं सोचता हूँ कि वह हमारी ऐसी दशा देखना पसन्द न करते। उनकी इच्छा यही होती कि दु ख से हमारी कमर न टूटे, बल्कि हम उसी तरह दु ख का सामना करे, जिस तरह उन्होने स्वय अपनी कठिनाइयों का सामना किया था, उन्हे पार किया था। वह चाहते थे कि हम उस ध्येय को जारी रखें, जिसे वह पूरा नही कर पाए। इस समय हम भला कैसे निठल्ले बैठे अथवा दु:ख मे व्यर्थ डूबे रह सकते हैं, जबकि हमारे पास इतने सारे काम है और हिन्दुस्तान की आजादी का ध्येय हमारी सेवा की अपेक्षा करता है ? इस ध्येय के हेतु सघर्ष को ही उन्होंने अपना जीवन अर्पित कर दिया था। इसी ध्येय की खातिर हम जीवित रहेंगे तथा लडेंगे और जरूरत पड़ने पर अपने जीवन का बलिदान करेंगे। आखिरकार हम उनकी सन्तान हे और हमारे अन्दर उनकी शक्ति, तेज तथा सकल्प का एक अंश निहित है।"[1]

4

चरित्र-निर्माण

शासकों से सुलह का अर्थ शान्ति-सन्धि नही है। कांग्रेस के सगठनों के सभा-सम्मेलनो मे अपने भाषणो मे जवाहरलाल नेहरू कहते थे कि उपनिवेशवाद शान्ति भग कर चुके है। जो अस्थायी युद्ध-विराम हुआ है, उसे आजादी की खातिर नयी लडाइयो के लिए जनसाधारण को तैयार करने, नागरिक असहयोग आन्दोलन—अखिल राष्ट्रीय सत्याग्रह—पुनः शुरू करने के लिए इस्तेमाल करना चाहिए।

स्वयं जवाहरलाल के लिए भी अपनी शक्ति बढाना जरूरी था, जो कारावास तथा पिता के निधन से हुए अपार दु.ख के कारण क्षीण हो गई थी। डॉक्टरो, माता तथा कमला ने इसके लिए इसरार किया। वह खुद भी आराम तथा वातावरण बदलने की जरूरत महसूस करते थे। लेकिन विश्राम के पक्ष मे सबसे बडी और कदाचित् निर्णायक दलील यह रही कि वह पत्नी तथा बेटी के साथ रहने का अपना वचन पूरा करना चाहते थे।

श्रीलका की सैर करने का निर्णय लिया गया—श्रीलका भारत के निकट है और इस सैर के रोचक होने की भी आशा थी। जवाहरलाल नेहरू बौद्ध मत का गहन अध्ययन करते थे और बहुत पहले से ही उनके मन में भारत की सीमाओं से लगे उन क्षेत्रों का भ्रमण करने की इच्छा थी, जिनमें बौद्ध धर्म फैल गया था। श्रीलंका बौद्ध मत का एक बडा केन्द्र रहा है, इसलिए उसका चुनाव सर्वथा उचित था।

इन्दिरा को नेहरूजी ने बताया था कि उन्हें बौद्ध मत मे सिद्धार्थ गौतम[1] का व्यक्तित्व, जो बुद्ध नाम से प्रसिद्ध हुए, आकर्षित करता था, न कि इस धर्म का वह पक्ष, जिससे पुरोहित-पुजारी तथा शासक वर्ग अपना हित-साधन करते थे।

उष्णदेशीय फूलों की इन्द्रधनुषी छटा, रेशम जैसे कोमल समुद्री जल तथा बौद्ध

---

1 पुराकथा के अनुसार, सिद्धार्थ गौतम ने (623-544 ईसा पूर्व) वर्तमान नेपाल की दक्षिणी सीमा के निकट उत्तरी भारत में स्थित एक राज्य के राजवंश मे जन्म लिया था 29 वर्ष की आयु मे उन्होंने अपना परिवार तथा पितृगृह त्याग दिया और सात वर्ष तक निरन्तर भ्रमण तपस्या तथा

धर्म के अनगिनत प्राचीन पाषाण स्मारकों ने श्रीलंका आए इन पर्यटकों को मन्त्रमुग्ध कर दिया था।

पोलन्नरुव[1] में लेटी मुद्रा में बुद्ध की विशाल प्रतिमा के सामने वे देर तक खड़े रहे। अज्ञात मूर्तिकार की प्रेरणा से अनुप्राणित पाषाण प्रतिमा को इन्दिरा जितनी देर देखती रही, उसे और शायद दूसरे लोगों को भी उतनी ही अधिक मानसिक शान्ति प्राप्त हुई होगी। बुद्ध का शान्त, मुस्कराता हुआ मुख सांसारिक चिन्ताओं का निवारण करता था, ध्यान-मग्न होने की प्रेरणा देता था, शान्ति प्रदान करता था।

नहीं, यह चित्तवृत्ति उसे मंजूर नहीं है। क्या सांसारिक चिन्ताओं से मुक्ति पाकर, मानसिक मंथन, भावनाओं-अनुभूतियों से विमुख होकर वह कभी सुखी रहेगी ? और पिता से, अम्मा से विरक्ति भला कैसे हो ? इन्दिरा को विश्वास था कि उन्हें भी इस प्रकार की शान्ति नहीं चाहिए।

श्रीलंका में बहुत अधिक बौद्ध भिक्षु विचर रहे थे। उनकी निष्कपट तथा भावशून्य मुख-मुद्रा, तटस्थ भाव तथा विरक्ति जीवन के तीव्र स्पन्दन, सड़कों की चहल-पहल, आकाश की निर्मल नीली आभा से विचलित नहीं थी।

बुद्ध के परामर्श, जिनकी व्याख्या इन्दिरा ने अपने पिता से सुनी, निःसन्देह, मानव विवेक के फल हैं और कभी-कभी मार्गदर्शन भी करते हैं। उदाहरण के लिए, बुद्ध के इस कथन पर भला क्या आपत्ति हो सकती है, जो पिताजी को बहुत पसन्द आया था—"जिस व्यक्ति ने अपने ऊपर विजय प्राप्त की है, भगवान् भी उसकी विजय को पराजय में परिणत नहीं कर सकता।" मगर सवाल उठता है कि यह विजय किसे चाहिए और इसका लक्ष्य क्या है ? यदि विजय की आवश्यकता केवल एक व्यक्ति को है और लक्ष्य संकीर्ण तथा सन्देहास्पद है तो...जोन ऑफ आर्क की साधना बिलकुल दूसरी बात है।

विगत काल के स्मारक इन्दिरा की उत्सुक चेतना में परस्परविरोधी भावनाएँ जाग्रत कर रहे थे। कभी-कभी प्रतीत होता था कि उत्प्रेरित कला से साक्षात्कार उसे वशीभूत कर रहा है और वह सौन्दर्य की शक्ति तथा बुद्धिमत्ता के सामने नतमस्तक हो रही है, परन्तु लड़की को स्पष्टतः इसका बोध हो रहा था कि विश्व के काव्यात्मक प्रेक्षण मात्र से वह सन्तुष्ट नहीं हो सकती, वह स्वयं भी उसमें कुछ कर दिखाना चाहती थी।

जहाँ कहीं भी नेहरू परिवार पहुँचा, हर जगह आदरणीय प्रिय अतिथियों की तरह उनका स्वागत-सत्कार किया गया। इन्दिरा को आश्चर्य होता था कि श्रीलंका के कोने-कोने में लोग उनके पिता का नाम जानते थे और 'नेहरू' शब्द उनके लिए संघर्ष के आह्वान का पर्याय बन गया।

---

1 श्रीलंका के उत्तर-पूर्वी प्रान्त की एक बस्ती। 12वीं सदी ईस्वी के बौद्ध मठ के परिसर में बुद्ध की तीन विशाल मूर्तियाँ सुरक्षित हैं।

दो हफ्ते के दौरान एकान्त मे आराम करने के लिए नेहरू परिवार ने बहुत रमणीक और शान्त कस्बा नूवरा एलिया चुना और वहाँ एक छोटा बॅगला किराये पर ले लिया।

प्रतिदिन खेतिहर मजदूरो, चाय के बागानो के मजदूरो और नौजवानों के दल दूर-दूर से आकर बँगले के पास इकट्ठे होते थे। वे प्रसिद्ध भारतीय जन-नेता, उनकी पत्नी तथा पुत्री को देखने और उनका स्वागत करने के लिए उत्सुक रहते थे। भारतीय अतिथियो को वे सच्चे हृदय से उपहार भेट करते थे—जंगली फूल, फल, चाय, साग-सब्जियाँ, हस्तशिल्प की चीजे। बहुत जल्दी बॅगला इन उपहारो से पट गया और इन्कार करने की हिम्मत नही होती थी—ये गरीबो के उपहार थे और हार्दिक स्नेह की अभिव्यक्ति के रूप मे अमूल्य थे, लेकिन इन्दिरा ने इन उपहारों के सदुपयोग का अच्छा तरीका सोचा, उसने उन्हे स्थानीय अस्पताल तथा आश्रमों को भिजवा दिया।

लगता था कि घनी आबादी वाले बडे द्वीप के सभी लोगो को नेहरू परिवार के बारे मे मालूम था। एक घटना से इन्दिरा हैरान हो गई। एक बार सैर के समय उन्हे अध्यापकों सहित स्कूली बालको का एक दल मिला। एक विद्यार्थी जवाहरलाल के पास दौडा आया और हाथ बढाकर लडके ने असली मर्दाना अन्दाज में कहा—"मै दिल छोटा नहीं करूँगा।" इन्दिरा को विश्वास था कि यह बालक वास्तव में किसी भी खतरे के सामने दिल छोटा नही करेगा और श्रीलका के स्वतन्त्रता आन्दोलन का सेनानी होकर रहेगा।

श्रीलका से लौटकर नेहरू परिवार ने सारे दक्षिणी भारत की लम्बी यात्रा की। सबसे दक्षिणी छोर कन्याकुमारी से यह यात्रा शुरू हुई और फिर उन्होने त्रावकोर, कोचीन, मलाबार, मैसूर, हैदराबाद और अनेक स्वाधीन रियासतों का दौरा किया, जिनमें उपनिवेशकों के कठपुतले राजा-रजवाड़े शासन करते थे।

यह महज मनोरंजक पर्यटन नही था, हालांकि यात्रा बहुत रोचक और ज्ञानवर्द्धक सिद्ध हुई। माता-पिता के लिए यह निरन्तर परिश्रम का दौर था—भाषणो, रिपोर्टो, मुलाकातो, बैठको का सिलसिला जारी रहा और इन्दिरा को अपने विशाल, बहुभाषा-भाषी, विविधरूपी देश का निकट से परिचय पाने का सुअवसर मिला, जिसे साझी संस्कृति, समान सुख-दुःख, आजादी और सामाजिक जागरण की समान उत्कण्ठा सूत्रबद्ध किए हुए थी।

जवाहरलाल नेहरू तथा उनके स्वर्गीय पिताजी का अनुमान सही साबित हुआ—लन्दन की 'गोलमेज कॉन्फ्रेन्स' महज तमाशा थी, उसका कोई ठोस फल नही निकला। 'कॉन्फ्रेन्स' की निष्फलता का प्रत्यक्ष प्रमाण यह तथ्य भी था कि कांग्रेस के एकमात्र प्रतिनिधि महात्मा गाँधी लन्दन से हिन्दुस्तान वापस लौटने पर फौरन फिर से जेल में बन्द कर दिए गए। जैसा कि स्वय गॉधीजी ने व्यग्यपूर्ण टिप्पणी की, हिन्दुस्तान में उन्हें 'ग्रेट ब्रिटेन के सम्राट् के होटल में टिकाया गया' जिनके साथ कुछ ही समय पहले उन्होंने बकिंगहम महल में किया था

आम गिरफ्तारियों, कडे आदेशो, निषेधो, सेसरशिप को सख्त बनाने के लिए कदमो का सिलसिला सन् 1932 के शुरू होने से कुछ दिन पहले आरम्भ हुआ। वस्तुत. यह हिन्दुस्तान में मार्शल लॉ के समान था। काग्रेस गैरकानूनी करार दी गई।

क्रिसमस की पूर्ववेला में सुबह को वह रेलगाडी, जिसमें जवाहरलाल नेहरू महात्मा गाँधी से मिलने के लिए मुम्बई जा रहे थे, रोक दी गई और पुलिस ने नेहरूजी तथा उनके साथियो को गिरफ्तार कर लिया। रेल की पटरी के पास 'ब्लैक मैरी'[1] तैयार खडी थी। गिरफ्तार व्यक्तियों को जेल पहुँचा दिया गया। शीघ्र ही इन्दिरा की दोनो बुआएँ—विजयलक्ष्मी[2] तथा कृष्णा—भी गिरफ्तार कर ली गई।

पिताजी से बहुत समय से कोई खबर नही मिली, मुलाकात की इजाजत नही दी गई और पार्सल तथा पत्र जेल के अधिकारी लौटा देते थे। माँ और बेटी बहुत परेशान रहती थी और अपनी बेचैनी तथा आशंकाओं को एक-दूसरे से छुपाती थी। अन्तत· कुछ महीने गुजरने पर जवाहरलाल नेहरू की पहली चिट्ठी मिली, जिसके साथ ही उन्होंने विश्व इतिहास का 'पत्राचार कोर्स' पुनः शुरू किया।

"श्रीलका मे एक महीने की हमारी छुट्टियाँ बहुत जल्दी खत्म हुई, जलडमरूमध्य को पार करके हम हिन्दुस्तान के दक्षिणी सिरे पर पहुँचे," उन्होने लिखा। "तुम्हे याद होगा, किस तरह हमने कन्याकुमारी की सैर की, जिसमे पुराकथा के अनुसार, कन्या देवी का निवास है। पश्चिमी लोगों को हमारे मौलिक नाम विकृत तथा भ्रष्ट करने की आदत है और उन्होने इस अन्तरीप को केप कोमरीन नाम दिया। उस समय हम वास्तव मे भारत-माता के चरणो मे बैठे थे, अरब सागर तथा बगाल की खाडी की जल-राशियों का संगम देख रहे थे और कल्पना करते थे कि महासागर भारत के चरणो को छू रहा है ! वहाँ अद्भुत शान्ति छाई हुई थी और मेरे विचार हजारों मील उत्तर मे भारत के दूसरे सिरे पहुँच गए, जहाँ हिमाच्छादित हिमालय फैला हुआ है और चिरस्थायी शान्ति का राज है। मगर देश के इन दो सिरो के बीच विशाल क्षेत्र मे सघर्ष चल रहा है, हर जगह गरीबी और दु·ख-दर्द की निशानियाँ नजर आती है।...

"मगर आजादी की देवी का दिल जीतना कठिन है; पुरातन काल की तरह वह अपने उपासको से मानव बलिदानों की माँग करती है...।"[3]

यह चिट्ठी इन्दिरा को पूना में मिली। माँ-बाप ने बेटी की शिक्षा का ख्याल रखा और उसे अपने मित्र वकील दम्पती के निजी बोर्डिंग स्कूल में भर्ती कराया।

यह फैसला वक्त पर किया गया—पिता और उनकी बहनें जेलों में कैद थे, माँ अस्पतालों मे रहती थी और इन्दिरा की देखभाल करने वाला कोई नहीं था।

---

1 कैदियो के लिए मोटरगाडियो को इंग्लैण्ड से यह नाम दिया गया और 20वीं सदी के आरम्भ मे यह नाम हिन्दुस्तान में भी प्रचलित हुआ।

2 नेहरू की बहन स्वरूप ने विवाह के बाद नाम धारण किया

3 J Nehru op cit.

अब केवल दादी स्वरूप रानी ही इलाहाबाद में नेहरू खानदान की हवेली 'निरानन्द' भवन मे रहती थी। मगर यह कमजोर और बीमार वृद्धा अपने परिवारजनो का सुख-दु:ख बॅटाना चाहती थी और जहॉ तक सम्भव होता था, वह उपनिवेशवादविरोधी प्रदर्शनों तथा सभाओं में भाग लेती थी और एक बार पुलिस के हाथों बुरी तरह पिटी भी थी।

माता-पिता के संसर्ग से वचित होने के कारण इन्दिरा दु:खी रहती थी, लेकिन वह अपनी मजबूरी को समझती थी, क्या किया जाए—जिन्दगी मे ऐसी चीजे भी है, जो घर-परिवार की सुख-सुविधा से अधिक महत्त्वपूर्ण होती हैं। उसे पिताजी के पत्र, अधिक सटीक शब्दो मे, साहित्यिक-ऐतिहासिक निबन्ध नियमित रूप से मिलते रहते थे। मॉ से भेंट करने का कोई मौका वह हाथ से जाने नही देती थी। इससे इन्दिरा के एकाकी जीवन का बोझ तनिक हलका हो जाता था। वैसे तो नये स्कूल के वातावरण मे एकाकीपन की अनुभूति कम होती थी, फुरसत का समय नहीं के बराबर था—पढाई, कलामडलियो में अध्ययन, छोटी कक्षाओं के बालक-बालिकाओं की परिचर्या में सारा दिन और सोने के वक्त का बड़ा हिस्सा खप जाता था।

पूना का स्कूल कलकत्ता के निकट रवीन्द्रनाथ ठाकुर के जन विश्वविद्यालय शान्तिनिकेतन के साथ बहुतेरे सूत्रो से जुड़ा था। उसमें शान्तिनिकेतन के लिए शिक्षार्थी तैयार किए जाते थे। वकील दम्पती शान्तिनिकेतन मे भी प्राध्यापक थे। स्वभावतया उनके स्कूल की व्यवस्था काफी हद तक ठाकुर विश्वविद्यालय जैसी ही थी।

वकील स्कूल एक छोटी इमारत में अवस्थित था। दिन को इसके कमरो मे क्लासे लगती थी और रात मे वे शयन-कक्ष बन जाते थे।

उसमें कोई नौकर-चाकर नही थे। विद्यार्थी सारा काम स्वयं सँभालते थे—घर की सफाई करते थे, खाना बनाते थे, बर्तन मॉजते थे, कपडो की सिलाई तथा मरम्मत भी करते थे।

विद्यार्थियों में छोटे-मोटे मामूली काम करने की आदत डाली जाती थी और साथ ही कला के प्रति अनुराग पैदा किया जाता था। बालक लोक हस्तशिल्प सीखते थे, उदाहरण के लिए, लड़कियाँ बातिक के काम मे पारंगत बनती थी। स्कूल मे 'साहित्यिक समाज' था, जिसकी सचिवा इन्दिरा थी। लोक-नृत्य और गायन मडलियॉ काम करती थीं, खेल-कूद की ओर भी ध्यान दिया जाता था।

स्कूल की कडी दिनचर्या इन्दिरा को अखरती नहीं थी, उसे स्कूल में व्याप्त लोक परम्परा का वातावरण पसन्द था। स्कूल के विद्यार्थी आम जनता का जीवन जीते थे, लोक-गीत गाते थे तथा लोक-नृत्य करते थे, ठाकुर के नाटक मचित करते थे, देश की घटनाओं से रोमांचित होते थे।

स्कूल के प्रिंसिपल वकील प्रकृति की गोद में खुली हवा में प्रात:काल या संध्या काल में पाठ पढाना पसन्द करते थे, जब ताजा शीतल हवा फूल और घास की सुगन्ध से सुवासित होती है नसों में रक्त का सचार तेज हो जाता है और जीवन

भावनाओ तथा अर्थ से परिपूर्ण प्रतीत होता है। वह रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कविता सुनाते और सभी शिष्य गुरुदेव के शब्दों को दोहराते थे।

जेल मे रहकर भी महात्मा गॉधी ने ब्रिटिश उपनिवेशवादियों का पीछा नही छोडा। सितम्बर, 1932 मे उन्होने छुआछूत की व्यवस्था को बनाए रखने के सरकार के इरादे के विरोध मे अनशन शुरू कर दिया।

जेल की ऊँची दीवारों के पीछे बन्द नाटे कद के इस इन्सान ने छुआछूत का व्यक्तिगत विरोध करके सारे देश को आन्दोलित कर दिया। लगता था कि वे लोग, जो सदियों से निश्चेष्ट और उदासीन थे तथा हरिजनों की दुर्दशा के प्रति बेपरवाह थे, अचानक अकर्मण्यता को त्यागकर हरिजनोद्धार के कार्य मे जुट गए।

राष्ट्र की 'दुखती रगों' को इगित करने, उसकी हृदय तन्त्रियों को झकझोरने की महात्मा गॉधी की क्षमता अद्भुत थी।

"मुझे जबर्दस्त धक्का पहुँचा और मैं नही जानता कि क्या करूँ। मुझे दुखद खबर मिली कि बापूजी ने आमरण अनशन करने का फैसला किया। मेरी छोटी दुनिया, जिसमे वह इतना बडा स्थान रखते है, हिल रही है, कॉप रही है और टूट रही है। लगता है कि हर जगह अन्धकार और शून्य व्याप्त है...क्या यह सच है कि मैं कभी भी उन्हें नहीं देख पाऊँगा ? और जब मुझे शकाएँ घेर लेंगी, विवेकपूर्ण परामर्श की आवश्यकता होगी और यदि मै दु.खी, मायूस रहूँगा और मुझे संवदेनशील मित्र का स्नेह दरकार होगा, तो मै किसके पास जाऊँगा ? हम सब तब क्या करेंगे, जब हमारे परमप्रिय नेता नहीं रहेंगे, जिन्होने हमारा उत्साह बढाया और मार्गदर्शन किया था ?

"विषाद और ऑसू इस दुनिया में बुरे सहयात्री हैं," जवाहरलाल नेहरू ने लिखा। "महासागर की जल राशि से अधिक ऑसू ससार मे बहे है, गौतम बुद्ध ने कहा था और इससे भी ज्यादा ऑसू बहाए जाएँगे, इससे पहले कि इस मुसीबतजदा दुनिया मे इन्साफ कायम होगा। हमारा लक्ष्य अभी भी हमारे सामने खड़ा है, महान् ध्येय हमें लामबन्द कर रहा है और हमें तथा हमारे अनुयाइयो को तब तक चैन नही मिलेगा, जब तक हम यह ध्येय पूरा नही करते... ।"[1]

पिताजी का यह दुःख-भरा पत्र पढकर इन्दिरा परेशान हो गई। गॉधी के मित्र तथा सहयोगी की बेटी के नाते उसे अनशनकारी बन्दी से मुलाकात करने की इजाजत मिली।

महात्मा गॉधी पलंग पर लेटे हुए थे। उनका मुख शान्त था, उस पर पीडा की कोई छाप नही थी। इन्दिरा को देखकर, जो अपने कम-उम्र भानजो के साथ कोठरी मे दाखिल हुई, गॉधीजी उन्मुक्त भाव से मुस्कराए और बोले—"तुम भली-चंगी लगती

1 J Nehru, op cit.

हो, इन्दु, वजन भी थोडा बढ गया होगा। प्यारे बच्चो, तुम्हें देखकर मुझे बडी खुशी हो रही है। मुझ बूढे के लिए यह बहुत अच्छा उपहार है।"

मुलाकात अल्पकालिक रही। अपनी हालत के बारे मे बातचीत को टालकर गॉधीजी ने इन्दिरा की जिन्दगी तथा पढाई, मॉ के स्वास्थ्य, पिता के साथ पत्र-व्यवहार के बारे में सवालों की झडी लगा दी। विदा देते हुए गॉधीजी ने वायदा किया कि इस सुखद मुलाकात के बारे में वह जवाहरलाल को अवश्य सूचित करेगे।

उसी दिन महात्मा गॉधी ने नेहरू को तार भेजा, जिसमें लिखा—"इन कष्ट-भरे दिनों मे आपका ख्याल मेरे मन मे रहता है। आपकी राय जानने को उत्सुक हूँ। आप जानते है कि आपकी राय की मैं कितनी कद्र करता हूँ। इन्दु और स्वरूप के बच्चो को देखा। इन्दु सुखी और अधिक तन्दुरुस्त लगती है। मेरी तबीयत बहुत अच्छी है। तार द्वारा जवाब दीजिए।"[1]

गॉधीजी को सन्देह था कि उनके अनशन का कोई परिणाम निकलेगा अथवा नही और वह इस विषय पर जवाहरलाल नेहरू की राय जानना चाहते थे, जिनका हमेशा यह विश्वास रहा कि संघर्ष के प्रमुख लक्ष्य—हिन्दुस्तान की आजादी—से राष्ट्रीय शक्तियों को दूसरी ओर (विशेषकर धार्मिक समस्याओ की ओर) खींचना अवाछनीय है। पर इसके साथ ही जवाहरलाल को गॉधीजी से इन्दिरा की मुलाकात के बारे मे जानकर खुशी हुई। वह इसे बहुत मूल्यवान मानते थे कि गॉधीजी अपने मित्रो के जीवन की छोटी-मोटी बातो के बारे मे कभी नही भूलते थे, जिनका वास्तव मे इतना अधिक महत्त्व होता है।

महात्मा गॉधी के अनशन के परिणामस्वरूप जनता में पैदा हुआ भावावेश कुछ शान्त कराने के उद्देश्य से सरकार ने दो नेताओं को तार-सन्देशो का आदान-प्रदान करने की 'उदारतापूर्वक' अनुमति दी। जवाहरलाल नेहरू ने जवाबी तार लिखा—"आपका तार और संक्षिप्त सूचना कि कुछ हद तक सहमति हुई, पाकर मुझे सन्तोष और हर्ष हुआ। अनशन करने के आपके निर्णय के बारे मे पहले समाचारो से मानसिक पीडा और परेशानी हुई, लेकिन अन्ततः आशावाद का पलडा भारी रहा और मुझे पुन मानसिक शान्ति प्राप्त हुई। उत्पीडित एव पददलित जातियों की खातिर कोई भी बलिदान जरूरत से ज्यादा नही हो सकता है। सर्वाधिक निम्न कोटि के जन स्तरो की आजादी की कसौटी पर आजादी को परखना चाहिए, लेकिन मुझे आशंका है कि कहीं दूसरी समस्याएँ हमारे एकमात्र लक्ष्य को पीछे न ढकेल दें। धार्मिक दृष्टि से इसका मूल्यांकन मै नही कर सकता हूँ। मुझे आशका है कि आपके उपायों का दूसरे लोग उपयोग कर सकते है, परन्तु जादूगर को सलाह देने की जुर्रत मैं भला कैसे कर सकता हूँ।"[2]

---

1 J Nehru, *An Autobiography*
2. Ibid.

गाँधीजी के साथ मुलाकात से इन्दिरा के हौसले बढ गए और वह स्कूल के रोजमर्रा के कार्यो मे लग गई। मन-ही-मन उसे राष्ट्रपिता के अनुग्रह पर गर्व था और यद्यपि उसने इस सिलसिले में शेखी बघारने से बचने की कोशिश की, लेकिन फिर भी अपने दोस्तों को इस व्यक्ति के साथ अपनी भेंट के बारे में बता ही दिया, जिसका सभी देश-भक्त बडा आदर करते थे।

वकील बोर्डिंग स्कूल में इन्दिरा को भारतीय कला तथा संस्कृति से अभिन्न सम्पर्क का सुखद अनुभव होता था। लगभग हर शनिवार को अन्य बालकों तथा अध्यापको के साथ वह शौकिया कार्यक्रम तैयार तथा प्रस्तुत करती थी। ये कला समारोह शाम से लेकर अगले दिन प्रात काल तक जारी रहते थे।

मानो कलाकार के हृदयस्थल से फूटे भारतीय सगीत की स्वर-लहरियाँ बेचैन परिन्दो की भाँति अनन्त मैदान के ऊपर मँडरा रही थी, मानव के प्रेम और विषाद को मानो पख मिल जाते थे और फिर एकाएक जीवनानन्द की लय-ताल की वेगपूर्ण ध्वनियाँ गूँजने लग जाती थी। इन्दिरा के भावुक हृदय मे भारतीय सभ्यता की सहस्राब्दियॉ जैसे सजीव हो उठती थी, उसे कुछ ऐसी अनुभूति होती थी कि वह सदा-सर्वदा अस्तित्वमान् रही है और रहेगी, जिस प्रकार यह चमत्कारिक राग और इस वेगपूर्ण नृत्य का अनुपम सौन्दर्य सदा अस्तित्वमान रहा है।

वकील प्रतिभासम्पन्न संगीतज्ञ थे, उन्हें सशक्त सुन्दर कण्ठस्वर प्राप्त था ओर उनके सगीत की लय में इन्दिरा मस्त होकर लोक-नृत्य प्रस्तुत करती थी। नर्तकी के रूप में उसकी प्रतिभा की भूरि-भूरि प्रशंसा की जाती थी और कुछ लोगो ने सलाह दी कि वह नृत्य-कला को अपना जीवन समर्पित करे।

परन्तु यदि कला—साहित्य, सगीत, नृत्य-कला—उसके मानसिक जगत् को समृद्ध तथा रंग-बिरगा बना देती थी, तो देश-भक्ति और संघर्ष इस जगत् का सार और मानव, उसका सुख-कल्याण इस जगत् का आध्यात्मिक केन्द्र, इन्दिरा के जीवन का परम लक्ष्य बनता जा रहा था।

जब कभी किसी कारणवश पढ़ाई से छुट्टी का दिन मिलता था, इन्दिरा कही एकान्त में बैठकर जेल से मिले पिताजी के स्नेहपूर्ण तथा सारगर्भित पत्र दुबारा पढ डालती थी, जिन्हे वह सँजोकर रखती थी।

"चार साल पहले अथवा केवल तीन साल ?—मैने यह पत्र-शृखला शुरू की...इन तीन-चार वर्षो में कितना अधिक घटित हुआ और तुम कितनी बडी हो गई हो !. .

"मैं चाहता था कि तुम मानव के पद-चिह्नो पर चली आओ, उसके सबसे पहले कदमो से लेकर, जब वह अभी-अभी मानव बना था, आज तक की इस लम्बी राह पर चली आओ...

"उस काल से जब भारी कदम उठाते हुए पीठ झुकाए आदिमानव जंगल से निकला था उसने कैसा रास्ता तय किया है मैं पहले भी लिख चुका हूँ यह बहुत

लम्बी, कई सहस्राब्दियों तक जारी यात्रा थी। मगर यदि पृथ्वी के इतिहास, मानव के आविर्भाव से पहले बीते युगो तथा कालों से उसकी तुलना की जाए, तो वह बहुत ही सक्षिप्त अवधि है।...

"मानव किस बात की खोज मे है और वह कहॉ जा रहा है ? सहस्राब्दियो से लोग इन सवालों का जवाब देने की चेष्टा करते हैं...।"[1]

घिसे हुए पन्ने पलटते हुए इन्दिरा और भी पहले मिली चिट्ठी पढने लगती है–"...लोग अपने प्रबुद्ध तथा प्रगतिशील युग, महान् आधुनिक सभ्यता के चमत्कारो, महान् सस्कृति और विज्ञान की अद्भुत उपलब्धियों की डीग मारते है, लेकिन इसके बावजूद पहले की तरह गरीब और अभागी रहते है, महान् राष्ट्र आपस में लड़ते है, लाखो लोगों की हत्या की जाती है और हमारे देश जैसे बडे मुल्क विदेशियो के मातहत रहते है। सभ्यता से हमें भला क्या हासिल होता है, अगर हम अपने घर मे भी आजाद नही है ? लेकिन अब हम उठ खडे हुए और काम करने लगे है ..सारी दुनिया में हलचल और तब्दीलियॉ हो रही है। सुदूर पूर्व मे जापान चीन का गला घोटने पर उतारू है। पश्चिम में और सारी दुनिया में पुरानी व्यवस्था डगमगायी और ढहने वाली है। राज्य नि·शस्त्रीकरण की चर्चा कर रहे हैं, लेकिन एक-दूसरे को सन्देह की दृष्टि से देखते हैं और ढेर सारे हथियार तैयार रखते है। यह पूँजीवाद का सध्याकाल है, जो इतने लम्बे अरसे तक दुनिया पर हावी रहा है और जब पूँजीवाद खत्म हो जाएगा, जो अवश्यम्भावी है, उसके साथ बहुत-सी बुराइयों का भी अन्त होगा।"[2]

अनेक पत्रो मे नेहरूजी ने अपनी बेटी को दूरस्थ रहस्यपूर्ण देश–सोवियत रूस, महान् अक्टूबर समाजवादी क्रान्ति के बारे मे बताया। "हालाँकि यह इस प्रकार की पहली क्रान्ति थी," उन्होने भविष्यवाणी की–"शायद ही बहुत देर तक वह एकमात्र ऐसी क्रान्ति रहेगी, क्योकि वह दूसरे देशो को दी गई चुनौती और सारी दुनिया के बहुत-से क्रान्तिकारियों के लिए उदाहरण है। अत वह गहन अध्ययन के योग्य है।"[3]

भारतीय किशोरी के लिए पिता के वे पत्र पूरी तरह समझना आसान नही था, जिनमे उन्होंने बोल्शेविको की रणनीति तथा कार्यनीति का जिक्र किया, हिन्दुस्तान के राजनीतिक तथा स्वतन्त्रता आन्दोलन के लिए सोवियत अनुभव के महत्त्व की चर्चा की, सोवियत पचवर्षीय योजनाओ, सोवियत राज्य की घरेलू तथा विदेश नीति, सोवियत संघ मे जातीय समस्या के समाधान, समाजवाद तथा साम्राज्यवाद के वर्गीय स्वरूप के विषय मे अपने विचार प्रकट किए।

---

1 J Nehru, *Glimpses of World History.*
2 Ib·d
3 Ib d

जन्मजात प्रतिभा, अध्यवसाय, ज्ञान-पिपासा की बदौलत इन्दिरा न केवल अपने पिता के दृष्टिकोण आत्मसात् करने में, बल्कि उनके विचारों के जटिल अन्तर्सम्बन्ध को समझने, उनसे बौद्धिक सन्तोष पाने, अपने निष्कर्ष निकालने तथा प्राप्त हो चुके ज्ञान के आधार पर अपने सपने बुनने मे भी समर्थ रही।

पिता के परामर्शो का पालन करते हुए वह अपने व्यक्तित्व मे योद्धा के गुण रोपने की चेष्टा करती थी। सर्वहारा वर्ग के नेता लेनिन का व्यक्तित्व उसके लिए बडा रोमाचकारी था, जिनका नाम भारतीय क्रान्तिकारी अक्सर लेते थे ओर जिनका चरित्र-चित्रण पिताजी अपने पत्रो में इतने भावुक तथा प्रशंसात्मक ढग से करते थे।

"लेनिन हिचकिचाहट और अनिश्चय से मुक्त थे," पिता के पत्र में इन्दिरा ने पढा। "वह प्रखर बुद्धि, जो जनसाधारण की भावनाओं पर लगातार नजर रखती थी, साफ दिमाग, बदलती हुई वस्तुस्थिति के अनुरूप सुविचारित सिद्धान्त लागू करने की क्षमता और अडिग मनोबल के धनी थे, जिसकी बदौलत प्रत्यक्षत. प्राप्त हो चुके परिणामो को आवश्यकता से अधिक महत्त्व न देते हुए निश्चित की हुई नीति का दृढतापूर्वक पालन करते थे।" पिताजी ने लेनिन के शब्दों को उद्धृत किया—"हम नीमहकीम नहीं हैं। हमे केवल जनसाधारण की चेतनशीलता का सहारा लेना चाहिए। अगर हमें बहुमत से हाथ धोने भी पड जाएँ, तो भी कोई बात नही। कुछ समय के लिए नेतृत्वकारी स्थिति को छोडने में कोई हर्ज नहीं है, अल्पमत होकर रह जाने से नही डरना चाहिए।"[1]

कतिपय दशक बीतने पर राजनीतिक जीवन का द्वन्द्वात्मक विकास इन्दिरा को ब्ला. इ. लेनिन के इस कथन तथा उसके अन्य विचारों की सत्यता मे विश्वास दिलाएगा, परन्तु यह तो भविष्य मे होगा और फिलहाल वह पूना मे रहते हुए यूनिवर्सिटी में दाखिला लेने के लिए इम्तहान मे बैठने के वास्ते तैयारियाँ कर रही थी।

शहर पर आफत टूट पड़ी—प्लेग के छुट-फुट केस हुए, बीमारी को फैलने से रोकने के प्रयास असफल रहे और महामारी ने शहर को धर दबोचा। हर सुबह हरिजनों के खास दल सड़को से बेघर लोगो, भिखारियो, तीर्थ-यात्रियो तथा दूसरे अभागे, मुसीबत के मारे लोगो की, जिनकी फिक्र करने वाला कोई न था, लाशें हटा देते और नगरपालिका द्वारा निश्चित स्थानो में पहुँचा देते थे। भयानक चिन्ताओ के ऊपर काला धुआँ उठ रहा था और सारा इलाका बदबूदार कुहासे से घिरा था।

वकील स्कूल के कुछ छात्र खतरनाक क्षेत्र से मुम्बई मे स्थानान्तरित कर दिए गए। इन्दिरा भी चली गई और उसकी शिक्षा मुम्बई मे जारी रही।

जवाहरलाल नेहरू के कारावास की अवधि समाप्त हो रही थी। मुम्बई मे इन्दिरा को उनसे आखिरी चिट्ठी मिली। कुल मिलाकर वह लगभग दो सौ चिट्ठियाँ

1 J Nehru, *Glimpses of World History*

प्राप्त कर चुकी थी। यह भी विषाद की भावना में लिखी हुई थी, लेकिन सदा की भाँति भविष्य में उनका विश्वास अधिक प्रबल था—जेल न तो उनका मनोबल तोडने और न ही लक्ष्य प्राप्त करने का संकल्प शिथिल करने मे कामयाब हुई।

"...कभी-कभी इस दुनिया की बेइन्साफी, मुसीबतें और जाहिली हमारा मन दु खी कर देती है, हमारी बुद्धि को अन्धा कर देती है और हमें कोई रास्ता नही दिखता है," उन्होंने लिखा।

"..मगर यदि हम दुनिया को निराशा-भरी निगाहों से देखेगे, तो इसका मतलब यह होगा कि जीवन तथा इतिहास के सबक हम नहीं सीख पाए। इतिहास हमे सीख देता है कि विकास तथा प्रगति, आगे बढने की मानव-जाति की सम्भावना अनन्त है, कि जीवन समृद्ध तथा विविधतापूर्ण है और हालाँकि उसमें दलदलो, धँसानों तथा कीचड की कमी नही है, फिर भी उसमे महासागर तथा पहाड, बर्फ तथा हिमसहतियाँ, चित्ताकर्षक तारों से सुशोभित रात्रियाँ (खासतौर पर जेल मे !), पारिवारिक स्नेह तथा मित्रों का अनुग्रह, आम ध्येय के हेतु प्रयत्नशील लोगों का सहचार, संगीत तथा पुस्तके और स्वतन्त्र चिन्तन-मनन भी तो हैं.. ।

"ब्रह्माण्ड के सौन्दर्य से विभोर होकर, चिन्तन एव कल्पना के ससार में डूबे रहना आसान है। लेकिन यदि इस प्रकार अन्य लोगो की दुर्गति से आँखें मूँदने, उनकी दुर्भाग्य की चिन्ता न करने की कोशिश की जाती है, तो यह साहस और मानव-प्रेम का प्रमाण नहीं है। अपने अस्तित्व को यथोचित सिद्ध करने के लिए विचार को कार्यरूप मे परिणत होना चाहिए। जैसा कि हमारे मित्र रोमाँ रोलाँ कहते है—'कर्म विचार की पराकाष्ठा है। जो विचार कर्म में परिणत नहीं होता है, वह असफल तथा भ्रमजनक है। अगर हम विचार की सेवा करते है, तो हमे कर्म की भी सेवा करनी चाहिए...' ।"[1]

कालान्तर मे जीवन दिखाएगा कि जवाहरलाल नेहरू ने अपनी पुत्री के मानस मे जो बीज बोये थे, वे खूब बढे-पनपे, लोग इन्दिरा गाँधी की एक ऐसी महिला के रूप मे चर्चा करेगे, जो निष्फल वाद-विवाद की उपेक्षा करती है और ठोस कार्यकलाप को प्रधानता देती है, परन्तु वह शब्दो का मूल्य भी जानती थी—किसी भी कर्म का समारम्भ सही, सटीक शब्द से होता है।

"हम सभी को चयन करने का अवसर मिलता है—या तो हम नीचे, मैदानो-घाटियो में रहेगे, जो अस्वस्थ कोहरे से घिरी रहती है, लेकिन जहाँ जीवन निश्चित हद तक निरापद है अथवा पहाड़ों पर चढ़ेंगे, जोखिम उठाएँगे, तथा खतरो का सामना करेंगे ताकि पर्वत शिखरों की स्वच्छ वायु मे साँस ली जाए, हमारी आँखों के सामने खुलने वाले विस्तार को देखकर आनन्दविभोर हो जाएँ तथा सूर्योदय का स्वागत करे,"[2] इस

---

1 J Nehru, *Glimpses of World History*

2. Ib d.

प्रकार जवाहरलाल नेहरू ने इन्दिरा द्वारा जीवन-पथ के चयन की सम्भावना का सजीव वर्णन किया।

सन् 1933 के सितम्बर महीने के अन्त मे जवाहरलाल नेहरू जेल से रिहा हुए। इलाहाबाद मे उन्हे आर्थिक कठिनाइयो ने घेर लिया। मोतीलाल नेहरू की मृत्यु के बाद घर-गृहस्थी पूरी तरह अस्त-व्यस्त हो गई थी—परिवार के खर्च बहुत कम कर दिए गए थे, लेकिन फिर भी आमदनी पूरी नहीं पडती थी। जो कुछ बिक सकता था, बिक चुका था। यही नही, इधर कुछ महीनों से स्वरूप रानी ने खाट पकड़ रखी थी और कमला के अस्वस्थ रहने से सभी लोग बहुत चिन्तित रहे थे, हालाँकि वह अपनी कमजोरी और विवशता को छिपाने की हर चद कोशिश करती थी। इसके अलावा इन्दिरा को यूनिवर्सिटी में भर्ती कराना था।

परिवार की मुश्किल आर्थिक हालत देखते हुए इन्दिरा अपने लिए कुछ नही माँगती थी, न्यूनतम सुविधाओं से सन्तोष कर लेती थी और कोशिश करती कि माँ-बाप को उसकी वजह से नई समस्याओं का सामना न करना पड़े। विनयशीलता, सुरुचि और साफ-सुथरापन से लगाव उसने अपनी माँ से पाया।

इन्दिरा की आयु बढने के साथ उसकी जन्मजात शालीनता उभरकर सामने आ रही थी, जो उसकी सादगी मे प्रकट होती थी। विनयशीलता, बुद्धिमत्ता और दूसरो का आदर करने की क्षमता उसके व्यक्तिगत आकर्षण का स्रोत थी।

अप्रैल 1934 में इन्दिरा यूनिवर्सिटी की प्रवेश परीक्षाएँ दे रही थी। उस दिन, जब परीक्षा काल समाप्त हुआ, उसे पिताजी से तार मिला—"दूसरे घर जा रहा हूँ।" इसका मतलब यह था कि उन्हे एक बार फिर जेल में बन्द कर दिया गया है।

बेचारे पिताजी। ताले, लोहे की चटकनियो की खटखटाहट, दरवाजो की चरमराहट, सीखचे, बदबू, पतली दाल—जेल का माहौल मनहूस था। एक इन्सान के लिए क्या यह बहुत ज्यादा नहीं है ? उदारमना, भावुक इन्सान सालो तक जेल की सीलन-भरी कोठरी में बन्द रहने के लिए मजबूर है, जिसमे चूहे, बिच्छू और साँप उसके सहचर हैं। उदात्त विचार और जेलखाने की गन्दगी ! लेकिन पिताजी ने जेल में भी कवि, क्रान्तिकारी तथा सेनानी का उत्साह नहीं गँवाया।

सबसे मुश्किल तो माँ पर गुजरती है। क्या वह यह सब कुछ सहन कर लेगी ?

यूनिवर्सिटी में पढाई शुरू होने से पहले रिश्तेदारों के निमन्त्रण पर इन्दिरा ने पहली बार अपने पूर्वजो के देश—कश्मीर—की यात्रा की।

वह फौरन उसे अपना दिल दे बैठी। पोस्त के फूलों की अरुण आभा नीलाकाश पर्वत शिखरों की रुपहली शृखला स्वच्छ शीतल हवा जो अमृत जैसी स्वादिष्ट है यह

लुभावना वातावरण मन्त्रमुग्ध कर देता था, मन को शान्ति देता था और शारीरिक अस्तित्व को परमानन्द की सीमा पर पहुँचा देता था। जो कोई एक बार यहाँ आता है, फिर उम्र-भर इस प्रदेश को भूल नहीं सकता ! भारतीय नदियों के उद्गम पहाडो की तलहटी मे, जहाँ से भारत के लम्बे-चौडे मैदान आरम्भ होते है और नीलाभ पर्वतो मे अपने रहस्य छुपाए भारत की धरती मुस्कराती रहती है, लौटने की उत्कण्ठा मनुष्य को आत्मिक एव शारीरिक बल प्रदान करने वाली कामना बन जाती है।

इन्दिरा ने शान्तिनिकेतन–रवीन्द्रनाथ ठाकुर के विश्वविद्यालय–मे प्रवेश किया, जो सारे भारत मे कवीन्द्र नाम से प्रसिद्ध है। गुरुदेव के साथ पहले मिलने से इन्दिरा अत्यधिक प्रभावित हुई। बड़ा सिर, श्वेत केश, सुन्दर नाक-नक्श, चित्ताकर्षक ऑखे, हिमधवल रेशमी कुरता–कवीन्द्र का रूप प्रभावशाली था। उनकी उपस्थिति मे इन्दिरा श्रद्धा अनुभव करती थी। रूप, सौन्दर्य और आत्मबल रवीन्द्रनाथ ठाकुर को अन्य लोगों से अलग करते थे। प्रकृति ने उन्हे अद्भुत प्रतिभा और विलक्षण गुणों का वरदान दिया था। कभी-कभी इन्दिरा को प्रतीत होता था कि वह साक्षात् भगवान्–कलाओं के संरक्षक–है। गुरुदेव विनम्र, विशालहृदय और सीधे-सादे मानव थे, उनकी सादगी मानवीय सौन्दर्य के चरमोत्कर्ष की अभिव्यक्ति थी। पिताजी बडे स्नेह और आदर से उनका नाम लेते थे और, लगता था, उनके साथ व्यक्तिगत मित्रता पर गर्व करते थे। भारत की सस्कृति और आध्यात्मिक धरोहर के प्रश्नो के प्रति रवीन्द्रनाथ के दृष्टिकोण की वह बडी कद्र करते थे। मशीनी युग की सौन्दर्यविरोधी अराजकता भावी समाज के उच्च नैतिक सिद्धान्तों मे ठाकुर के विश्वास तथा प्राचीन भारत के नैतिक मूल्यो में उनकी श्रद्धा को समाप्त करने मे सफल नहीं हुई। रवीन्द्रनाथ ने एक शताब्दी के निष्कर्ष निकालने के कार्य का समापन किया और 20वीं सदी की क्रान्तिकारी कला के दूर क्षितिजों की ओर मार्ग प्रशस्त किया।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर भारत की आत्मिक निधियों, उसके अनन्य सौन्दर्य, उसकी अक्षय सम्पदा के महान् प्रहरी थे और साथ ही दूरदर्शी भविष्यद्रष्टा भी थे। उन्हे अपनी प्राचीन जनता के पुनरुत्थान में अटल विश्वास था, जो अपनी स्वतन्त्रता और विश्व सभ्यता के अज्ञात बौद्धिक शिखरो की ओर आगे बढ़ रही थी।

गुरुदेव के सिद्धान्तों और दृष्टिकोण से इन्दिरा प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकी, जिसकी सभी कल्पनाएँ और भावनाएँ स्वतन्त्र आने वाले कल की ओर उन्मुख थी।

परन्तु भारत केवल उस व्यक्ति के सामने अपने रहस्यों का उद्घाटन करता हे, जो देश-काल की यात्रा कर चुका होता है। "मेरे देश को जानने के लिए," रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने लिखा–"उस युग की ओर ध्यान देना चाहिए, जब वह अपनी आत्मा को समझ गया तथा अपनी भौगोलिक सीमाओ को पार कर गया, जब उसने अपनी ओजस्वी महत्ता से पूर्वी क्षितिज को आलोकित किया था और दूसरे देशो के लोगो ने और जीवन से मुग्ध होकर उसे का दर्जा दिया इधर वर्तमान काल

की ओर ध्यान नहीं देना चाहिए, जब उसने एक बाड़ बॉधकर बाह्य ससार से अपने को अलग कर दिया है, अपनी अनन्यता के शोचनीय आडम्बर के संकीर्ण घेरे मे अपने को बन्द रखा है, अपना विवेक क्षीण कर दिया है और अब वह इस सीमित घेरे मे निरुद्देश्य घूमता रहता है, निरर्थक ढग से पुरानी धारणाओ की रट लगाए रहता हे, जो निस्तेज-निष्प्रभाव हो चुकी है और भविष्य के तीर्थ-यात्रियों को कोई सन्देश देने में असमर्थ हे।''[1]

पिता के कुशल निर्देशन में इन्दिरा ने पुरातन काल में झॉका, बीसियो देशो की काल्पनिक यात्राएँ की और देखा कि हर जगह भारत ने न केवल कला तथा विज्ञान के क्षेत्र मे, बल्कि कार्यक्षेत्र में भी अपनी भूतपूर्व महानता की अमिट छाप छोड़ी है। भारत के बिना विश्व सभ्यता के इतिहास की कल्पना नही की जा सकती। इन्दिरा के दिमाग मे यह विचार बल पकड़ रहा था कि मुक्त होकर उसके देश को विश्व कुटुम्ब के आध्यात्मिक एवं भौतिक जीवन में अपना योगदान बहाल करना तथा बढाना होगा।

कमला कलकत्ता जाकर रहने लगी थी। एक तो वहाँ वह अपना इलाज कराती थी और साथ ही बेटी से अक्सर मिल सकती थी, क्योकि शान्तिनिकेतल कलकत्ता से दूर नहीं है। जवाहरलाल नेहरू कलकत्ता की जेल में बन्द थे और अधिकारियों की अनुमति से दो सप्ताह मे एक बार उनसे मुलाकात होती थी। सिर्फ बीस मिनट का समय दिया जाता था। इन्दिरा अपने माता-पिता के आत्मबल से आश्चर्यचकित होती थी, जो मुलाकात के इने-गिने मिनटों में इतनी गहन पारस्परिक समझ तथा स्नेह प्रदर्शित करते थे, जिसके लिए अन्य लोगों के वास्ते बहुवर्षीय सहजीवन का समय भी शायद पूरा न पड़ता। दाम्पत्य सुख का स्रोत क्या है ? यह समझना कठिन है। जो भी हो, इन्दिरा को विश्वास हो गया कि वह घर की आराम-सुविधा तथा शान्त-निश्चिन्त जीवन पर निर्भर नहीं है। कोई भी चिन्ता और मुसीबत पति-पत्नी का सुख भग नहीं कर सकती, अगर समान आदर्श मे आस्था उनके प्रणय-सूत्रों को सुदृढ़ बनाती है। अपने माता-पिता में इन्दिरा को कभी भी जीवन से निराशा के कोई संकेत नजर नहीं आए। उनके हार्दिक स्नेह में सन्देह करने का कोई आधार नही था, इन्दिरा को विश्वास था कि वे एक-दूसरे को चाहते हैं और सुखी है।

शान्तिनिकेतन। विश्वविद्यालय की स्थापना में अपने नोबल पुरस्कार की राशि लगाकर और कुछ धनी भारतीय कला-प्रेमियो से चंदे की भारी रकमे पाते हुए ठाकुर ने शान्तिनिकेतन को स्वतन्त्रता का उधान, विज्ञान एवं कला का मन्दिर, सैकडो युवक-युवतियों का आनन्दमय आश्रम बना दिया, जो औपनिवेशिक हिन्दुस्तान के

1 J Nehru, *The ery of India*

घुटनमय वातावरण में ताजी हवा का रसास्वादन करने को उतावले थे।

बंजर मैदान में आम के बाग लगाए गए, अंजीर के पेडो के तरुपथों ने धूप से शरण प्रदान की, हरी घास के लॉन बिछ गए, नारियल के पेड़ो ने अपनी फुनगियॉ आकाश में उठाई, फूलो की रंग-विरगी छटा बिखर गई, पार्क मे पक्षियो का कलरव सुनाई देता था। छप्परदार 'झोपडो' को, जिनमें हॉस्टल, प्रयोगशालाएँ, सग्रहालय, पुस्तकालय तथा क्लास रूम अवस्थित थे, छात्रो और अध्यापको ने पौराणिक विषयो वाले बासरिलीफो तथा भित्तिचित्रो से तथा पार्क को मूर्तियो से सजाया, कमरो को अपने चित्रो, कढाई, नक्काशी तथा उत्कीर्णन के काम से अलंकृत किया।

शान्तिनिकेतन मे ऐश्वर्य की महँगी चीजे नहीं थीं, वहॉ केवल छात्रो की कलाकृतियॉ, शिक्षा तथा श्रम और रहन-सहन के लिए जरूरी वस्तुएँ थी। लेकिन सुव्यवस्था, सफाई और सुरुचि देखते ही बनती थीं।

शान्तिनिकेतन मे सादगी, भाईचारे और सदाचार का वातावरण व्याप्त था और उसका मुख्य सिद्धान्त—'यथार्थ जीवन'—इन्दिरा के मन के अनुकूल था। यह प्रवृत्ति उसने अपने मॉ-बाप से तथा पूना के वकील स्कूल मे प्राप्त की थी।

विद्यार्थियों को सूर्योदय के समय जागना पड़ता था और क्लासे लगने से पहले बहुत कुछ करना होता था—कपड़े धोना, वस्त्रो की मरम्मत तथा इस्तरी करना, शयन-कक्षों तथा क्लासो की सफाई करना, आदि। निठल्ले बैठने के लिए वक्त नही मिलता था। इन्दिरा के हर दिन के मिनट-मिनट का हिसाब लगाया गया। साधारण नियमित पढाई के अलावा वह चित्रकला तथा नृत्य कला का अभ्यास करती थी, अग्रेजी तथा फ्रासीसी भाषाओ का ज्ञान परिमार्जित करती थी, जर्मन भी सीखने लगी।

शान्तिनिकेतन में शिक्षा-व्यवस्था छात्रों की रुचियों, स्वतन्त्र ज्ञानार्जन, आत्मानुशासन तथा चेतनशीलता पर आधारित थी। औपनिवेशिक हिन्दुस्तान के अन्य शिक्षा सस्थानों जैसी ऊबाऊ औपचारिक पढ़ाई, एकरसता तथा मजबूरी की गुजाइश यहॉ बिलकुल नहीं थी, सब कुछ स्वेच्छया किया जाता था। रवीन्द्रनाथ ठाकुर सरस्वती के सच्चे उपासक थे और नही चाहते थे कि ज्ञान एवं कला की देवी की श्रद्धा करने के लिए शिक्षार्थी विवश किए जाएँ।

ठाकुर का घर यूनिवर्सिटी परिसर में अवस्थित था। शिष्यों और शिक्षको के सम्बन्ध अच्छे परिवार मे बच्चों और मॉ-बाप जैसे सहज तथा हार्दिक थे।

कवीन्द्र के घर जाना इन्दिरा को बहुत पसन्द था, जो कला की उदात्त भावना में सराबोर था, जिसमे प्रत्येक देशभक्त के लिए परमप्रिय भारत का अतीत उसके भविष्य विषयक सपनों से मानो एकाकार हो जाता था। वहॉ तुष्टिदायक चिन्तन-मनन तथा सौन्दर्यबोध देश की चिन्ताजनक घटनाओं की तीक्ष्ण अनुभूति, आत्मसस्कार की इच्छा, भारतीय जनगण के सुख-कल्याण तथा न्याय के लिए संघर्ष के आह्वान से अभिन्न रूप से जुडे थे

छात्र लोग प्राय: ठाकुर के घर जाते थे। वे हमेशा उन्हे काम में लगे पाते थे—हाथ में कूँची लिये चित्राधार के सामने खड़े हुए, लिखने की मेज के पास बैठे हुए, पुस्तकालय में पुस्तके पढते हुए अथवा चिन्तन-मनन मे खोये हुए।

एक बार शाम को इन्दिरा ने रवीन्द्रनाथ ठाकुर को आरामकुर्सी मे ध्यान-मग्न बेठे हुए देखा। वह अपने सामने एकटक देख रहे थे, ध्यान की ऐसी अवस्था ग्रहण किए हुए थे, जिसे प्राप्त करना किसी साधारण व्यक्ति के लिए सम्भव नहीं होता।

इन्दिरा ने सकुचाते हुए अन्दर आने की अनुमति मॉगी, तो गुरुदेव का ध्यान भग हुआ, वह कल्पनालोक से वास्तविक संसार में लौटे। कुछ सहेलियो सहित इन्दिरा को देखकर वह स्नेहपूर्वक मुस्कराए।

"तुम हो, इन्दु. .आओ, बच्चो, बहुत अच्छा है कि तुम मेरे पास आई हो। आराम से बैठो," ठाकुर ने प्यार-भरे स्वर में कहा।

किशोरियों ने जूते उतारे, हाथ जोड़े और वे परिन्दों के झुण्ड की तरह कवीन्द्र के चरणों के पास घेरा बनकर बैठ गई।

वे चुप थीं। संकोचपूर्ण नीरवता को भग करके ठाकुर ने वार्तालाप शुरू किया—"क्या, लडकियो, शान्तिनिकेतन में जीवन और शिक्षा से तुम सन्तुष्ट हो ?"

"जी हॉ, गुरुदेव, हम खुश हैं। हमें यहाँ अच्छा लगता है," समवेत स्वर से लडकियों ने जवाब दिया।

ठाकुर ने अपनी रजत-धवल दाढी पर हाथ फेरते हुए तरुण अतिथियों पर स्नेहपूर्ण दृष्टि डाली और बड़े आत्मीय ढंग से अपने विचारों को व्यक्त करते हुए वार्तालाप, ठीक-ठीक कहा जाए तो एकालाप आरम्भ किया—"शान्तिनिकेतन अन्य ज्ञान तथा कला मन्दिरों जैसा नहीं है। खेदवश कहना पड़ता है, बच्चो, कि यूनिवर्सिटी का जिक्र होते ही हमे कैम्ब्रिज, ऑक्सफोर्ड और दूसरी यूनिवर्सिटियों की याद आती है। हम समझते है कि उनमे से प्रत्येक के श्रेष्ठ गुणों का चयन करके उनमे समन्वय करना सबसे अच्छा उपाय है और यह भूल जाते हैं कि यूरोपीय यूनिवर्सिटियाँ यूरोपीय जीवन-पद्धति के जीवन्त, अभिन्न अंग हैं।"

छात्राएँ एकाग्रचित्त होकर गुरुदेव के हर शब्द का अर्थ समझने का यत्न कर रही थीं और वह अपनी शान्त, सुरीली आवाज में मन की बातें कहते जाते हैं—"ज्ञान एकीभूत तथा सार्विक है, परन्तु हर देश की जनता को उसे अपने विशिष्ट ढंग से प्राप्त करना और अपनाना चाहिए। प्रत्येक राष्ट्र का कर्तव्य अपने दीप-प्रकाश को सुरक्षित रखना होता है, जो इस ससार को आलोकित करने वाले बहुसंख्य दीपो मे से एक है। किसी राष्ट्र का दीप तोड़ने का अर्थ है—ज्ञान तथा शिक्षा के प्रसार के विश्वव्यापी उत्सव में अपना यथोचित स्थान ग्रहण करने की सम्भावना से उसे वंचित करना।"

किशोरियाँ गुरुदेव से अनुरोध कर रही थीं कि वह दुनिया के विभिन्न देशों की अपनी यात्राओं के बारे में बताएँ वह जापान चीन सयुक्त राज्य अमरीका लैटिन

अमरीकी देशों तथा यूरोप की यात्राओं को याद करने लगे।

"गुरुजी, हमने आपकी 'रूस की चिट्ठी' पढी। हमें इस देश के बारे में भी बताइए," सकुचाते हुए इन्दिरा अनुरोध करती है।

कवीन्द्र विचार-मग्न हो गए, उन्होने यौवन की झलक दिखाती ऑखो पर हाथ फेरा।

"प्रिय इन्दु, अगर मैं सोवियत रूस नहीं हो आता, तो मेरे जीवन की तीर्थ-यात्रा अधूरी रही होती। रूस में जो कुछ अच्छा है और बुरा—इसका मूल्यांकन करने से पहले मेरे दिमाग में यह विचार कौधा—कितना अद्भुत साहस! जिस चीज को परम्परा कहते है, वह हजारो विभिन्न उपायो से मनुष्य के साथ सम्बन्ध बनाए रखती है, उसके अनगिनत भण्डार, बेशुमार दरवाजे बहुसख्यक पहरेदारों द्वारा रक्षित किए जाते है, सदियों से उसकी निधि संचित होती है। उधर रूस में सब कुछ जड से उखाड दिया गया है और वहॉ के लोगो के मन मे न डर है, और न कोई शंका...रूसी क्रान्ति की पुकार—समस्त विश्व की भी पुकार है। आज की दुनिया के सभी राष्ट्रो मे से केवल वह अकेला समूची मानव-जाति के हितो की सोचता है, उनको अपने राष्ट्रीय हितो से ऊँचा समझता है। एक और बात है, बच्चो, मानव के इतिहास में सबसे बडा अग्नि-होत्र न देख पाना मेरे लिए अक्षम्य रहा होता।

"धन की शक्ति से आस लगाने वाली पाश्चात्य सभ्यता के मध्य में रूस ने सारी पशिचमी दुनिया की धमकियों और शापों की उपेक्षा करके निर्धन जन की सत्ता की घोपणा की। उन्होने बलशालियो का शासन और धनिको का वैभव खत्म करने का बीड़ा उठाया है। हमे इससे क्या डर हो सकता है?" ठाकुर ने पूछा और किशोरियॉ समझ गई कि यह प्रश्न उनमें से प्रत्येक की ओर लक्षित है।

कवीन्द्र के श्वेत केशी सिर को अरुणाभ करने वाले और छात्राओं के मुग्ध चेहरों को आलोकित करने वाले सूरज का विशाल गोला तेजी से अस्त हो रहा था।

सोवियत रूस के बारे मे गुरुदेव के सस्मरण सुनते हुए इन्दिरा ने इस विलक्षण देश के सजीव वर्णन और उसके बारे मे माँ तथा पिता के कथनो में काफी समानता पाई। यह देश अपनी ऑखों से देखने की उत्कट इच्छा उसके मन मे पैदा हुई, जिसकी साधारण लोग फुसफुसाकर प्रशंसा करते थे और जिसका नाम सुनते ही उपनिवेशवादी लाल-पीले हो जाते थे।

शुष्क सिद्धान्त और तरह-तरह के 'वाद' इन्दिरा को अरुचिकर लगते थे, लेकिन उसके मन में समाजवाद के निषिद्ध विचारों का थोड़ा-बहुत परिचय पाने की बडी इच्छा थी। वह पढ़ती बहुत थी और अब विश्व के समाजवादी आन्दोलन के बारे मे लाभदायक जानकारी प्राप्त करने की कोशिश कर रही थी। उसने फैबियन समाजवाद के प्रतिनिधि बर्नार्ड शॉ के निबन्ध, यूटोपियाई समाजवाद के अन्य पक्षधरो की दो-तीन पुस्तकें, यूरोपीय सोशल-डेमोक्रेटिक आन्दोलन विषयक कुछ किताबे, और भी कुछेक विभिन्न ग्रन्थ पढ़े—यूनिवर्सिटी के पुस्तकालय का सग्रह बड़ा नहीं था

परन्तु औपनिवेशिक अधिकारियों की दृष्टि से ये किताबे भी खतरनाक थीं। एक बार यूनिवर्सिटी का निरीक्षण करने वाले सरकारी कर्मचारी ने इन्दिरा के कमरे मे समाजवादी साहित्य देखा और इस सिलसिले मे बडी नाराजगी जाहिर की।

मॉं की बीमारी के कारण यदि परेशान न होना पडता, तो शान्तिनिकेतन में रहना इन्दिरा के लिए और अधिक लाभदायक तथा सुखदायी होता। रिश्तेदार कमला को हिमालय की गोद मे बसे छोटे शान्त कस्बे भवाली में ले गए। मगर पर्वतीय क्षेत्र की स्वच्छ हवा तपेदिक को रोकने के लिए काफी नही थी, सक्रिय चिकित्सा की आवश्यकता थी। कमला की हालत निरन्तर बिगडती जा रही थी। उसे फौरन यूरोप भेजने का फैसला किया गया। चूँकि पिताजी जेल मे बन्द थे, इसलिए 1935 के वसन्त काल मे इन्दिरा को पढ़ाई रोकनी पडी। मॉं-बेटी जर्मनी के श्वार्त्सवाल्द नामक स्थान में पहुँची, जहॉं कमला को तपेदिक के अस्पताल मे भर्ती किया गया।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने नजरबन्द जवाहरलाल नेहरू को चिट्ठी भेजी—"भारी मन से हमने इन्दिरा को विदा किया और शुभयात्रा की कामना की। हमारे लिए वह हीरे जैसी मूल्यवान थी। मैने बडे ध्यान से उस पर नजर रखी और यह देखकर बहुत प्रभावित हुआ कि आप लोगो ने उसे पाल-पोसकर कितना सुशील बना दिया है। अध्यापकों ने उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की और मुझे मालूम है कि छात्रो के बीच उसे बडा आदर और प्रतिष्ठा प्राप्त थी।"[1]

गर्मियो मे श्वार्त्सवाल्द में कमला का स्वास्थ्य इतना सुधर गया कि कभी-कभी इन्दिरा के साथ वह शहर की सैर भी कर लेती थी।

जर्मनी में इन्दिरा ने नाजीवाद का भयकर चेहरा अपनी ऑंखों से देखा। जनवादी सगठनो पर फासिस्ट गुण्डो का अत्याचार, यहूदियो के साथ नृशंस दुर्व्यवहार, लोगों के सामान्य अधिकारों तथा स्वतन्त्रताओं का दमन, जर्मन जाति की नस्ली अनन्यता का प्रचार, युद्धोन्माद—यह सब कुछ विरोध की भावना और मन मे ग्लानि पैदा करता था। अपने विज्ञान, प्रविधि और सस्कृति की डीग मारने वाली पाश्चात्य सभ्यता ईसाई मानवीयता के जर्जर सिद्धान्तो को भी ठुकरा रही थी और मानवद्रोह तथा युद्ध के विचारों को प्रतिष्ठापित कर रही थी।

...खिडकी के बाहर गीली बर्फ गिर रही थी, मनहूस फासिस्ट स्वस्तिक चिह्नो पर चिपक रही थी। कुछ दूरी पर फ्रांस की सीमा पर ठण्डा कोहरा छाया हुआ था। कोहरे के उस पार से फासिस्ट जर्मनी की विश्वयुद्ध के लिए तैयारियॉं मानो दिखाई नही देती थी। उधर, इथियोपिया पर फासिस्ट बम गिर रहे थे। बर्लिन, लन्दन, पेरिस, रोम, टोकियो और वाशिंगटन में सैन्य उद्यमों के शेयर हाथों-हाथ बिक रहे थे। धन्नासेठ ओर उद्योगपति अपने ऑफिसों की खामोशी में दुनिया के मानचित्र की काट-छॉंट कर रहे थे। साम्राज्यवादी राज्यो की सरकारें शान्ति की दुहाई देते हुए, कपटपूर्ण राजनीतिक

1 Gandhi, *My Truth*

खेल मे समग्र रूप मे राष्ट्रो को धोखा देते हुए परस्परविरोधी फौजी गुट बना रही थी। करोड़ो लोगों के भाग्य का फैसला हो चुका था, परन्तु उन्हे इसका ज्ञान भी नहीं था कि उन्हे ही भावी विश्व युद्ध की रक्तरजित हुडियो का दाम चुकाना पड़ेगा।

सोवियत सघ के चिन्तित स्वर को, जो दुनिया के राष्ट्रों को सावधान रहने की अपील कर रहा था, कूटनीतिक सैलूनो में लम्बी-चौडी बातों मे ढकने, बुर्जुआ अखबारो में उसका मिथ्याकरण करने की कोशिश की जाती थी।

सन् 1935 के शरत्काल मे कमला की हालत फिर से बिगड़ गई। जनमत के दबाव से सरकार ने जवाहरलाल नेहरू का दण्ड 'निलम्बित' करने का फैसला किया ओर उन्हे पत्नी से मिलने के लिए हिन्दुस्तान से यूरोप जाने की अनुमति दे दी।

कमला धीरे-धीरे मृत्यु की ओर बढ रही थी, उसके जीवन का चिराग बुझ रहा था, लेकिन वह हिम्मत न हारने की पूरी कोशिश करती थी। जवाहरलाल के आने पर उसका हौसला बढ गया। पति और पुत्री दिन-रात उसके साथ रहते थे। वे तीनों 'मेरी कहानी' की हस्तलिपि पढ रहे थे, जिसे जवाहरलाल ने जेलखाने मे लिखा था।

कमला पति और पुत्री को ममता-भरी दृष्टि से देखती रहती थी। उसकी बडी ऑखो मे इतना प्यार और स्नेह भरा रहता था कि इन्दिरा के लिए पढना मुश्किल हो जाता था, गला रुँध जाता था—सुख भी त्रासदी का रूप धारण कर सकता है, अगर कोई यह जानता हो कि सुख जा रहा है और उसका अन्त अवश्यम्भावी है।

"हमारे विवाह को हुए 18 वर्ष बीत गए और उस दिन तथा उसके बाद के वर्षो की याद मुझे बराबर आती रही," इन्दिरा पिताजी की आत्मकथा पढ रही थी। "उस समय मेरी आयु छब्बीस वर्ष की और उसकी करीब सत्तरह थी, वह अभी लड़की ही थी, जिसे दुनिया के मामलों का अनुभव बिलकुल नही था। आयु अन्तर काफी बडा था, लेकिन उससे भी अधिक अन्तर हमारे मानसिक विकास-स्तरो मे था, क्योंकि मै कहीं अधिक जीवन-अनुभव प्राप्त कर चुका था। लेकिन इस सारे अनुभव के बावजूद मुझमे छोकरापन बहुत ज्यादा था और तब मैं शायद ही समझ सकता था कि नवयुवती का कोमल, सवदेनशील दिमाग फूल की तरह धीरे-धीरे खिल रहा था और उसे स्नेहपूर्ण तथा चिन्ताशील व्यवहार दरकार था.. ।

"विवाह के 21 महीने बाद हमारी इकलौती पुत्री इन्दिरा का जन्म हुआ।

"हमारी शादी करीब उस समय हुई, जब नयी राजनीतिक घटनाओं का सिलसिला शुरू हुआ और मैं अधिकाधिक समय राजनीति मे लगाने लगा . और उसमे इस कद्र डूब गया कि कमला को मैंने करीब पूरी तरह भुला दिया, उसी वक्त उसे अकेली छोड़ दिया, जब मेरा सहारा उसे खासतौर से जरूरी था। उससे मेरा लगाव तो बना रहा बढ़ भी गया और मेरे लिए यह जानना बडा होता था कि वह पास में है और अपने प्रभाव से मुझे दे सकती है वह मुझे

शक्ति प्रदान करती थी, लेकिन खुद अपने को शायद भूली हुई महसूस करती और दु:ख अनुभव करती होगी। लापरवाही और उपेक्षा उसे बहुत अखरती होगी, सम्भवत विनम्रता के अभाव को भी सहना उसके लिए अधिक आसान रहा होता।''

"आप व्यर्थ अपने को उलाहना देते हैं, इससे अधिक सुख मुझे कैसे मिल सकता था ?...नही, इन्दु, तुम्हारे पिताजी का कोई दोष नही था। मैने कभी भी अपने को अकेली महसूस नही किया...आज की तरह मै हमेशा सुखी रही और मुझे सबसे अधिक दु:ख इसलिए है कि मेरी वजह से आप जीवन के आनन्द से वचित हो रहे है, मै आपको अपने बिस्तर के पास रख रही हूँ और आपके प्रेम का दुरुपयोग कर रही हूँ,'' कमला ने कहा।

यह जताते हुए कि वह एतराज सुनने को तैयार नही है, कमला ने हथेली से ऑखे बन्द कर ली। वह चुप हो गई और फिर स्नेहपूर्वक मुस्कराई—"मुझे वचन दीजिए कि आप फौरन लन्दन जाऍगे और इन्दिरा की पढ़ाई का प्रबन्ध कर देंगे।"

कमला का बिगड़ता जा रहा स्वास्थ्य मॉग करता था कि अविलम्ब कदम उठाए जाऍ। उसे स्विट्जरलैण्ड मे लोजान्न के निकट ले जाने का निश्चय किया गया। आशा थी कि ज्यादा खुश्क जलवायु वाले उस स्थान में रहकर, जिससे करीब दस वर्ष पहले की मीठी यादे भी जुड़ी थी, उसे घातक रोग का सामना करने में सहायता मिलेगी।

स्विट्जरलैण्ड में कमला को वास्तव में कुछ समय के लिए राहत मिली। इसलिए इन्दिरा को अपने भूतपूर्व स्विस सहपाठियों तथा अध्यापकों से मिलने का अवसर मिला।

परन्तु कमला के जीवन का पटाक्षेप हो रहा था, वह इस दुनिया से जा रही थी, अपनी इकलौती बेटी इन्दिरा को छोड रही थी। 28 फरवरी, 1936 को कमला का निधन हुआ।

वह सुखी थी, अपने पति की मित्र और सहायिका बनकर वह उनकी नजरो मे भारतीय महिला की, समकालीन नारी की प्रतीक बन गई। "हम कितने सुखी थे ." जवाहरलाल नेहरू अपनी पत्नी से कहते थे और वह सहमत थी। यद्यपि कभी-कभी वे झगडते और एक-दूसरे से नाराज होते थे, लेकिन जीवन का उत्साह अपने मे सुरक्षित करने में सफल रहे। उन दोनों के सामने जीवन हमेशा नये रोचक कार्यो के क्षितिज खोल देता था तथा एक-दूसरे के हृदय के अन्दर नयी दृष्टि से झॉकने का उन्हे अवसर देता था।

कमला की गहन मानवीयता, उसका नैतिक आकर्षण तथा सूक्ष्म सद्भाव पुत्री के हृदय में मूर्तिमान हुए माँ की तपस्या के ने इन्दिरा को अपने विलक्षण भाग्य की चुनौती साहसपूर्वक स्वीकार करने के लिए प्रेरित किया

5

युद्ध, राजनीति, राष्ट्र

जवाहरलाल नेहरू हिन्दुस्तान लौटे और एक छोटा कलश अपने साथ मे लाए—उसमे कमला की अस्थियों की भस्म थी। उसे इलाहाबाद ले जाकर उन्होंने गंगा मे विसर्जित कर दिया, परन्तु भस्म तो मनुष्य के केवल पार्थिव शरीर का अवशेष है, जबकि वह नेकी, निर्मलता तथा उच्च नैतिकता, जो उसे परिवार से प्राप्त हुई और जो इस ससार मे कमला के अस्तित्व की परिणति थीं, इन्दिरा के मन में माँ के बिम्ब के साथ सदा के लिए जुड़ गई।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने शान्तिनिकेतन में कमला स्मृति दिवस आयोजित करके उसे जवाहरलाल नेहरू की निष्ठावान सहयोगिनी और नये भारत के लिए एक निर्भीक योद्धा बताया।

पिताजी के चले जाने के बाद इन्दिरा लगभग साल-भर स्विट्जरलैण्ड में रही। फ्रांसीसी लेखक रोमाँ रोलाँ के परिवार ने युवती को स्नेह दिया और उसकी सहायता की। स्कूल की प्रिंसिपल हेम्मरलिन ने भी उसकी हार्दिक खातिरदारी की। मिस हेम्मरलिन तथा स्कूल के छात्रों के साथ इन्दिरा ने इटली की रोचक यात्रा की, जो कि कला इतिहास के पाठ्यक्रम का अंग थी।

बाकी समय इन्दिरा यूनिवर्सिटी की प्रवेश परीक्षाओ के लिए तैयारियो मे बिताती थी। उसने इतिहास तथा राजनीति का अध्ययन करने का निश्चय किया।

इन्दिरा के सामने विकल्प था—सर्बोन्न अथवा ऑक्सफोर्ड। कुछ समय तक दुविधा मे रहकर उसने ऑक्सफोर्ड को चुना। पहली बात तो यह थी कि इग्लैण्ड मे बडी भारतीय बिरादरी थी, वहाँ पिता के अनेक मित्र रहते थे, जिनके माध्यम से मातृभूमि की गतिविधियों के बारे मे जानकारी प्राप्त हो सकती थी। इसके साथ ही एक और बात भी थी, जो शायद निर्णायक रही—लन्दन के अर्थशास्त्र स्कूल में उसका मित्र फीरोज गाँधी पढ रहा था। नेहरू परिवार के साथ फीरोज गाँधी का सम्पर्क उस दिन स्थापित हुआ जब की सडकों पर एक जन-प्रदर्शन के समय अग्रेज अफसर ने इन्दिरा की दादी को मारा-पीटा था फीरोज ने उनकी मरहम-पट्टी की और

युवा देशभक्त ने कमला का ध्यान आकर्षित किया और फीरोज ने कमला को काग्रेसी स्वयंसेवकों की साहसी संचालिका के रूप मे पहचान लिया। साथ ही 'वानर सेना' की नायिका इन्दिरा से भी उसकी मुलाकात हो गई थी।

कमला को हमेशा नौजवानों का विश्वास और स्नेह प्राप्त था। स्वभावतया फीरोज इलाहाबाद मे काग्रेस के युवाजन सगठन का एक सक्रिय कार्यकर्ता बन गया। कमला के प्रति श्रद्धा-भाव रखते हुए वह उसकी सभी हिदायतें खुशी से पूरी करता था। परन्तु इन्दिरा के प्रति अपने अनुराग को युवक ने छिपाए रखा। इन्दिरा के अभिजात वश तथा धर्मान्तर को ध्यान मे रखते हुए उसने अपने भाव प्रकट नही होने दिए, क्योकि उसे इन्दिरा से शादी करने का इरादा असाध्य लगता था।

लेकिन इस नेक घराने, नेहरू परिवार के चित्ताकर्षक बुद्धिमान लोगो से उसका प्रगाढ लगाव हो चुका था। नेहरू खानदान के लिए मुश्किल दिनों मे फीरोज ने आनन्द भवन आकर वृद्धा स्वरूप रानी तथा बीमार कमला की सेवा-शुश्रूषा की, नाना चिन्ताओ तथा जिम्मेदारियो मे इन्दिरा का हाथ बँटाया।

फीरोज खूबसूरत युवक था—बड़ी-बडी काली आँखें, सीधी नाक, हट्टा-कट्टा शरीर। वह इस्लामपूर्व ईरान के निवासियों का वशज था, जिन्होने हिन्दुस्तान मे पारसियों का समुदाय कायम किया था।

इन्दिरा को भी फीरोज पसन्द था। उसके निष्कपट स्वभाव, कुशाग्र बुद्धि, प्रगतिशील विचारो तथा नेहरू परिवार के प्रति वफादारी से वह बहुत प्रभावित हुई।

कई वर्ष बीत गए। इन्दिरा के शान्तिनिकेतन जाने से पहले फीरोज ने हिम्मत बाँधकर उसके सामने विवाह का प्रस्ताव रखा। फीरोज की आशंका के प्रतिकूल इन्दिरा ने यह प्रस्ताव बडे सहज ढग से सुना, बस इतना ही कहा—"नही, फीरोज अभी वक्त नही आया।" फीरोज की खुशी का वारपार न रहा—उसके दिल मे आशा पैदा हुई। वह इन्तजार करने के लिए तैयार था।

कहना न होगा कि फीरोज अपना इरादा कमला से नही छुपा सका। कमला ने आपत्ति नही की। जवाहरलाल नेहरू को इस खबर से खास खुशी नहीं हुई, लेकिन उन्होने भी एतराज नही किया।

सन् 1937 की गर्मियो में इन्दिरा पेरिस में रही, जहाँ बेफिक्री का माहौल था। पेरिस को अपनी शान्ति के भग न होने का पूरा-पूरा विश्वास था। कहीं मुस्कराती वेश्याएँ नजर आती, तो कहीं संगीत का समाँ बँधा होता। नगर में विभिन्न शो, कसर्टो, कामेडी फिल्मो के कार्यक्रम चल रहे थे। अनगिनत कैफे-रेस्तराओं में शैम्पेन की बोतलें खुल रही थीं, स्वादिष्ट फ्रांसीसी पकवानों की सुगन्ध फैली हुई थी। छोटे बुर्जुआ जन शान्त सुव्यवस्थित पारिवारिक जीवन बिता रहे थे जबकि राजधानी के भ्रष्ट और मनमौजी कर्मचारी जिन्दगी के मजे लट रहे थे

शानदार सुपरमार्केट और छोटी दुकाने, बैंक व दफ्तर, मन्त्रालय और कार्यालय, नगर की सडके और चौक ऐसे लोगों से भरे रहते, जो राजनीति के प्रति पूरी तरह उदासीन थे। उन्हे न तो हिटलर से और न मुसोलिनी से कोई मतलब था, वे इथियोपिया में चल रहे युद्ध से चिन्तित नही थे और न ही स्पेन मे फ्राको के फासिस्ट विद्रोह के बारे मे कुछ जानना चाहते थे। उनकी अपनी अलग छोटी दुनिया थी--बैंक का खाता, प्यार-मुहब्बत, शेयर बाजार के भाव और शाम को अपनी पसन्द की अगूरी शराब की बोतल।

पेरिस के अभिजात वर्ग के वैठकखानों और कूटनीतिक दावतों में युद्ध का विषय गम्भीरता से नहीं लिया जाता था—लोग कूटनीतिज्ञो की सूझबूझ से आस लगाए हुए थे और कूटनीतिज्ञ मुस्कराते हुए झूठ बोलते थे, निकट आ रहे युद्ध के बारे मे सचाई छुपाते थे। अखबार शान्ति के बारे मे लिखते थे, सरकार के मन्त्री शान्ति की दुहाई देते थे, शान्ति की खातिर बडे जोर-शोर से सन्धियाँ सम्पन्न होती थी, अन्तर्राष्ट्रीय सभा-सम्मेलन हुआ करते थे। फ्रास और ब्रिटेन हिटलर को शान्त करानें की हरचंद कोशिश कर रहे थे, उसके जंगजू इरादों को विस्तृत समृद्ध पूर्वी क्षेत्रो, सोवियत सघ की ओर उन्मुख करने के लिए प्रयत्नशील थे। उधर, वरसाई शान्ति सन्धि की उपेक्षा करते हुए जर्मनी मे एक के बाद दूसरी पनडुब्बियाँ पानी मे उतारी जा रही थीं, तोपों और टैको के लिए इस्पात ढाली जा रही थी।

परन्तु सारा फ्रांस अभिजात वर्ग के वैठकखानो तक सीमित नही था। पेरिस के उपान्तो मे पेरिस कम्यून के योद्धाओ के नाती-पोते रहते थे और पितामहों से विरासत मे मिली क्रान्तिकारी भावना फ्रांस के मेहनतकशो के दिलो मे बसी थी।

कम्युनिस्ट, राष्ट्र के श्रेष्ठ स्वतन्त्र प्रतिनिधि, फासिज्मविरोधी लेखक रोमाँ रोलाँ तथा आनरी बर्ब्यूस लोगो को चेतावनी दे रहे थे और उनकी जोशीली अपीलें, विवेक की पुकार सुनते हुए जनसाधारण फासिज्मविरोधी मोर्चे में शामिल हो रहे थे। 'रोत फ्रोन्त !' ('लाल मोर्चा !'), 'नाजीवाद नहीं चलेगा !'—देश-देश की भाषाओ में इस प्रकार के नारे बुलन्द किए जा रहे थे और यूरोप के कोने-कोने में जबर्दस्त युद्धविरोधी आन्दोलन फैल रहा था।

लेकिन उन वर्षो मे युद्धविरोधी तथा फासिज्मविरोधी अभियान वह शक्ति नही बन पाया, जो प्रतिक्रियावाद की चढाई को रोक सकती। 1917 मे गॅवायी हुई स्थिति का बदला लेने के लिए आमादा प्रतिक्रियावादी शक्तियाँ संसार के एकमात्र समाजवादी देश का गला घोटना चाहती थी।

इतना विविधरूपी, निश्चिन्त और साथ ही बेचैन पेरिस इन्दिरा को कुछ आलोड़ित और कुछ विस्मित कर रहा था। इस नगर मे जीवन का तेज स्पन्दन महसूस हो रहा था और साथ ही उसकी राजनीतिक उदासीनता विस्मयजनक थी।

भारतीय जनता की समस्याओं से यूरोपवासियों की चिन्ताएँ कितनी दूर हैं

मानव-जाति इतनी छिन्न-भिन्न क्यों है ? मानवीयता और लोकतन्त्रवाद के सिद्धान्तो मे अपनी आस्था की डींग हॉकने वाली पश्चिमी राज्यों की सरकारें दूसरे राष्ट्रों के भाग्यो के प्रति इतनी उदासीन क्यो है ? हिन्दुस्तान के भूखे-प्यासे बच्चो की दुर्दशा का ख्याल वे क्यो नहीं रखती है ? फासिज्म के घातक खतरे को देखते हुए भी वे इतनी लापरवाह क्यो है ? ऐसा क्यो है ? अनेक सवाल इन्दिरा के मन में उठ रहे थे और उनका स्पष्ट जवाब नहीं मिल रहा था।

...शिक्षा-सत्र की छुट्टियॉ बिताने के लिए फीरोज लन्दन से पेरिस आया। उसकी यात्रा का मुख्य कारण निःसन्देह इन्दिरा से मिलने की इच्छा थी।

फीरोज बदल गया था, पहले से अधिक धीर-गम्भीर हो गया था। इग्लैण्ड मे उसकी जान-पहचान कम्युनिस्टों तथा वामपथी लेबर आन्दोलनकारियों से हुई और लगता था कि उनके ससर्ग से उसने काफी लाभ उठाया।

वह अर्थशास्त्र में बडी रुचि लेता था। ज्ञान के इस क्षेत्र मे इन्दिरा की पहुँच कम थी और वह फीरोज की बाते दिलचस्पी के साथ सुनती थी। फीरोज ने कार्ल मार्क्स तथा फ्रेडरिक एगेल्स के कथन उद्धृत किए, अक्सर व्ला. इ. लेनिन के निबन्धो का हवाला दिया, सोवियत सघ के अनुभव तथा नीति का उल्लेख किया, जिसके प्रति उसने अपनी सहानुभूति नही छिपाई।

इन्दिरा को फीरोज के मौलिक विचार, स्पष्ट तर्क, गहन ज्ञान, प्रगतिशील तथा साहसिक लक्ष्य पसन्द थे। वह इन्दिरा को उद्वेलित करने वाले अनेक प्रश्नो के उत्तर देता था।

उसके लिए स्पष्ट था कि नये विश्वयुद्ध का कारण स्वयं पूँजीवादी समाज था, जिसके अन्दर युद्ध के बीज बोये हुए थे।

फीरोज मानते थे कि युद्ध और युद्धों के लिए तैयारियॉ विश्व के उद्योगपतियो का सबसे लाभदायक व्यवसाय है। उनके हाथों मे समाज की समस्त सम्पदा है, जो श्रमिकजन के विवेक और परिश्रम की उपज है, साथ ही युद्ध-साधन भी उनके हाथों मे है, जो साधारण इन्सान के लिए कोई उपयोगी मूल्य नही रखते, जबकि उद्योगपतियो के लिए अधिकतम बेशी मूल्य पैदा करते है। इन युद्ध-साधनों के उत्पादन का खर्च पूँजीपति नहीं, बल्कि आम मेहनतकश लोग उठाते हैं।

फिर भी यह इन्दिरा की समझ में नहीं आता था कि गेटे, शिल्लर तथा बाख की जनता भला कैसे हिटलर के शब्दजाल मे फॅस सकती है और रफाएल, लेओनार्दो द विची तथा गैरिबाल्दी की जनता क्यों मुसोलिनी के इशारे पर नाच रही है। जर्मनी मे फासिस्ट परेडों तथा मशाल जुलूसो के समय उसने जिन हजारो स्वस्थ नौजवानो को देखा, उनकी मनःस्थिति कैसी है ? लम्बी-चौडी, भद्दी इमारतों के बीच मनहूस फासिस्ट झण्डो के नीचे जमा हुए असंख्य लोगो की भीड़ में शामिल होकर मार्च करने वाला हर अलग व्यक्ति अपने को कैसा तुच्छ महसूस करता होगा। ऐसा माहौल इन्सान पर हावी हो जाता है उसका व्यक्तित्व दब जाता है और पगलाए हुए लोगों

के जन सागर से मुट्ठी-भर फासिस्ट 'प्रबुद्ध' लीडर उभरते है, जो आर्य नसल की श्रेष्ठता मे विश्वास रखते है तथा जर्मन राष्ट्र को विश्व प्रभुत्व की राह पर लाने को तैयार हैं।

फीरोज ने इन विचारो से सहमति प्रकट करते हुए कहा कि सचमुच इस स्थिति मे विरोधाभास है। लेकिन हर बात का अपना कारण हुआ करता है। राष्ट्रीय लोक मानस कोई जड़ वस्तु नहीं है, वह सदा गतिशील रहता है और अनेक तत्त्वों से प्रभावित होता है। नेकी और बदी हमेशा और हर जगह रही हैं। कभी-कभी वदी का पलडा भारी हो जाता है, मगर ऐसी हालत मे भी किसी देश की जनता को उन अपराधियों के साथ बराबरी का दर्जा नहीं दिया जाना चाहिए, जो इतिहास के निश्चित दौरों मे किसी तरह राज्य सत्ता की डोर अपने हाथ में ले लेते है। कोई भी राष्ट्र अखण्ड इकाई नहीं होता, वह भिन्न वर्गो तथा सामाजिक सस्तरों से बना होता है और विभिन्न ऐतिहासिक दौरो में कभी एक, तो कभी दूसरा समूह राष्ट्र की मुख्य शक्ति का रूप धारण करता है।

विषम आर्थिक संकट के कई वर्षो के बाद 'औसत' जर्मन आदमी को आखिरकार रोजगार मिला और प्रतीयमान निरापद जीवन जीने का अवसर प्राप्त हुआ। नाजी सिद्धान्तकारों ने प्रचार करना शुरू किया कि 'जर्मन खुशहाली' के लिए खतरा पैदा हो गया है, उन्होने 'शत्रु की छवि' पेश की : भीतरी शत्रु—कम्युनिस्ट—और बाहरी शत्रु—सोवियत संघ तथा दूसरे देश, जिन्होंने मानो जर्मनी को उसके 'जीवन क्षेत्र' से वंचित कर दिया है।

मध्यम वर्ग का जर्मन नगरवासी अराजनीतिक था, वह अपनी दैनिक आवश्यकताओ की पूर्ति मे जुटा हुआ था। 'खालिस जर्मन चरित्र', देशभक्ति, कर्तव्य निष्ठा, अनुशासन तथा सुव्यवस्था के बारे में हिटलरी जनोत्तेजको के नारे उसे भाये। हिटलर ने उसे रोटी-रोजी दी और नाटकीय सामूहिक उत्सव देखने का मौका दिया। मध्यवर्गीय जर्मन नागरिक हिटलर को प्रशंसा की नजरों से देखने लगा, यह कहते नहीं थकता था कि हिटलर शान्ति और व्यवस्था का सरक्षक है, उसने देश में अनुशासन पुनः स्थापित किया है और वह राष्ट्र का मार्ग-दर्शन कर सकता है। वह मंजिल देखता है, इसलिए उसे देश का संचालन करने का हक है।

फासिज्म प्रतिक्रियावाद का आखिरी हथियार है और वह आम लोगों की निष्क्रियता तथा सामाजिक उदासीनता से फायदा उठाता है, जो रोजमर्रा के छोटे-मोटे कामों से घिरे रहते है और युद्ध तथा शान्ति के पेचीदा राजनीतिक मामलों से जी चुराते हैं और बाद मे जब इन लोगो पर युद्ध और फासिस्ट तानाशाही का भारी बोझ पडता है, तो वे घटनाओं के विकास पर प्रभाव डालने मे असमर्थ हो जाते हैं और अपनी राजनीतिक लापरवाही के शिकार बन जाते हैं।

...इन्दिरा और फीरोज पेरिस की सैर करते थे, राह चलते लोगो का ध्यान अपनी ओर खींचते थे क्योंकि यौवन हमेशा आकर्षक होता है इन्दिरा का सौन्दर्य

पूरी तरह निखर चुका था, भारतीय साड़ी उस पर बहुत फबती थी।

वे म्यूजियम के चक्कर लगाते, लूव्र जाते, ऐफेल टावर पर चढ़ते, मोनमार्त्र के मुहल्ले मे मॉडर्न चित्रकारो की तस्वीरे देखते। इन्दिरा को फ्रासीसी भाषा पर अच्छा अधिकार था और वह फीरोज की दुभाषिया थी।

मोनमार्त्र की सीढ़ियो पर एक मर्तबा फीरोज ने इन्दिरा के सामने फिर से शादी का प्रस्ताव रखा। इन्दिरा ने स्नेहपूर्वक जवाब दिया कि अभी पूरी जिन्दगी हमारे सामने है और वायदा किया कि शिक्षा पूरी होने और हिन्दुस्तान लौटने के बाद वह उसकी पत्नी बनेगी।

सन् 1936 से मार्च, 1941 तक इन्दिरा विदेश मे रही और पढती रही।

कमला की मृत्यु के कुछ समय बाद दादी स्वरूप रानी का भी देहान्त हो गया। यह सब जवाहरलाल नेहरू के जीवन पर वज्राघात था। बेटी ने उनके एकाकीपन का बोझ कुछ हल्का करने, औपनिवेशिक जेलों के अँधेरे मे कैद होने के कष्ट झेलने मे उनकी भरसक मदद करने की कोशिश की। वह अक्सर लम्बी स्नेह-भरी चिट्ठियाँ लिखती थी, भविष्य की योजनाएँ बनाती थी, पिताजी को कोई ठेस न पहुँचाने का यत्न करती थी और जब कभी जवाहरलाल नेहरू जेल से रिहा होते और आजादी से साँस लेते थे, जब वह तन-मन से राजनीतिक सघर्षो मे लग जाते, इन्दिरा पिता के साथ रहने की पूरी कोशिश करती। वह जानती थी कि अवकाश के विरले क्षणो मे पिता को आत्मीयजन का सग चाहिए, जिसके साथ वह मन की बातें कर सके, राजनीतिक भावोद्वेग के तनाव से मुक्त हो सकें, महसूस कर सकें कि इस दुनिया मे वह अकेले नहीं हैं, कि उनकी पुत्री है, जो उनका ख्याल रखती है और उनकी सूक्ष्म मनोभावनाएँ समझने को तत्पर है।

तीसोत्तरी दशक के अन्त मे इन्दिरा ने पिता के साथ एशिया, अफ्रीका और यूरोप के कई देशों की अविस्मरणीय यात्रा की। स्विट्जरलैण्ड, फ्रांस, जर्मनी के अलावा उसे बर्मा, मलेशिया, सिगापुर, चेकोस्लोवाकिया, हगरी और मिस्र का दौरा करने का अवसर मिला। इसके अलावा वह पुर्तगाल और दक्षिणी अफ्रीका भी हो आई।

विभिन्न देशो के विख्यात राजनेताओ तथा सार्वजनिक कार्यकर्ताओ के साथ जवाहरलाल नेहरू की भेटों मे इन्दिरा अक्सर उपस्थित रहती थी, उसने विलक्षण व्यक्तियो के साथ उनकी बातचीत में भाग लिया। प्राय· वह चुप रहती थी, ध्यान से देखती थी, मन-ही-मन निष्कर्ष निकालती थी, अर्थात् शिक्षा पाती थी। उसका दृष्टिकोण तेजी से विस्तृत हो रहा था। वह सभी गतिविधियों को अधिक व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखने. अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण अपनाने लगी थी। उसकी नजरों में भारत सजटिल अन्तर्राष्ट्रीय प्रणाली के एक अग के रूप में प्रकट हुआ था जो पूरी

मानव-जाति के सम्मुख खड़ी समस्याओं से जुड़ा हुआ है। इन्दिरा इस निष्कर्ष पर पहुँच रही थी और इस प्रश्न पर पिता तथा फीरोज से सहमत थी कि चीन पर जापान और इथियोपिया पर इटली का आक्रमण, स्पेन में गृहयुद्ध, जर्मनी द्वारा आस्ट्रिया का हड़पा जाना और चेकोस्लोवाकिया के सुदेत प्रदेश पर हिटलर का कब्जा वस्तुतः उस एक लम्बी साम्राज्यवादी जंजीर की अलग-अलग कड़ियाँ हैं, जो सोवियत संघ के विशाल क्षेत्र में टूट चुकी है। हिन्दुस्तान अभी इस जंजीर में जकड़ा हुआ था। पूर्वी यूरोपीय भूक्षेत्रों पर हिटलरी जर्मनी के दावों को बढ़ावा देते हुए ब्रिटेन अपना मकसद हासिल करना चाहता था। वह भारतीय जनता को औपनिवेशिक बेड़ियों में और अधिक मजबूती से जकड़ना चाहता था, जो आजाद होने की चेष्टा कर रही थी, और साथ ही फासिज्म के हाथों से विश्व कम्युनिस्ट आन्दोलन का गला घोंटना चाहता था, जो आजादी और राष्ट्रीय स्वाधीनता के लिए राष्ट्रों के संघर्ष का खुलकर समर्थन कर रहा था।

उन चिन्तापूर्ण वर्षों में ब्रिटेन के प्रधानमन्त्री नेविल्ल चैम्बरलेन ने पाखण्डी रवैया अपनाते हुए और राजनीतिक दुस्साहसिकता में हिटलर से होड़ लेते हुए फासिस्ट राज्यों के साथ समझौता करना अपना फर्ज समझा। उन्हें नाजी नेताओं के ये कथन बहुत भाते थे कि जर्मनी अपना भविष्य उपनिवेशों से नहीं, बल्कि पूर्वी सीमाओं के पार उराल पर्वतमाला तक सोवियत रूस के अनन्त मैदानों से जोड़ता है।

सन् 1938 के जून महीने में जवाहरलाल नेहरू लन्दन पहुँचे। अपने परमप्रिय पिता के साथ रहने, उनसे बातें करने, सुबह को उनके लिए नाश्ता तैयार करने में इन्दिरा को कितना सुख मिलता था।

जवाहरलाल बेटी के लिए राजनीतिक समाचारों की व्याख्या करते थे। उस समय दुनिया की परिस्थिति अधिकाधिक नाजुक बनती जा रही थी। विश्वव्यापी संकट आ रहा था, जिसमें सभी साम्राज्यवादी राज्यों को अनिवार्यतः फँसना था और बहुत-से छोटे व पराधीन देशों को उसका शिकार बनना था। ब्रिटिश सरकार ने हिन्दुस्तान के सम्बन्ध में क्या योजना बनाई थी ?

जवाहरलाल नेहरू ने हिन्दुस्तान के वाइसराय लार्ड लिनलिथगो के साथ, जो उस समय लन्दन आए हुए थे, इस विषय पर लम्बी बातचीत की। वाइसराय जानना चाहते थे कि भारतवासी डोमिनियन स्टेटस (स्वतन्त्र उपनिवेश) स्वीकार करने के लिए राजी हो जाएँगे अथवा नहीं।

नेहरूजी ने यह दो-टूक उत्तर देकर वाइसराय को निराश कर दिया कि हिन्दुस्तान तब तक स्वतन्त्र राज्य नहीं हो सकता, जब तक वह पूरी तरह आर्थिक आत्मनिर्भरता हासिल नहीं कर लेगा और लन्दन सिटी के हस्तक्षेप के बिना अपनी अर्थव्यवस्था की संरचना को निर्धारित करने का अधिकार प्राप्त नहीं करेगा और यदि

निश्चित परिस्थितियों मे भारत को डोमिनियन स्टेट्स स्वीकार करने के लिए विवश होना भी पडे, तब भी काग्रेस पार्टी उसे वास्तविक स्वाधीनता की दिशा मे केवल पहला कदम समझेगी।

वाइसराय के साथ बातचीत की विषयवस्तु के बारे मे पिता से जानकारी प्राप्त करने के फलस्वरूप इन्दिरा अगले कुछ वर्षो के लिए काग्रेस के, कम-से-कम काग्रेस के उस पक्ष के राजनीतिक लक्ष्यो से अवगत हो गई, जो जवाहरलाल नेहरू का समर्थन करता था।

"हिन्दुस्तान की आजादी की चर्चा करते हुए हम उसे बाकी दुनिया से अलग करने की नहीं सोचते," पिता कहते थे—"और नहीं सकीर्ण राष्ट्रवाद की सीमाओ के भीतर अपने को बन्द करने का इरादा रखते हैं। हम इग्लैण्ड के साथ भी घनिष्ठ सम्बन्ध रखने को तैयार है, मगर सिर्फ इस शर्त पर कि हमारे सम्बन्ध स्वतन्त्र ओर अधिकार-समानता पर आधारित हों। अगर ब्रिटिश सरकार इस प्रकार के सम्बन्धो का विरोध नही करती, तो उसे आत्मनिर्णय करने का भारतीय जनता का अधिकार भी मानना चाहिए।

पिताजी कहते थे कि हिन्दुस्तान के देशभक्त के रूप मे वह केवल अपने देश की शक्ति और विकास का ख्याल रखते है, लेकिन सुदृढ़ शान्ति तथा अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग, खासतौर पर नये विश्वयुद्ध के बढते हुए खतरे के हालात मे हिन्दुस्तान तथा इग्लैण्ड के बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्धो की स्थापना मे हार्दिक दिलचस्पी लेने वाले व्यक्ति के रूप में वह ब्रिटिश सरकार से अपील करते हैं कि वह हिन्दुस्तान के मामले मे सही तथा न्यायसगत कदम उठाए—उसे स्वाधीनता प्रदान करे।

नेहरूजी से विदा लेते हुए लार्ड लिनलिथगो ने कहा—"हमारे बीच चौडी खाई पडी हुई है।"

हर दिन का कार्यक्रम बहुल व्यस्त रहता था। इन्दिरा ने यूनिवर्सिटी जाना बिलकुल बन्द कर दिया। वह हर जगह अपने पिता के साथ जाती थी—ब्रिटिश कम्युनिस्टों के समाचार-पत्र 'डेली वर्कर' के सवाददाताओं के साथ मुलाकात मे, सोशल डेमोक्रेटिक तथा लेबर साहित्य का वितरण करने वाले लन्दन के वामपंथी बुक क्लब के सदस्यो के साथ भेट में। वह ट्रैफल्गार स्क्वेयर मे हुई विराट सभा मे उपस्थित थी, जिसे जापानी आक्रमण का मुकाबला करने वाले चीन तथा लोकतन्त्रवादी स्पेन के समर्थन मे इंग्लैण्ड के जनवादी जन-समूहो ने आयोजित किया था। सभा मे जवारहलाल नेहरू ने भाषण दिया और चैम्बरलेन मन्त्रिमण्डल पर फासिज्म तथा जापानी फौजशाही की सरपरस्ती करने का आरोप लगाया।

दिन-भर की दौड-धूप से थके-मादे और नाना घटनाओं से उत्तेजित वे दोनो शाम को खाना खाते थे, एक-दूसरे को अपने अनुभव बताते थे और फिर बडी देर तक, आधी रात के बाद भी पिता लिखने की मेज के समीप बैठे रहते।

सुबह को नाश्ते के बाद इन्दिरा देखती सबसे दिलचस्प सूचनाओं पर

निशान लगाती। उस दिन मशहूर ब्रिटिश प्रकाश विक्टर होलाट्स के लेख ने उसका ध्यान आकर्षित किया, जिसमें उन्होने उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद तथा फासिज्म का पर्दाफाश करने वाले जवाहरलाल नेहरू के जोशीले भाषण की लाइपजिग मुकदमे मे विख्यात बल्गारियाई कम्युनिस्ट गेओर्गी दिमीत्रोव के फासिज्मविरोधी भाषणो से तुलना की थी और प्रभावशाली ब्रिटिश समाचारपत्र 'मानचेस्टर गार्डियन' ने नेहरू का लेख प्रकाशित किया—"हम हिन्दुस्तान के वासियों को न फासिज्म और न ही साम्राज्यशाही गवारा है। आज हमे पहले से भी अधिक विश्वास हो गया कि वे एक-दूसरे से मिलते-जुलते हैं और दुनिया में आजादी और शान्ति के लिए खतरा पैदा करते है। हिन्दुस्तान ब्रिटेन की विदेश नीति को ठुकराता है और उसमें भागीदार नही बनेगा। प्रतिक्रियावाद के इस आधारस्तम्भ से हमे बाँधने वाले सूत्र तोड़ने के लिए हम कोई कसर उठा नही रखेगे। ..अगर लडाई छिड जाएगी, तो इंग्लैण्ड की जनता उसमे जरूर फॅस जाएगी। ऐसी हालत मे ब्रिटिश सरकार, जो फासिस्ट अथवा नाजी हुकूमत के प्रति खुलकर सहानुभूति व्यक्त करती है, लोकतन्त्र और आजादी के ध्येय में किस तरह योग देगी ? जब तक यह सरकार सत्तारूढ रहेगी, इंग्लैण्ड की दहलीज पर फासिज्म मुँह बाए हमेशा खडा रहेगा।"[1]

इन्दिरा के बहुत व्यस्त होने के बावजूद फीरोज ने मुलाकात के लिए इसरार किया। अपने भावी ससुर के सार्वजनिक भाषणों से वह अत्यधिक प्रभावित हुआ और इन्दिरा को यह बताए बिना नही रह सका। स्थानीय कम्युनिस्टों के बीच फीरोज के कई मित्र थे और उसने बताया कि ग्रेट ब्रिटेन की कम्युनिस्ट पार्टी की कांग्रेस के नाम, जो उस समय बर्मिघम मे हो रही थी, नेहरू के अभिनन्दन सन्देश ने इन लोगों पर कितना प्रभाव डाला।

"स्पेन तथा चीन मे फासिस्ट आक्रमण युद्ध की विभीषिका ला चुका है," सन्देश में लिखा हुआ था—"और समूचे महाद्वीप मे उसके फैल जाने का खतरा मौजूद है। लोकतन्त्र और प्रगति की शक्तियों को एकजुट होना और इस खतरे का मिलकर मुकाबला करना चाहिए। सोवियत संघ की विदेश नीति विश्व-शान्ति का एक सबसे प्रभावशाली तत्त्व है और यदि दूसरे देशो ने उसका समर्थन किया होता, तो विश्व शान्ति सुरक्षित होती, परन्तु ब्रिटिश सरकार दूसरी नीति चला रही है—फासिस्ट आक्रमण को बढावा देकर और आज भी देते हुए वह युद्ध की सम्भावना को निकट ला रही है। भारतीय जनता इस नीति का दृढतापूर्वक विरोध कर रही है। हम हिन्दुस्तान की आजादी के लिए संघर्ष कर रहे हैं, इसलिए फासिज्म के विरुद्ध सघर्ष के प्रति हम बेपरवाह नही रह सकते और हमारी सहानुभूति फासिज्मविरोधी शक्तियों के साथ है।"[2]

1 A. Gorev V Zimyanin, op cit.
2 Ibid

फीरोज ने इन्दिरा को बताया कि जहाँ तक उसे मालूम है, ब्रिटेन की कम्युनिस्ट पार्टी के नेता जवाहरलाल नेहरू तथा उनके कांग्रेसी समर्थको को फासिज्म एव युद्धविरोधी आन्दोलन मे अपने पक्के सहयोगी मानते हैं।

यूनिवर्सिटी की पढाई इन्दिरा के लिए कठिन नही थी। हॉ, लेक्चरो तथा सेमिनारो मे अक्सर हाजिर न होने की वजह से वह कभी वक्त पर इम्तहान नही दे पाती थी और कभी-कभी इम्तहानो में उत्तम मार्क भी नही पाती थी, लेकिन यह उसे कम चिन्तित करता था। छात्र समुदाय मे अग्रणी रहने की इन्दिरा चेष्टा नही करती थी और न वह प्रथम श्रेणी या 'डिस्टिकशन' पाने की इच्छुक थी। पुस्तकीय ज्ञान से अधिक उसे ठोस व्यावहारिक कार्य आकर्षित करता था, लेकिन डिप्लोमा प्राप्त करना भी जरूरी था। पिताजी इस पर आग्रह करते थे और दिवगत मॉ को भी वह वचन दे चुकी थी कि यूनिवर्सिटी की शिक्षा अवश्य पूरी करेंगी।

इन्दिरा उस समय निराश हुई, जब 1938 की गर्मियों मे यूनिवर्सिटी परीक्षाओ के कारण उसे अपना मनोरथ पूरा करने—पिता के साथ सघर्षरत स्पेन का भ्रमण करने—से इन्कार करना पडा। वह लडाई के मैदान मे जाकर अपनी ऑखो से वहॉ का हाल देखना चाहती थी, क्योकि वह स्वय स्पेनी लोकतन्त्रवादियो की लन्दन सहायता समिति की सक्रिय सदस्या थी और स्पेन जाने वाले अन्तर्राष्ट्रीय ब्रिगेडो के स्वयसेवकों की रजिस्ट्री करती थी।

स्पेन की धरती पर हथियार हाथ मे लेकर और फासिज्म के दॉत खट्टे करने का फैसला करने वाले पहले भारतीय स्वयसेवको में फीरोज भी शामिल था। जब उसने स्पेन जाने का अपना फैसला सुनाया, तो इन्दिरा सहम गई, लेकिन एतराज वह नही कर सकती थी। इसके बाद फीरोज के प्रति इन्दिरा का आदर भाव और अधिक बढ गया। लेकिन फीरोज स्पेन नही जा सका। यह उसका कसूर नही था—ब्रिटिश खुफिया विभाग ने उसका पासपोर्ट जब्त कर लिया था और उसे जेल मे बन्द करने की धमकी दी।

एक बार पेरिस मे हुई मीटिंग में इन्दिरा को यशस्वी स्पेनी महिला दोलोरेस इबारूरी का भाषण सुनने का अवसर प्राप्त हुआ। यह अविस्मरणीय, अद्भुत दृश्य था। वाक्पटुता, प्रेम और घृणा, विश्वास और अटूट मनोबल, नारीत्व का सौन्दर्य और साहस, दु:ख और हर्षोन्माद—इस विलक्षण महिला में इन सभी गुणों का समन्वय हुआ था। वह यो ही तो पसियोनारिया (भाव-प्रवण) नाम से नही जानी जाती थी। यह नाम सार्थक था, वह महज बोलती नहीं थी, बल्कि अपने विशाल नारी हृदय की ज्वाला से श्रोताओं को प्रेरित भी करती थी।

इन्दिरा स्पेनी भाषा नहीं जानती थी और न कोई शब्द समझती थी लेकिन वह देखती थी कि उसके सामने जोन ऑफ आर्क जैसी सच्ची जन वीरागना खड़ी है और

उसका पराक्रम और भी अधिक महान्, सचेत तथा उदात्त है।

इन्दिरा के पीछे खडा कोई व्यक्ति दोलोरेस के भाषण का फ्रासीसी मे अनुवाद कर रहा था—"आजादी के लिए लडने वाली जनता को कोई भी कभी पूरी तरह हरा नही सका। स्पेन को मलबे के ढेर मे बदला जा सकता है, लेकिन कोई भी स्पेनी लोगों को गुलाम नही बना पाएगा... ।"

आमतौर पर सकोचशील और संयत रहने वाली इन्दिरा ने जोरदार तालियाँ बजाई और अन्य लोगो की तरह दायाँ हाथ ऊपर उठाकर नारा लगाया—"नो पसरान !", "फासिज्म नही चलेगा !"

प्रथम विश्वयुद्ध के सैनिको की पीढ़ी अभी इस दुनिया से लुप्त नहीं हुई थी, परन्तु यूरोप मे फिर से खून बहने लगा, पर लन्दन और पेरिस के शासक इससे चिन्तित नहीं थे और 'शान्ति के पुजारी' चैम्बरलेन के उपदेशों से यही निष्कर्ष निकलता था कि यूरोप में युद्धों के शिकार बनने वाले जनगण को हिटलर तथा मुसोलिनी के अग्निकुण्ड में केवल इसलिए झोका जा रहा है कि इनके युद्धोन्माद को शान्त किया जा सके और विश्व-शान्ति को सुरक्षित रखा जा सके।

30 सितम्बर, 1938 को दुनिया को म्यूनिख की शर्मनाक राजनीतिक सौदेबाजी की खबर मिली, जिसमे चैम्बरलेन और दलादिये ने चेकोस्लोवाकिया को हिटलर के हवाले कर दिया।

जवाहरलाल नेहरू क्षुब्ध हो उठे। उन्होने चैम्बरलेन को 'हिटलर का हरकारा' बताया। उसी दिन नेहरूजी ने 'डेली वर्कर' के सवाददाता के साथ भेटवार्ता मे कहा—"वह शान्ति, जिसका मुँहमाँगा दाम—दूसरों के खून तथा दुःख, लोकतन्त्र के अपमान, मित्र देशों के विभाजन के रूप में दाम—चुकाया जाता है, शान्ति नही, वरन् झगडो, डराव-धमकियो, अत्याचार का सिलसिला और अन्ततः युद्ध ही है।"[1]

फासिस्ट तानाशाहो के साथ चैम्बरलेन तथा फ्रांस के प्रधानमन्त्री दलादिये की मनहूस साँठगाँठ का अर्थ था राजनीतिक छलकपट, विश्वासघात, दुस्साहस और यूरोपीय घोर संकट का आरम्भ। यूरोप में शान्ति की मृगतृष्णा के कारण चेकोस्लोवाकिया को बलि-वेदी पर चढ़ाया गया, इस प्रकार सोवियत संघ पर हमला करने की हिटलर की रणनीतिक योजनाओ को बढावा दिया गया। फासिस्ट दरिन्दों ने असहाय, परित्यक्त चेकोस्लोवाकिया को पैरों-तले रौंद डाला।

हिन्दुस्तान से मिलने वाली सूचनाएँ निराशाजनक तथा बेचैनी पैदा करने वाली थीं। कांग्रेस के नेतृत्व में मतभेद हो गया। महात्मा गाँधी, जवाहरलाल नेहरू तथा उनके समर्थक समझते थे कि यूरोप मे युद्ध छिड़ने की वजह से आजादी की ओर हिन्दुस्तान की राह में नयी बाधाएँ पड़ेगी, वह दिन और अधिक दूर हो जाएगा, जब उत्पीड़ित राष्ट्रो को अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में अपनी आवाज उठाने का न्यायोचित

1 A. Gorev V Zimyanin, op cit.

अधिकार हासिल होगा।

इन्दिरा को खुशी थी कि उसके पिता और महात्मा गॉधी का दुनिया की परिस्थिति पर एक जैसा दृष्टिकोण है—युद्ध पश्चिमी राज्यों के साम्राज्यवादी हलको द्वारा छेडा जा रहा है, यह युद्ध केवल यूरोपीय राष्ट्रो के लिए नहीं, अपितु समस्त मानव-जाति के लिए भी अभिशाप है।

"म्यूनिख मे प्राप्त हुई यूरोपीय शान्ति, जिसमें चैम्बरलेन तथा दलादिये ने चेकोस्लोवाकिया के साथ विश्वासघात करके उसे हिटलर के चगुल मे फेक दिया अत्याचार का चरमोत्कर्ष है," महात्मा गॉधी के लेख मे इन्दिरा ने पढा। "साथ ही यह पराजय भी है...जर्मनी तथा इटली की सयुक्त हिसा के सामने ब्रिटेन और फ्रास ने घुटने टेक लिये। पर जर्मनी और इटली को इससे क्या लाभ हुआ ? क्या मानव-जाति के नैतिक मूल्यो मे उन्होने सवृद्धि की ?"

अहिंसा के अपने सिद्धान्त के प्रति निष्ठावान रहते हुए गॉधीजी ने अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति पर भी उसे लागू किया। 'अगर मै चेक होता' शीर्षक लेख में उन्होने लिखा—"मैं चेक लोगों को सम्बोधित करना चाहता हूँ, क्योकि उनकी दुर्दशा ने मुझे शारीरिक और मानसिक दुःख दिया।" महात्मा गॉधी ने चेकोस्लोवाकिया के लोगो को परामर्श दिया कि वे निहत्थे मर जाएँ, पर हिटलर के आदेश का पालन न करे।

यह लेख पढ़कर इन्दिरा समझ गई कि हिसा से, विशेष रूप से युद्ध जैसी वीभत्स हिसा से, घोर घृणा रखते हुए भी वह गाँधीजी का यह चरम शान्तिवादी सूत्र स्वीकार नही कर सकती—"मारने से मारा जाना अच्छा।" इन्दिरा को लगता था कि अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों मे बल-प्रयोग से दोनों पक्षों को इन्कार करना चाहिए। वह जानती थी कि पिताजी को भी महात्मा गॉधी की इस अपील के व्यावहारिक मूल्य मे सन्देह है, खासतौर से जब फासिज्म और आक्रमण का सवाल हो।

जुलाई, 1939 में गॉधीजी ने हिटलर के नाम खुला पत्र भेजा, जिसमें उन्होंने अपील की कि वह विवेक से काम ले और विश्व-युद्ध शुरू करने का इरादा छोड़ दे। कोई जवाब नहीं मिला।

परन्तु भारतीय जनता के नेताओ के बीच मतभेद का मुख्य कारण अहिंसा का सिद्धान्त नहीं था—स्पष्ट था कि यदि युद्ध शुरू होगा, तो यह 'पवित्र' सिद्धान्त निराशाजनक, पस्तहिम्मती बनकर रह सकता है।

युद्ध और शान्ति के प्रश्न के प्रति नैतिक-राजनीतिक रवैया भारतीय देश-भक्तो के लिए व्यावहारिक अर्थ रखता था—क्या ब्रिटेन का साथ दिया जाए, जो हिन्दुस्तान को अपने औपनिवेशिक शिकंजों में कसे हुए है अथवा उसके विरुद्ध खडा हुआ जाए ? और यदि प्रथम विश्व-युद्ध की तरह फिर से उसका समर्थन किया जाए, तो किन शर्तों पर ?

कांग्रेस के अन्दर सुभाष चन्द्र बोस के नेतृत्व में काफी प्रभावशाली दल बन गया था जिसने पार्टी की आम नीति का विरोध किया और मॉग की कि जापान

जर्मनी तथा इटली का सहारा लेते हुए ब्रिटेन के विरुद्ध संघर्ष किया जाए।

नेताजी सुभाष चन्द्र बोस कट्टर राष्ट्रवादी, दृढ संकल्पवान और असाधारण सगठनात्मक प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति थे। उस समय वह काग्रेस के अध्यक्ष थे, राष्ट्रवादी भावनाएँ रखने वाले लोगो के बीच उनके विचार लोकप्रिय थे और उन्हें जन-समर्थन प्राप्त था। सुभाष चन्द्र बोस ने खुलेआम महात्मा गॉधी तथा जवाहरलाल नेहरू के विरुद्ध आवाज उठाई और कांग्रेस को विभाजित करने तथा अपने समर्थकों सहित उससे अलग हो जाने का इरादा नही छिपाया।

इन्दिरा को यह सब बहुत बुरा लग रहा था। काग्रेस के भीतर मतभेद के परिणामस्वरूप इंग्लैण्ड की भारतीय बिरादरी मे भारी विवाद पैदा हो गया था और दूसरे देशों मे भी भारतीय प्रवासियों की राजनीतिक एकता भंग होने लगी।

प्रायः ठण्डी हवा और बारिश में ठिठुरते लन्दन के आर-पार जाकर इन्दिरा कृष्ण मेनन के घर पहुँचती थी और सभी गतिविधियों की जानकारी रखने वाले कृष्ण मेनन उसकी शकाओ का निवारण करते थे, हिन्दुस्तान से मिली सूचनाएँ देते थे, सभी सवालो का जवाब देते थे।

ॲगीठी के लाल अगारों पर नीली लपटे नाचती रहती, कमरे मे अगरबत्तियों की मीठी सुगन्ध व्याप्त रहती, विक्टोरियन घड़ी टन-टन करती और प्यालो में दार्जिलिग की चाय उँडेलते हुए गृहस्वामी इत्मीनान से वार्तालाप शुरू करते।

कृष्ण मेनन जवाहरलाल नेहरू के सिर्फ हमख्याल ही नही थे, बल्कि घनिष्ठ मित्र भी थे। उन्होने लन्दन मे इण्डिया लीग की स्थापना की, जो वस्तुत: काग्रेस की, खासतौर से उसके वामपक्ष की, विदेशी शाखा थी। कृष्ण मेनन ब्रिटिश कम्युनिस्टो के साथ खुलेआम सम्पर्क रखते थे और समाजवाद के प्रति अपनी सहानुभूति नही छिपाते थे।

"इन्दिरा, सुभाष चन्द्र बोस तथा महात्मा गॉधी और तुम्हारे पिता के बीच मतभेद के अनेक कारण है," कृष्ण मेनन ने बताया। "गाँधीजी अहिसा के सिद्धान्त को, साथ ही युद्ध और शान्ति के मामले में इस सिद्धान्त को त्यागने, हिन्दुस्तान को आजाद करने के 'चरम, असामयिक' उपाय सुझाने के लिए सुभाष चन्द्र की आलोचना करते है। यह दक्षिणपक्षी आलोचना है। दूसरी ओर, तुम्हारे पिता, जो सुभाष चन्द्र के साथ काग्रेस के वामपक्ष के प्रतिनिधि है, दूसरे प्रश्न पर सुभाष से असहमत हैं—मेरे मित्र जवाहरलाल को और मुझे भी जर्मन फासिज्म तथा जापानी फौजशाही जैसी हमलावर अन्तर्राष्ट्रीय ताकतों के साथ कांग्रेस के सहयोग की सुभाष चन्द्र की अपील पसन्द नहीं है।

"व्यक्तिगत रूप से मैं तुम्हारे पिता से इस बात पर सहमत हूँ कि पैदा हुई अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति का ब्रिटेन पर दबाव डालने के लिए उपयोग करना चाहिए और 'बर्लिन-रोम-टोकियो' त्रिगुट के विरुद्ध युद्ध छिड़ने की हालत मे उसमे शामिल होने की यह शर्त लगानी चाहिए कि हिन्दुस्तान को स्वाधीनता प्रदान की जाए

"उधर, गाँधीजी इस नीति का विरोध करते हैं। वह समझते है कि ब्रिटिश सरकार की विषम स्थिति से फायदा उठाकर उस पर दबाव डालना अनैतिक तथा अनुचित होगा। उनके ख्याल में यह हिंसात्मक व्यवहार है।"

कृष्ण मेनन ने चाय का आखिरी घूँट लिया, उठकर कमरे का चक्कर लगाया, अँगीठी में कुछ कोयला झोंका और इन्दिरा का उदास मुँह देखकर बोले—"हाँ, यह ठीक है कि सुभाष चन्द्र की कार्रवाइयो की वजह से कांग्रेस में फूट पड़ गई है, लेकिन उसमें नेहरू का प्रभाव बढ़ रहा है। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी का विरोध करने वाले सुभाष चन्द्र बोस को कांग्रेस अध्यक्ष का पद छोड़ना और अपना दल 'फारवर्ड ब्लॉक' सम्गठित करना पड़ा।"

लन्दन की उबाऊ ठण्डी बारिश खिड़की पर टप-टप कर रही थी। यह सोचकर इन्दिरा के दिल में टीस पैदा होती थी कि गंगा का सूर्यस्नात तट यहाँ से कितना दूर है। काश, वह इस वक्त वहाँ होती, पिता के पास चली आती।

हर जगह युद्ध की चर्चा चल रही थी, मगर सभी को आशा थी कि शान्ति बनी रहेगी। जिस तरह मनुष्य अवश्यम्भावी मृत्यु का विचार मन से भगा देता है, उसी तरह लोकमानस युद्ध जैसे पागलपन तथा निरर्थकता को वास्तविकता के रूप में स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं होता। प्रत्येक व्यक्ति सोचता था कि यदि युद्ध छिड़ेगा भी, तो वह उससे अछूता रह जाएगा, हर कोई अपनी खुशकिस्मती में विश्वास रखता था।

परन्तु जो लोग जानते थे कि सैनिकों का खून सोने की सिल्लियों में परिणत होगा और ये सिल्लियाँ बैंकों की तिजोरियों मे जमा हो जाएँगी और क्षत-विक्षत तथा क्षीण हुए राष्ट्र उनकी आज्ञा का पालन करेंगे तथा उनके निहित स्वार्थों की पूर्ति का साधन मात्र रह जाएँगे, वे युद्ध का खतरा निकट ला रहे थे। पहली सितम्बर, 1939 को पोलैण्ड पर जर्मनी के हमले के साथ युद्ध शुरू हुआ।

और 3 सितम्बर को हिन्दुस्तान के वाइसराय लार्ड लिनलिथगो ने वक्तव्य जारी करके 'सन्तोष की भावना' के साथ भारतीय जनता को सूचित किया कि हिन्दुस्तान युद्ध में शामिल हो गया है। भारतीय नेताओं के साथ परामर्श करने तथा उनकी शर्ते सुनने की बात लन्दन के शासकों ने सोची तक नहीं। उन्होंने महान् एशियाई राष्ट्र को महायुद्ध की मुट्ठी में झोंक दिया और भारतीय जनता को युद्ध के लक्ष्य समझाने की कांग्रेस पार्टी की माँग पूरी करना जरूरी नहीं समझा और हिन्दुस्तान में फैले स्वाभाविक विरोध आन्दोलन को सैन्य बल-प्रयोग से निर्ममतापूर्वक कुचल दिया गया।

हिटलरी फौजियों के भारी बूटों तले भ्रान्तियाँ भुरभुरे काँच की तरह टूटकर टुकड़े-टुकड़े हो गईं। सन् 1939-1940 में चेकोस्लोवाकिया का समामेलन किया गया पोलैण्ड, फ्रांस बेल्जियम नीदरलैण्ड लक्सेमबर्ग पर कब्जा किया गया यूगोस्लाविया

तथा यूनान मे लडाई चल रही थी। स्केंडिनेविया को उत्तरी सागरों में जर्मन नौसेना के प्रभुत्व का अड्डा बना दिया गया और उत्तरी अफ्रीका पर कब्जा करके जर्मनी तथा इटली ने भूमध्य सागर तथा पश्चिमी एशिया के क्षेत्रों पर चढ़ाई करने की तैयारियाँ शुरू कर दी।

फासिस्ट आक्रमण की दिशा को सोवियत सघ की ओर मोड़कर हिटलर को 'शान्त' कराने की ब्रिटिश सरकार की योजना ब्रिटिश तथा फ्रांसीसी जहाजो के साथ अटलांटिक महासागर की गहराइयो मे डूब गई।

इगलिश चैनल के तट पर फौजी साज-सामान जमा करके मुँहबाये खडी जर्मन फौज को देखकर लन्दन के शासक भयभीत हो गए।

लन्दन के ऊपर, जो कुछ ही समय पहले विजली की अनगिनत बत्तियों से रोशन था और अब खामोश तथा बुझा हुआ पड़ा था, युद्ध के मनहूस काले धब्बो जैसे वायुरक्षा के गुब्बारे मॅडरा रहे थे।

अपनी शर्मनाक भूमिका अदा करके चैम्बरलेन की सरकार ने मई 1940 मे इस्तीफा दे दिया। नये मन्त्रिमण्डल मे टोरी पार्टी के साथ लिबरल तथा लेबर पार्टी के प्रतिनिधि शामिल हुए और उसकी बागडोर विंस्टन चर्चिल ने सॅभाली, जो हिन्दुस्तान में ब्रिटिश राज के सबसे कट्टर समर्थक थे। इसलिए उनके हाथ से आजादी पाने की आशा करना व्यर्थ था।

अब इन्दिरा को स्वय युद्ध का कडुवा अनुभव हुआ। उसकी ऑखों के सामने उसके मित्रों के भाग्य टूट रहे थे, अनाथ बच्चों की आँखो से ऑसू बह रहे थे। विषाद, मातम, दु ख और भय ने सुख की अभिलाषा की जगह ले ली थी। मनुष्य के जीवन का कोई मूल्य नहीं रह गया था और स्वयं जीवन भी निरुद्देश्य तथा निरर्थक प्रतीत होने लगा था।

शत्रु की पनडुब्बियो द्वारा ब्रिटिश यात्री जहाजो के डुबोये जाने की सूचनाएँ समाचार-पत्रों मे प्रायः छपती रहती थीं। मृतको की सूचियों मे कभी-कभी परिचित लोगो के नाम भी मिलते थे। कलेजा पसीज जाता था और हमलावरों की निरर्थक क्रूरता से मन में घृणा पैदा होती थी, जिन्होंने निरस्त्र शान्तिपूर्ण जहाजो को डुबोने का हुक्म दिया था।

लन्दन की सुनसान सड़को पर इन्दिरा के समवयस्क नौजवान ब्रिटिश सैनिकों तथा भारतीय रंगरूटो की पद-चापे सुनाई देती थीं। ब्रास बैडो की तेज ध्वनि के बीच सैनिक जहाजो पर चढ़ते थे और अनजान दिशा के लिए रवाना होते थे, जहॉ युद्ध का दानव मुँहबाये उनका इन्तजार करता था। जीवन से हाथ धोते हुए ये जवान, जिनको धोखा दिया गया था और जिनकी आत्माओं को सैनिक प्रचार तन्त्र ने विकृत कर दिया था, यह सोचकर गर्व करते थे कि वे 'स्वतन्त्रता के आदर्शों' के हेतु आत्म-बलिदान कर रहे हैं।

इन्दिरा की नजर में युद्ध विश्वव्यापी त्रासदी था और उसका कारण उसे लोगों

की अक्षम्य निश्चिन्तता, आवश्यक सतर्कता का अभाव लगता था। अपने राजनीतिक नेताओं की आपराधिक महत्त्वाकांक्षाओ को ठुकराना लोगों का फर्ज था, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। इसके विपरीत, घोर राष्ट्रवादी अहंकार से अभिभूत, युद्धोन्मत्त पत्र-पत्रिकाओ, रेडियो, चर्च, ससदों और राजनीतिक पार्टियो ने युद्ध लोलुप क्षेत्रो का समर्थन किया। सैन्य उद्योग, राजनीतिक सस्थाएँ, विचारधारात्मक तथा सूचना सेवाएँ तो युद्ध की सेवा में लगी ही हुई थी, साथ ही आम लोगो की बेपरवाही, उदासीनता और निष्क्रियता से भी जगबाजो ने पूरा फायदा उठाया।

निस्सन्देह, यह मत निराधार नहीं है कि दुनिया मे ऐसा अल्पसख्यक, मगर प्रभावशाली ग्रुप मौजूद है, जो असीमित राजनीतिक और आर्थिक प्रभुत्व पाने के लिए लालायित रहता है। उसके लिए युद्ध का अर्थ और प्रयोजन है—जनगण, भूक्षेत्रो, भूगर्भ सम्पदा, जल, वायु और सूर्यप्रकाश पर अपना अधिकार स्थापित करना।

बेशक, पिता का यह विचार सही था कि साम्राज्यवाद का स्वरूप आक्रामक है, मगर युद्ध की अवश्यम्भाविता, उसके शाश्वत अपरिहार्य स्वरूप की धारणा को इन्दिरा स्वीकार नही करना चाहती थी और स्वीकार नही कर सकती थी। यदि बात ऐसी है, तो विवेक और सामाजिक चेतना का भला क्या महत्त्व है, जिन पर हमारी सभ्यता को इतना गर्व है? क्या उनका कोई अर्थ और प्रभाव नहीं है और मानव-जाति को एक के बाद दूसरी, और भी अधिक भयाकन विभीषिका देखनी पडेगी? क्या इस युद्ध को रोकना असम्भव था?

अगर शर्मनाक म्यूनिख सॉठगॉठ न हुई होती, स्पेन में फासिस्ट फौजी सत्ता परिवर्तन को अगर ब्रिटेन तथा फ्रास के शासकों ने नजरंदाज न किया होता और सोवियत संघ से मिलकर फासिज्म के विरुद्ध आम मोर्चा बना लिया होता, तो सम्भवत· विश्व-युद्ध न छिडा होता।

विश्व विनाशकारी सकट मे इसलिए भी फॅस गया कि विवेक और सतर्कता की अपीलो, युद्ध छेड़ने की योजनाओं का विरोध करने की पुकार को दूसरी जोरदार आवाजो ने दबा दिया। युद्ध का गुणगान किया जाता था, 'दुष्ट इतिहास' के अन्याय का बदला लेने की मॉग की जाती थी, जिसने मानो कुछ देशों को जीवन योग्य क्षेत्र और प्राकृतिक सम्पदा से वंचित कर रखा था।

प्रतिशोधवादी डके की चोट ऐलान करते थे कि सोवियत सघ 'इतिहास की भूल' है और स्वाधीनता पाने की छोटे तथा पराधीन देशों की उत्कण्ठा 'भगवान् की कृपा के पात्र' राष्ट्रों के हितों को जोखिम में डालने की दुस्साहसिक कोशिश है।

विवादास्पद समस्याओं के सैनिक समाधान के लिए केवल राजनीतिज्ञो, जनरलो तथा उद्योगपतियों ने ही आवाज नहीं उठाई थी। अनेक ऐसे विद्वान् भी थे, जिनके मतानुसार मानव की आक्रमणकारी प्रवृत्ति प्रकृति की देन, मानव-जाति की नैसर्गिक विशिष्टता है।

बकवास रूढ़िवादी मान्यता है क्या मानव के स्वभाव के बारे में इस प्रकार

की मान्यता से छुटकारा पाने का कोई उपाय नहीं है ?

युद्ध हमेशा मानव-समाज के विकास की राह में आड़े आए है। सभ्यता की सभी उपलब्धियाँ शान्ति और परिश्रम की देन है, युद्धों का परिणाम नहीं। लेकिन असाधारण रूप से मेधावी व्यक्ति भी हुए हैं, उदाहरण के लिए, ब्रिटिश लेखक जॉन रस्किन, जिन्होने युद्ध का गुणगान किया था। "महान् राष्ट्रो को युद्ध के समय सही शब्द और बौद्धिक शक्ति प्राप्त होती थी," उन्होने लिखा—"और शान्ति काल मे वे ये गुण गँवा देते थे। युद्ध ने उन्हें ज्ञान दिया और शान्ति ने धोखा, युद्ध ने उनको शिक्षित किया और शान्ति ने उनके साथ विश्वासघात किया—अर्थात् युद्ध के समय वे जन्म लेते और शान्ति काल मे मर जाते थे।"[1]

इन्दिरा के पिता ने जॉन रस्किन को सोलहो आना साम्राज्यवादी बताया और कहा कि उनकी पुस्तकों के आधार पर ब्रिटिश उपनिवेशी अफसराना वर्ग का चरित्र-निर्माण हुआ।

उधर, जर्मनी, फ्रास, सयुक्त राज्य अमरीका में भी लोक मानस को विषाक्त करने वाली कितनी अधिक ऐसी पुस्तकें निकलीं ! नही, कोई चाहे कुछ भी क्यो न कहे, युद्ध और शान्ति का मामला प्रत्येक व्यक्ति से सरोकार रखता है और प्रत्येक व्यक्तिगत रूप से उसके प्रति उत्तरदायी है।

मगर व्यक्ति का स्थान कहाँ है और युद्ध और शान्ति के मामले मे लाखों-लाख अन्य लोगो तथा सरकारो के साथ उसका सम्बन्ध तथा सहकार्य कैसा होना चाहिए ?

राष्ट्रों के बीच जन-संहार को रोकने के लिए क्या शान्तिवादी अथवा अहिसा का समर्थक होना काफी है ? शान्तिवादी लोग बहुत है, लेकिन वे जीवन से कटे हुए, निष्क्रिय हैं, दूसरे लोगो के भाग्य अथवा आम सकट के निवारण की अपेक्षा वे अपनी आत्मिक शुद्धता की अधिक चिन्ता करते हैं और अपने प्रतिद्वन्द्वियों का हृदय-परिवर्तन करने के उनके अशक्त प्रयत्नो का फल प्राय· यही होता है कि वे स्वय अपने सिद्धान्तो को तिलाजलि दे देते हैं।

फिर भी कोई भी व्यक्ति, जो सचेत जन-साधारण के सकल्प का सहारा लेता है, युद्ध का प्रतिरोध करने वाली शक्ति बन सकता है।

हिटलर जैसे हमलावरों का साहसपूर्वक सामना करने तथा उनके पागलपन के शिकार न बनने के लिए जंगबाजों को आडे हाथों लेने वाले लोगो का संकल्प तथा विवेक इस गतिरोध से निकलने का उपाय है। किसी जैव प्राणी की तरह समाज को भी सैन्यवादी मनोविकारों के प्रति निरोधक क्षमता अर्जित करनी चाहिए, वरना समाज का नाश अनिवार्य है।

कुछ ऐसे विचार दिमाग में उठते थे और ठीक उन क्षणो मे लन्दन पर वम गिर

1 J Nehru, *Gl*   *of World History*

रहे थे। तग भूमिगत बचाव-घरो मे बच्चों और बूढ़ो का दम घुट रहा था और ऊपर सडको पर फायर इजनों तथा एम्बुलेंस गाडियों के साइरन चीख रहे थे। विमानभेदी तोपो के गोलो के टुकड़े जमीन पर गिर रहे थे और इन्दिरा तथा फीरोज बचाव-दलो मे शामिल होकर काम कर रहे थे।

उस समय, जब युद्ध के मोर्चो पर भारतीय जवान ग्रेट ब्रिटेन के सम्राट् की खातिर जान दे रहे थे, हिन्दुस्तान मे ब्रिटिश उपनिवेशवादी दमन-चक्र तेजी से घुमा रहे थे।

इन्दिरा ने फैसला किया कि उसे स्वदेश लौटना चाहिए, जिसकी जनता फिर से सघर्ष के लिए उठ खड़ी हुई थी। उसे अपने पिता, महात्मा गाँधी, सभी देश-भक्तो के साथ रहना चाहिए।

छ' वर्ष उसने विदेश मे बिताए। इस अवधि में ससार बदल गया। रोबदार दादा मोतीलाल चल बसे, स्नेहमयी दादी स्वरूप रानी नहीं रही, परमप्रिय माँ भी इस दुनिया से कूच कर गई, पिता की बहनो के विवाह हो चुके थे और स्वय पिता पहले की तरह कभी एक, तो कभी दूसरी जेल मे बन्द रहते। गठा हुआ परिवार टूट गया। इन्दिरा की जिन्दगी का नया दौर शुरू हो रहा था। वह सोच रही थी कि अब आगे क्या होगा। एक बात निश्चित थी—शान्त पारिवारिक जीवन से वह सन्तुष्ट नही हो सकती है, हालाँकि फीरोज को वह उसकी पत्नी बनने का वचन दे चुकी थी।

अनेक वर्षो तक फीरोज कमला नेहरू का भक्त और परिवार का अपना जैसा आदमी रहा। वह स्थिति को भली-भाँति समझता था और इन्दिरा को आश्वासन दे चुका था कि भारतीय युवती के लिए असामान्य उसकी मनोवृत्ति, पति की मात्र अर्द्धांगिनी रहने की अनिच्छा को वह स्वीकार करने को तैयार है।

राष्ट्र-नायक, उदात्त राजनीतिक तथा नैतिक आदर्शो का पालन रखने वाले व्यक्ति के परिवार का अंग बनना फीरोज के लिए बडे सम्मान की बात थी, परन्तु इसके साथ ही यह बात उससे काफी साहस की भी अपेक्षा करती थी—क्या इस परिवार में अपने लिए वह समुचित स्थान बना पाएगा, उसके आने से परिवार मे मौजूद सम्बन्धो की व्यवस्था पर आँच तो नहीं आएगी ? स्थिति सरल नहीं थी। केवल दो युवाओ की सच्ची, निष्कलक प्रणय-भावना और पारिवारिक जीवन के विषय मे उनकी अपरम्परागत मान्यता की बदौलत वह विवाह सम्भव हुआ था।

रिवाज के अनुसार, इन्दिरा को फीरोज के इलाहाबाद के घर मे रहना चाहिए था। आनन्द भवन की तुलना में फीरोज का घर एक झोंपड़ा-सा लगता था।

किसी को भी ठेस न लगे, इसके लिए फीरोज और इन्दिरा पहले से तय कर चुके थे कि वे माँ-बाप से अलग रहेंगे और किराये पर कोई फ्लैट ले लेंगे।

फीरोज को अपना दिल सौंपकर इन्दिरा जानती थी कि वह उम्र-भर वफादार पत्नी बनी रहेगी, फीरोज के आत्मसम्मान को ठेस नही लगने देगी, परन्तु वह चाहती थी कि फीरोज भी उसके सभी मानवीय अधिकार माने जो उसके ख्याल में पति और

पत्नी दोनों को प्राप्त होने चाहिए।

इन्दिरा को याद थी कि परदे की प्रथा के कारण उसकी मॉ को कितने कष्ट उठाने पडे थे। परिवार मे अपने लिए बराबरी का दर्जा स्वीकार करने और आत्मविश्वास पेदा करने के लिए उसे बहुत यत्न करना पड़ा था। लेकिन अपने पति के साथ सम्बन्धों मे समानता का सुख पाकर वह उत्कट इच्छा रखती थी कि उसकी बेटी भी भारतीय परिवारो मे कायम पुरुष के आधिपत्य से मुक्त हो।

फीरोज कमला के इन विचारों से परिचित था और उससे सहमत था। मृत्यु से कुछ समय पहले कमला ने फीरोज और इन्दिरा को आशीर्वाद दिया था।

अटलांटिक महासागर पार करके दक्षिणी अफ्रीका से होकर घर लौटने का लम्बा रास्ता चुना गया। माल और यात्री जहाजो का कारवॉ युद्धपोतो के सरक्षण मे हिन्दुस्तान के लिए रवाना हुआ।

इन्दिरा और फीरोज कारवॉ पर हमला करने वाली शत्रु की पनडुब्बियों तथा विमानों से संरक्षक जहाजो की मुठभेड के साक्षी बने।

गोलों के धमाके, धावा बोलने वाले विमानो की गरज, धातु की घनघनाहट, आग, काले धुएँ के बादल, उलटफेर डूबने वाले जहाज, खौलता हुआ समुद्र, लोगों की चीखे—मौत का ताण्डव नाच हो रहा था और इन्सान इन मनहूस ताकतों के हाथो में अपने को असहाय, बेबस खिलौना महसूस कर रहा था।

इन अभागे लोगो के बलिदान की जरूरत किसे थी ? कदाचित् उन धन्नासेठो को, जो उस वक्त अपने बैकों के शान्त कक्षों मे बैठे हथियारों के उत्पादन से होने वाले मुनाफे का हिसाब लगा रहे थे ?

आखिरकार लडाई खत्म हुई, भयानक विनाश और नरसहार के बाद अजीब नीरवता छा गई। कई जहाजों और इनके साथ सैकड़ो लोगों को निगलकर महासागर फिर से शान्त होकर लहरा रहा था, जहाजो के अवशेषों पर थपेडे मार रहा था, सेफ्टी रिंगो के साथ खिलवाड़ कर रहा था।

दो युवाओ के जीवन की डोर उस दिन टूट सकती थी। मगर भाग्य ने उनका साथ दिया। वे दक्षिणी अफ्रीका के बन्दरगाह केपटाउन सकुशल पहुँच गए।

दक्षिणी अफ्रीका में भाडे पर रखे हुए बहुत-से हिन्दुस्तानी मजदूर गोरे मालिको के बागानों तथा खानों में काम करते थे। साथ ही छोटे भारतीय दुकानदारो तथा महाजनो की संख्या भी कम नहीं थी।

समय रहते इन्दिरा के आगमन की सूचना पाकर इन लोगों ने विख्यात भारतीय जननेता की पुत्री का शानदार स्वागत-सत्कार किया। इन्दिरा और फीरोज के लिए केपटाउन तथा डरबन की सैर की व्यवस्था की गई। दक्षिणी अफ्रीका के शहरो की गरीब जनता की दुर्दशा हिन्दुस्तान से भी बदतर थी ब्रिटिश शासकों ने दक्षिणी

अफ्रीका मे जो नस्लवादी व्यवस्था लागू की थी, वह वस्तुत फासिस्ट थी। अफ्रीका के मूलवासियों की दुर्दशा कल्पनातीत थी। नीग्रो जनता के साथ पशुओं से भी कही ज्यादा दुर्व्यवहार किया जाता था। मानव की प्रतिष्ठा का तिरस्कार, गोरो का घृणित अत्याचार देखकर हृदय मे असह्य पीड़ा पेदा होती थी और ये अधर्मी दुराचारी लोग गिरजा जाते है, भगवान् में अपनी आस्था की डींग हॉकते हे !

यह देखकर इन्दिरा खासतौर से क्षुब्ध हो उठी कि भारतीय मूल के कुछ लोग, जो स्वयं भी पददलित और अपमानित थे, ब्रिटिश अधिकारियों की जीहुजूरी कर रहे थे, देश के मूलवासियो के शोषण और उत्पीडन मे उनके साथ सहयोग करते थे।

भारतीय बिरादरी के नेताओं ने इन्दिरा से अनुरोध किया कि वह किराये पर लिये गए बडे हॉल में जमा देशबन्धुओ के सामने भाषण दे।

केपटाउन मे वह भाषण इन्दिरा का पहला सार्वजनिक राजनीतिक भाषण था। वह दुविधा मे पड गई, सकुचायी ओर शुरू-शुरू मे सभा में बोलने से इन्कार करना चाहती थी।

इन लोगो को वह क्या बताएगी ? इन्दिरा ने निश्चय किया कि केवल सचाई बताएगी, वह चाहे कितनी ही अप्रिय क्यो न हो। वह पब्लिक के बीच सस्ती लोकप्रियता पाने, उसे फुसलाने तथा उसकी खुशामद करने की कोशिश नही करेगी। वह नही डरेगी और इन लोगों के सम्मुख खुलकर बताएगी कि वह उनके बारे मे क्या सोचती है।

जब इन्दिरा और फीरोज खूब सजे-सॅवरे हाल मे दाखिल हुए, तो वह जय-जयकार से गूँज उठा। लगता था कि इस जय-जयकार का कभी अन्त नही होगा। हाल मे बागानो तथा खानो के मामूली मजदूर नही थे, उसमे स्थानीय भारतीय बुर्जुआ वर्ग के सम्पन्न लोग थे।

उन्हे आकर्षक भारतीय युवती, कुलीन ब्राह्मण परिवार की प्रतिनिधि, सम्भवत' आग्ल प्रवृत्ति वाली भद्र नवयुवती की उपस्थिति भा रही थी और उन्हें अपने को उदारपंथी भद्रजन महसूस करते हुए सन्तोष अनुभव हो रहा था, जो अपने देश के स्वतन्त्रता अभियान के साथ सहानुभूति रखते हैं। उन्हे लगता था कि अपने को देश-भक्त समझने तथा अपने से सन्तुष्ट होने का उन्हें पूरा-पूरा अधिकार है। इस युवती से क्या सुनने की उन्हें प्रतीक्षा थी ? भारतीय 'स्वर्ण युग' की सास्कृतिक थाती गॅवाने के सम्बन्ध में दु.ख की अभिव्यक्ति, ब्रिटिश ससद से अपीलें, महान् ब्रिटिश साम्राज्य की शक्ति तथा महिमा की व्याख्या...और भी अनेक विषयों की चर्चा सुनने को वे तैयार थे, सिवाय उन बातों के, जिन्हें उन्हें सुनना पड़ा।

"अफ्रीकियो को शोषित तथा उत्पीड़ित करने वाले अग्रेजों के साथ सहयोग करना शर्मनाक और विवेकहीन व्यवहार है," इन्दिरा ने दो-टूक ऐलान किया। आपको इस देश के मूलवासियों के साथ आपसी समझ हासिल करनी चाहिए

आज नही, लेकिन दस-बीस साल बीतने पर वे अपने देश के मालिक बनेंगे और तब आपको शर्म आएगी।"[1]

हाल में आश्चर्य, नाराजगी, भय की लहर दौडी। सभा के प्रबन्धक घबरा गए, उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या हो रहा है।

"आपके हाथों में भारी पूँजी जमा हे, लेकिन आप उसे जिन्दगी की खुशियॉं लूटने के लिए फूंक रहे हैं," इन्दिरा ने नि:संकोच अपना भाषण जारी रखा—"इसके बजाय कि अपने देश के स्वतन्त्रता आन्दोलन अथवा दक्षिणी अफ्रीका के उत्पीडित जन की सहायता करें, जेसा कि कभी महात्मा गॉंधी ने करने की कोशिश की थी, जब वह इस देश मे रहते थे।"

युवा अतिथि के भाषण मे व्यक्त किए गए विचार राजद्रोह के समान थे, जिसके लिए ब्रिटिश शासक कडी सजा दे सकते थे, इसलिए हॉल मे इकट्ठे हुए लोग चुपचाप वहॉं से खिसक गए, अपने-अपने घर चले गए ताकि इस खतरनाक मेहमान से दूर का भी वास्ता न रखे।

फीरोज भी, जो इन्दिरा की स्पष्टवादिता का आदी हो चुका था, इतने तीक्ष्ण भाषण से विस्मित हो गया।

सौभाग्यवश, कोई कठिनाई पैदा नही हुई, समुद्री-यात्रा जारी रही और मार्च 1941 मे उनके जहाज ने मुम्बई बन्दरगाह मे लगर डाला। पश्चिमी हिन्दुस्तान का सबसे बडा बन्दरगाह मुम्बई स्वतन्त्रता आन्दोलन का एक मुख्य केन्द्र था। सन् 1885 मे मुम्बई मे ही कांग्रेस पार्टी का प्रथम अधिवेशन हुआ था।

मुम्बई का वातावरण तनावपूर्ण था। हर जगह आम गिरफ्तारियो और छापों का दौर चल रहा था। पिता और अनेक मित्र जेलो मे बन्द थे। कड़ी धूप पड़ रही थी, फिर भी मातृभूमि की सॉंसें दिल को स्पन्दित कर रही थी। लोग, मकान, पेड और आकाश जाने-पहचाने थे, लेकिन उनका रूप-रंग छः वर्ष पहले जैसा नहीं लगता था, जब वह यूरोप के लिए रवाना हुई थी। आयु बढ़ने के साथ घर और सडकें, प्रकृति का रूप-रंग भिन्न दिखाई देते हैं, वे बचपन जैसे नही रह जाते।

फिर भी इन्दिरा को सुख का अनुभव हुआ—वह अपने देश मे वापस लौट आई है, प्रियतम मित्र साथ है, स्वय वह युवा, शक्ति-स्फूर्ति तथा सघर्ष की इच्छा से परिपूर्ण है, उसका हृदय मातृभूमि, ढेरों कष्ट भोग रही उसकी जनता के प्रति प्रेम की भावना से ओतप्रोत है।

6

पत्नी, बन्दी, माँ

ज्यों ही इन्दिरा जहाज से तट पर उतरी, उसे महात्मा गाँधी का तार सौंपा गया। उन्होंने उसे बिना किसी देरी के, तुरन्त अपने पास आने के लिए कहा था।

बीते वर्षों मे गाँधीजी कम बदले थे, हाँ, वह और अधिक कृशकाय हो गए थे ओर उनके सभी दाँत उखड़ गए। सत्तरवाँ वर्ष चल रहा था।

अधिकाश समय वह अहमदाबाद के निकट साबरमती नदी के तट पर अपने आश्रम में बिताते थे। नाटे कद का यह कृशकाय, सीधा-सादा व्यक्ति, जिसके पास न कोई पद, न कोई पदवी और न कोई पूँजी ही थी, काग्रेस पार्टी का सैद्धान्तिक निर्देशन कर रहा था और कोटि-कोटि जनगण के आन्दोलन की दिशा निर्धारित कर रहा था।

हिन्दुस्तान का ब्रिटिश वाइसराय नहीं, जिसके हाथों मे सेना, पुलिस तथा जेलें थी, बल्कि महात्मा गाँधी करोडो भारतवासियो के मन-मस्तिष्क के वास्तविक स्वामी थे, परन्तु अपने इस अधिकार का वह बड़ी सावधानी से उपयोग करते थे, जनता मे हिंसा की भावना जाग्रत न करने की चेष्टा करते थे। उनके लिए सघर्ष का लक्ष्य नहीं, बल्कि उसकी प्राप्ति की विधि, उसकी ओर बढने का उदात्त, आत्मत्यागपूर्ण मार्ग सर्वोपरि था। गाँधीजी के मतानुसार, भारतवासियो का मनोबल बढाने, आत्मबलिदान की भावना को साधारण व्यक्ति के आचरण का सामान्य नियम बनाने का अर्थ विजय प्राप्त करना था। प्रत्येक व्यक्ति द्वारा आन्तरिक आत्मिक स्वतन्त्रता की प्राप्ति को वह समूचे राष्ट्र की स्वतन्त्रता की प्राप्ति गारण्टी समझते थे। अगर हर व्यक्ति मन मारकर हिंसा को बर्दाश्त करने की गुलामो जैसी मनोवृत्ति से छुटकारा पा जाए, तो वह आजाद हो जाएगा। यदि अधिकाश भारतवासी इसमें सफल होंगे, तो हिन्दुस्तान आजाद देश बन जाएगा।

गाँधीजी ने बडे स्नेहपूर्वक इन्दिरा की आवभगत की। वह समझ रही थी कि यह भेट आयोजित करने मे पिता का हाथ रहा होगा। वह स्वय जेल में थे और उसे हिन्दुस्तान की हाल की घटनाओं से अवगत नहीं करा सकते तथा जरूरी सलाहें नहीं दे सकते थे उन्होंने गाँधीजी से ऐसा करने का अनुरोध किया होगा यह

सर्वथा स्वाभाविक भी था क्योंकि गॉधीजी ने हमेशा नेहरू-परिवार के सदस्यों के मामलों मे सक्रिय शिरकत की।

महात्मा गॉधी के साथ बातचीत से स्पष्ट था कि वह अपने सिद्धान्तो पर अटल थे। युद्ध की जटिल परिस्थितियों मे उन्होंने राजनीति के महत्त्वपूर्ण मसलों का जनसाधारण की भावनाओ से, बुद्धि-संगत दृष्टिकोणो का किसान वर्ग की पुरानी मान्यताओ से समन्वयन करने के अपने प्रयास नहीं छोडे। इन्दिरा की नजरों मे वह आदर्शवादी सत्यनिष्ठा के मूर्तरूप थे। मगर सवाल यह उठता था—क्या सरकार के घोर अत्याचार, पुलिस आतक, भुखमरी तथा गरीबी के कठोर यथार्थ की परिस्थितियो मे यह आकर्षक आदर्श तथा नाजुक सत्यनिष्ठा टिक पाएगी अथवा नहीं ?

इन्दिरा समझती थी कि जन-नेता के रूप मे महात्मा गाँधी की प्रतिष्ठा निर्विवाद है। वह देश के इतिहास मे विलक्षण भूमिका अदा कर रहे है, लेकिन उनकी आज्ञा का पालन करने वाली जनता का महत्त्व स्वयं गॉधीजी तथा उनकी सत्यनिष्ठा से अधिक है।

"जनता मुख्य नायक थी और उसकी पीठ के पीछे उसे आगे धकेल रही महान् ऐतिहासिक शक्तियॉ खडी थी, जो उसे अपने नेता के आह्वान स्वीकार करने के लिए तैयार करती थी," इन्दिरा के पिता ने लिखा। "अनुकूल ऐतिहासिक परिस्थिति तथा इन राजनीतिक और सामाजिक शक्तियों के बिना कोई भी नेता अथवा प्रचारक जनता को आन्दोलित करने मे कभी सफल नहीं हुए होते। जन-नेता के रूप मे गॉधीजी का प्रमुख गुण यह था कि वह हमेशा किसी अन्तर्ज्ञान से जनता की नब्ज की गति को महसूस करते थे और जानते थे कि आन्दोलन तथा कार्रवाई के लिए परिस्थितियॉ कब परिपक्व हो जाती थीं।"

अदूरदर्शी ब्रिटिश सरकार समझती है कि हिन्दुस्तान मे 'जनता की हलचल' के लिए गाधीजी, पिता और दूसरे राजनीतिक कार्यकर्ता दोषी है, जबकि वास्तव में वह उनका नहीं, बल्कि इतिहास का 'दोष' है और इतिहास की मुख्य शक्ति भारतीय जनता है। यह विचार इन्दिरा के दिमाग मे उसके पिता ने रोपा था, कुछ ऐसे ही विचार प्रायः कृष्ण मेनन भी व्यक्त करते थे, जब इन्दिरा और फीरोज उनके लन्दन के फ्लैट में बैठकर चायपान और बातचीत किया करते थे।

सभी असली महापुरुषों की तरह महात्मा गॉधी हर व्यक्ति के साथ सदा आत्मिक सम्पर्क स्थापित करते थे, उसके व्यक्तिगत मामलों के बारे मे बातचीत करते थे, उसे ढाढस देते थे, सहानुभूति जताते थे, सात्वना और सलाह देते थे।

इन्दिरा के साथ बातचीत करते हुए महात्माजी ने फीरोज की भी चर्चा की। वह उसे व्यक्तिगत रूप से जानते थे। सन् 1931 में सरकारविरोधी कार्रवाइयो के लिए फीरोज को एक वर्ष जेल की सजा दिए जाने से पहले फीरोज की माँ गॉधीजी के पास पहुँची और उनसे अनुरोध किया कि वह नागरिक असहयोग आन्दोलन में भाग लेने से फीरोज को मना करें क्योंकि उसे शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए

ध्यान देने की बात है कि माँ की भावनाओं को अच्छी तरह समझने के बावजूद गाँधीजी ने यह अनुरोध पूरा करने का वचन नही दिया और कुछ प्रशसापूर्ण शब्द कहे, जिनसे फीरोज की माँ को तसल्ली नही मिली—"अगर मेरे साथ मिलकर फीरोज जैसे सात नौजवान काम करते, तो मै शायद सात दिनो के भीतर अपने देश को आजाद करा देता। भावी भारत मे कोई किसी से शिक्षा का डिप्लोमा नहीं पूछेगा, आपके बेटे से यही पूछा जाएगा कि देश-सेवा के लिए उसे कितनी बार जेल की सजा दी गई।"

इन्दिरा और फीरोज के विवाह की सम्भावना की खबर गाँधीजी को मिल चुकी थी। इस तरह का विवाह हिन्दू धर्म के सर्वथा प्रतिकूल था। निचली जात के और विशेष रूप से विधर्मी व्यक्ति से ब्राह्मण कन्या का विवाह नही हो सकता था। गाँधीजी हिन्दू धर्म के कायल थे, लेकिन उन्होंने इन्दिरा को उलाहना नहीं दिया। वह धर्म के भाष्यकार और व्यावहारिक राजनीतिज्ञ थे। गाँधीजी ने हिन्दू धर्म की रूढियो के मूल सुधार का बीड़ा उठाया, जात-पाँत की व्यवस्था का कड़ा विरोध किया और धार्मिक व साम्प्रदायिक असहिष्णुता के विरुद्ध सघर्ष किया।

देश के सर्वाधिक लोकप्रिय राजनीतिक नेता नेहरू की पुत्री का अन्य धार्मिक सम्प्रदाय के युवक के साथ होने वाला विवाह नये जमाने का लक्षण, आने वाले परिवर्तनो, उस समय का प्रतीक था, जब हिन्दुस्तान आजाद होकर अपने को धर्मनिरपेक्ष राज्य घोषित करेगा।

परन्तु यह सब कुछ तो भविष्य की बात थी। फिलहाल हिन्दुस्तान, जो राजनीतिक आत्मनिर्णय के अधिकार से वंचित था, उपनिवेशवादियो के आग्रह पर स्वाधीनता की अपनी आकांक्षा को छोडने तथा अपने जन-साधन तथा आर्थिक साधन पराये युद्ध में लगाने के लिए बाध्य था, अपने उत्पीडक—ब्रिटिश साम्राज्य—की विजय के लिए लड़ने के लिए मजबूर था।

हिन्दुस्तान की जनता क्षुब्ध होकर विरोध कर रही थी। युद्धविरोधी और स्वतन्त्रता आन्दोलन से ग्रेट ब्रिटेन की सैनिक-रणनीतिक योजनाओ के लिए खतरा पैदा हो रहा था।

महात्मा गाँधी कहते थे कि उनकी पूरी सहानुभूति फासिज्म के विरुद्ध संघर्षरत राष्ट्रों के साथ है, परन्तु अहिसा के पुजारी के रूप में वह हिटलरविरोधी शक्तियों को केवल एक चीज भेंट कर सकते थे—अपना पूर्ण और निर्विवाद नैतिक समर्थन।

युद्ध की विभीषिका से भारतीय जननेता संत्रस्त थे। उन्होंने कहा—"मुझे कोई सात्वना नहीं मिल रही है। अपनी आत्मा की गहराइयों में मैं यह अन्याय कभी नही मानूँगा, जिसे भगवान् ने नहीं रोका। मेरी अहिसा लगभग पूरी तरह अक्षम लगती है...।"

"हजारों हजार लोग दूसरे लोगो की हत्या करने के लिए अपने को राजी करने क्यों देते हैं अथवा युद्ध में मरने या घायल होने का जोखिम जान-बूझकर उठाने को क्यों तैयार होते हैं ? गाँधीजी ने व्यथित होते हुए पूछा 'मगर सबसे सक्रिय

शान्तिवादियो के बीच ऐसे लोग इतने कम क्यो है, जो शान्ति के हेतु अपने प्राण उत्सर्ग करने को तैयार हों ?"

इन्दिरा ने युद्ध की समस्या के प्रति महात्मा गॉधी का दृष्टिकोण समझने की कोशिश की। उनका आधारिक पक्ष आकर्षक तथा मानवतावादी था। पर इसके साथ ही उसे नेता के रवैये का निराशाजनक, अशक्त स्वरूप, अव्यावहारिकता, बदी की शक्तियो के सामने ईसाई आत्मबलिदान की भावना गवारा नहीं थी। गाँधीजी ने स्वय यह बात मानी, दु:खी होकर कहा—"अपनी नीति का मैं अकेला पक्षपोषक हूँ। यह अभी देखना है कि इस एकाकी मार्ग में मेरे सहगामी हैं अथवा नही...।"

इलाहाबाद मे इन्दिरा ने सिर्फ कुछेक दिन बिताए। शहर में कडी धूप पड़ रही थी। इन्दिरा इसकी अभ्यस्त नही रह गई थी और उसका अंग-अंग टूट रहा था।

फीरोज और इन्दिरा ने स्वदेश लौटते ही शादी करने का फैसला किया था, लेकिन उसे स्थगित करना पड़ा। इन्दिरा अपने पिता से इतनी प्रभावित थी कि वह यह बिलकुल असम्भव मानती थी कि उसके जीवन की इतनी महत्त्वपूर्ण घटना पिता की अनुपस्थिति में घटे।

कुछ व्यक्तियो से भेट करके और घर-गृहस्थी सम्बन्धी कुछ काम करके वह देहरादून के लिए रवाना हुई, जिसकी जेल में हिन्दुस्तान रक्षा कानून के उल्लघन के आरोप में जवाहरलाल नेहरू कैद थे। जेलखाने के नजदीक एक कस्बे मे इन्दिरा ने किराये पर फ्लैट ले लिया और पिता के साथ भेट की इजाजत पाने के लिए कोशिश करने लगी।

नेहरू को न जाने कितने जेलों में बन्द रखा गया। देहरादून जेल मे तो वह तीन बार बन्द हो चुके थे। वहॉ का हर पत्थर, जेल की दीवार की हर खरोच उनकी जानी-पहचानी थी।

अबकी बार उन्हें गोशाला में टिकाया गया, जिसे कैद तनहाई की कोठरी बना दिया गया था। छोटा-सा अहाता पहले तीन मीटर ऊँची दीवार से घिरा था और जवाहरलाल नेहरू पर्वत शिखरों का दृश्य निहार सकते थे। अब वह इस सम्भावना से भी वचित हो गए, क्योकि दीवारों को डेढ मीटर और ऊँचा उठा दिया गया था और केवल कुछेक पेड़ों की फुनगियॉ तथा आकाश नजर आता था।

हिन्दुस्तान मे तथा उसके बाहर, ब्रिटेन मे भी प्रगतिशील बुद्धिजीवी तबकों तथा राजनीतिक विपक्षी क्षेत्रों में भी नेहरू की बडी लोकप्रियता को ध्यान में रखते हुए उपनिवेशी अधिकारियों ने ब्रिटिश सरकार के प्रति उनके कट्टर रुख को नरम करने की हरचंद कोशिश की। हिन्दुस्तान के ब्रिटिश अधिकारी पाखण्डपूर्ण ढग से उनके प्रति सम्मान प्रकट करते थे, उनकी 'मानवीय चिन्ता' करने का दिखावा करते थे। उपनिवेशवादी सरकार ने हिन्दुस्तान के गवर्नन-जनरल को 'साधारण' अपराधियो तथा नेहरू और गाँधी जैसे भारतीय नेताओं के की परिस्थितियों में अन्तर करने की हिदायत दी थी

इस हिदायत के आधार पर जेल अधिकारियो ने जवाहरलाल नेहरू को समय-समय पर बेटी से मिलने की इजाजत दी।

इन्दिरा ने अपने पिता को अस्वस्थ और बहुत दुबला-पतला पाया। मुलाकात की खुशी भी उनकी धँसी हुई ऑखो मे झलकते आहत मन को छुपा नही सकी। कैद तनहाई, दुनिया से अलग-थलग होने का उनकी मानसिक तथा शारीरिक स्थिति पर गहरा असर पडा। इसलिए नेहरू के लिए इन्दिरा का देहरादून पहुँचना बहुत आवश्यक था। जवाहरलाल के विशाल हृदय ने जीवन की स्निग्धता अनुभव की और मस्तिष्क को काम के लिए नयी प्रेरणा मिली।

सन् 1941 के जून महीने के अन्त मे पिता से मिलने आई इन्दिरा ने उन्हे सोवियत संघ पर जर्मनी के विश्वासघातपूर्ण आक्रमण की सूचना दी।

इस घटना ने विश्व मे शक्तियों का सन्तुलन बुनियादी तौर पर बदल दिया। युद्ध का स्वरूप भी बदल गया—वह भूक्षेत्रों तथा विश्व की सम्पदा के पुनर्विभाजन के लिए साम्राज्यवादी राज्यो की मुठभेड के रूप में शुरू हुआ था, लेकिन अब उसने फासिज्मविरोधी, न्यायसंगत मुक्ति युद्ध और सोवियत संघ के लिए महान् देशभक्तिपूर्ण युद्ध का रूप धारण कर लिया था।

जापान के विरुद्ध युद्ध मे कांग्रेस के नेताओ का समर्थन पाने की आशा करते हुए हिन्दुस्तान के वाइसराय ने 3 दिसम्बर, 1941 को गॉधीजी के सत्याग्रह आन्दोलन मे शामिल लोगो की आम रिहाई की घोषणा की।

इन्दिरा की खुशी का वार-पार न रहा—पिता मुक्त हुए। लेकिन यह कितनी देर की खुशी थी ? वाइसराय के इस निर्णय से चर्चिल सहमत नहीं हुए। इन्होने वाइसराय को तार भेजा—"यह मालूम होने पर मैं दंग रह गया कि सत्याग्रहियों को जेलो से रिहा करने के मामले में आप इतनी दूर बढ़े। जैसा कि आपको ज्ञात ही है, मेरी मान्यता हमेशा यह रही कि नेहरू जैसे व्यक्ति के साथ फौजदारी के मुजरिम की तरह नहीं, बल्कि राजनीतिक बन्दी की तरह बर्ताव करना चाहिए और उनके प्रति व्यवहार मे हर प्रकार की उदारता का मैने स्वागत किया था। लेकिन इस आम रिहाई के सिलसिले मे मेरा ख्याल है कि यह ऐसे क्षण में किया गया आत्मसमर्पण है, जब हमे सफलता प्राप्त हो रही है। इसमे कोई शक नही कि दया के रूप में इन कैदियों की रिहाई को गॉधी की पार्टी की विजय घोषित किया जाएगा।"[1]

चर्चिल का कहना गलत था—उस समय युद्ध के मोर्चो पर अंग्रेजो को कोई सफलता प्राप्त नहीं हो रही थी। कुछ महीने बाद जापानी फौज को सिगापुर और फिर बर्मा की राजधानी रगून तथा हागकाग पर कब्जा करना था, जापानी नौसैनिक बेडे को बगाल की खाड़ी में दाखिल होना था उधर यूरोप में जर्मन हवाई जहाज लन्दन पर बम गिरा रहे थे और उत्तरी सागरों तथा अटलांटिक मे ब्रिटिश जहाज

डुबोये जा रहे थे।

न ही रिहाई 'दया और करुणा' की कार्रवाई थी। यह खूब सोच-विचारकर उठाया गया कदम, हिन्दुस्तान की सबसे बडी पार्टी पर, कांग्रेस पर प्रभाव डालने का एक और प्रयत्न था, जिसका युद्ध के प्रति रवैया इंग्लैण्ड के प्रतिकूल था।

पिता के साथ इन्दिरा बारडोली चली गई, जहाँ युद्ध के प्रति रवैये के सवाल पर काग्रेस के नेताओ की असाधारण बैठक बुलाई गई थी।

स्पष्ट था कि ब्रिटिश सरकार ने फासिज्म से घृणा करने वाले ईमानदार लोगो के मानस को प्रभावित करना चाहा, लेकिन इस तथ्य को उसने नजरदाज किया कि भारतबासियों को सबसे अधिक कष्ट ब्रिटिश साम्राज्यवाद द्वारा अत्याचार तथा उत्पीडन के कारण उठाने पडे, जिसका जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में, फासिज्म के साथ खून का रिश्ता था।

इन्दिरा अपने पिता की हमख्याल थी, वह विश्वास करना चाहती थी कि युद्ध के बाद नया, न्यायसंगत ससार बनाया जा सकेगा, जो साम्राज्यवाद और फासिज्म से मुक्त होगा, ऐसा संसार, जिसमें हिन्दुस्तान स्वतन्त्र, लोकतान्त्रिक और समृद्ध राज्य बन सकेगा।

इसीलिए पिता ब्रिटिश सरकार से आग्रह कर रहे थे कि युद्ध के लक्ष्यों का स्पष्टीकरण किया जाए। वह कहते थे कि यदि ब्रिटेन युद्ध के बाद हिन्दुस्तान को स्वाधीनता प्रदान करने का वचन देगा, तो भारतीय जनता के रूप मे उसे वफादार जुझारू सहयोगी प्राप्त होगा, लेकिन उपनिवेशवादी वचनबद्ध होने को तैयार नहीं थे।

सोवियत सघ के युद्ध में शामिल होने पर, जिसने शुरू से ही उसे मुक्ति युद्ध घोषित किया, ग्रेट ब्रिटेन तथा संयुक्त राज्य अमरीका को भी उसका अनुसरण करना पडा। इस प्रश्न को लेकर और अधिक टाल-मटोल करना असम्भव था, क्योंकि सघर्ष राष्ट्रों के दिल जीतने के लिए भी चल रहा था, जिनके फासिज्मविरोधी संघर्ष में योगदान पर विजय की तिथि तथा उसके परिणाम निर्भर करते थे।

14 अगस्त को आर्जेटिया बन्दरगाह में तैनात रणपोत में चर्चिल तथा अमरीकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने अटलाटिक चार्टर पर हस्ताक्षर किए। आखिरकार उसमें युद्ध के लक्ष्यों की घोषणा की गई, जिसके फलस्वरूप इन दो राज्यों के प्रति विश्व जनमत की सहानुभूति पैदा होनी चाहिए थी। चार्टर में कहा गया कि ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमरीका "अपनी इच्छा के अनुरूप शासन-प्रणाली चुनने के सभी राष्ट्रो के अधिकार का सम्मान करते हैं, वे उन राष्ट्रों के सम्प्रभु अधिकारों तथा स्वशासन की पुनर्स्थापना के लिए प्रयत्नशील हैं, जो बलपूर्वक इससे वंचित कर दिए गए थे।"

बहुत अच्छा! यही तो हिन्दुस्तान भी चाहता है।

मगर फिर यह जानकर भारतीय देश-भक्त पूरी तरह निराश हो गए कि चर्चिल ने वस्तुतः इस चार्टर को ठुकरा दिया। उन्होंने कहा कि अटलांटिक चार्टर हिन्दुस्तान पर लागू नहीं हो सकता और युद्धकालीन उसे स्वावलम्बी सम्प्रभु राज्य

नही मानता। ब्रिटेन के प्रधानमन्त्री ने चार्टर के प्रति अपने दृष्टिकोण का स्पष्टीकरण करते हुए उसके अस्थायी स्वरूप की चर्चा की। चर्चिल ने कहा कि यह युद्ध के लक्ष्यो के बारे मे अस्थायी एव आंशिक वक्तव्य है, जिसका प्रयोजन सभी देशो को हमारे लक्ष्यों के न्यायसगत स्वरूप मे विश्वास दिलाना है, न कि कोई ऐसी पूर्ण योजना है, जिसे युद्ध के बाद हमें अमल मे लाना ही होगा।

बारडोली में इन्दिरा ने देखा कि चर्चिल के पाखण्ड से वे अल्पसख्यक कांग्रेसी नेता भी क्षुब्ध हो उठे, जो युद्ध के समय हिन्दुस्तान में आम सरकारविरोधी प्रदर्शनो से ब्रिटेन की स्थिति को शिथिल करने के विरुद्ध थे।

काग्रेस की कार्य-समिति ने हिन्दुस्तान की स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष जारी रखने के पार्टी के दृढ संकल्प की पुष्टि की। जवाहरलाल नेहरू के सुझाव पर विशेष प्रस्ताव पास किया गया, जिसमें कहा गया कि सोवियत संघ ने हमेशा स्पष्ट मानवीय, सास्कृतिक तथा सामाजिक मूल्यों की रक्षा की है, जो मानव-जाति के विकास तथा प्रगति के लिए अत्यधिक महत्त्व रखते है। कार्य-समिति समझती है कि अगर विनाशकारी युद्ध के परिणामस्वरूप ये प्रयत्न तथा उपलब्धियॉ नष्ट की जाएँगी, तो यह त्रासदी होगी। नेहरूजी ने फासिज्म के विरुद्ध, अपने देश तथा आजादी की खातिर सोवियत लोगों के वीरतापूर्ण संघर्ष की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

इन्दिरा के पिता आजाद थे और लगता था कि इन्दिरा और फीरोज की शादी का समय आ गया है। मगर वही हुआ, जिसकी जवाहरलाल को सबसे अधिक आशंका थी—इन्दिरा और फीरोज की सगाई और उनके भावी विवाह के समाचार ने देश के कोने-कोने में फैलकर विरोध की लहर पैदा की। कट्टर हिन्दुओ ने आग-बबूला होकर किसी भी कीमत पर 'धर्म का अपमान' रोकने की धमकी दी।

आनन्द भवन मे रोज सैकड़ों पत्र और तार आते थे। उनमे उलाहना दिया जाता था, अनुनय किया जाता था, नेहरू परिवार पर परम्परा के त्याग का तथा अधर्मी होने का आरोप लगाया जाता था और कुछ पत्रो मे तो सीधी धमकियाँ भी दी जाती थी।

स्पष्ट था कि उसमे नेहरू के राजनीतिक विरोधियों, कट्टर धार्मिक दलों का हाथ था, जिन्हे जवाहरलाल नेहरू के आमूल परिवर्तनवादी विचार और लोकतान्त्रिक धर्मनिरपेक्ष आदर्श फूटी आँखों नही सुहाते थे।

"मुझे लगता है कि सभी लोग मेरे विवाह के विरुद्ध हैं," इन्दिरा ने अपने पिता से कहा।

इस छोटे सकट का समाधान महात्मा गाँधी ने कर दिया। जवाहरलाल और इन्दिरा को उनकी विशाल हृदयता और उदारता का नया प्रमाण मिला। राजनीतिक प्रश्नों पर नेहरू और गॉधी के बीच मतभेद के बावजूद गाँधीजी ने अपने निकटतम सहयोगी के परिवार की खुशहाली का बराबर ख्याल रखा। भावनाओ का तूफान उस समय चरम-सीमा पर पहुँचा, जब गॉधीजी ने इन्दिरा और फीरोज की पैरवी में अपनी आवाज उठाई

उन्होने ऐलान किया—"मुझे कई कुत्सित और अपमानजनक पत्र मिले, जिनमे मॉग की जाती है कि इन्दिरा नेहरू और फीरोज गाँधी की सगाई के सम्बन्ध मे मै अपने विचार व्यक्त करूँ। इन्सान के रूप में कोई भी फीरोज की भर्त्सना नही करता है। उनके ख्याल में उसका दोष यही है कि वह पारसी खानदान का है। कई वर्षो से फीरोज गॉधी नेहरू परिवार का मित्र रहा है। यूरोप में इन्दिरा की मॉ की बीमारी के समय उसने उनकी बड़ी चिन्ता की। स्वभावतया उनके बीच स्नेह की भावना पैदा हुई। उनकी सगाई का अनुमोदन न करना क्रूरता का परिचय देने के बराबर होगा।"[1]

बहुत-से भारतीय समाचार-पत्रों ने राष्ट्र-पिता का यह वक्तव्य प्रकाशित किया। गॉधीजी की प्रतिष्ठा का लोकमानस पर प्रभाव पड़ा—नेहरू परिवार के पते पर क्रोध-भरे पत्रो की धारा घट गई, कट्टरपंथियों का पारा उतर गया। 26 मार्च, 1942 को आनन्द भवन में विवाह सम्पन्न हुआ।

पाणि-ग्रहण का उपयुक्त सस्कार चुनना आसान नहीं था, क्योंकि वर और वधू भिन्न धार्मिक सम्प्रदायो के लोग थे।

किसी ने विवेकपूर्ण परामर्श दिया कि हिन्दू धर्म की उत्पत्ति से पूर्व प्रचलित प्राचीन विवाह-सस्कार का उपयोग किया जाए। उसका उल्लेख वेदो मे है।

दोनों पक्षो की ओर से विवाह में सैकडों काग्रेसी कार्यकर्ता, विभिन्न हैसियत के लोग इकट्ठे हुए।

आनन्द भवन के पार्क में शामियाने ताने गए। मुख्य मण्डप में अग्निकुण्ड लगा था। दुलहन गुलाबी साड़ी पहने थी, जिसका कपड़ा पिता ने जेल की कोठरी मे बुना था। जब सभी तैयारियॉ पूरी हो चुकीं, पिता इन्दिरा के पास आए और उसका हाथ अपने हाथ मे लेकर बडे शामियाने मे ले गए, जहॉ अपने रिश्तेदारो तथा दोस्तों से घिरा फीरोज खडा था। जवाहरलाल नेहरू ने इन्दिरा का हाथ फीरोज के हाथ मे सौपा, अपनी बुद्धिमान आँखों से इन्दिरा की ओर देखा और एक तरफ हट गए। वर-वधू ने सात बार अग्निकुण्ड की परिक्रमा की और एक-दूसरे के प्रति निष्ठा की शपथ ग्रहण की।

इन्दिरा और फीरोज ने अपना मधु मास कश्मीर में बिताया। साफ हवा, सेबो और आडुओ के बाग, उनके ऊपर फैली पहाडी चरागाहें, चीड़ वृक्षो के नीले वन, श्वेत हिमखण्ड और पहाडो के ऊपर नीलाकाश। हिमालय के रंग गतिशील और चिर परिवर्तनशील है। पहाडो की ढलानों पर नाचती हुई हल्की बैंगनी परछाइयाँ गहराती है और सहसा अरुणाभ सुनहरी छटा बिखेर देती है।

सौन्दर्य और सुख की आनन्दमय भावना में भरा समय कितनी तेजी से बीत जाता है।

---

1 I Gandhi, op cit.

कश्मीर, धन्य हो, कश्मीर ! कितना दिल करता है कि सारा जीवन तुम्हारी ही गोद में गुजरे !

मगर इलाहाबाद की चिलचिलाती धूप में लौटने का समय आ गया था। इन्दिरा पिता के स्वास्थ्य के लिए बहुत चिन्तित थी। उनकी शारीरिक और मानसिक हालत पर कारावास का बुरा असर पडा, वह अस्वस्थ मालूम पडते थे और उनकी शक्ति क्षीण हो रही थी। इतना ही नही, देश मे राजनीतिक अवनति की अवस्था से वह खिन्न और असन्तुष्ट रहते थे। महात्मा गाधी ने व्यक्तिगत सत्याग्रह का जो सुझाव दिया, वह भी उन्हें ठीक नही जँचता था। जवाहरलाल नेहरू समझते थे कि जनता का सघर्षशील उत्साह बहाल करने, आजादी की खातिर अन्तिम निर्णायक संघर्ष के लिए उसे आन्दोलित करने के लिए साहसिक कदम उठाए जाने चाहिए थे।

"कोई बडा काम शुरू करने से पहले शक्ति बहाल करना, साफ हवा मे जी-भर साँस लेना चाहिए," इन्दिरा ने अनुरोध किया।

उसके अनुनय-विनय का असर हुआ और पिता के साथ वे पंजाब के उत्तर मे कुलू घाटी के लिए रवाना हुए, जिसकी सैर करने का सपना दोनों देखते थे।

चट्टानों से घिरी सँकरी सड़क पर चलते हुए वे गंतव्य स्थान पर पहुँचे। यह व्यास नदी की घाटी थी, गुलाबों की सुगन्ध तथा बर्फ, घास और सनोबर वृक्षो की महक से सुवासित स्थान, जहाँ पौराणिक कथा के अनुसार महर्षि व्यास ने ताड़ के पत्तों पर महाभारत के लगभग एक लाख श्लोक लिखकर अपने पौत्रों के पराक्रमो का वृत्तान्त लिपिबद्ध किया था। कुलू घाटी में रेरिख कुटुम्ब का 'आध्यात्मिक राज्य' अवस्थित था, जिसके संस्कृति एव शान्ति के ध्वज पर श्वेत पृष्ठभूमि पर लाल चक्र अकित था।

खिलते गुलाबों की वादी के ऊपर टीले पर बेलो से ढँका एक दुमजिला मकान खडा है। उसके निवासी रूसी हैं। वे स्थानीय बोली बोलते हैं, स्थानीय लोगो से घुल-मिल गए है, अति सुन्दर चित्र बनाते है, गीत और आख्यान नोट करते है, पुराकथाओं तथा धार्मिक विश्वासो का अध्ययन करते हैं, सौन्दर्य तथा सच्चाई का बोध करने और अपने दैनन्दिन जीवन मे उनका समावेश करने में लोगों की सहायता करते हैं। यहाँ स्वस्थ मानस के लिए सर्वथा अनुकूल वातावरण है।

निकोलाई रेरिख को भारतवासी गुरु कहते थे। वह दूरस्थ हिमाच्छादित देश रूस से पधारे थे। आधे विश्व का भ्रमण करके, कारवाँ राहों पर हजारों किलोमीटर का फासला तय करके उन्होंने, मंगोलिया के लम्बे-चौड़े मैदानों, तिब्बत के पहाडो व खामोश गहरे खड्डों, हिन्दुस्तान के उष्ण वनों को पार किया और कुलू घाटी मे डेरा लगाया ताकि उसके निर्मल आकाश तले रहकर पृथ्वी पर शान्ति के राज के निर्माण में योग दें नेकी और मानवीयता की उदात्त भावनाओं का प्रचार प्रसार करें और

न्याय एवं सुख-कल्याण की विजय के हेतु जीवन के मार्ग पर मानव पीढियों का निर्देशन कर सके।

निकोलाई रेरिख के घर के पास एक और इमारत खड़ी है। यह सन् 1928 में स्थापित हिमालय अनुसंधान सस्थान है। जातिवर्णनविद्या, पुरातत्त्वविज्ञान, इतिहास, कला, भाषाशास्त्र, जीवविज्ञान, चिकित्साशास्त्र, वनस्पतिविज्ञान—इन सभी विषयों का इस सस्थान मे रेरिख परिवार के सदस्यो तथा उनके मित्रो द्वारा अध्ययन किया जाता था।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने निकोलाई रेरिख के कार्य को 'महान् मानवीय क्रियाकलाप' बताया था।

यहॉ आकर इन्दिरा ने जो कुछ देखा और सुना, उससे वह समझ गई कि रेरिख की मान्यताएँ व प्रवृत्तियाँ तोलस्तोय, गॉधी और ठाकुर के विचारों व भावनाओ से काफी हद तक मिलती-जुलती है। वह भी बदी तथा हिसा के दृढ विरोधी थे। रेरिख कहते थे कि वह राजनीतिज्ञ नही हैं, लेकिन विश्व-शान्ति का अपना ध्वज बुलन्द करते हुए, प्रसिद्ध 'शान्ति सन्धि' की घोषणा करते हुए वह राजनीति मे हस्तक्षेप करते थे। हालॉकि विश्व की सस्कृति और कला को वह तटस्थ मानते थे, मॉग करते थे कि उन्हे युद्ध से अछूता होना चाहिए, लेकिन साथ ही वह दुनिया में शान्ति के लिए सघर्ष के मेदान में उतरे, उन्होने मानव की सस्कृति को बचाने, मानव प्रतिभा के फलों को बनाए रखने, विश्व सभ्यता को सुरक्षित करने के लिए साहसपूर्वक आवाज बुलन्द की। क्या यह राजनीति नहीं है ?

लन्दन मे इन्दिरा ने युद्ध की पूर्ववेला मे प्रकाशित निकोलाई रेरिख का चिन्ताभाव से ओतप्रोत निबन्ध पढ़ा, जिसमे पखदार लोगो का गुणगान करते हुए उन्होने साथ ही आशंका भी प्रकट की—"लोगों ने पख धारण किए है ! आकाश की नीलिमा मे हवाई जहाज उडते है। क्या वे शुभ सन्देश लाते है ? या सर्वरोगहर औषधियॉ ? अथवा ज्ञान ? या फिर सहायता ? मगर यदि वे लाते है—बम ? या जानलेवा गैसें ? अथवा विनाश ? ये सुवाहन है अथवा कुवाहन ?

"क्या बम, गैसे, जन-हत्या स्वीकार्य है ? मानव-जाति का अपमान वैध हो सकता है ? जन-हत्या की अनुमति किसने दी है ? शान्तिपूर्ण मनुष्य कहीं अपना घर बना रहा है और उसी समय सागर पार के किसी देश मे उसके बच्चो की हत्या करने के लिए जहर और बम तैयार हो रहे है ? कौन जाने कि कुटिल योजनाएँ कहॉ बनाई जा रही हैं ? हत्या के षड्यन्त्र कहाँ रचे जा रहे है ? हमारी चेतना कितनी निष्ठुर बन चुकी है, अगर वह हत्या के दृश्य की आदी हो गई है ? प्राचीन रोम के कोलिजेयूम की तरह आज भी लोग मृत्युदण्ड का दृश्य देखने के लिए पैसे देने को तैयार है !

"किसी ने चाहा, आदेश दिया और विमान मौत और विनाश का कहर ढाएँगे और समाचार-पत्रों मे छोटे-छोटे अक्षरों में स्त्रियों तथा बच्चों की हत्या के बारे मे संक्षिप्त सूचनाएँ छपेंगी क्या ऐसे पखदार प्रहरी भविष्य के द्वारपाल हैं ?

फासिस्ट स्वस्तिक चिह्न वाले विमान रेरिख की मातृभूमि के ऊपर मौत और बर्बादी का कहर ढाते हुए मँडराने लगे।

शाम को रेरिख परिवार के लोग अपने अतिथियो के साथ रेडियोसेट के सामने बैठकर विभिन्न प्रसारण सुन रहे थे—रूस का हाल कैसा है ? दुखद निराशाजनक सूचनाएँ मिल रही थी। हिमालय के उस पार सोवियत लोगों का खून बह रहा था, शहरों व गाँवों के निवासियो के घर बर्बाद हो रहे थे, सांस्कृतिक स्मारक नष्ट हो रहे थे। दिल दर्द से फटा जा रहा था, इन्दिरा और जवाहरलाल का कलेजा पसीज उठता था। पृथ्वी के ऊपर जन-संहार की काली घटाएँ घिर आई। परन्तु उनमें से किसी को प्रकाश और जीवन की विजय मे सन्देह नही था।

रेरिख परिवार के साथ संसर्ग के अमूल्य क्षण गुजर रहे थे। निकोलाई के पुत्र स्व्यातोस्लाव ने जवाहरलाल का छवि-चित्र बनाने के वास्ते उन्हें थोड़े समय तक अपने सामने बैठने के लिए राजी कर लिया। छवि-चित्र बनकर तैयार हुआ—पैनी ऑखे, प्रेरणापूर्ण ध्यानमग्न मुखमण्डल।

रेरिख 'साम्राज्य' मे विचारों को अनोखी व्यापकता और मन को उन्मुक्तता प्राप्त होती थी। व्यास नदी के किनारे सैर-सपाटे, बाग में चायपान..गृहस्वामी के स्टूडियो मे उनके चमत्कारिक चित्रों के सामने सन्तोष और प्रेरणादायक वार्तालाप .. खाने की मेज पर, हिमालय सस्थान की प्रयोगशालाओ के सारगर्भित बातचीतों की अनन्त शृंखला...यह संसर्ग इन्दिरा के लिए अत्यन्त रोचक, ज्ञानवर्द्धक और आकर्षक था।

अपरिचित लोगों के बीच कितना आश्चर्यजनक सामीप्य स्थापित हो सकता है, जैसे कि पिता और इस विलक्षण रूसी चित्रकार के बीच ! कितने अधिक साझे हित, आदर्श और लक्ष्य उनके बीच आत्मीयता का सेतु बॉधते है।

कुलू घाटी—अमूल्य निधियाँ, अकूत सम्पदा, अपरिमित धन की खान है, सोने की खान अथवा नकदी का खजाना नही, बल्कि मानवीय बुद्धि, रचनात्मक प्रतिभा, सस्कृति, मानवीय मूल्यो का विशाल भण्डार है।

रेरिख के चित्र 'जोन ऑफ आर्क' से इन्दिरा की आँखें हटाये नही हटती थी। तो ऐसी थी जोन, उसके बाल-सपनों की रानी। रंगों और तूलिका के माध्यम से चित्रकार पराक्रम का बोध कराने, मानव के हृदय-स्पन्दन की प्रतीति कराने मे कैसे सफल होते है ? यह एक रहस्य है।

और यह चित्र 'विश्व सरक्षिका'। रेखाओं व रंगों का कैसा त्रुटिहीन मेल है इसमें। नीलाकाश और पर्वतों का नील-लोहित रंग दर्शक पर रागात्मक प्रभाव छोडता है, पृष्ठभूमि मे धूप-छाँह की विषम वर्ण-छटाएँ नाच रही हैं और असीम निस्तब्ध नीले विस्तार से निकली सुन्दर महिला पहाड़ी सरोवर के तट पर उतरती नजर आती है। हिमालय की सन्देशवाहिका बहुमूल्य मंजूषा हाथों में लिये चल रही है ।

'मानव विवेक विविध चादरें ओढ़े हुए है मगर उनके नीचे सौन्दर्य त्याग और

तपस्या का एकीभूत रूप छिपा रहता है," चित्रकार ने मधुर स्वर मे इन्दिरा को चित्र का वैचारिक विषय समझाया। "महिला को नये शिखर पर चढना है, स्वजन को शाश्वत मार्गो का ज्ञान कराना है।"

इन्दिरा को रोमांच हो आया, उसका दिल रेरिख के प्रति कृतज्ञता के भाव से भर गया। कला के गूढ रहस्यो का ज्ञान रखने वाले व्यक्ति को अपार सुख अनुभव होता होगा। चित्र के सौन्दर्य पर इन्दिरा मुग्ध हुई, उसकी सांकेतिक भाषा के अर्थपूर्ण सन्देश का उसे बोध होने लगा, हालाँकि यह अन्तर्ज्ञान के समान है, जिसकी व्याख्या करना असम्भव है, उसकी केवल सूक्ष्म अनुभूति होती है।

रेरिख के अद्भुत रूसी-भारतीय समुदाय मे पिता-पुत्री ने केवल एक सप्ताह बिताया, मगर इस अवधि मे उन्हे न जाने कितना ज्ञान प्राप्त हुआ, न जाने कितनी अनुभूतियाँ हुई, अज्ञात-अवोध ससार के न जाने कितने नये पक्ष दृष्टिगोचर हुए।

20 मई, 1942 को निकोलाई रेरिख ने अपनी डायरी में लिखा—"..एक सप्ताह नेहरू अपनी बेटी के साथ हमारे घर में ठहरे। भद्र, योग्य पुरुष हैं। उनकी ओर लोग आकृष्ट होते है। हर दिन वह किसी-न-किसी का मनोबल बढ़ाते रहते हैं। शायद बहुत थक जाते होगे। कभी-कभी प्रातः चार बजे तक काम करते हैं... भारतीय-रूसी सांस्कृतिक एसोसिएशन पर चर्चा हुई। लाभदायक सचेत सहयोग की बात सोचने का समय आया है.. धन्य हैं पण्डितजी। सभी महसूस करते हैं कि वह न केवल प्रतिभाशाली नेता, हिन्दुस्तान का भविष्य है, वरन् साथ ही विनम्र, ईमानदार इन्सान भी है। आज के जमाने मे ये दो अनुभूतियाँ बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।

"नेक हृदय की ओर मनुष्यो का नेक स्वभाव सहज ही आकर्षित होता रहता है। लोग न्याय का सपना देखते हैं और विश्वास करते हैं कि नेक हृदय के पास उसका निवास है। कितना अच्छा लगता है, जब जनता नारा बुलन्द करती है 'नेहरू जिन्दाबाद !' जनता परामर्श पाने के लिए पण्डितजी के पास आती है। विनम्र नेता हर किसी का उत्साह बढ़ाने के लिए समुचित शब्द ढूँढ लेता है। एकता, धैर्य, सुखद भविष्य की बात करता है।

"आज के कुटिल, कष्टदायक जमाने मे जनता न्यायप्रिय, नरम दिल, जन हितैपिता की विशेष कद्र करती है। हम लोगो, यहाँ के सभी निवासियों को पण्डित नेहरू के आगमन की मीठी याद रहेगी।" और उस दिन अपनी डायरी मे निकोलाई रेरिख ने प्राचीन भारतीय सूत्र अकित किया, जिसे उन्होने हृदयंगम किया था—'सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् !'

हिन्दुस्तान के उपनिवेशवादविरोधी आन्दोलन मे फूट डालने तथा उसे शिथिल करने के लिए इच्छुक चर्चिल ने सभी भारतीय पार्टियो तथा जन-समुदायों के नेताओं के साथ बातचीत करने के लिए ब्रिटेन के विख्यात राजनेता युद्ध के सदस्य

सर स्टैफ्फोर्ड क्रिप्स को दिल्ली भेजने का निर्णय लिया। उनका मिशन 1942 के मार्च-अप्रैल महीने में दिल्ली में काम करता रहा।

क्रिप्स ब्रिटिश सरकार का घोषणापत्र अपने साथ लेकर आए थे। उसमे शब्दाडम्बरपूर्ण ढग से घोषणा की गई थी कि युद्ध के बाद भारतीय सघ की स्थापना के लिए कदम उठाए जाएँगे, जो स्वतन्त्र उपनिवेश--डोमिनियन--बनेगा और ब्रिटेन तथा अन्य डोमिनियनो के साथ राजशाही की सेवा तथा उसके प्रति निष्ठा के सूत्रो से जुड़ा रहेगा।

वास्तव मे इस घोषणा का प्रयोजन हिन्दुस्तान को आत्मनिर्णय से तथा उपनिवेश की जगह सयुक्त लोकतान्त्रिक राज्य की स्थापना से किसी भी कीमत पर वचित रखना था।

उपनिवेशवादियो ने कपटपूर्ण और क्रूर योजना बनाई--देश का विभाजन किया जाए, उसकी जनता मे फूट डाल दी जाए। इस घृणित लक्ष्य की पूर्ति का साधन था धार्मिक-साम्प्रदायिक द्वेष भड़काना, राजा-रजवाड़ो की पृथकतावादी प्रवृत्तियों का उपयोग करना। उपनिवेशवादियो ने रूढ़िवादी, धार्मिक क्षेत्रो के नेताओ, विशिष्ट सामन्ती वर्ग, अन्धविश्वासों, अज्ञान, जनसाधारण की राजनीतिक अनुभवहीनता का सहारा लिया।

अगर दो वर्ष पहले पाकिस्तान की स्थापना का विचार, जिसका प्रतिपादन मुस्लिम लीग के नेता ने किया था और अंग्रेजो ने जिसका पक्षपोषण किया, कपोल-कल्पित और अव्यावहारिक लगता था, तो अब चर्चिल मन्त्रिमण्डल ने यह सवाल व्यावहारिक रूप में पेश करने के लिए क्रिप्स को हिन्दुस्तान भेजा।

ब्रिटिश घोषणापत्र ने देश के अलग-अलग प्रान्तों को भावी भारतीय संघ मे शामिल न होने, यही नही, उन्हे अपने 'स्वाधीन' राज्य बनाने तक के लिए बढावा दिया। यह अधिकार करीब 600 'स्वशासित' भारतीय रियासतों को भी प्रदान करने का सुझाव पेश किया गया।

".इस प्रस्ताव में न केवल पाकिस्तान को मान्यता देने अथवा देश के विभाजन की किसी ठोस योजना को स्वीकार करने का प्रावधान था, जो यों भी काफी बुरा होता," जवाहरलाल नेहरू ने कहा--"वह इससे भी अधिक अमगलमय था, क्योकि वह असीमित विभाजनो की सम्भावना पैदा करता था।"

महात्मा गॉधी ने, जो बातचीत और समझौतो से कभी इन्कार नहीं करते थे, खुलेआम ऐलान किया कि ब्रिटिश प्रस्ताव "दिवालिया हो चुके बैक का अतिदेय (ओवरड्यू) चेक है" और सर क्रिप्स को सलाह दी कि वह "अगला विमान पकडकर घर लौटें"।

क्रिप्स का मिशन फेल हो गया। भारतीय देश-भक्तों को खुश होना चाहिए था। लेकिन युद्ध के सवाल पर कांग्रेस के नेताओं में पैदा हुए मतभेद के कारण हिन्दुस्तान का राजनीतिक जीवन स्पन्दनहीन हो गया ढुलमुलपन और

की वजह से भारतीय देश-भक्तों के लिए परमप्रिय स्वतन्त्रता का आदर्श मानो अपनी तेजस्विता खो बैठा।

महात्मा गाँधी दु खी थे। उन्हे घोर मानसिक सकट का सामना करना पडा—अहिसा का सिद्धान्त उनकी शिक्षा की जान है और जीवन तथा युद्ध ने उसे अशक्त, बेजान बना दिया है। हर जगह हिसा का नंगा नाच हो रहा था। अगर सत्य सर्वव्यापी प्रेम मे प्रकट होता है, जो सामाजिक अन्तरों के बावजूद सभी लोगो को प्रकृति से प्राप्त वरदान है, तो दुनिया मे बुराई का बोलबाला क्यो है ? युद्ध, जो पृथ्वी पर अत्याचार का चरम, क्रूरतम रूप है, क्यों कोटि-कोटि जन का कार्यकलाप निर्धारित करता है, क्यो पूरे राष्ट्रों का निदेशन करता है और क्यों कई देशो की सरकारों के कार्यकलाप का सार तथा प्रयोजन बनता है ? क्या विश्व शान्ति तथा सृजनात्मक कार्य लोगो की नजरो मे युद्ध, मृत्यु और विनाश से कम आकर्षक हैं ?

हिसा बुरी चीज है, निष्क्रियता और हिसा के सामने सिर झुकाना अपराध है और गुलामी इससे भी बदतर है। बेइज्जती से मौत भली। साम्राज्यवाद तथा नाजीवाद—विश्व मे हिसा के वाहक है। नि.सन्देह, अहिसा बुद्धिसगत तथा मानवीय धारणा है, उसे राज्यों तथा जनगण के सम्बन्धो की बुनियाद होनी चाहिए, लेकिन जैसा कि स्वयं जीवन सिद्ध कर चुका है, कभी-कभी वह हिसा को बढावा देती है और अत्याचारी को सजा पाए बिना छोड देती है।

गाँधीजी ने अन्तत- मान लिया कि फासिस्टों तथा फौजशाहो की मानवद्रोही नैतिकता पर अहिंसा का सिद्धान्त लागू नहीं हो सकता। उन्होने स्वयं कांग्रेस मे प्रस्ताव पेश किया, जिसमें कहा गया कि आजाद हिन्दुस्तान की अन्तरिम सरकार का मुख्य फर्ज होगा—अपनी आजादी की रक्षा करना, आक्रमण के विरुद्ध सघर्ष के लिए देश के सभी विशाल साधनो का उपयोग करना, हिन्दुस्तान की रक्षा के हेतु मित्र राष्ट्रों के साथ मिलकर सशस्त्र सेना तथा अन्य शक्तियों को इस्तेमाल करना।

इस प्रस्ताव की सराहना करते हुए जवाहरलाल नेहरू ने कहा—"राजकीय व्यावहारिक पुरुष ने कट्टर धर्म गुरु के ऊपर विजय पाई !"

इन्दिरा और फीरोज को बेहद खुशी हुई, उन्हे लगा कि जवाहरलाल नेहरू ओर महात्मा गाँधी के बीच मतभेद खत्म हो गए है। कांग्रेस की कार्यकारिणी की बैठक में महात्मा गाँधी ने प्रस्ताव पेश करके ब्रिटिश सरकार से हिन्दुस्तान को फौरन स्वाधीनता प्रदान करने की माँग की। यह उल्लेखनीय है कि पहली बार उन्होने जापानी हमलावरों से हिन्दुस्तान की रक्षा की सफलता को, जैसा कि पण्डित नेहरू ने पहले भी प्रस्तावित किया था, हिन्दुस्तान की आजादी से जोड़ दिया। एक पत्रकार ने उस प्रस्ताव को उचित ही 'हिन्दुस्तान छोडो !' प्रस्ताव बताया।

चर्चिल का युद्ध-मन्त्रिमण्डल घबराया। "कांग्रेस पार्टी काफी हद तक अहिसा का सिद्धान्त छोड चुकी है जिसका मिस्टर गाँधी ने प्रचार किया था और खुली कार्रवाइयों पर उतर आई है ब्रिटिश ससद को सूचित करते हुए चर्चिल

ने यह दुखद समाचार दिया।

औपनिवेशिक अधिकारियो ने जरा भी वक्त नही गँवाया। 'हिन्दुस्तान छोडो।' प्रस्ताव पारित होने के अगले दिन 9 अगस्त, 1942 को महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू और काग्रेस के लगभग सभी अन्य नेता जेलो मे ठूँस दिए गए। जनता के आक्रोश को दबाने के लिए मशीनगनों, अश्रु गैस, हवाई जहाजो, सगीनो और बन्दूको से काम लिया गया। अगस्त क्रान्ति शुरू होते ही खून मे डुबो दी गई।

नव दम्पती ने दो कमरों का छोटा-सा फ्लैट किराये पर ले लिया था, जिसे मुख्यत पार्टी की जरूरतो के लिए इस्तेमाल किया जाता था। फीरोज और इन्दिरा तब लाल बहादुर शास्त्री के नेतृत्व में काम कर रहे थे। यह साधारण स्कूल मास्टर दृढ और निष्ठावान देशभक्त था। छोटे कद के इस शान्त तथा सकोचशील व्यक्ति मे लोगो को संगठित करने, कार्य का दृढतापूर्वक, सुचारु रूप से निदेशन करने की क्षमता थी।

परिस्थिति ऐसी थी कि गुप्त रूप से काम करने की जरूरत पैदा हुई। लाल बहादुर शास्त्री, फीरोज गॉधी और दूसरे काग्रेसियो ने ऐसा ही किया। मगर इन्दिरा जहाँ तक हो सके खुलकर काम करना चाहती थी, वह काग्रेसी साहित्य बॉटती थी, पार्टी कोष के लिए चदे जमा करती थी, प्रचार करती थी, स्वतःस्फूर्त जन-प्रदर्शनो मे शरीक होती थी और एक बार तो उसे अश्रु गैस का भी असर महसूस करना पडा।

फीरोज गुप्त रूप से काम करता था, लेकिन उसे भी भारी जोखिम उठाना पड रहा था। देश के विभिन्न इलाको का दौरा करते हुए वह पार्टी के मिशन पूरा कर रहा था।

बचपन से फीरोज को मजाक और शरारतें करने का बडा शौक था। अपनी यूरोपीय शक्ल-सूरत तथा गौर वर्ण से फायदा उठाते हुए वह कभी-कभी ब्रिटिश सेना के अफसर की वर्दी पहनकर उपनिवेशवादियों को चकमा देता था, कांग्रेस के अण्डरग्राउण्ड हलकों के साथ सम्पर्क रखता था, पार्टी को जरूरी जानकारियॉ देता था।

एक महीने की गैरहाजिरी के बाद जब वह इलाहाबाद आया, तो सबसे पहले उसने इन्दिरा से मिलकर शहर मे विरोध सभा आयोजित करने का फैसला किया। सभा के लिए तैयारियॉ गुप्त रूप से की गईं। उसके स्थान व समय की सूचनाऍ मौखिक रूप से, बडी सतर्कता के साथ दी गई। हिदायत दी गई कि गश्ती दस्तो का ध्यान आकर्षित न करते हुए लोग शहर के चौक के पास जमा हो और सकेत मिलने से पहले आसपास की दुकानों, घरों तथा सिनेमाघर मे रहे।

गिरफ्तारी से बचने के लिए सभा से पहले की रात इन्दिरा ने अपने घर मे नही, बल्कि परिचित लोगों के यहाँ बिताई सुबह को वह सिनेमाघर पहुँची सभा का वक्त आया 'वानर सेना' की तरुण सचालिका के रूप में शहर में मशहर एक युवा

आकर्षक स्त्री मच पर आई और इकट्ठे लोगों को सम्बोधित करते हुए बोली—"उपनिवेशको से हम कहते है 'हिन्दुस्तान छोड़ो।' हिन्दुस्तान को आजाद होना चाहिए और वह आजाद होकर रहेगा।"

शहर की सडको पर गश्त लगाने वाले ब्रिटिश सैनिक मैदान मे दौडे आए। इन्दिरा ने अपनी तरफ तनी बन्दूको की नालें देखी, लेकिन वह टस-से-मस नही हुई और बोलती गई। एक सैनिक उसके बिल्कुल करीब आया, संगीन की नोक उसके सीने से लगी। दूसरे सैनिक ने इन्दिरा का हाथ पकड लिया। भीड दहाडी। लोगो ने इन्दिरा को सैनिकों से छुडाने की कोशिश की। फीरोज अपनी गैरकानूनी हैसियत को भूलकर पत्नी की सहायता करने के लिए लपका और वह भी पकड़ा गया।

सैनिकों ने बन्दूकों के कुन्दो से जी भरकर काम लिया। भीड़ तितर-बितर कर दी गई। बहुत-से लोग गिरफ्तार किए गए। फिर भी सभा सफल हुई। इन्दिरा और फीरोज की पहल पर आयोजित यह सभा देश के कोने-कोने में होने वाली हजारो सभाओं मे से एक थी। आजादी की ओर मुश्किल राह पर एक और कदम उठाया गया। वे खुश थे—बूँद-बूँद से सागर बनता है।

भारतीय पुलिस के सिपाही, जिन्हें इन्दिरा को जेल ले जाने का हुक्म दिया गया, बहुत अटपटा महसूस कर रहे थे। उनमें से कुछ लोगों ने अपने सिर पर से साफे उतारकर बन्दिनी के सामने जमीन पर पटक दिए, अपनी मजबूरी समझाते हुए कहा—"हमे हुक्म बजाना है, आप हमे माफ कीजिए।"

मन-ही-मन इन्दिरा खुश हुई, सोचा—मार्के की बात है, भारतीय सेना के अफसर, जवान और पुलिस के सिपाही हिन्दुस्तान की आजादी के लड़ाकों की इज्जत करते है। वह वक्त भी आएगा, जब वे खुलेआम उपनिवेशवादियों के खिलाफ अपनी जनता का साथ देगे।

'जेल' शब्द की इन्दिरा बचपन से ही आदी थी। न जाने कितनी बार उसे पिता, माँ, दादा, गाँधीजी से मिलने के लिए जेलो के चरमराते फाटको में दाखिल होना पड़ा था। शायद उसका कोई भी ऐसा रिश्तेदार न था, जिसे उन वर्षो में राष्ट्रीय आन्दोलन मे शामिल होने के लिए जेल की हवा खानी न पड़ी हो।

परन्तु जेल देखना एक चीज है और जेल मे बन्द होना बिल्कुल दूसरी।

जेलखाना, खासतौर से हिन्दुस्तान का औपनिवेशिक जेलखाना शासक वर्ग का अमानुषिक आविष्कार है, इन्दिरा को उसमे विश्वास हो गया। जेल में बन्दी को शारीरिक कष्ट से भी अधिक नैतिक कष्ट उठाना पडता है। मनहूस दीवारे, सीमेण्ट के फर्श, सीखचे, साझे शौचालय, गन्दगी, बदबू, झनझनाते ताले, खनकती कटोरियाँ, पहरेदारों की गालियाँ—क्रूरता और दुर्व्यवहार का यह असहनीय माहौल इसलिए पैदा किया जाता है कि बन्दी को अपमानित किया जाए, उसे पूरी तरह हताश किया जाए, उसे अपनी इन्सानियत भूलने यह सोचने के लिए मजबूर किया जाए कि वह इन्सान नहीं बेजबान पशु है निकम्मा है महीनों और बरसों के दौरान रोज बन्दी में यह हीन

भावना पैदा करने की कोशिश की जाती है।

ओपनिवेशिक जेलों में केवल अपराधी ही नही, बल्कि हजारो ईमानदार भारतवासी कैद थे, जिन्होने शासकों के सम्मुख अपने मानवीय अधिकारों की रक्षा के लिए आवाज उठाने का साहस किया था। यही उनका एकमात्र अपराध था। उन वर्षो मे हिन्दुस्तान मे जेले अपराधियो से समाज की रक्षा करने का नही, बल्कि जनता का दमन करने का साधन थीं।

आमतौर पर जेलो मे बेईमान, जरखरीद लोग नौकरी करते थे, जो इन्सानियत और सवेदना से रहित थे, उन्हे अपने से कहीं ऊँचे सामाजिक, मानसिक तथा बौद्धिक स्तर वाले नजरबन्द लोगों पर अत्याचार करने, उन्हे सताने से सन्तोष होता था।

स्त्री के लिए तो जेलखाने का नरक कहीं अधिक भयानक था। जेल कर्मचारियो के दुर्व्यवहार, गाली-गलौज, तिरस्कार तथा अपमान का मकसद था नारीत्व, ममता, कोमलता का हनन करना, समाज तथा परिवार मे यथोचित स्थान ग्रहण करने की आशा को धूल मे मिला देना।

भारतीय बन्दिनी की दयनीय स्थिति वर्णनातीत थी। भारतीय स्त्रियों के सहजशील, गरिमा, स्त्रीत्व को जेल में भौडे तिरस्कार, घोर अत्याचार और अमानुषिक जोर-जबर्दस्ती का शिकार बनाया जाता था।

जेलों की तग, गन्दी, सीलन-भरी कोठरियों मे बिच्छुओ, साँपो, जहरीले कीटो की भरमार थी, जिनसे जेलर भी भयभीत रहते थे। एक मर्तबा इन्दिरा की नजरो के सामने ही जोरा नाम की एक क्रूर जेलर अपने कपडो मे छिपे एक बडे काले नाग का शिकार बनने से बाल-बाल बची।

जेल की नीरस दिनचर्या, अवाछित निठल्लेपन, बेढब और बदरंग माहौल से इन्दिरा का मन सबसे अधिक बोझिल होता था।

कुछ समय तक फिरोज उसी जेल मे रहा। मगर बहुत समय तक उन्हे एक-दूसरे को देखने का मोका नही मिला। सिर्फ कुछेक महीने बीतने पर उन्हे अल्पकालीन मुलाकात की इजाजत दी गई, जिसके बाद फीरोज को दूसरी जेल में पहुँचा दिया गया।

सब कुछ समाप्त होता है, निरर्थक जेल निवास की अवधि भी समाप्त हुई।

जेल से रिहा होने पर इन्दिरा को कुछ ऐसा प्रतीत हुआ, मानो वह किसी लम्बी, अँधेरी गुफा के अन्धकार से बाहर निकली हो। सूर्य प्रकाश से आँखें चौधियाती थीं। जीवन की तेज गति, ससार की इन्द्रधनुषी छटा, स्वरो की निर्बाध गूँज से सिर चकरा गया। उसका जी चाहता था कि फूलो को स्पर्श करे, साफ हवा में गहरी-गहरी साँसे ले, बिछी हुई हरी घास पर लेट जाए, वृक्षों के नरम-नरम तनों को हाथों से सहलाए। साफ-सुथरे कपड़े पहने लोगों को देखने, इन्सान की भाषा सुनने में कितना आनन्द है ! वे क्या सोचते है, किन-किन बातों का ख्याल रखते हैं, कहाँ जाने की जल्दी में हैं क्या संघर्ष के ध्येय को वे भूल तो नहीं गए ?

नेहरू और काग्रेस के अन्य नेता किले में बन्द थे

किसी अग्रेज अधिकारी को इस किले मे सबसे अधिक खतरनाक राजनीतिक कैदियो को रखने की सूझी थी।

अहमदनगर किला हिन्दुस्तान के इतिहास के एक गौरवपूर्ण पृष्ठ से जुड़ा है। 16वीं सदी के उत्तरार्द्ध में बादशाह अकबर असंख्य सेना सहित इस किले के पास पहुँचे और उसके रक्षको की शूरवीरता से वह दग रह गए। परन्तु बादशाह को यह जानकर और भी अधिक आश्चर्य हुआ कि किले के रक्षा-संग्राम का नेतृत्व अहमदनगर की महारानी सुन्दरी चाँद बीबी कर रही थी। इस महिला के साहस से प्रभावित होकर अकबर ने अहमदनगर के निवासियों को बख्शा और सम्मानपूर्ण शान्ति सन्धि की।

कैसी रही होगी चाँद बीबी, यह भारतीय जोन ऑफ आर्क ?—इन्दिरा सोचती थी। कोई कुछ भी कहे, मगर इतिहास इसका साक्षी है कि अबलाएँ मानव-जाति का इतना निर्बल अर्द्धांश नही है, जैसी कि आम मान्यता है।

अहमदनगर में केवल महात्मा गाँधी नही थे। उपनिवेशवादियों ने उन्हें कांग्रेस के दूसरे नेताओ से अलग करके रखा। वह पुणे में आगा खाँ के महल मे नजरबन्द थे, जो काँटेदार तार की बाड़ से घिरा था और जिस पर पुलिस का खास पहरा लगा दिया गया था। अफवाहे उडती थी कि 74 वर्षीय जन-नेता का स्वास्थ्य दीर्घकालीन अनशनो के कारण बहुत कमजोर हो गया और शायद ही वह पलग से खड़े हो सकेंगे।

कुछ वक्त बीतने पर फीरोज भी जेल से रिहा हुआ। युवा दम्पती को घर-गृहस्थी के बारे में सोचना चाहिए था—अभी तक वे बहुत कम समय तक साथ रहे। सबसे पहले आजीविका कमाने के साधन निकालने, नौकरी पाने की जरूरत थी। इन्दिरा के समृद्ध-सम्पन्न रिश्तेदार अभी जेल की सजा काट रहे थे तथा स्वयं फीरोज के माँ-बाप मुश्किल से जीवन-यापन कर रहे थे। वे कोई खास मदद नही दे सकते थे।

पण्डित नेहरू के मित्रों ने फीरोज को लखनऊ से प्रकाशित 'नेशनल हेराल्ड' मे नौकरी दिला दी। पारिश्रमिक अधिक नहीं था, लेकिन रोजी-रोटी का इन्तजाम हो गया। उन्होने सस्ता फ्लैट किराये पर ले लिया और इन्दिरा घर-गिरस्ती में जुट गई। कमरों की सफाई करती थी तथा उन्हें सुव्यवस्थित रखती थी, घर मे सदा ताजे फूल रखे होते थे, परन्तु सघर्ष का तनावपूर्ण जीवन झेल चुके इन्दिरा और फीरोज अब अपने घर मे बन्द होकर नहीं कर सकते थे। स्वतन्त्रता आन्दोलन के साथ उनका सम्बन्ध क्षण-भर को भी नहीं टूटा।

इन्दिरा माँ का सुख पाने को उत्सुक थी, वह चाहती थी कि उसकी साध पूरी हो। इसलिए डॉक्टर से यह सुनकर कि प्रसव वह शायद ही सहन कर पाएगी, उसे बड़ा दु:ख हुआ। लेकिन माँ बनने की इच्छा इतनी प्रबल थी कि उसने डॉक्टरो की चेतावनी की उपेक्षा की और गर्भावस्था से उसे गर्व तथा सन्तोष अनुभव हुआ। में रहने वाले नेहरू के फैमिली डॉक्टर ने प्रसूति की

देखरेख करने से इन्कार कर दिया, उसे प्रसव के असफल होने की आशंका थी। इन्दिरा को मुम्बई जाना और अपनी मौसी के घर मे ठहरना पड़ा।

मुम्बई मे 20 अगस्त, सन् 1944 को इन्दिरा ने बच्चे को जन्म दिया। प्रसव आसान रहा, प्रसूता और शिशु दोनों की स्थिति अच्छी थी।

तृप्त, सन्तुष्ट इन्दिरा खुशी से फूली नही समाई। उसने कहा—"माँ बनने से स्त्री की साध पूरी होती है। बच्चे को जन्म देना, इस उत्कृष्ट नन्हें प्राणी को देखना तथा उसके महान् भविष्य की सोचना—परम सुख और आश्चर्य से परिपूर्ण सर्वाधिक मार्मिक अनुभूति है।"[1]

नामकरण-सस्कार से पहले इन्दिरा और फीरोज गाँधी ने इस मामले पर गम्भीरतापूर्वक सोचा-विचारा। परम्परा का पालन करना चाहिए और लड़के का नाम सुन्दर तथा सार्थक होना चाहिए।

पुत्र को राजीव रत्न नाम दिया गया। राजीव—कमल और रत्न—जवाहर का पर्याय है। अतः यह नाम नाना-नानी—जवाहरलाल तथा कमला—के सम्मानार्थ रखा गया।

नाना जवाहरलाल अपने पहले नाती को देखने के लिए बेताब थे। इन्दिरा को पता चला कि उनके पिता को अहमदनगर किले से दूसरी जेल में स्थानान्तरित किया जाएगा और कुछ दिन के लिए वह इलाहाबाद की नैनी जेल में रुकेंगे। क्यों न इस मौके से फायदा उठाया जाए और नाना को नाती दिखा दिया जाए ? ऐसा ही करने का उसने फैसला किया। फीरोज के साथ वह रात देर तक जेल के फाटक के पास इन्तजार करते रहे और उनकी मुराद पूरी हुई।

मोटरगाडी आ रुकी और उससे पण्डित नेहरू निकले। शिशु का मुँह खोलकर इन्दिरा ने उसे ऊँचा उठा लिया। पण्डितजी ने इस बण्डल की ओर टकटकी बाँधी, स्ट्रीट लाइट की मद्धिम रोशनी मे बच्चे का मुँह देखने की कोशिश की। उनके होंठो पर मुस्कान खिल उठी।

जवाहरलाल नेहरू को जीवन के नैरन्तर्य का नया, अनन्य अनुभव हुआ। राजीव उनका वशज है और जब वह इस दुनिया मे नहीं रहेगे, राजीव के माध्यम से नेहरू वश जारी रहेगा। राजीव को नये आजाद हिन्दुस्तान में जीना होगा, राजीव वह सब कुछ अपनी आँखों से देखेगा, जिसका सपना उसके नाना ने देखा था, जिसकी खातिर वह जिये, लड़े, दुःख-सुख भोगे।

सन् 1945 का वसन्त आया। सोवियत सेना के प्रचण्ड प्रहारो से बर्लिन का पतन हो गया और फासिस्ट संसद भवन—राइखस्ताग—के ऊपर मई महीने के नीले निरभ्र आकाश मे लाखों-लाख लोगों के खून से सना विजय का लाल ध्वज फहराया।

1 I Gandhi op cit

विजय हुई। संसार बदल गया, युद्ध भड़काने वाली शक्तियों की आशा के प्रतिकूल उसका सर्वथा दूसरा रूप नजर आया। महायुद्ध के परिणाम अप्रत्याशित सिद्ध हुए। पूर्वी यूरोप के देशों और चीन, वियतनाम तथा कोरिया ने लोक-जनवादी परिवर्तनों के मार्ग पर पदार्पण किया। हिन्दुस्तान, इण्डोनेशिया, मिस्र साम्राज्यों के आधिपत्य के विरुद्ध उठ खड़े हुए और स्वाधीन, राष्ट्रीय जागरण की दिशा में बढ़े।

चर्चिल ने अपनी निराशा नहीं छुपाई—"ऐसी विजय का क्या मूल्य, यदि वह हिन्दुस्तान गँवाने जैसी त्रासदी में परिणत होगी !" चर्चिल को सबसे अधिक आशंका इस बात की थी कि वह कहीं ऐसी सरकार का प्रधानमन्त्री न बन जाए, जिसके शासन काल में महान् औपनिवेशिक साम्राज्य का ह्रास शुरू हो जाएगा। मगर उसकी यही आशंका सच निकली—इंग्लैण्ड की जनता ने कट्टर टोरी के विरुद्ध, शान्ति काल मे शुभ परिवर्तनों के पक्ष में वोट दिया। लेबर सरकार सत्तारूढ़ हुई। इस बीच अब चर्चिल अटलांटिक महासागर के पार वाशिंगटन प्रशासन पर पूरी आस लगाए हुए थे।

संयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति हैरी ट्रूमैन और उनके सरपरस्त—युद्ध सामग्री की सप्लाइयों से बेहद भारी मुनाफे बटोरने वाले इजारेदार—मानव इतिहास मे जघन्यतम अपराध की तैयारियों में लगे हुए थे।

6 और 9 अगस्त, 1945 को हिरोशिमा तथा नागासाकी नामक जापानी शहरों पर एटम बम गिराए गए, जिन्होंने महाप्रलय के दृश्य प्रस्तुत कर दिए। क्षण-भर में लाखों नगरवासी भीषण आग में भस्म हो गए। और तत्पश्चात् अदृश्य, निर्गन्ध रेडियमधर्मी विकिरण धरती पर फैल गया और वह अपने चपेट में आने वाले बचे-खुचे लोगों पर अनिवार्य मौत की छाप छोड़ता गया।

एटम बम गिराने का हुक्म देकर ट्रूमैन ने इतिहास और मानव-जाति के प्रति सबसे घोर अपराध किया और इस राक्षसी निरर्थक कुकृत्य के बारे में जानकर मानव-समाज का हृदय दहल गया, लेकिन अपराधियों की नजरों में यह कुकृत्य निरर्थक नहीं था। अमरीका ने सोवियत संघ तथा राष्ट्रीय और सामाजिक मुक्ति के लिए प्रयत्नशील राष्ट्रों को परमाणविक भय-आतंक दिखाने की नीति चलानी शुरू की।

हिरोशिमा और नागासाकी की नियति नयी खतरनाक प्रवृत्ति का अशुभ पूर्वसंकेत था—अगर पहले हिटलर ने विश्व आधिपत्य का दावा किया था, तो अब सयुक्त राज्य अमरीका ने विश्व पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने की महत्वाकांक्षा प्रकट की। जर्मन, जापानी, अमरीकी साम्राज्यवाद का सार-स्वरूप वस्तुतः एक जैसा है, मगर परमाणु युग आरम्भ होने के साथ उसने राष्ट्रों की स्वतन्त्रता को कुचलने के और अधिक भयावह साधनों का उपयोग करना शुरू कर दिया, जिससे मानव-जाति के अस्तित्व के लिए खतरा पैदा हो गया।

कांग्रेस महासमिति ने जवाहरलाल नेहरू द्वारा तैयार किया गया विशेष प्रस्ताव पास किया जो सन् 1945 की गर्मियों में अन्य कांग्रेसी नेताओं के साथ लम्बी कैद

के बाद जेल से रिहा हुए थे। प्रस्ताव मे कहा गया—"सौभाग्यवश विश्वयुद्ध समाप्त हो गया है, परन्तु उसकी काली छाया दुनिया के ऊपर मँडरा रही है और अगले युद्धो की योजनाओ पर जोर दिया जा रहा है। भीषण विनाशकारी क्षमता रखने वाले एटम बम जैसे आयुध के आविर्भाव के परिणामस्वरूप नये सकट के आसार नजर आ रहे है, जिनकी अभिव्यक्ति विश्व की आधुनिक राजनीतिक, आर्थिक तथा मानसिक सरचना के अनैतिक, आत्मघाती पहलुओ मे देखने में आती है। अगर मानव सभ्यता स्वार्थगत साम्राज्यवादी प्रवृत्तियो को नहीं ठुकराती और स्वतन्त्र राष्ट्रों के शान्तिपूर्ण सहयोग तथा मानव के सम्मान का सहारा नही लेती, तो वह आत्मसंहार कर बेठेगी।"[1]

क्या युद्ध समाप्त होने पर राष्ट्रो को वास्तविक शान्ति प्राप्त होगी ? पण्डित नेहरू की तरह इन्दिरा को भी आजादी और लोकतन्त्र के बारे मे उपहासास्पद अमरीकी दावों के सम्बन्ध में कोई भ्रम नही था। सयुक्त अमरीकी-ब्रिटिश परियोजना के अनुसार, एटम बम का निर्माण विश्व के राष्ट्रों के शान्तिपूर्ण तथा स्वतन्त्र अस्तित्व के हेतु नहीं किया गया था।

स्पष्ट है कि एटम बमबारियों का वास्तविक राजनीतिक-सामरिक निशाना हिरोशिमा तथा नागासाकी, यहाँ तक कि जापान भी नही था, बल्कि सोवियत सघ था, जो फासिज्म के विरुद्ध युद्ध मे विजेता रहा और पश्चिमी राज्यों की साम्राज्यवादी नीति की राह में मुख्य बाधक बन गया था।

इसके अलावा, यह सोचा गया था कि जापान के सर्वनाश से एशिया तथा अफ्रीका के राष्ट्र और अधिक भयभीत हो जाएँगे तथा स्वतन्त्रता आन्दोलन का पैमाना घट जाएगा।

अमरीकी-ब्रिटिश साम्राज्यवादी गठजोड़ ने, जिसकी स्थापना की सम्भावना के बारे मे पण्डित नेहरू युद्ध से पहले भी कह चुके थे, साफ-साफ दिखाया कि अपना आधिपत्य स्थापित करने के उद्देश्य से नये और पुराने उपनिवेशवादी अन्तर्राष्ट्रीय न्याय तथा मानव अधिकारो का हनन करने में नहीं हिचकिचाएँगे, उन्हे न तो उनके कुकृत्यों का पैमाना, न उनका शिकार बनने वालो की सख्या और न मानव-जाति का निराशाजनक भविष्य ही रोक सकेगा।

राजीव का भविष्य कैसा होगा ? दूसरे लोगो की अपेक्षा विश्व के प्रति माताओ का दृष्टिकोण अधिक व्यापक होता है, उन्हें भावी खतरों की अधिक तीक्ष्ण अनुभूति होती है। वे मानव वंश को जारी रखने की अपनी महान् प्राकृतिक साधना की सिद्धि मे लगी रहती है, वे प्रेम और दया का सन्देश देती हैं। अपने बच्चो के कल्याण को वे अपनी जान से भी अधिक मूल्यवाम मानती है और यही उनकी सहज सहानुभूति का स्रोत है हर इन्सान की अपनी माँ होती है दुनिया के लोगों की एकता एक

आम विश्व कुटुम्ब क रूप मे मानव-जाति की मान्यता का महिलाएँ सहजता से हृदयंगम करती हैं।

अब माँ बनने पर इन्दिरा गाँधी को मानो नयी दृष्टि मिल गई। यदि पहले जो कुछ वह करती थीं, जिस लक्ष्य की पूर्ति मे जुटी रहती थीं, जो जोखिम और कष्ट उठाती थीं, वह मुख्यतः उनके अह से प्रेरित होता था, तो अब अपने पुत्र का हित उनके लिए सर्वोपरि हो गया। वह नये खुशहाल हिन्दुस्तान मे केवल अपने की ही नहीं, बल्कि अपने पुत्र, उसकी पीढी के जीवन की भी कल्पना करती थीं। उनका देश-प्रेम तथा पुत्र-प्रेम एक सूत्र में बँध गए, उनके सपने स्वतन्त्र देश के भावी नागरिक के रूप में पुत्र के उज्ज्वल भविष्य के सपनो से एकाकार हो गए और इस भविष्य की अमूर्त्त धारणा ने मूर्त्त रूप ले लिया।

मनुष्य का ध्यान स्वभावतया अपने भविष्य, आने वाले कल पर केन्द्रित होता है। भूतकाल निश्चल है, वर्तमान क्षणिक है, जबकि भविष्य गतिशील है, लक्ष्य, स्वप्न-पूर्ति की ओर प्रगति और नयी उपलब्धियाँ भविष्य द्वारा निर्धारित होती है।

मगर मनुष्य का क्या स्वप्न हो सकता है, वह किस लक्ष्य की प्राप्ति में लग सकता है, यदि उसके भविष्य के क्षितिज पर परमाणविक चक्रवात नजर आ रहे हों ? इस भयानक खतरे से दुनिया को मुक्ति कैसे दिलाई जाए ?

एक व्यक्ति की शक्ति-सामर्थ्य बहुत कम है। हाँ, अगर हिन्दुस्तान की तमाम जनता, सारा विशाल देश, दुनिया के देश सद्भावना आन्दोलन में एक हो जाएँ, तो महान् शक्ति उभरकर सामने आएगी।

7

स्वतन्त्रता का मूल्य

हिन्दुस्तान आजादी के लिए लालायित हो उठा। फासिस्ट गुट के राज्यों के ऊपर विजय के बाद युद्ध काल में ढेरों कष्ट उठाने वाली जनता के सब्र का बाँध अब टूटने लगा था।

जन असन्तोष की बाढ़ के प्रहार झेलते हुए पुरानी औपनिवेशिक व्यवस्था चरमराने लगी, जन आक्रोश की धारा देश में रूढ़ियों की कीचड़ बहा ले जा रही थी, राष्ट्रीय जागरण ला रही थी, हिन्दुस्तान को नये जीवन के लिए जगा रही थी।

नव जीवन की ताजी हवाएँ चलने लगीं और लोग भय, आशंका तथा सन्देह को छोड़कर और नये चौड़े मार्ग पर निकलकर साहसपूर्वक आगे बढ़े। करोड़ों जनगण आन्दोलित हो गए, आगे बढ़ते हुए वे उपनिवेशवादियों द्वारा खड़ी की गई सभी बाधाओं को हटा रहे थे, जिन्होंने हिन्दुस्तान को असली आजादी प्रदान करने के बजाय जनता को फुसलाने के लिए नकली सुविधाओं तथा दिखावटी स्वशासन के मिथ्या वचन दिए।

कम्युनिस्ट पार्टी के आह्वान पर भारतीय मजदूर वर्ग, कोयला, कपड़ा, धातुकर्म उद्योग के मजदूर, रेलवेकर्मी देशव्यापी ब्रिटेनविरोधी आन्दोलन में शामिल हुए।

मुम्बई, कलकत्ता, मद्रास के मेहनतकशों, पंजाब, बिहार, बंगाल, संयुक्त प्रान्त के किसानों ने उपनिवेशवादविरोधी नारों के साथ देश में सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तनों की भी माँग की।

18 फरवरी, 1946 को मुम्बई में कांग्रेस, मुस्लिम लीग तथा कम्युनिस्ट पार्टी के झण्डों के नीचे शाही भारतीय नौसेना के नाविकों का विद्रोह हुआ। कराची, मद्रास, कलकत्ता, विशाखापत्तनम के बन्दरगाहों में तैनात जहाजों के नौसैनिकों तथा नौसेना के तटवर्ती यूनिटों के जवानों ने विद्रोहियों का साथ दिया।

देश के सारे क्षेत्र में तूफान फैला हुआ था। लगता था कि उस वर्ष का मानसून भी असाधारण था—मूसलधार वर्षा की धारें हिन्दुस्तान के चेहरे को धो रही थीं, सदियों की थकान, पीड़ा और अपमान की झुर्रियाँ मिटा रही थीं। हिन्दुस्तान मानो यौवन का अमृत पीकर प्रकाश की ओर उन्मुख हो रहा था।

मगर क्षितिज पर चिन्ताजनक, काले मेघ प्रकट होने लगे थे। आसन्न विपदा का अपशकुन नजर आने लगा। दूरस्थ इग्लैण्ड की राजधानी लन्दन में हिन्दुस्तान का विभाजन करने, उसकी जनता को विभक्त करने, उसकी आजादी को धार्मिक-साम्प्रदायिक विद्वेष के अथाह गर्त मे ढकेलने की क्रूर, कपटपूर्ण योजना बनाई जा रही थी।

मुक्तिदायी क्रान्ति की आग धधक रही थी, परन्तु साथ ही धार्मिक प्रतिक्रियावाद की दुर्गम दलदल भी उभर रही थी। इस बीच लोगों का निजी जीवन अपनी लीक पर चलता जा रहा था, अपनी दैनन्दिन चिन्ताओ मे उलझा हुआ था। वे पहले की तरह प्यार, दु:ख-दर्द, काम और पारिवारिक झझटो की अपनी दुनिया मे रमे हुए थे।

नन्हे बेटे के साथ इन्दिरा करीब एक साल से कश्मीर मे रह रही थीं। बेटे के स्वास्थ्य और खुशहाली के लिए कोई भी कीमत महँगी नहीं होती।

कश्मीर का माहौल बहुत शान्त और सुखद था। स्वादिष्ट ताजा दूध, खुशबूदार शहद, फल और साग-सब्जियाँ, पहाडी प्रदेश की शीतल स्वच्छ हवा। परन्तु हिमालय के सनोबरो की फुनगियों की सरसराहट मायूस लगती थी, इन्दिरा के दिल को चैन नहीं मिलता था—पिता दिल्ली में थे और फीरोज इलाहाबाद मे। उनसे मिलने, सक्रिय तनावपूर्ण जीवनधारा मे कूदने को बहुत मन करता था।

देश के धूप में तपे मैदानों में जिन्दगी में उफान आ रहा था, सघर्ष चल रहा था, लोग खतरे की परवाह किए बिना जोखिम उठा रहे थे, आजादी की खातिर बलिदान दे रहे थे। कभी-कभी बलिदान निरर्थक भी सिद्ध होते थे, हिसात्मक कार्रवाइयाँ की जाती थीं, सकीर्ण अन्धविश्वासो, राजनीतिक छल-कपट, धार्मिक असहिष्णुता, साम्प्रदायिक कट्टरता का भी दौर-दौरा था, अर्थात् वह सब कुछ था, जो राष्ट्रीय-मुक्ति क्रान्ति के पैमाने को सीमित करता था, भावी विजय के लिए खतरा पैदा करता था।

सन् 1946 की गर्मियो में धारा सभाओ के लिए चुनाव हुए। कांग्रेस के उम्मीदवारो को मुस्लिम लीग के मुकाबले करीब तिगुने ज्यादा वोट मिले। हिन्दुस्तान की सत्ता की बागडोर वाइसराय के हाथों मे बनी रही, जो साथ ही अन्तरिम सरकार के प्रधान भी थे और जवाहरलाल नेहरू उनके डिप्टी बने।

मुस्लिम लीग के नेता मुहम्मद अली जिन्ना ने मिली-जुली सरकार बनाने का कांग्रेस का प्रस्ताव ठुकरा दिया। उन्होंने पाकिस्तान के निर्माण के लिए सीधी लड़ाई का ऐलान किया और मुसलमानों से तलवारे तैयार रखने की अपील की।

भयावह हादसा शुरू हुआ—खून बहने लगा। कलकत्ता में चार दिन तक हिन्दुओं और मुसलमानो के बीच भ्रातृ-घातक लड़ाई जारी रही। दूसरे शहर और प्रदेश भी धर्मांध तबको के सामूहिक पागलपन की गिरफ्त में आ गए।

संकट भड़काकर और राजनीतिक साजिशें रचते हुए तथा साम्प्रदायिक द्वेष की आग में तेल डालते हुए ब्रिटिश शासक मासूम तमाशबीनो की तरह देखते रहे कि किस प्रकार महात्मा गाँधी के अहिंसा का आदर्श लोगों के खून में डूब रहा है

उन सत्रासजनक दिनो मे इन्दिरा गॉधी सबसे अधिक अपने पिता, गॉधीजी, उन सभी लोगों के साथ रहना चाहती थी, जो सकट दूर करने की हरचद कोशिश कर रहे थे। बहुत कुछ करना था। इन्दिरा गॉधी ने पत्रकारों के सामने पण्डित नेहरू का वक्तव्य अखबार मे पढा—"स्वाधीनता की काग्रेस की धारणा मुस्लिम लीग और वाइसराय की उसकी समझ से भिन्न है। हमारे लिए स्वाधीनता का अर्थ विदेशी प्रभुत्व से पूर्ण मुक्ति और यहॉ तक कि ब्रिटेन से नाता तोड़ने की सम्भावना भी है। हम भारतीय गणराज्य का निर्माण करना चाहते हैं।" केवल एक ऐसा गणराज्य, एकीकृत, लोकतान्त्रिक, धर्मनिरपेक्ष राज्य, जिसमे धार्मिक, साम्प्रदायिक और नसली भेदभाव के लिए कोई गुजाइश नहीं होगी। नेहरूजी भारत का सिर्फ ऐसा रूप देखते थे।

7 सितम्बर, 1946 को इन्दिरा गॉधी ने अद्भुत भावोद्वेग अनुभव किया। उस दिन रेडियो द्वारा सरकार का महत्त्वपूर्ण वक्तव्य प्रसारित किया गया। उन्होने अपने पिता की आवाज सुनी—"छः दिन पहले मेरे साथियों और मैने हिन्दुस्तान की सरकार मे ऊँचे पद ग्रहण किए। हमारे प्राचीन देश में नयी सरकार, अन्तरिम अथवा अस्थाई सरकार अस्तित्व मे आई है. .जो हिन्दुस्तान की पूरी आजादी की राह में मील का पत्थर है। हमें दुनिया के बहुत-से देशों, हिन्दुस्तान के कोने-कोने से हजारो अभिनन्दन पत्र और शुभकामना सन्देश मिले हैं, लेकिन हमने यह ऐतिहासिक घटना त्योहार की तरह मनाने की अपील नहीं की और अपने देश की जनता का जोश थोड़ा ठण्डा करने की भी कोशिश की। हम चाहते थे कि वह भली-भॉति समझे कि हम अभी बीच रास्ते में हैं और हमे अपनी मजिल तक अभी पहुँचना होगा...।

"जल्दी ही पूरी स्वाधीनता प्राप्त करने की आशा से हम इस सरकार मे शामिल हुए और हम इस तरह काम करने का इरादा रखते है ताकि अपनी घरेलू तथा विदेश नीति में धीरे-धीरे यह स्वाधीनता प्राप्त कर सके। अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों मे सक्रिय रूप से भाग लेते हुए हम पराधीन देश की तरह नही, बल्कि स्वतन्त्र राज्य के रूप मे अपनी नीति चलाएँगे। हम दूसरे देशों के साथ सीधे घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित करके विश्व शान्ति तथा स्वतन्त्रता के हेतु उनके साथ सहयोग करने की आशा रखते हैं।

"जहाँ तक सम्भव होगा, हम बल-प्रयोग की नीति से अलग रहने का इरादा रखते है। परस्परविरोधी राज्य गुटों द्वारा चलाई जाने वाली इस नीति के परिणामस्वरूप विश्वयुद्ध हुए थे और भविष्य में और अधिक भयानक संकट पैदा हो सकता है... उपनिवेशों तथा पराधीन देशों के मुक्त होने और सिद्धान्तत· तथा व्यवहार में सभी नसलों की समानता को मान्यता देने की हम विशेष रूप से उत्कट इच्छा रखते हैं...।"

सॉस रोककर इन्दिरा पिता का भाषण सुन रही थीं। उन्हे सभी भारतवासियो, अपने पिता पर गर्व अनुभव हो रहा था, और उनकी अन्तरात्मा भी राष्ट्रीय गर्व की भावना से परिपूर्ण थी, क्योंकि वह स्वयं भी महान् परिवर्तनो के अभियान में भागीदार थी।

आखिरकार वह समय निकट आया, जब आजाद होकर यह देश सहस्राब्दियो मे सचित हुई अपनी आत्मिक क्षमता तथा बुद्धि का सदुपयोग करते हुए अन्तर्राष्ट्रीय राष्ट्र समुदाय मे स्थान पाने जा रहा था, शान्ति का अपना वह मिशन पूरा करने जा रहा था, जिसे औपनिवेशिक गुलामी की दो सौ वर्ष से अधिक लम्बी अवधि मे आजादी के लिए लालायित अनेक पीढियो के लोग धरोहर मे सौंप गए थे।

किस्मत ने इन्दिरा का साथ दिया। वह महान् ऐतिहासिक उपलब्धियो के काल मे रह रही थी, जब पुरानी सामाजिक कुव्यवस्था ढह रही थी और नया हिन्दुस्तान जन्म ले रहा था।

वह अपने भाग्य के प्रति कृतज्ञ थी, लेकिन उसे उन लोगों के प्रति भी कृतज्ञ होना चाहिए, जो आजादी के आदर्शो की खातिर लड़े और मर-मिटे, जो इन सुखद दिनों तक जीवित नही रह पाए—दादा मोतीलाल, दादी स्वरूप रानी, अविस्मरणीय माँ कमला, गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर और हजारो अन्य भारतवासी। परन्तु अभियान तो अभी शुरू हो रहा था। अभी आगे लम्बा और कठिन मार्ग था। उन्हे उस पर बढ़ते जाना था, उससे कभी नहीं भटकना था। अपने पिता, महात्मा गाँधी, उन सभी लोगों के साथ बढना था, जो अपनी मजिल तय करके ही दम लेने का सकल्प कर चुके थे।

शीघ्र ही इन्दिरा को पिता का पत्र मिला। उन्होंने लिखा कि उन्हें इन्दिरा का अभाव बहुत महसूस हो रहा है, खासतौर से घर और रोजमर्रा की जीवन-चर्या के प्रबन्ध के मामले मे, जो अब केवल व्यक्तिगत मामला नहीं रह गया था—बहुत-सी औपचारिकताओ से निबटना पड रहा था, कूटनीतिज्ञों, विदेशी राजनेताओं से भेटे करनी पड़ रही थीं। इसमे इन्दिरा का सहयोग बेहद जरूरी था।

नेहरूजी अपने नाती को भी अधिक अक्सर देखना चाहते थे। बालक के साथ फुरसत के कुछ मिनट बिताने से नाना बहुत खुश होते। उनके जीवन में कुछ रंग भर गया होता। पिताजी राजकीय मामलो मे पूरी तरह लगे रहते थे, लेकिन निजी जीवन की स्निग्धता भी तो आवश्यक थी। जनता से प्यार, जनता की सेवा आत्मीय जन—बेटी तथा नाती—से प्यार की जगह नहीं ले सकता।

यह चिट्ठी पाकर इन्दिरा बहुत खुश हुई। पिता को उनकी जरूरत है—यह विश्वास करना अच्छा लगता था। उन्होने अन्तरिम सरकार के कार्यभार का भारी बोझ सँभाल लिया था, इसलिए पिता की सहायता करने का मतलब था—भारतवासियो के आम ध्येय की सेवा करना।

इन्दिरा का दिल इसलिए भी पुलकित हो उठा कि दिल्ली में रहते हुए उन्हें फीरोज से अक्सर मिलने का अवसर मिलेगा, जो इलाहाबाद में काम करते थे, जब-तब राजधानी आते थे और दिल्ली मे बसने का इरादा रखते थे।

ढेर सारे कार्यों, दिल्ली के जीवन की तेज दौड़-धूप से इन्दिरा तनिक भी परेशान नहीं थीं। उन्होंने अपने को पूरी तरह मन के अनुकूल वातावरण मे पाया—मिनट-मिनट का हिसाब बहुत-से महत्त्वपूर्ण और दिलचस्प काम और दायित्व। परन्तु राजीव की

ओर भी वह पूरा-पूरा ध्यान देती रहीं। बेटे की खुशहाली बाकी सभी चिन्ताओ से अधिक महत्त्वपूर्ण हुआ करती है।

दिसम्बर 1946 मे इन्दिरा गॉधी के दूसरे बेटे सजय का जन्म हुआ। वैसे तो लडकी का इन्तजार था और उसका नाम भी चुन लिया गया था, लेकिन किसी को निराशा नही हुई, क्योकि पुत्र का जन्म सदा शुभ लक्षण माना जाता है। यह मजाक प्रचलित था कि नेहरू खानदान मे लड़कों की कमी थी और अब यह कसर पूरी हो गई।

सुबह से शाम तक इन्दिरा बच्चों के लालन-पालन में लगी रहती थीं। झंझटो और चिन्ताओं का कोई अन्त नहीं था, लेकिन मॉ का दिल बल्लियो उछलता था—फूल से कोमल और प्यारे-प्यारे पुत्र बडे हो रहे थे, नारी की साध पूरी हुई। "जिस तरह पौधे को धूप और पानी चाहिए, उसी तरह बच्चो को मॉ का लाड़-प्यार भी दरकार होता है," इन्दिरा ने कहा। "बच्चा मॉ की चिन्ता का मुख्य विषय होना चाहिए। वह पूरी तरह अपनी मॉ पर आश्रित रहता है।"[1]

इन्दिरा ने स्वीकार किया कि उनके लिए अपना सामाजिक कर्तव्य पूरा करना और उसके साथ-साथ घर-परिवार की देखभाल का दायित्व निभाना सबसे मुश्किल था।

समय बीतने के साथ उपनिवेशवादियों की घबराहट बढती जा रही थी। लन्दन के अधिकारी समझ गए कि कांग्रेस को राज्य सत्ता सौपने के मामले को और अधिक टाला नहीं जा सकता, वरना सत्ता-हस्तांतरण के बजाय जनता स्वयं सत्ता की बागडोर अपने हाथों में ले सकती है। हिन्दुस्तान के नवनियुक्त वाइसराय लार्ड माउण्टबेटन को भी इसका बोध हुआ।

वह हिन्दुस्तान की सत्ता-हस्तातरण का समारोह निश्चित तिथि से लगभग एक वर्ष पहले आयोजित करने के लिए लन्दन सरकार को राजी कराने में सफल रहे। ब्रिटेन के प्रधानमन्त्री एटली को लार्ड माउण्टबेटन ने चेतावनी दी थी कि भारतवासियों के लिए बनाया गया बम उनके ही हाथों मे फट सकता है।

ब्रिटिश औपनिवेशिक कूटनीतिक हलकों के होनहार प्रतिनिधि, एडमिरल, राजवश के सदस्य लार्ड माउण्टबेटन ने एक गुप्त योजना बनाई, जिसका उद्देश्य हिन्दुस्तान उपमहाद्वीप पर शक्तिशाली एकीभूत राज्य का आविर्भाव न होने देना और इस प्रकार ब्रिटिश आधिपत्य का आधार बनाए रखना था।

लार्ड माउण्टबेटन ने जिस 'बम' का जिक्र किया, वह हिन्दुस्तान का विभाजन करने तथा साम्प्रदायिक द्वेष के आधार पर गृहयुद्ध भड़काने की उनकी योजना थी।

---

1 I Gandhi, *My Truth*

हिन्दुस्तान का मानचित्र बदलने के लिए उन्होंने अपने सर्वोच्च सत्ताधिकार का उपयोग किया।

हिन्दुस्तान का धर्म के सिद्धान्त पर विभाजन करके हिन्दू राज्य भारत और मुस्लिम देश पाकिस्तान का निर्माण करने का प्रस्ताव रखा गया। सैकडो देशी रियासतो को स्वय यह तय करने का अधिकार दिया गया कि वे किस राज्य मे शामिल होना चाहते है अथवा वे ब्रिटेन के साथ पहले जैसे सम्बन्ध रखना चाहते है।

चर्चिल को पूर्ण सन्तोष प्राप्त हुआ। हिन्दुस्तान का राष्ट्रीय आन्दोलन भग करने और इस देश में ब्रिटिश प्रभाव बनाए रखने का मिशन लार्ड माउण्टबेटन ने जिस निपुणता से पूरा किया, इसमे और कोई भी सफल नहीं हुआ होता।

पिता रात को बडी देर से घर लौटते थे, परन्तु बाल-कक्ष मे दाखिल होकर सो चुके नातियों को देखना नही भूलते थे। इन्दिरा के साथ चाय पीते और बातचीत करते।

इन्दिरा देखती थी कि मानसिक पीडा से पिताजी का दिल किस तरह आहत हो रहा था। देश के लिए इतनी महत्त्वपूर्ण घटनाओं के प्रवाह पर प्रभाव डालने मे अपनी असमर्थता की उन्हें इतनी दुखद अनुभूति कदाचित् पहली बार हुई। गतिरोध से निकलने का रास्ता ढूँढने के उनके सभी प्रयत्न असफल हो रहे थे।

मुहम्मद अली जिन्ना के सामने पण्डित नेहरू ने समझौता करने के कई प्रस्ताव रखे, माउण्टबेटन के साथ घण्टों तक बातचीत की, महात्मा गॉधी के साथ परामर्श किया, अन्तरिम सरकार की बैठको मे गरमागरम बहसो मे भाग लिया, लेकिन देश को विभाजन से बचाने की आशा नहीं के बराबर रह गई।

मुस्लिम लीग के नेताओं ने लगभग एक मत से 'माउण्टबेटन योजना' का अनुमोदन किया। अखिल भारतीय काग्रेस समिति के अधिवेशन में बहुमत से विभाजन का प्रस्ताव पास हुआ। यहॉ तक कि महात्मा गॉधी ने भी, जो देश के विभाजन के दृढ विरोधी थे, स्वीकार किया कि राजनीतिक यथार्थता 'माउण्टबेटन योजना' को अंगीकार करने की अपेक्षा करती है।

इन्दिरा ने पिता को सान्त्वना देने की कोशिश की—"विभाजन होने पर भी देश के दो भागो के बीच घनिष्ठ आर्थिक, आत्मिक तथा सांस्कृतिक सम्बन्ध बने रह सकते है, वे एक मैत्रीपूर्ण तथा एकजुट महासंघ बना सकते हैं।"

"अगर ऐसा होता, तो बहुत ही अच्छा होता, इन्दु !" नेहरू ने कहा। "मगर अग्रेज इसके लिए देश का विभाजन नही कर रहे हैं। उनका मकसद बिल्कुल दूसरा है—वे 'फूट डालो और राज करो' की अपनी नीति बरतने के लिए दो अलग मुल्क कायम करने पर आमादा है, जो एक-दूसरे के प्रति दुश्मनी और सन्देह की भावना रखें। यकीन रखो, कलह पैदा करने में वे बड़े माहिर हैं। मगर तुम्हारी बात सही है, इन्दु, इस हालत से निबटने का सिर्फ एक रास्ता है—शान्तिपूर्ण, सद्भावनाशील नीति और हम सच्चे दिल तथा असीम लगन से यह नीति चलाते रहेंगे

4 अगस्त, 1947 को जवाहरलाल नेहरू ने हिन्दुस्तान की पहली राष्ट्रीय सरकार का गठन किया, जिसमें 14 व्यक्ति शामिल हुए। उन्होने स्वयं प्रधानमन्त्री और विदेशमन्त्री एव राष्ट्रमडलीय मामलो के मन्त्री का कार्यभार सँभाला तथा वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्रालय को भी अपने पास रखा।

14 अगस्त की रात को हजारों भारतवासियों के साथ इन्दिरा उस भवन के पास पहुँची, जिसमे धारा सभाओ का अधिवेशन चल रहा था। भवन के पास सडकें और चौक उत्सवी रोशनियो से जगमगा रहे थे। रग-बिरगे बल्बो से लदे, खूबसूरत ढंग से आलोकित वृक्ष रात के अँधियारे मे फूलझड़ियों-सी छोड़ते हुए लोक-कथा का मनमोहक वातावरण उत्पन्न कर रहे थे।

लगभग आधी रात को सभापति राजेन्द्र प्रसाद ने नये राज्य—भारतीय संघ—की स्थापना की घोषणा की। देश की आजादी की खातिर अपने जीवन न्योछावर कर चुके शहीदो की स्मृति मे केन्द्रीय विधान सभा के सदस्यो ने दो मिनट मौन धारण किया।

इन्दिरा की आँखो के सामने माँ और दादा के प्रिय छविचित्र उभर आए। धारा सभाओं के सदस्यो, पूरी जनता को सम्बोधित करने वाले पिता के शब्द सुनाई दिए—"बहुत वर्ष पहले हमने अपना भाग्य चुना था। अब वह क्षण आया है, जब हम अपना वचन भले ही पूरी तरह नहीं, पर आंशिक रूप से निभा लेंगे। जब घड़ी बारह बजाएगी और दुनिया नींद में डूबी हुई होगी, हिन्दुस्तान जिन्दगी और आजादी के लिए जाग उठेगा...इस भाग्य-निर्णायक क्षण में हमें हिन्दुस्तान और उसकी जनता की सेवा को पूर्ण समर्पण की शपथ ग्रहण करनी चाहिए... ।"

इन्दिरा पिता की आवाज सुन रही थीं और मन-ही-मन दोहरा रही थी—"शपथ लेती हूँ।" यह शब्द उनके हृदय में स्पन्दित हो रहा था, रोम-रोम में व्याप्त हो रहा था—"हिन्दुस्तान और उसकी जनता की सेवा को समर्पित होने की शपथ लेती हूँ।"

अगले दिन दोपहर के चार बजे सुखी और भावविह्वल इन्दिरा दिल्ली के लाल किले के सामने विशाल मैदान मे हुई विराट समारोही सभा में उपस्थित थीं।

किले की प्राचीन दीवारों के सामने विशाल जन सागर उभर रहा था। जामा-मस्जिद के उजले गुम्बद और मीनारे सुनहरी छटा बिखेर रहे थे।

बडे मच की दीर्घाओ मे सरकार के सदस्य और सम्मानित अतिथि बैठे हुए थे। एक तरफ पदकों व फीतों से सजे-सँवरे लार्ड माउण्टबेटन अपने सहयोगियों सहित विराजमान थे।

पण्डित नेहरू लम्बी शेरवानी तथा चूड़ीदार पायजामा पहने और गाँधी टोपी लगाए हुए थे। शेरवानी के तीसरे काजबटन में इन्दिरा ने छोटा लाल गुलाब लगा दिया था।

तोपों की सलामी हुई। श्वेत कपोत नीलाकाश में उड़े। नवस्थापित राज्य की राष्ट्र धुन बज उठी। जवाहरलाल नेहरू ने आजाद हिन्दुस्तान का केसरी श्वेत और

हरा तिरंगा झण्डा हौले-हौले चढ़ा दिया।

तब से हर वर्ष 15 अगस्त का दिन एशिया के महान् राज्य भारत के स्वाधीनता दिवस के रूप में मनाया जाता रहा है।

उत्सव समाप्त हुआ, पर गहरी आशका नेहरू के मन से नही मिटी थी। क्या धर्मांध जन-समूह को वश मे रखने मे सरकार असमर्थ रहेगी और बदला लेने तथा परधर्मियों को बधक बनाने की व्यवस्था चरमपथियो की मॉग पर चालू हो जाएगी, पाकिस्तान मे मरे हिन्दुओ के खून का बदला भारत मे मुसलमानो के खून से लिया जाएगा ? यह ख्याल आते ही इन्दिरा का दिल दहल उठता था।

अखबारो मे देश में हो रहे साम्प्रदायिक दगों के बारे में खौफनाक सूचनाएँ छप रही थीं। पश्चिमी पजाब मे मुसलमान हिन्दू और सिख पुरुषो और स्त्रियो को कत्ल कर रहे थे, बच्चों को भी नहीं बख्शते थे, उधर, पूर्वी पजाब में हिन्दुओ और सिखो के क्रोधोन्मत्त जत्थे मुसलमानो के कस्बों पर हमले बोलते, घरों मे आग लगाकर जलाते थे।

सारे देश को जिस आम पागलपन ने घेर लिया, उससे इन्दिरा को खौफ होता था। शान्तिपूर्ण जनता, जिसने अहिसा की भावना पीढ़ी-दर-पीढी माँ के दूध के साथ पाई थी, जिसके बीच तीन दशकों से अधिक समय से महात्मा गॉधी अहिंसा का सफलतापूर्वक प्रचार करते रहे, सहसा भीषण हिसा और घोर क्रूरता पर उतर आई। मानो किसी जहर ने लोकमानस को निष्प्राण कर दिया था, हर जगह अत्याचार, भय और बौखलाहट फैला दी।

खून-खराबे, आगजनी, भौतिक और सास्कृतिक निधियो की बर्बादी से देश तग आ रहा है। किसान अनकटी फसलें खेतों में छोडकर भाग रहे थे। घर-जायदाद, ढोर-डगर को छोड़ते हुए, कुओ में मिट्टी डालते हुए, सिचाई नहरे बर्बाद करते हुए लोग अपने जन्म-स्थानों से दूर जा रहे थे। सडकों पर लाखों शरणार्थियो के काफिले चल रहे थे। उन पर मानो कोई भूत सवार था, सुध-बुध खोकर वे भारी भीड मे शामिल होते और बौखलाए हुए कभी एक, तो कभी दूसरी तरफ चल पडते। पूरी तरह हताश होकर, भूखे-प्यासे, फटेहाल कपड़े पहने ये लोग अपनी जान हथेली पर रखकर नयी सीमा के उस पार किसी अज्ञात मंजिल की ओर बढ रहे थे, जहॉ उन्हें रोटी, मकान, रोजगार--कुछ भी नहीं हासिल हो सकता था, सिवाय भगवान् के किसी का आश्रय नही था। ये अधिकाश मुसीबतजदा लोग सच्चे दिल से विश्वास करते थे कि उन्हे इस तपस्या तथा बलिदान के प्रतिफल के रूप में भगवान् की कृपा मिलेगी। अनादि काल से देश-देश के शासको ने जनसाधारण के दिलोदिमाग मे यह विश्वास रोपने की कोशिश की ताकि लोगो को मानसिक दासता की बेडियो मे जकडकर रखा जा सके।

मानव स्वभाव ही ऐसा है कि सभी अन्य प्राणियों की अपेक्षा उस पर प्राकृतिक

सहजवृत्तियो का कम प्रभाव पडता है और स्वय लोगो द्वारा प्रतिपादित विचारो से वह अधिक प्रभावित होता है, वह न केवल पेट भरने, बल्कि आत्मा को भी तृप्त करने के लिए लालायित रहता है। अत विषाक्त अंधविश्वासो के कुप्रभाव से वह अरक्षित है।

इन्दिरा ने घटनाओ का सार समझने का प्रयत्न किया और उन्हे फिर से विश्वास हो गया कि शब्द, विचार मानव के जीवन मे अत्यधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। लोगों के मन मे कैसे विचार घर कर लेते है, इस पर उनकी सामाजिक चेतना निर्भर करती है, जो या तो विनाशकारी अथवा सृजनात्मक शक्ति का रूप धारण कर सकती है। अज्ञान और अन्धविश्वास घातक मानसिक अफीम है, जो सदियों से देशी और विदेशी उत्पीड़क जनता को खिलाते रहे हैं। अन्धविश्वास बगावत, अराजकता, पागलपन पैदा कर सकता है, मगर उसके सहारे नये भारत का, जिसका सपना इन्दिरा ने देखा था, निर्माण नही किया जा सकता।

दासवत् मनोवृत्ति, साम्प्रदायिकता, जाहिली, कट्टर, रूढिवाद—इनसे परोपजीवी उपनिवेशक फायदा उठा रहे थे और उनके सहारे भारत में राजनीतिक तथा सामाजिक परिवर्तनों के भीतरी शत्रु अपने प्रभुत्व की रक्षा कर रहे थे।

इन्दिरा के लिए यह स्पष्ट था कि देश को सच्चे अर्थ में आजाद करने के वास्ते लोक मानस को उन्मुक्त करना, उसे अन्धविश्वासों के चंगुल से छुडाना चाहिए। पुरानी रूढियो और दासवत् मनोवृत्ति को मिटाकर नये विचारों का प्रतिपादन करना, जन शिक्षा तथा सार्वजनिक संस्कृति का निर्माण करना आवश्यक है।

सितम्बर 1947 में जब भारत की राजधानी साम्प्रदायिक दंगों की चपेट में आई, तो इन्दिरा बच्चो सहित मसूरी मे रहती थीं। दिल्ली की तुलना मे वहाँ मौसम कही अधिक शीतल, सुहावना था और बच्चो की तबीयत अच्छी रहती थी।

एक दिन इन्दिरा ने पिता के निवास को फोन किया। फीरोज टेलीफोन के पास आए। उन्होंने कहा—"दिल्ली आने का विचार छोड़ दो। हालत बहुत नाजुक है। हमारे पास खाने को भी कुछ नही है।"

"तब तो मैं जरूर आऊँगी," इन्दिरा ने इसरार किया। "यहाँ से आलू भी ले आऊँगी।"

इन्दिरा को मनाना-समझाना मुमकिन नही था। उसी दिन उन्होने सामान बॉधा और दो बोरे आलू लेकर दिल्ली के लिए रवाना हुई।

रास्ते में एक छोटे स्टेशन पर उन्होंने किसी असहाय आदमी पर टूट पड़ी भीड देखी। मार-पीट और सम्भवत नर-संहार की वह मूक गवाह नहीं रह सकती थी। इन्दिरा रेल के डिब्बे से उतरीं और हाथ उठाकर उन्होने हमलावरों को रोका।

रेलगाडी के दूसरे मुसाफिर भयभीत होकर अपनी सीटों पर बैठे खिड़कियो से चुपचाप झॉक रहे थे

पता नहीं किस चीज ने या तो इन्दिरा की नारी गरिमा और सौन्दर्य ने अथवा

उनकी निर्भीकता ने—जन हत्या पर उतारू भीड को रोक दिया, और हमलावर ठिठक गए।

"असहाय आदमी को मारते हुए आपको शर्म नहीं आती ? इस आदमी का कोई कसूर नही है। उसे छोड दो !" इन्दिरा ने हुक्म दिया और हमलावरों का नशा उतर गया, वे सकपका गए और सिर झुकाकर बिखरने लगे।

दिल्ली और उसके उपनगरो मे करीब चार लाख पजाबी शरणार्थी—हिन्दू और सिख—जमा हो चुके थे। शहर मे दगे शुरू हुए। लोगो की जाने जाती थीं, ऐतिहासिक स्मारक और मुस्लिम तीर्थ नष्ट हो रहे थे।

खतरनाक परिस्थिति को सरकार के नियन्त्रण मे लाने के लिए जवाहरलाल नेहरू असाधारण कदम उठा रहे थे। दिल्ली पधारे महात्मा गॉधी को गहरा सदमा पहुँचा—उनके आदर्श ढह रहे थे। साम्प्रदायिक मेल-मिलाप की उनकी सभी अपीले अनसुनी कर दी गई और महात्मा गॉधी ने अपने नैतिक हथियार को एक बार फिर उपयोग किया। 12 जनवरी, 1948 को उन्होंने तब तक आमरण अनशन करने की घोषणा की, जब तक दिल्ली में शान्ति और व्यवस्था स्थापित नही होती।

यह निराशा की गुहार, लोगो की आत्मा से पुकार थी और उन जनसाधारण को उलाहना था, जिनकी सेवा में महात्मा ने अपना हृदय, बुद्धि और जीवन समर्पित किया था। यह हिन्दू तथा मुस्लिम दकियानूसो की निन्दा, धार्मिक कट्टरता, अधविश्वास तथा धर्माध की भर्त्सना, धार्मिक सहिष्णुता, भाईचारे, धर्मनिरपेक्ष लोकतान्त्रिक राज्य के अन्तर्गत हिन्दू-मुस्लिम एकता की अपील थी।

गॉधीजी की नैतिक और शारीरिक शक्ति क्षीण हो गई, वह निर्बल हो रहे थे। सभी ईमानदार भारतवासी वृद्ध नेता के स्वास्थ्य से चिन्तित थे। बहुत-से लोगो को होश आया, अपने जुर्मो से वे सिहर उठे।

शरणार्थी शिविरों में पानी और खुराक की कमी थी। रिहाइशी जगह न होने ओर गन्दगी की वजह से हैजा, टाइफाइड, पेचिश आदि बीमारियॉ फैल रही थीं।

ऐसी हालत मे सही जानकारी हासिल करने के लिए नेहरूजी ने इन्दिरा से अनुरोध किया कि वह शरणार्थियो के रहन-सहन के प्रबन्ध मे हाथ बॅटाएँ।

अंगरक्षकों की सेवाओ से इन्कार करते हुए वह अपनी एक सहेली सहित खुली मोटरगाडी में बैठकर शरणार्थियों के जमाव स्थानो का दौरा करने लगी, चिकित्सा सहायता तथा खाद्यान्न की आपूर्ति की व्यवस्था करने में जुट गई, नालियॉ बनाने तथा सफाई व्यवस्था के निर्माण के लिए लोगो को एकजुट कर रही थी, भूखे लोगो को सहायतार्थ चंदे एकत्र करने का प्रबन्ध कर रही थी। निःसकोच वह निराश, क्रुद्ध लोगों से बिना किसी झिझक मिलती थी, उनके साथ बातचीत करती थीं, सरकार की नीति समझाती थीं।

कई बार इन्दिरा को भारी खतरो का सामना करना पडा इस स्त्री में ऐसा साहस देखकर उनके मित्र दग रह जाते थे सबसे अधिक वे लोगो का

अन्धा क्रोध शान्त करने, उन्हे होश मे लाने की इन्दिरा की क्षमता से प्रभावित होते थे।

एक बार वह गाडी मे सवार होकर कही जा रही थी। गाडी का ड्राइवर मुसलमान था। एक जगह पर अपने सामने उन्होंने करीब दो सौ हिन्दुओ की भीड देखी, जो किसी मुसलमान की पिटाई कर रही थी।

हिंसक भीड दहाड रही थी, खून करने पर उतारू थी। ड्राइवर ने आव देखा न ताव, गाड़ी की रफ्तार तेज कर दी और भीड के पास से जल्दी-से-जल्दी गुजरने का फैसला किया। मगर इन्दिरा ने उसे गाडी रोकने को कहा। ड्राइवर नही माना। तब इन्दिरा ने चेतावनी दी कि वह चलती गाडी से कूद पडेगी। ड्राइवर को हुक्म मानना पडा।

"रुक जाओ।" वह चिल्लायीं और भीड को चीरती हुई लहूलुहान व्यक्ति के पास पहुँच गई। "तुम लोग अब उसे हाथ नहीं लगाओगे।"

"तुम कौन हो ? बड़ी आई हमे हुक्म देने वाली !" किसी ने उन्हें गुस्सा होते हुए ललकारा।

उन लोगो को इसका गुमान नही था कि उनके सामने भारत के प्रधानमन्त्री की पुत्री खडी थी।

"मै इस आदमी की जान बचाने आई हूँ," अविचल भाव से इन्दिरा ने जवाब दिया और जमीन पर पडे आदमी को पाँवो पर खड़े होने मे मदद दी।

"तुम क्या यह समझती हो कि हम इसके साथ तुम्हें भी जिन्दा जाने देंगे ?" इन्दिरा को सुनाई पडा। वह सिर ऊँचा किए खडी हो गई, विस्मित चेहरों पर जरा खुलकर निगाह डाली और शान्त भाव से मुस्कराकर बोली—"हाँ, आपमें से कोई भी मुझे मार सकता है, लेकिन आप लोग मुझे मारना नहीं चाहते और नहीं मारेगे !"

इस महिला मे कोई अद्भुत आन्तरिक शक्ति निहित थी, जो लोगो पर सम्मोहक प्रभाव डाल रही थी।

उन दुखद दिनों मे महात्मा गाँधी हिन्दुओ और मुसलमानों के बीच मेल कराने के लिए अपनी शेष आत्मिक शक्ति लुटा रहे थे। वह अपने सभी सहयोगियो से खुश नही थे। कई हिन्दू कांग्रेसी धर्मांध और देशाहंकारी उन्माद की धारा मे बह गए और मुस्लिम समुदाय के बीच कार्य का बहिष्कार कर रहे थे।

लगभग हर दिन शाम को इन्दिरा गाँधीजी से मिलने आती थी, लेकिन शरणार्थियो के बीच अपने काम, खासतौर से खतरनाक घटनाओ का जिक्र नहीं करती थी, परन्तु महात्मा गाँधी को इसकी भनक पड गई। उन्होने पूछा—"मैने सुना है इन्दु, कि तुमने अपनी जिन्दगी को जोखिम मे डालकर एक आदमी को बचा लिया क्या यह ठीक है ?"

"बताने को है भी क्या ? मैने वही किया, जो उस वक्त मुझे सही लगा और नतीजे की नही सोची," इन्दिरा बोलीं और खुलकर मुस्करायी। "भावना दिमाग से अधिक शक्तिशाली है।"

गॉधीजी ने इन्दिरा की ओर स्नेहभरी ऑखों से देखा, उन्हें इन्दिरा का व्यवहार अच्छा लगा। खुद उन्होंने लोगों की अन्तरात्मा से अपील को हमेशा सघर्ष के साधन के रूप मे इस्तेमाल किया था, इसलिए इन्दिरा की भावना को वह अच्छी तरह समझ सकते थे।

गॉधीजी ने इन्दिरा मे जनता को प्रभावित करने की विरल प्रतिभा के लक्षण देख लिये। अद्भुत है यह दिलेर, ईमानदार, युवा आकर्षक स्त्री, जो लोगो मे नेक मानवीय भावना जाग्रत कर सकती है !

महात्मा गॉधी ने इन्दिरा से अनुरोध किया कि वह दिल्ली के मुस्लिम तथा हिन्दू समुदायों के नेताओं से मिले और उनमे मेल कराने की चेष्टा करें। इसका बीड़ा कम ही लोगो ने उठाया था।

इन्दिरा ने खुशी से यह काम सॅभाला। मगर उन्होने सबसे पहले धार्मिक समुदायों के प्रमुखो से सम्पर्क स्थापित नहीं किया। वह आम लोगो से मिलती थीं, घर-घर जाकर स्त्रियों और बच्चो की उपस्थिति में हिन्दू पुरुषो को मुसलमानों से भेंट करने के लिए मनाती-समझाती थी। शुरू मे उन्होंने दो समुदायों के अलग-अलग प्रतिनिधियो, फिर दोनों तरफ से छोटे-छोटे दलो की मुलाकातो का प्रबन्ध किया और अन्तत· मेल-मिलाप की एक बड़ी सभा का आयोजन किया। करीब पॉच सौ हिन्दू और मुसलमान नेक पडोसियो की तरह इकट्ठे हुए, उन्होने मिलकर चाय पी, बातचीत की, मन का गुबार निकाला, अपनी आशाओ-आकाक्षाओं की चर्चा की। विश्वास करना कठिन है, लेकिन यह सब तथ्य है।

गॉधीजी के अनशन ने अपना असर दिखाया। उनकी उपस्थिति में हिन्दू तथा मुस्लिम समुदायों के प्रतिनिधियों ने साम्प्रदायिक शान्ति सुरक्षित रखने के प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर किए।

धीरे-धीरे देश मे शान्ति पुनर्स्थापित हो रही थी और महात्मा गॉधी ने अनशन खत्म कर दिया। पर उग्रवादी इससे नाराज थे। उन्होने गॉधीजी पर "हिन्दू समाज के पावन ध्येय के साथ विश्वासघात" का आरोप लगाया और उन्हें धमकियॉ दी।

29 जनवरी, 1948 को महात्मा गॉधी ने इन्दिरा को एक रुक्का भेजा। उन्होने लिखा कि कई दिनो से मुलाकात नहीं हुई और अपने यहॉ आने का अनुरोध किया।

इन्दिरा राजीव सहित आई। गॉधीजी को उन्होने बाग मे एक पेड़ की छाया में बैठा पाया। बडों की बातचीत के दौरान राजीव गॉधी की जापमाला के साथ खेलता रहा। कोई गम्भीर विषय नही उठाया गया, सिनेमा, बच्चो, घर आदि की चर्चा हुई।

और अगले दिन महात्मा गाधी नहीं रहे 'हिन्दू महासभा' के धर्मांध नाथराम गोड्से ने उनकी नृशस ढग से हत्या कर दी

महात्मा गाँधी की मृत्यु से राष्ट्र की अपूरणीय क्षति हुई।

सारा देश शोकग्रस्त हो गया। मालूम पडता था कि महात्मा गाँधी ने हिंसा की जिस घातक प्रवृत्ति के विरुद्ध सघर्ष को अपना जीवन अर्पित किया था, उसने जीत हासिल की, उदीयमान भारत को अपने राष्ट्रपिता से वंचित कर दिया, परन्तु हिंसा की विजय उसकी पराजय सिद्ध हुई। महात्मा का बलिदान व्यर्थ नही गया। उनकी मृत्यु ने न केवल घोर साम्प्रदायिक सकट की आग बुझाई, जिसे उपनिवेशवादियो ने भडकाया था तथा जिसे मुस्लिम और हिन्दू दकियानूस बरकरार रखे हुए थे, वरन् एकीभूत भारत गणराज्य के निर्माण के विरोधियो पर भी प्रचण्ड प्रहार किया।

इन्दिरा और उनके पिता के लिए यह अपार व्यक्तिगत दुःख भी था। उनके निजी तथा राजनीतिक जीवन मे गाँधीजी सदा उनका सहारा रहे थे।

महात्मा गाँधी राजनीतिक वर्ग सघर्ष के सिद्धान्तों को नहीं मानते थे, लेकिन उनके कार्यकलाप जन-चेतना को जाग्रत करते थे, आम जनता के नेता के रूप में यह सच्चे क्रान्तिकारी थे। उन्होने कहा—"मै अपने को दीन श्रमिक, हिन्दुस्तान ओर मानव-जाति का दीन सेवक मानता हूँ।"

इन्दिरा अनेक विलक्षण व्यक्तियों के सम्पर्क में आई, लेकिन उन्हे विश्वास था कि महात्मा गाँधी और रवीन्द्रनाथ ठाकुर दो महानतम विभूति थे, जिन्हे भारत ने अपनी जनता को एक ही पीढ़ी (मगर कैसी विलक्षण पीढी !) के जीवन-काल मे भेट किया था।

गाँधी और रवि ठाकुर मे जमीन-आसमान का अन्तर था, लेकिन वे अभिन्न थे, क्योंकि इन दोनों में भारत नाम की शाश्वत अवधारणा का विविध सारतत्त्व मूर्तिमान हुआ।

इन दोनो ने ससार के सम्मुख यह सत्य सिद्ध करने की चेष्टा की थी कि जनता का आत्मबल उत्पीडन व अस्त्रबल से अधिक बलशाली होता है।

महात्मा गाँधी ससार में नहीं रहे, पर उनकी स्मृति बनी रहेगी, भारतवासियो की नयी-नयी पीढियाँ उनकी तपस्या की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करती रहेंगी, इन्दिरा अपने बच्चों को गाँधीजी की कहानी सुनाएँगी और कालान्तर में वे अपनी सन्तानो, इन्दिरा के पौत्र-पौत्रियों को यह ज्ञान देगे।

8

भारत और संसार

देश का विभाजन हो चुकने पर भारत के ऊपर तूफान थम गया। साम्प्रदायिक मेल हो गया। धार्मिक गुरुओ ने अपने आश्रमों, राजा-महाराजाओं ने महलो और जमींदारो तथा उद्योगपतियो ने अपनी हवेलियों मे शरण ली। यह सोचते हुए वे बेचैन रहते थे कि नयी सरकार किस करवट बैठेगी। जवाहरलाल नेहरू के समाजवादपरस्त विचारो से भी वे चिन्तित थे। उधर, किसान पहले की तरह जमीन जोतते रहे, खनिक कोयला निकालते रहे, मजदूर खराद चलाते रहे, मानो कुछ भी घटित नहीं हुआ हो, कुछ भी नहीं बदला हो। अँगीठियो का मीठा धुआँ देश के ऊपर फैलता रहा। ग्रामीणो की कुटीरें चाँदनी ओढे खड़ी रहीं, महिलाओ के चाँदी के कगन झनझनाते रहे, उनके भूखे बच्चे अशान्त नींद की गोद मे रहे थे।

कहीं से सितार की मधुर स्वर-लहरियाँ हवा के झोकों के साथ आ रही थी। रात का माहौल सुगन्धित था। अनगिनत नक्षत्रों की ओर टकटकी बाँधे इन्दिरा खुली खिडकी के सामने बैठी थी। बगल वाले कमरे में पिता काम में लगे हुए थे। वह बहुत कुछ बदलना चाहते थे—किसानो की मेहनत को आसान बनाना, उनकी झोपडियो मे बिजली की रोशनी का इन्तजाम करना, देश के कोने-कोने में नये मन्दिर—विज्ञान और सस्कृति के मन्दिर—स्थापित करना। वह चाहते थे कि बच्चे भरपेट खाना खाएँ और सोते वक्त मीठे सपने देखे। उनका यह सपना इन्दिरा के सपने जैसा ही था।

भारत का रूप बदल गया, समूचे विश्व का भी राजनीतिक रग तेजी से बदल रहा था। उसके मानचित्र पर जहाँ पहले तीन-चार विशाल औपनिवेशिक साम्राज्यो के रगो की प्रधानता थी, वहाँ अब मुक्ति की वर्षा में धुले कई नये स्वाधीन राज्य आलोकित हो उठे।

ब्रिटिश साम्राज्य का हरा रंग सभी महाद्वीपों से तेजी से मिट रहा था और ब्रिटेन के छोटे द्वीप दुनिया के मानचित्र पर अब इतने प्रतापी नही मालूम पड़ते थे। उन्हे देखकर आश्चर्य होता था कि सदियो तक यह छोटा राज्य आधी दुनिया पर भला कैसे हावी रह सका

उसकी बढ़ी हुई इजारेदार पूँजी को, विशेषकर अस्त्र-उत्पादन के क्षेत्र में, पहले की तरह विस्तृत भूक्षेत्र, मंडियॉ, कच्चा माल और सस्ती श्रम-शक्ति दरकार थीं। ये सभी साधन अर्जित करने के लिए उसे बेकाबू हुए राष्ट्रो को किसी तरह अपने वश में रखना था। पर इस उद्देश्य की सिद्धि अकेले ग्रेट ब्रिटेन के बस की बात नही थी।

मार्च, 1946 मे संयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति ट्रुमैन के अतिथि के रूप मे अमरीका जाकर चर्चिल ने फुल्टन मे अपना अमंगलसूचक भाषण दिया। उन्होने सोवियत संघ तथा स्वाधीन विकास की राह पकडे अन्य देशो के विरुद्ध 'धर्मयुद्ध' की घोषणा की और आग्ल-अमरीकी सैनिक-राजनीतिक गुट कायम करने की अपील की। 'शीत युद्ध' का जमाना शुरू हुआ।

पश्चिमी राजनयज्ञ--राजदूत, कौसिलर और अटैची—नवस्वाधीन भारत की राह पकड़ने लगे, भारत सरकार के मन्त्रियो, बैंक मालिको तथा उद्योगपतियो से भेट करने लगे, राजा-महाराजाओं के महलो में अतिथि बने। कॉकटेल पार्टियो, लच और डिनरो का दौर शुरू हुआ, वे प्रभावशाली स्थानीय हलकों, विपक्षी तबकों से सम्पर्क स्थापित करने लगे, उन्होने भारत के लिए 'लाल खतरे' की चेतावनी देनी शुरू कर दी। वे भारत को फौजी मदद देने की पेशकश करने लगे। उन्होंने हथियार और औद्योगिक साज-सामान खरीदने के लिए कर्ज देने का वायदा किया, अपना उद्योग कायम करने से भारतीयों को रोकने की कोशिश की, विश्व कम्युनिज्म के विरुद्ध पश्चिमी राज्यो के गुट में शामिल होने की राय दी।

पश्चिमी जगत् के एक राजदूत ने भारत सरकार के प्रधान की कूटनीतिक खुशामद की, हार्दिक सद्भावना प्रकट की, परन्तु शाम को उनके दृढ रवैये से खिन्न होकर उसने कोडित तार वाशिंगटन भेजा—नेहरू 'छद्मवेशी कम्युनिस्ट' है, उसने भारत की अर्थव्यवस्था के सार्वजनिक क्षेत्र की स्थापना की घोषणा की है, औपनिवेशिक अधिकारियों के सभी उद्यमो और साथ ही पूरी रेलवे व्यवस्था का भी राष्ट्रीयकरण कर दिया है, वह न केवल सार्वजनिक, बल्कि निजी क्षेत्र में भी नियोजन के आधार पर बडे उद्योगों के विकास के केन्द्रीयकृत नियन्त्रण की जरूरत पर जोर दे रहे है। बातचीत से इसकी कोई आशा पैदा नहीं होती कि भारत किसी सैनिक-राजनीतिक गुट मे शामिल होने के लिए राजी हो जाएगा।

इन्दिरा भारत की राजधानी में विदेशी राजनयज्ञो के कार्यकलाप की प्रत्यक्षदर्शी थी।

सोसाइटी के निस्सार जीवन, दावतो की तडक-भड़क, राजदूतों की पत्नियों के साथ नीरस बातचीत, प्रधानमन्त्री के निवास-स्थान की मेजबान की जिम्मेदारियॉ निभाने में उनका मन नहीं लग रहा था, लेकिन किया क्या जाए, उसके अलावा और कौन पिता की सहायता करता ? उन्होंने इन्दिरा पर भरोसा रखा और इन्दिरा ने दावतों का मीनू तय करने तथा निमन्त्रण भेजने से लेकर अतिथियो को मेज पर

बिठाने तक औपचारिकताओ का सारा कार्यभार स्वय सॅभाला। फुरसत का समय बिल्कुल नही मिलता था। हर दिन का नाश्ता, लच और डिनर बोझिल काम बन गए, राजनयिक नियमो के अनुसार, अधिकृत प्रतिनिधियो के साथ औपचारिक व्यवहार आवश्यक था। न खाने की तबीयत होती थी और न ही भोजन का स्वाद मिल पाता था। चाहे-अनचाहे मुस्कराना, बतियाना, सवालो के जवाब देना और हर क्षण चौकस रहना, यह सोचना पड़ता था कि किससे क्या कहा जाए, ताकि वह बुरा न माने और किसी शब्द का गलत मतलब न निकाले।

संयुक्त राज्य अमरीका के राजदूत बड़े व्यवहारकुशल थे। ड्राई मार्टिनी के हर घूँट के साथ उनका मुर्झाया हुआ चेहरा लाल हो रहा था। बारम्बार वह एक ही सवाल उठा रहे थे—"क्यों न भारत मित्रराष्ट्रो के गुट मे शामिल हो जाए ?"

पिता ने रकाबी परे सरका दी। इन्दिरा को मालूम था कि यह सवाल उन्हे किस कद्र विचलित करता था।

"हमे इसलिए उलाहना दिया जाता है कि हम दो परस्परविरोधी शिविरो मे दुनिया को बॉटने वाली दीवार पर चढ़ बैठे है," उत्तेजना को वश में रखते हुए पण्डित नेहरू ने जवाब दिया। "हमसे कहा जाता है कि तटस्थ रहना अनैतिक है। लेकिन भारत केवल तटस्थ नही है। वह शान्ति तथा आजादी के लिए सक्रिय सकारात्मक सघर्ष की नीति चला रहा है। शान्ति हमें सिर्फ इसलिए नही चाहिए, ताकि हम विकास कर सके, अपने देश की जनता का पेट भर सकें, शान्ति की सभी को जरूरत है, अमरीकियों को भी, राजदूत महोदय। इस रास्ते पर चलना ठीक नही है, जिस पर चलकर मानव-जाति को दो बार विश्व-युद्धो की विभीषिकाएँ सहनी पड चुकी हैं। भारत इस रास्ते पर नहीं बढेगा।"

और फिर कोड किया हुआ तार ह्वाइट हाउस को भेजा गया। वाशिगटन के अधिकारी नेहरू सरकार से नाराज हो गए। उन्होंने भारत को अनाज की सप्लाई रोकने का फैसला किया।

इन्दिरा ने देखा कि पिता बडी मुश्किल में हैं, पश्चिमी राज्य उन पर दबाव डाल रहे हैं। फौजी गुटों मे विभाजित हुई इस अशान्त दुनिया में भारत को कैसा स्थान ग्रहण करना चाहिए ?

"साम्राज्यवाद से न्यायसंगत घृणा की भावना मे बह जाना आसान है," नेहरू ने कहा। "मिसाल के लिए, ग्रेट ब्रिटेन से भारत के औपनिवेशिक भूतकाल का बदला लेना, उसके साथ पूर्ण सम्बन्ध-विच्छेद की घोषणा करना। लेकिन क्या यह निर्णय बुद्धिसंगत होगा, उससे भारत और विश्व शान्ति का हितसाधन होगा ? क्या ऐसी हालत में नवोदित, कमजोर देश भारत विश्व में तनाव घटाने तथा 'शीत युद्ध' का जोर कम करने के ध्येय में समुचित योग दे पाएगा ?"

"मगर जो भी हो ब्रिटेन पर आर्थिक अधीनता का भारत को अन्त करना ही पडेगा इन्दिरा ने आग्रहपूर्वक कहा

"इग्लैण्ड के साथ हिन्दुस्तान के आर्थिक सम्बन्ध दो शताब्दियों से कायम है, क्या उन्हे एक चोट मे काटा जा सकता है ?" नेहरू ने पूछा और अपनी बात समझाते हुए कहा—"दो देशो के आर्थिक और वित्तीय सम्बन्धो का ढाँचा चाहे कैसा भी घटिया क्यो न हो, उसकी जगह कोई दूसरा ढाँचा बनाना होगा ; धीरे-धीरे, जब भारत शक्तिवर्द्धन करेगा, अपने पैरो पर खड़ा होगा, वह अपनी राजनीतिक स्वाधीनता का उपयोग करते हुए सभी देशो, साथ ही सोवियत संघ तथा सयुक्त राज्य अमरीका के साथ भी समानाधिकार तथा पारस्परिक लाभ के आधार पर सम्बन्ध स्थापित करेगा। फिलहाल अपनी सम्प्रभुता को सुरक्षित करते हुए भारत ब्रिटिश राष्ट्रमंडल के साथ औपचारिक सम्पर्क बनाए रखेगा और इसके साथ-साथ दूसरे देशो के साथ भी संसर्ग का दायरा बढाता जाएगा, चाहे उनकी सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था कुछ भी क्यो न हो, वे चाहे किसी भी गुट मे शामिल क्यो न हो। स्वय भारत को किसी भी सैनिक-राजनीतिक गुट का अग नही बनना चाहिए।"

"और अपनी स्वाधीनता के लिए सशस्त्र सघर्ष करने वाले देशो के प्रति भारत का रवैया कैसा होगा ? इस मामले मे तो युद्ध तथा शान्ति का प्रश्न उत्पन्न हो रहा है।" इन्दिरा ने कहा, हालाँकि इस सवाल पर अपने पिता के दृष्टिकोण से वह भली-भाँति परिचित थी। पिता के विचारों को सटीक सुलझे हुए, सन्तुलित राजनीतिक सूत्रों का रूप धारण करते हुए देखना इन्दिरा को पसन्द था।

"आजादी का न होना और नस्ली भेदभाव केवल अस्वाभाविक अवस्था नही है। ये बीज है, जिनसे सकटो और युद्धो का विष-वृक्ष उगता है।

"भारत राष्ट्रों के मुक्ति सग्राम का खुलकर समर्थन करेगा और राजनीतिक स्वाधीनता तथा सामाजिक-आर्थिक प्रगति के मार्ग पर बढ़ने वाली शक्तियों को एकजुट करने का प्रयास करेगा। विश्व शान्ति की रक्षा करना भारत की विदेश नीति का मुख्य ध्येय होगा।"

पिता के विचार इन्दिरा के मन मे घर कर लेते थे। गुटनिरपेक्षता की विवेकपूर्ण अवधारणा उन्हे आकर्षक लगती थी, जो देश के राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय हितो के सर्वथा अनुकूल थी। परन्तु सभी लोग इन्दिरा की तरह जवाहरलाल नेहरू का समर्थन नही कर रहे थे। भारत के बडे पूँजीपति वर्ग के प्रतिनिधि क्या करवट बैठेगे, विपक्षी पार्टियाँ क्या रुख अपनाएँगी ?

प्रधानमन्त्री का निवास-स्थान व्यक्तिगत जीवन के लिए बहुत उपयुक्त जगह नही होता। उसमे पूरा वातावरण राजनीति से ओतप्रोत होता है और राजकीय मामले पारिवारिक काम निबटाने का मौका नही देते।

फीरोज फिर लखनऊ मे काम करने लगे। कई बार बच्चों को लेकर इन्दिरा उनके पास जाती थी, लेकिन कुछ ही समय बीतने पर पिता से तार मिलता था—"फौरन आओ। महत्त्वपूर्ण अतिथि आने वाले है। मुझे तुम्हारी सहायता चाहिए।" हर बार ही ऐसा होता था पिता को समझना मुश्किल नहीं था—अकेले रहकर सभी

दायित्व सँभालना उनके लिए कठिन था। फीरोज की तो बात ही अलग थी। वह नौजवान, मिलनसार व्यक्ति थे, पत्रकार के नाते वह बहुत-से लोगों से मिलते रहते थे, उनके अनगिनत मित्र थे और फुरसत का मजा लेने मे वह माहिर थे। परन्तु फिर भी अपना स्थायी घर न होना उन्हे खलता था और कभी-कभी वह नाराजगी भी जाहिर करते थे। स्वय फीरोज उस समय दिल्ली मे स्थायी तौर पर नही रह सकते थे, क्योकि वह लखनऊ के एक चुनाव क्षेत्र मे ससद के लिए उम्मीदवार के रूप मे खडे होने का इरादा रखते थे। चुनावो के बाद सब कुछ तय होना था—ससद-सदस्य चुने जाने की हालत मे वह दिल्ली आकर अपने परिवार के साथ रह सकते थे।

सरकार के निर्णय पर भारत मे भूतपूर्व ब्रिटिश सेनाध्यक्ष की हवेली को प्रधानमन्त्री का निवास-स्थान बना दिया गया। जवाहरलाल नेहरू ने राष्ट्रीय परम्परा तथा अपनी व्यक्तिगत रुचि के अनुसार नया निवास-स्थान सजाने का अनुरोध इन्दिरा से किया। उनके ख्याल में, और कोई भी इन्दिरा से अच्छा यह काम नही सँभाल सकता था।

हवेली का निरीक्षण करके इन्दिरा निराश हो गई—सगमरमर, सोना, मखमल—यह सारा ठाट-बाट हवेली के भूतपूर्व स्वामी की 'शोहरत' की याद दिलाता था। दीवारो पर रोबीले ब्रिटिश सम्राटो-सम्राज्ञियो के छविचित्र टँगे हुए थे। उनकी सदिग्ध नजरें मानो इन्दिरा की हर चाल पर टिकी रहती थी और साफ था कि इस महिला के हस्तक्षेप से वे नाराज थे। भारी-भरकम सुनहरे चौखटो वाले धीर-गम्भीर जनरलो के छविचित्र मन पर हावी होते थे, ध्यान भग करते थे।

सबसे पहले इन्दिरा ने यह पूरी 'चित्रावली' रक्षा मन्त्रालय के गोदाम मे ले जाकर रखने का हुक्म दिया। इसके बजाय उन्होने कुछेक लघु चित्रो, हिमालय के लुभावने भूदृश्य चित्र और ताजे फूलो सहित गुलदानों से घर सजाया, खिडकियों पर कोमल रगो के पर्दे लटकाए, आवश्यक फर्नीचर रखवाया, अध्ययन कक्ष तथा पुस्तकालय, भोजनालय तथा दावतों के लिए विशाल हॉल, शयन कक्षो व बाल कक्ष को सुव्यवस्थित किया। हवेली का पूरा माहौल ही बदल गया, उसमे जान आ गई। जवाहरलाल खुश थे। उन्हें घर मे सुव्यवस्था बहुत भाती थी। घर की सजावट में तनिक भी कुरुचि की निशानी उन्हें अखरती थी। इन्दिरा उन्हे इस दृष्टि से खुश करने मे कोई कसर नही छोडती थी।

नया घर सबसे अधिक राजीव और सजय को पसन्द आया—खेलने के लिए उसमे जगह की कमी नही थी। बालकों ने निर्जन, सूनी हवेली में जान फूँक डाली, उसे रहने का असली घर, हँसी-खुशी और खेलों-शरारतो का स्थल बना दिया।

और जब घर मे तरह-तरह के कई जानवर लाए गए, तो वह छोटा चिड़ियाघर-सा बन गया। घर मे कुछेक कुत्ते रखे गए, वे उम्दा और मामूली नस्ल के कुत्ते थे, तोते, कबूतर गिलहरियाँ और दूसरे जानवर भी पाले गए

लडकों के सौभाग्य से नाना भी जानवरों को उनसे कम पसन्द नहीं करते थे

देश की यात्रा करने के बाद वह अक्सर विभिन्न जीव-जन्तु साथ लाते थे। उनकी देखभाल करना बच्चों का फर्ज था। एक बार पूर्वी हिमालय से उन्होंने पांडा जन्तु का नन्हा झबरीला शावक लाकर उन्हे भेट किया।

बच्चों ने उसका नाम भीम रखा। भालू शावक तेजी से बढा, बड़ा ओर ताकतवर जानवर बन गया। अतः उसे घर से निकालकर बाग में बनाए गए बाड़े मे रखना पडा।

फिर कुछ समय बाद सिक्किम के मित्रो ने मादा पांडा उपहारस्वरूप भेजा, जिसे पारिवारिक कौसिल मे पैमा नाम दिया गया।

आए दिन नेहरूजी इन जानवरों को देखने जाते थे। भीम उनका चहेता था। लगता था कि भीम के साथ पिता किसी गुप्त भाषा मे बोल-चाल करते थे और वे एक-दूसरे को भली-भॉति समझते थे।

एक दफा हुआ यह कि पण्डित नेहरू बीमार पड गए। भीम को मानो इसका अहसास हुआ, वह बेचैन रहने लगा, कुछ नहीं खाता था, उसकी मायूस ऑखे मानो प्रार्थना करती रहती थीं। इन्दिरा ने भीम की दुर्दशा का कारण भॉप लिया। वह उसे पिता के शयन-कक्ष में ले गई और मालिक के हाथ चाटकर भीम को इत्मीनान हो गया।

कालान्तर मे बाग के अलग बाडे मे शेर के बच्चे बसाए गए। कितने ही विख्यात व्यक्तियो ने इन प्यारे जानवरों को सहलाया था। एक शावक मार्शल टीटो को बहुत पसन्द आया, उसे 'यूगोस्लावियाई नागरिकता' प्रदान की गई और वह बेलग्रेड जाकर रहने लगा।

जानवर पृथ्वी पर मनुष्य के पड़ोसी होते हैं, उनकी जाति उतनी ही रहस्यपूर्ण है, जितनी कि स्वयं मनुष्य जाति।

प्रकृति की इन निर्दोष सन्तानो को देखते हुए चिन्तनशील मानव के मस्तिष्क मे कितने विचार उत्पन्न होते हैं। हम इन्सानियत—मानव-प्रेम—की प्रायः चर्चा करते हे, लेकिन क्या मनुष्य विशाल, सम्पूर्ण संसार का अभिन्न अग नहीं है ? मनुष्य प्रकृति का स्वामी, उसका अधिपति नही है, वह तो प्रकृति की अन्तरात्मा है।

इन्दिरा का स्वभाव क्रियाशील था, उनके लिए कोई भी छोटा, पर व्यावहारिक कार्य सर्वकल्याण के बारे में निष्फल कल्पनाओ की अपेक्षा अधिक महत्त्व रखता था।

परन्तु कभी-कभी शान्त, चॉदनी रात मे एकान्त मे ब्रह्माण्ड के साथ साक्षात्कार होने पर वह ठाकुर की मधुर चिन्तनधारा मे समा जाती थी, शाश्वत सत्य पर चिर्न्तन-मनन करती थीं, अस्तित्व का सारतत्त्व समझने की चेष्टा करती थीं।

क्या मनुष्य का जीवन तथा समग्र जनता का अस्तित्व समतुल्य है ? क्या इस विषय की विवेचना सार्थक हो सकती है—कहाँ बूँद है और कहा सागर ? लेकिन तब

तो हमारी पृथ्वी भी ब्रह्माण्ड की तुलना में तुच्छ, नगण्य है। सभी इकाइयों की परिमाणात्मक तुलना नही की जा सकती। मानव-जीवन अमूल्य है।

अपनी जनता से प्रेम का अर्थ है—जनसाधारण की नियति के प्रति सच्ची सहानुभूति रखना, उनका सुख-दु ख बॉटना। हर किसान, मजदूर, हर बच्चे को सुख पाने का जन्मसिद्ध अधिकार प्राप्त है।

जनता कोटि-कोटि जनमात्र नहीं है। मानव और समाज के जटिलतम अन्तर्सम्बन्धो का अंकगणित के माध्यम से आकलन नही किया जा सकता। जनता के जीवन, उसकी मनोभावनाओं तथा आवश्यकताओं का सही परिचय प्राप्त करने के लिए साधारण लोगो के ससर्ग में रहना आवश्यक है।

इन्दिरा को ऐसा व्यवहार पाखण्डपूर्ण लगता था, जब कोई इन्सानियत की दुहाई देता है, जन-सेवा की बात करता है, जबकि वास्तव मे जनता के सम्पर्क में नहीं रहता, लोगो की गरीबी और मुसीबतों, बच्चों की असहाय स्थिति से आँखें मूँद लेता है।

समाज के उच्चतम तबको मे रहते हुए इन्दिरा जानती थीं कि विशिष्ट वर्ग के कुछ प्रतिनिधियो की नजरो में जनता महज अधनगे, भूखे-प्यासे लोगों का झुण्ड है, और इस झुण्ड का छोटा अंग—मनुष्य—जीवन की धधकती आग में मात्र एक चिनगारी है। विशिष्ट वर्ग के ये प्रतिनिधि अपने आरामदेह घरों में बैठे उच्च नैतिक मूल्यो, मानव-जाति की नियति के बारे मे लम्बी-चौड़ी बाते करते रहते हैं, जबकि वास्तव मे जनता को नहीं जानते और उसकी खातिर कुछ भी नहीं करते।

इन्दिरा की उच्च सामाजिक स्थिति साधारण लोगों के सम्पर्क में आने में बाधक नही बनती थी। वह अनपढ़ किसान, मामूली मजदूर, दस्तकार, विकलांग व्यक्ति और पतित स्त्री के साथ दिल खोलकर बातें कर सकती थी, उनकी शिकायते सुनती थीं, उनसे मिलकर विभिन्न मसलों पर गौर करती थीं, उन्हे सलाह देती थी।

और लोग इस विशालहृदय नारी की ओर आकृष्ट होते थे। भारत के कोने-कोने से लोग हर दिन प्रधानमन्त्री के निवास-स्थान के सामने इकट्ठे होते थे और इन्दिरा, चाहे कैसी भी व्यस्त क्यों न हों, उनसे मिलने के लिए समय निकाल लेतीं और बड़े पेड़ की छाया में देर तक उसके साथ बातचीत करतीं।

यह नेहरू परिवार की परम्परा थी, जो इलाहाबाद में निवास काल से चली आई थी। जनसाधारण के साथ गहरे सम्पर्क रखने की आदत इन्दिरा ने अपने पिता से पाई थी और यह एक आत्मिक आवश्यकता बन गई। इन्दिरा के मन मे भारत की छवि इन भोले-भाले लोगों से अभिन्न थी।

एक दफा मुलाकातियों की भीड में इन्दिरा ने एक सुन्दर नवयुवती को देखा, जिसकी दोनों टॉगें नहीं थीं। इन्दिरा ने युवती के साथ बातचीत की। पता चला कि सतिया नाम की इस लड़की का बाप रेलवे स्विचमैन था। साम्प्रदायिक दंगे के वक्त उसे बेटी के सामने कत्ल किया गया भयभीत लड़की भाग खड़ी हुई और रेलगाड़ी

के नीचे कुचल गई।

इन्दिरा का कलेजा पसीज गया। उनके सामने मासूम नवयुवती की निराशा-भरी ऑखें थी, जो जीने और सुखी होने के लिए लालायित थी। लडकी के मासूम चेहरे, उसकी मधुर मुस्कान और भयानक अपगता में कोई मेल नही था।

मुसीबतजदा सतिया से इन्दिरा को हमदर्दी महसूस हुई, उन्होंने सतिया को कृत्रिम टॉगे हासिल करने मे मदद देनी चाही। मगर उस समय भारत में कृत्रिम अग बनवाना लगभग असम्भव था। वे केवल एक जगह—पुणे के भूतपूर्व ब्रिटिश फोजी अस्पताल में—बनाए जाते थे। कई बार इन्दिरा पुणे गई, उन्होंने अनेक सैनिक अधिकारियों से अनुरोध किया, रक्षा मन्त्री तक पहुँची और आखिरकार कुछ महीने बीतने पर सतिया के लिए कृत्रिम टॉगे बनकर तैयार हुई।

कालान्तर मे सतिया को देखकर इन्दिरा विस्मित हो गई—सफेद साडी पहने युवती बहुत खूबसूरत थी। वह इतने उन्मुक्त ढग से मुस्करा रही थी, हर्षोल्लास से इतनी परिपूर्ण थी कि उसे देखकर शायद ही कोई यह कल्पना कर पाता कि इस युवती को कभी करारा शारीरिक और मानसिक आघात सहना पडा था।

सतिया ने बडी खुशी से इन्दिरा को अपनी सगाई की सूचना दी ओर दोनो की खुशी का वार-पार न रहा।

बाद मे, जब इन्दिरा को कोई मुश्किल पड़ेगी, निराशा और विषाद की अनुभूति होगी, तो उन्हें सतिया का खिला हुआ मुख याद आएगा, वह मुस्कराएँगी और मन-ही-मन बोलेंगी—जो भी हो, जिन्दगी लाजवाब चीज है।

इन्दिरा भली-भॉति समझती थी कि व्यक्तिगत परोपकार के माध्यम से जनता को मुसीबतो और गरीबी से छुटकारा दिलाना असम्भव है। लेकिन कितने ही लोग इसे सम्भव मानते हुए अपनी सगदिली और निष्ठुरता को छिपाए रखते हैं। किसी एक व्यक्ति का जीवन बचाकर, नि स्वार्थ सहायता देकर मनुष्य कृतकृत्य होता है। परन्तु असंवेदनशील लोग समाज के लिए खतरनाक होते है। ऐसे ही पत्थर दिलवाले लोग फासिस्ट हत्यारे, धर्मांध उग्रवादी, नस्लवादी, हर तरह के हठधर्मी तथा राजनीतिक कट्टरपथी बनते है।

भारत साहसपूर्वक अन्तर्राष्ट्रीय मच पर उतर रहा था। सन् 1948 मे जवाहरलाल नेहरू को सयुक्त राज्य अमरीका की राजकीय यात्रा करने का राष्ट्रपति ट्रूमैन का निमन्त्रण मिला। मगर वह अमरीका जाने की उतावली नही कर रहे थे, उन्हें दिल्ली स्थित अमरीकी राजदूत के ये कथन अप्रिय लगते थे कि पैदा हुई परिस्थितियो मे भारत को अमरीका के पक्ष में रखना बहुत महत्त्वपूर्ण है। अमरीकी पत्र-पत्रिकाओ मे किसी की हिदायत पर उस समय छपने वाले बहुत-से लेखों से भी वह क्षुब्ध होते थे जिनमें भारत को खुलेहाथों मदद देने के वचन दिए जाते थे बशर्ते कि वह

की अपनी नीति को छोड़ दे और एशिया मे 'कम्युनिज्म के प्रसार' के विरुद्ध सघर्ष मे अमरीका का सहयोगी बने।

भारत-अमरीका सम्वन्धों के भविष्य के सवाल पर भारत के शासक तथा व्यावसायिक क्षेत्रो मे मतभेद हो गया। कांग्रेस के कुछ सदस्य अमरीकी सहायता से आस लगाए हुए थे, बडे राष्ट्रीय पूँजीपति सुविधाजनक शर्तों पर कर्ज पाने का सपना देख रहे थे। दूसरी ओर, ब्रिटिश पूँजी के साथ परम्परागत सम्पर्क रखने वाले भारतीय व्यापारिक तथा औद्योगिक बुर्जुआ वर्ग के कुछ हलके और ब्रिटेनपरस्त विशिष्ट वर्ग के प्रतिनिधि संयुक्त राज्य अमरीका के साथ सम्बन्ध बढाने का विरोध कर रहे थे।

पण्डित नेहरू समझते थे कि स्वतन्त्र भारत को संयुक्त राज्य अमरीका जैसे शक्तिशाली और समृद्ध देश के साथ सहयोग का विकास करना चाहिए। इसके अलावा भारत को विदेशी सहायता की नितान्त आवश्यकता थी। स्वाधीन अस्तित्व का पहला वर्ष आन्तरिक हलचल रोकने मे लगा। सामन्ती भूस्वामित्व तथा खेती की विधमान व्यवस्था के कारण अनाज की पैदावार काफी नहीं थी। भुखमरी फैलने का अन्देशा था। आर्थिक समस्याएँ हल न होने के कारण नवस्वतन्त्र राज्य का अस्तित्व खतरे में पड गया।

क्या अमरीका सहायता देने का वचन पूरा करेगा ? उसके साथ आर्थिक सहयोग के विस्तार की आशा कम थी। नेहरूजी इतना राजनीतिक विवेक और अनुभव अर्जित कर चुके थे कि वह जानते थे कि सागर-पार की यात्रा से शायद ही बहुत हासिल होगा। परन्तु जाना जरूरी था—एक तो, भारत सरकार को वाशिगटन प्रशासन को स्पष्टत. जताना था कि भारत अपनी स्वतन्त्र, शान्तिपूर्ण नीति पर अडिग रहेगा और इस आधार पर सयुक्त राज्य अमरीका के साथ निश्चित समझ प्राप्त करनी थी। दूसरी बात यह थी कि 'अमरीका का सहारा' लेने के इच्छुक भारतीयों को दिखाना था कि अमरीका से व्यापक सहायता पाने की उनकी आशा भ्रम है, कि ऐसी सहायता देश के लिए महँगी पडेगी। यात्रा की तिथि और आगे स्थगित न करने का निर्णय लिया गया।

इन्दिरा व्यक्तिगत रूप से पिता के साथ गई, क्योंकि भारत के सरकारी प्रतिनिधिमण्डल में जवाहरलाल नेहरू की बहन श्रीमती पण्डित शामिल होती थीं, जो उस समय संयुक्त राज्य अमरीका मे भारत के राजदूत का कार्यभार सँभाले हुए थीं। उन्होंने पण्डित नेहरू का साथ दिया और वार्ताओ में भाग लिया।

राष्ट्रपति ट्रूमैन ने अपना निजी विमान भेजा था और इस विमान से 11 अक्टूबर, 1949 को भारतीय प्रतिनिधिमण्डल वाशिंगटन पहुँचा।

अमरीका की धरती पर इन्दिरा ने पहली बार पाँव रखा था। पतझड़ की सुषमा लुभा रही थी : पार्कों में पेड़ों की सुनहरी फुनगियाँ, मुरझाई हुई घास के मैदान, तालाबों के ठण्डे जल पर तिरती पत्तियाँ प्रकृति की पतझड-वेला की यह शान्ति तथा

निस्तब्धता नगर के जीवन के तीव्र वेग और केपिटल हिल के भवनों की रोबीली वास्तुकला से मेल नही खाती थी।

न्यूयार्क की गगनचुम्बी इमारतो की विशालता और लोगों के लिए छोडी गई सडको की सकीर्णता आश्चर्यचकित कर रही थीं।

हैरी ट्रूमैन बहुत शिष्ट और विनम्र व्यक्ति लगते थे और इन्दिरा की समझ मे नहीं आ रहा था कि इस मिलनसार, खुशमिजाज आदमी ने भला कैसे शान्तिपूर्ण जापानी नगरों पर एटम बम गिराने का हुक्म दिया था। कोई भद्र राजनेता, स्नेहशील पति तथा पिता ऐसी दुष्ट योजना भला कैसे बना सकता था ? किसी व्यक्ति में एक साथ भद्रता और दुष्टता का समागम कितना आश्चर्यजनक है ! इसकी कोई हद होनी चाहिए। अथवा सम्भवत विश्व राजनीति के मामलों में कोई हद होती ही नही ? मिसाल के लिए हिटलर को ले। निरामिष भोजन करने वाले इस भावुक व्यक्ति ने अपने कुत्ते को प्यार से सहलाते हुए ठण्डे स्वर में लाखो लोगो को विशेष भट्ठियो मे जला देने का हुक्म दिया था।

राज्य के शासन की बागडोर अपने हाथो मे लिये ये व्यक्ति कैसे विचारो से प्रेरित होकर काम करते हैं ? अपने देश की अधिकाश जनता और दूसरे देशो के जनगण की इच्छा की प्रतिकूल दिशा मे इतनी हठधर्मी से वे क्यो बढते है ? ऐसे हालात में आमतौर पर राज्य के आम हितो की दुहाई दी जाती है। लेकिन क्या राज्य जनता के परे है, जनता के लिए नही ? कदाचित् केवल मार्क्सवादियों के पास इन सवालो का साफ जवाब है। वे कहते है कि इस प्रकार के राजनेता पूरे राष्ट्र का नहीं, बल्कि उसके एक छोटे, पर प्रभुत्वकारी अश का प्रतिनिधित्व करते है, जिसके हितो और जनता के हितो मे गहरा अन्तर्विरोध होता है।

ये लोकतान्त्रिक नेता सोचते है कि वे अपने देश के उच्चतम हितो के रक्षक है, जबकि वास्तव में संकीर्ण अल्पसंख्या के हक मे तमाम जनता को वश मे रखते हैं। वर्तमान पाश्चात्य लोकतन्त्र के भीतर जनविरोधी अल्पसंख्या का आधिपत्य बना हुआ है, जिसके कारण मानव-जाति को दो विश्व-युद्धो की विभीषिका सहनी पड़ चुकी है और जो पहले की तरह जोर-जबर्दस्ती और युद्ध का प्रचार करती रहती है।

राष्ट्रपति ट्रूमैन के विनम्र व्यवहार का वार्ता के राजनीतिक परिणामो पर तनिक भी असर नहीं पड़ा—ट्रूमैन ने अमरीकी इजारेदारियो की हिमायत की और पण्डित नेहरू ने नवस्वतन्त्र भारतीय जनता के मूल हितों का पक्ष लिया। एक राजनेता ने कमजोर देशों पर शक्तिशाली राज्यो के प्रभुत्व के अधिकार की और दूसरे ने नवमुक्त राष्ट्रों के स्वतन्त्र विकास के अधिकार की पैरवी की। दोनों ने अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया, लेकिन वे अलग-अलग राजनीतिक भाषाएँ बोल रहे थे।

भारत के प्रधानमन्त्री की पहली अमरीका यात्रा के बारे मे अपने सस्मरणो मे भारत में सयुक्त राज्य अमरीका के भावी राजदूत चेस्टर बाउल्स ने जिन्होंने उस वार्ता

मे भाग लिया था, लिखा था कि बहुत-से अमरीकी राजनीतिक नेताओ के लिए "नेहरू विचलित करने वाला रहस्य थे. .वाशिगटन के कई पदाधिकारियों के मन मे वस्तुत· यह सन्देह पैदा हुआ कि वह कहीं कम्युनिस्टों के प्रति सहानुभूति तो नहीं रखते।"

युद्ध के बाद औपनिवेशिक साम्राज्यो का ह्रास तेजी से हो रहा था, सोवियत सघ की प्रतिष्ठा बढ़ रही थी, जिसने अपनी राष्ट्रीय मुक्ति तथा राजनीतिक स्वतन्त्रता, अपने सामाजिक तथा आर्थिक विकास के मार्गो का स्वय चयन करने के अधिकार के लिए सघर्षरत राष्ट्रो के समर्थन में आवाज बुलन्द की थी।

दो महान् एशियाई देशो—चीन लोक गणराज्य तथा भारत गणराज्य—के विश्व मच पर उदय के साथ, वियतनाम जनवादी लोकतन्त्र और कोरिया लोक जनतन्त्र के आविर्भाव के साथ तथा इण्डोनेशिया, बर्मा, श्रीलंका, मिस्र और पूरब के दूसरे देशो द्वारा राजनीतिक स्वाधीनता प्राप्त करने के साथ अन्तर्राष्ट्रीय राजनयिक कार्यकलाप मे, जो कभी केवल विकसित देशो का, मुख्यतः पश्चिमी राज्यों का, विशेषाधिकार था, अब दुनिया के अधिकाश देश और जनगण भी शामिल हो गए। अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों ने वास्तव मे भूमण्डलीय स्वरूप ग्रहण कर लिया।

छठे दशक में नवस्वतन्त्र देशो के सक्रिय राजनयिक कार्यकलाप ने विश्व जन-समुदाय को झकझोर दिया। युद्ध से मुक्त विश्व के लिए तथा सभी राष्ट्रों के बीच, उनकी सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक प्रणालियों में भिन्नता के बावजूद, न्यायोचित सम्बन्धों की स्थापना के लिए भारत की जोरदार अपील, 'शीत युद्ध' की चढाई को रोकने के वास्ते भारत के सद्भावनापूर्ण राजनयिक प्रयत्नो ने उसकी अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा बढ़ाई तथा पूर्व की भूमिका और प्रभाव में वृद्धि की।

अन्तर्राष्ट्रीय मामलों मे ये वर्ष 'नेहरू की नीति' के निर्माण के वर्ष थे, मानव-जाति के सामने मुँहबाये खड़ी मुख्य समस्या—युद्ध और शान्ति की समस्या—के सम्बन्ध में नये दृष्टिकोणो, खोजों और मूल्यांकनों के वर्ष थे।

इन्दिरा गाँधी की नियति ही ऐसी थी कि उन्होंने अपने को इन ऐतिहासिक घटनाओ के केन्द्र मे पाया और अपने पिता की सभी पहलो की वह प्रत्यक्षदर्शी रहीं। उनके साथ उन्होने इण्डोनेशिया, चीन और अन्य अनेक देशों की यात्रा की।

सन् 1955 में 18 से 24 अप्रैल तक बांडुंग में एशिया और अफ्रीका के 29 नवस्वतन्त्र देशो के प्रतिनिधियो का सम्मेलन हुआ। इसकी बदौलत सद्भावना की नयी अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियो मे गति आई। उस सम्मेलन में राष्ट्रों के बीच शान्तिपूर्ण सहयोग का व्यावहारिक कार्यक्रम तैयार करने और अफ्रीकी-एशियाई एकजुटता को मजबूत बनाने में भारत ने बडा योगदान किया सम्मेलन द्वारा स्वीकृत विश्व शान्ति और सहयोग में सवर्द्धन विषयक घोषणा में शान्तिपूर्ण के पाँच

सिद्धान्तो—चीन और भारत द्वारा निरूपित विख्यात 'पचशील'—का अन्तर्राष्ट्रीय-विधिक तथा नैतिक-राजनीतिक स्पष्टीकरण एव विस्तारण किया गया।

बाडुग सम्मेलन ने दिखा दिया कि अधिकाश एशियाई तथा अफ्रीकी राज्य साम्राज्यवादविरोधी रुख दृढतापूर्वक अपनाए हुए हैं, वे पुराने और नये उपनिवेशवाद का विरोध करते है, आम नि शस्त्रीकरण तथा शान्ति के लिए प्रयत्नशील है।

इन्दिरा को जितनी अधिक दुनिया देखने का मौका मिला, उनका यह विश्वास उतना ही अधिक बढ़ता गया कि पश्चिमी राज्यो के नेताओं तथा नवस्वाधीन पूर्वी देशो के नेताओ के राजनीतिक दृष्टिकोणो मे जमीन-आसमान का फर्क है। उनकी चिन्तनधारा भिन्न है और वे दुनिया को भिन्न नजरो से देखते है। उदाहरण के लिए, इण्डोनेशिया के राष्ट्रपति सुकर्ण और अमरीकी राष्ट्रपति ट्रुमैन के बीच क्या समानता हो सकती थी ?

सुकर्ण अपने राष्ट्र के नेता, इण्डोनेशिया के प्रत्येक देशभक्त के भाई थे। इन्दिरा इस बात की साक्षी हुई थी कि अपने भारतीय अतिथियों के साथ जाकार्ता की सडको पर गुजरते समय वह अचानक गाड़ी रोक देते, किसी राह चलते आदमी के पास आकर पूछते कि क्या उसे राष्ट्र-गान के बोल याद हैं और फिर वे समवेत स्वरो मे राष्ट्रीय स्वतन्त्रता का यह गान जोर से गाने लगते।

सुकर्ण की इस भावुकता को इन्दिरा आम आदमी में उनके विश्वास, राष्ट्रीय आदर्शों के प्रति निष्ठा की भावात्मक अभिव्यक्ति मानती थी।

यह गुण जवाहरलाल नेहरू के चरित्र मे भी विद्यमान था, जिनके लिए जनसाधारण से ससर्ग एक परम आवश्यकता बन गया था। भारत का दौरा करते हुए वह अपने देशवासियों के साथ प्रधानमन्त्री अथवा वक्ता के रूप में पेश नहीं आते थे, आम लोगो को वह बताते थे कि उनके देश का कैसा रूप होगा, वह अपनी कल्पनाओ की चर्चा करते थे, देशबन्धुओ से सलाह लेते थे। नेहरूजी के सार्वजनिक भाषण औपचारिक रिपोर्ट अथवा प्रधानमन्त्री के वक्तव्य नही, बल्कि जनता के साथ आत्मीय वार्तालाप ही होते थे। वह अपने भाषणों को अलंकृत करने की कोशिश नही करते थे और न ही क्लिष्ट 'पण्डिताऊ' भाषा का प्रयोग करते थे, उनके भाषण सीधे-सादे थे और अनपढ किसान के लिए भी उन्हे समझने मे कोई दिक्कत नही होती थी।

बाडुग सम्मेलन के फौरन बाद पण्डित नेहरू ने भारत सरकार के प्रधानमन्त्री के रूप मे सोवियत सघ की अपनी पहली सरकारी यात्रा की तैयारी शुरू कर दी। उन्होने मन्त्रिमण्डल के सदस्यों के साथ परामर्श किया, दिल्ली स्थित सोवियत राजदूत के साथ अक्सर बातचीत की यात्रा के कार्यक्रम का स्पष्टीकरण किया सोवियत संघ के कुछ औद्योगिक तथा कृषि क्षेत्रों जनतन्त्रों तथा नगरों की यात्रा के सम्बन्ध में अपनी

इच्छा व्यक्त की और घर मे भोजन के समय अथवा रात को काम के बाद वह इन्दिरा से पूछा करते कि 1953 मे सोवितय सघ के एक महीने के पर्यटन के समय उन्होने वहॉ क्या देखा था।

तब सोवियत सघ स्थित भारत के राजदूत के. पी. एस. मेनन की पत्नी अनुजी के साथ इन्दिरा ने लेनिनग्राद, त्विलिसी, याल्टा और ताशकद का भ्रमण किया था। के पी एस मेनन ने बाद में लिखा—"इन्दिरा और अनुजी की साडियों की ओर हर जगह लोगो का ध्यान आकर्षित होता था। अनुजी तो ठेठ भारतीय नारी लगती थी, लेकिन इन्दिरा का रग-रूप कुछ और ही था। उज्बेक लोग पूछते थे कि इन्दिरा कहॉ से आई, क्योकि साडी के बावजूद उनका गौर वर्ण, नाक-नक्श, कटे बाल—उनका रूप ही कुछ ऐसा था कि उन्हे दुनिया के किसी भी देश की नारी समझा जा सकता था। इन्दिरा का सौन्दर्य मौलिक और साथ ही सार्विक स्वरूप का भी है। स्वय उन्हे अपने आकर्षक रूप का कोई बोध नहीं है, जो प्यारा-सा भोलापन है।"

इन्दिरा ने अपने पिता के साथ जाने का निश्चय किया और उन्होने कोई आपत्ति नहीं की, वरन् इस निर्णय का सहर्ष स्वागत किया।

"अब, इन्दु, तुम एक पर्यटक की नजरों से नही, बल्कि भारत के शिष्टमण्डल के सदस्य की नजरो से देखोगी," नेहरूजी ने कुछ मजाक के लहजे मे कहा। "पर्यटक आराम-मनोरंजन करने के लिए दूसरे देश में आते है, परन्तु अब तुम्हे काम भी करना पडेगा। मै वचन देता हूँ कि आराम के लिए फुरसत का समय बिल्कुल नही मिलेगा।"

"बेशक, नहीं मिलेगा," इन्दिरा मुस्कराई, "लेकिन यकीन मानिए, एक पर्यटक के दृष्टिकोण मे सच्चाई और खास आकर्षण भी है। मेरी सलाह है कि काम के कारण आप अपने को पर्यटन के आनन्द से वंचित न करे।"

सोवियत सघ की यात्रा को इन्दिरा मनोरंजन नहीं मानती थीं। वहॉ उनके सामने जो नया ससार खुला था, उसका सद्भावनापूर्ण स्वरूप, महान् उपलब्धियाँ तथा और भी विशाल योजनाएँ और—जो मुख्य बात है—अनेक सामाजिक तथा आर्थिक समस्याओ के समाधान का उसका अनुभव इन्दिरा को आकर्षित करता था। सोवियत सघ में बिताए गए एक महीने के अन्दर उन्हें बहुत ज्ञान प्राप्त हुआ था, लेकिन इतने विशाल और अनोखे देश का परिचय पाने के लिए एक महीना कम ही होता है।

भारतीय प्रतिनिधिमण्डल सहित विमान दिल्ली-मुम्बई-काहिरा-रोम-प्राग-मास्को के लम्बे वायु-मार्ग पर रवाना हुआ। उस समय ऊँची पर्वत शृखलाओ द्वारा अलग किए हुए दो पड़ोसी देशों—भारत और सोवियत सघ—के बीच सीधे वायु-परिवहन की व्यवस्था नही थी। उडान में कुछेक दिन लगे। इन्दिरा जानती थी कि जवाहरलाल नेहरू को अपनी मास्को यात्रा से बड़ी आशाएँ थी और वह सोवियत नेताओ के साथ महत्त्वपूर्ण वार्ताओ के लिए तैयारियॉ कर रहे थे। भारत के सामने अत्यन्त जटिल ऐतिहासिक कार्यभार था के सार्वजनिक क्षेत्र में भारी उद्योग की मुख्य शाखाओं का निर्माण करने और इस तरह इजारेदारियों पर अधीनता को

खत्म करने, अपने को एक गरीब, मुख्यतः कृषिप्रधान देश से एक औद्योगिक राज्य मे रूपान्तरित करने का कार्यभार। न संयुक्त राज्य अमरीका और न ही ब्रिटेन ने इस विचार का समर्थन किया था, इसके विपरीत उसकी तीखी आलोचना की थी।

मास्को। 7 जून, 1955। सध्या 6 बजे। साफ उजला दिन था। मास्को अंचल के मैदानो की घास व फूलो की महक, वन खण्डो की ताजगी के प्रभाव से उडान की थकान गायब हो गई। हवा के हलके झोंकों में सोवियत संघ और भारत गणराज्य के रेशमी झण्डे लहरा रहे थे।

सैनिक टुकडी के प्रधान ने उच्च अतिथि को सलामी दी। ख्याल आया—ये सोवियत सेना के जवान हैं, जिन्होंने फासिस्ट दानव की कमर तोड दी थी।

खामोशी छा गई और दो राज्यों की राष्ट्रीय धुनें गूँज उठी। जब स्वतन्त्रता की यह धुन गुंजायमान होती है, तो हर भारतवासी का दिल अपने गणराज्य पर गर्व की भावना से अनायास ओतप्रोत हो उठता है।

और फिर गम्भीर वातावरण बच्चों की किलकारियो से भंग हुआ। बड़े-बडे गुलदस्ते हाथों में लिये लडके-लडकियॉ अतिथियों के पास दौड़ आए। इन्दिरा ने ताजे रूसी फूलो को सूँघा, उनकी सुगन्ध तरुणाई और शान्तिपूर्ण जीवन के उल्लास की अनुभूति कराती थी।

"मैं इसलिए आपके यहॉ आया," जवाहरलाल नेहरू बोले—"ताकि आप लोगो को बेहतर जानूँ-समझूँ। मुझे यकीन है कि मेरी यात्रा के फलस्वरूप हमारे सम्बन्ध मजबूत बनेंगे...।"

मास्को की सजी-धजी सड़को पर मोटरो का लम्बा कारवाँ बढा। पहली गाडी मे जवाहरलाल नेहरू बैठे थे और दूसरी मे इन्दिरा। दोनों गाडियॉ खुली थीं। रास्ते में बीसियो हजार मास्कोवासी इकट्ठे हुए थे। अतिथियों पर फूलो की बौछार की गई। मोटरगाड़ियॉ फूलों से लद गई, सड़को पर भी फूल बिखरे हुए थे। 'हिन्दी-रूसी भाई-भाई !' 'द्रुज्बा !' ('दोस्ती !'), 'मीर !' ('शान्ति !') जैसे नारे गूँजते रहे। सारे मास्को में दो महान् राष्ट्रो की एकजुटता और मित्रता की सुखद भावना व्याप्त थी।

अपने देश के प्रति सद्भावना तथा एकजुटता का इतना विशाल सार्वजनिक प्रदर्शन, भारत के प्रति इतने स्नेह-सौहार्द, भारतवासियो के साथ मैत्री करने की सोवियत लोगों की हार्दिक इच्छा की इतनी प्रभावशाली अभिव्यक्ति इन्दिरा ने पहले कभी नहीं देखी थी।

इन्दिरा को विश्वास हो गया कि पिता ने सही विचार प्रकट किया था—किसी देश और उसकी जनता के प्रति साधारण पर्यटक के दृष्टिकोण और मैत्री यात्रा पर पहुँचे सरकारी प्रतिनिधि के दृष्टिकोण में बड़ा अन्तर होता है।

वार्ता असाधारण रूप से निष्कपट तथा कामकाजी वातावरण मे हुई। लगता था कि क्रेमलिन की दीवारों को ऐसा कुछ भी पार नहीं कर सकता था जो वार्ता के पर प्रतिकूल असर डाल पाता

क्रेमलिन के विशाल कक्षो में, जिनकी दीवारो पर टँगे चित्रों से लेनिन की पैनी, सच्चाई और सहायता देने की इच्छा का माहौल बना हुआ था। साफ है कि यह क्रेमलिन की मोटी दीवारो के प्रभाव का नही, बल्कि आपसी समझ, समान दृष्टिकोण तथा चिन्तन का परिणाम था।

इन्दिरा को अनेक पश्चिमी राजनयज्ञो तथा राजनेताओ से मिलने, उनके गर्व, सशयशीलता तथा अविश्वास की अभिव्यक्तियाँ देखने का अवसर मिला। परन्तु मास्को में इनका नामनिशान तक नहीं था। उन्होंने देखा कि उच्चतम सोवियत अधिकारी भारत की आन्तरिक समस्याओं के विषय मे पण्डित नेहरू के विचारों और अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति के उनके मूल्याकन को कितने ध्यान से सुन रहे थे।

सोवियत पक्ष उनके मत का सम्मान कर रहा था, उनमे विश्वास प्रकट कर रहा था, भारत के हितो को ध्यान मे रख रहा था और किसी समस्या पर मतभेद होने पर परस्पर मान्य निर्णय ढूँढने की इच्छा प्रदर्शित कर रहा था, अपने मत को प्रत्यक्ष रूप से अभिव्यक्त कर रहा था।

मास्को स्थित भारत के राजदूत के. पी. एस. मेनन ने इस सिलसिले मे कहा—"भारत को अपने पक्ष में करने के लिए सोवियत नेताओं ने कभी उस पर तनिक भी प्रभाव अथवा दबाव डालने की कोशिश नही की। शुरू से ही वे स्थिति का सुस्पष्ट विवेचन करते रहे और संयुक्त वक्तव्य का मसविदा तैयार करने का अधिकार उन्होंने हमे, अपने अतिथियों को सौंप दिया।"

जवाहरलाल नेहरू के सोवियत सघ आने से पहले 2 फरवरी, 1955 को सोवियत संघ के सहयोग से भिलाई में विशाल इस्पात कारखाने के निर्माण के बारे मे दो देशों के बीच समझौते पर हस्ताक्षर हो गए थे। सोवियत सघ ने भारत को प्रौद्योगिकी प्रदान करने, सारा जरूरी साज-सामान मुहैया करने, पश्चिमी राज्यों की अपेक्षा आधे सूद पर भारी कर्ज देने का वायदा किया। सोवियत पक्ष ने इस निर्माण परियोजना के साथ कोई राजनीतिक शर्त नहीं जोड़ी, कोई ऐसी माँग पेश नहीं की, जिससे भारत के आर्थिक स्वावलम्बन को जरा-सी आँच आती।

विदेशी और भारतीय इजारेदारियो से स्वतन्त्र भारी उद्योग की स्थापना के बारे में नेहरूजी का सपना साकार होने लगा।

वह बहुत खुश थे, उनकी आशा पूरी हुई—लेनिन के देश ने भारत की तरफ सहायता का हाथ बढ़ाया।

इन्दिरा जानती थीं कि यह न तो पिता की कोई राजनयिक वियज थी और न कोई सामयिक लाभ उठाने की सोवियत सरकार की इच्छा का परिणाम था।

इन्दिरा लेनिन की कई कृतियाँ पढ चुकी थी और उन्हें विश्वास हो गया था कि पूरब के उत्पीडित जनगण के साथ सोवियत सघ की सद्भावना की नीति समाजवादी राज्य के सारतत्त्व में निहित है। भारत-सोवियत सम्बन्धों का मैत्रीपूर्ण स्वरूप, जिसका शानदार प्रदर्शन उन्होंने अपनी आँखों से देखा कोई चमत्कार नहीं था। सोवियत

विदेश नीति लेनिन द्वारा प्रतिपादित दृढ शान्तिपूर्ण सिद्धान्तों पर आधारित है और इसलिए मुख्य प्रश्नों पर, विशेष रूप से, युद्ध और शान्ति, राष्ट्रों के साम्राज्यवादविरोधी संघर्ष के समर्थन जैसे प्रश्नो पर यह नीति हमेशा पूर्वनिश्चित होती है। लेकिन सिद्धान्ततः वह जानना, पिता से सुनना एक बात है और अपनी ऑखो से इसका प्रबन्ध प्रमाण देखना बिल्कुल दूसरी बात।

सोवियत देश का भ्रमण दो सप्ताह जारी रहा। पण्डित नेहरू की मध्य एशियाई सोवियत जनतन्त्रो, काकेशिया और क्रीमिया की यात्रा के बारे में बेटी की कहानी बहुत रोचक लगी थी और उन्होंने वहॉ जाने और सब कुछ अपनी ऑखों से देखने का निश्चय किया था।

इन्दिरा को भी इन जगहों की एक बार फिर यात्रा करने और अपनी यादों को ताजा करने में भला क्या एतराज हो सकता था। इसके अलावा भारत के प्रधानमन्त्री तथा उनके साथियों को साधारण पर्यटकों की अपेक्षा कहीं अधिक देखने का मौका मिला। उन्हें वह सब कुछ दिखाया गया, जिसमे उन्हे रुचि थी और जो देखने लायक था—इस्पात तथा इंजीनियरिंग कारखाने, विमान तथा मोटर निर्माण संयंत्र, विभिन्न उद्यम तथा विशाल नव-निर्माण स्थल। हर जगह भारतीय अतिथियो का स्वागत करने तथा आवश्यक जानकारी देने के लिए जनतन्त्रों के नेता, स्थानीय सोवियत सत्ता संस्थाओं के संचालक, कारखानों के निदेशक तथा सामूहिक कृषि फार्मो के अध्यक्ष उपस्थित होते थे।

सब कुछ देखने और सब कुछ के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त करने की पिता-पुत्री की गहरी उत्सुकता से हर कोई चकित और प्रभावित हुआ। दोनो ने सैकड़ों सोवियत लोगों से बातचीत की, जिनमें धातुकर्मी, विद्युत ऊर्जा उद्योग के इंजीनियर, मध्य एशिया मे सिंचाई नहरों के निर्माता, नारी संगठनो की सक्रिय सदस्याएँ, स्कूलों तथा किंडरगार्टनो, प्रधानाध्यापक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक क्षेत्रो के जाने-माने लोग शामिल थे। उनकी दिलचस्पी उस हर चीज में थी, जिसे सोवियत संघ के अनुभव-भण्डार से लिया जा सकता था और उनके अपने देश मे व्यवहार मे लाया जा सकता था। नि सन्देह, सोवियत अनुभव-भण्डार मे से सब कुछ भारत के लिए स्वीकार्य नहीं था, क्योंकि वह विश्व पूँजीवादी अर्थव्यवस्था का अंग बना हुआ था। लेकिन भारतीय अर्थतन्त्र के सार्वजनिक क्षेत्र में कुछ हद तक केन्द्रीय नियोजन-प्रणाली तथा भारत की जातीय समस्या को हल करने के लिए जारशाही रूस के गैररूसी सीमा क्षेत्रों के पिछडेपन के मिटाने के सोवियत अनुभव को अमल मे लाया जा सकता था। इसके अलावा दिलचस्पी की अन्य भी बहुत सारी चीजे थीं।

नेहरू और इन्दिरा की दृष्टि अपने देश के भविष्य की ओर थी—कालान्तर मे भारत में समाजवादी नमूने पर आधारित समाज का निर्माण उनका सपना था और इसलिए सोवियत उदाहरण उनके लिए विशेष महत्त्व रखता था। लेकिन ऐसी नाना आन्तरिक समस्याएँ थीं जिनका था इसके अलाव

सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्यभार विश्व शान्ति को सुरक्षित रखना था, जिसके बिना सारी सम्भावनाएँ नष्ट हो जातीं।

स्तालिनग्राद में इन्दिरा मामायेव पहाड़ी पर देर तक श्रद्धा-भाव से खड़ी रहीं। हॉ, सोवियत सघ के लोग युद्ध का भीषण रूप देख चुके हैं और शान्ति का असली मूल्य अपने अनुभव से जानते हैं। अपने मार्ग के चयन में सोवियत लोगों को कोई सशय नहीं है, उन्हें भली-भाँति मालूम है कि वे किसलिए संघर्ष कर रहे हैं।

शान्ति का अर्थ जीवन का सुख, विवेक की विजय, प्रेम और सुखद भविष्य है। उधर, युद्ध का अर्थ मौत, मानव व्यक्तित्व का ह्रास, आशाओ का विनाश और घृणा का उन्माद है। शान्ति की देन है निर्मल आकाश, सूरज, फूलो की सुगन्ध, बच्चों का सुख, मानवीयता, सस्कृति तथा ज्ञान का विकास, उदात्त विचारों की निर्बाध उड़ान। परन्तु युद्ध अग्निकाण्डो की दुर्गंध, घरो के खण्डहर, विकलांग लोगों की दुर्दशा, क्रूरता और जाहिली अपने पीछे छोड़ जाता है। भारतीय अतिथि क्रीमिया में पायोनियर बालको के शिविर आर्तेक के लिए रवाना हुए, जो शान्ति का प्रतीक है। स्वभावतः समाजवाद तथा शान्ति अभिन्न हैं।

आर्तेक का घाट विशाल फुलवारी जैसा दिखता था। अपनी सफेद टोपियॉ हवा मे उछालते हुए बालक आंगारा जहाज पर आए अतिथियों का स्वागत किया। उन्होने इन्दिरा के सिर पर लाल गुलाबो का सेहरा रखा और राजीव तथा संजय के लिए दो पायोनियर पोशाकें भेट कीं।

इन्दिरा बच्चों के स्नेह से भावविह्वल हो गई। सोचा कि अपने बेटों को वह आर्तेक के बारे में अवश्य बताएगी। वह समय आएगा, जब भारतीय बालक भी उनके लिए बनाए गए विश्राम केन्द्रों मे आराम करेगे।

पायोनियर टाई बॉधे जवाहरलाल नेहरू ने कहा—"इस मुलाकात को मैं हमेशा याद रखूँगा और आपकी शुभकामनाओ का सन्देश भारत के बच्चों को पहुँचा दूँगा। मुझे आशा है कि जब तुम और भारत के बच्चे बडे हो जाओगे, तुम लोग आपस में सहयोग करोगे।"

इन्दिरा सोच रही थीं—कोई तीस वर्ष बीतने पर दुनिया कैसी होगी ? परन्तु एक बात साफ है—भारतीय-सोवियत दोस्ती बनी रहेगी और मजबूत बनेगी। राजीव और संजय, भारत के सभी बच्चों के लिए यह धरोहर छोड़नी चाहिए।

अतिथियों ने लेनिनग्राद, स्तालिनग्राद, त्बिलिसी, क्रीमिया, अश्खाबाद, ताशकन्द, समरकन्द, उराल प्रदेश के औद्योगिक नगरों, कजाखस्तान की परती भूमि के क्षेत्रों का दौरा किया और हर जगह बहुत-सी दिलचस्प भेट-मुलाकातें, रोचक बातचीतें हुई, सर्वत्र शान्ति की उत्कट अभिलाषा नजर आई। इन्दिरा को विश्वास हो गया कि इस देश की जनता पर आक्रामक इरादों का आरोप लगाना बिल्कुल निरर्थक है।

यात्रा के समय भारतीय राजनयज्ञों ने जवाहरलाल नेहरू को सयुक्त राज्य अमरीका में युद्धोन्माद में नये उभार की सूचना दी सोवियत सघ में इसके कोई

आसार कही नहीं दिखाई देते थे। 15 जून को, उसी दिन, जब इन्दिरा समरकन्द की शाही जिन्दा मस्जिद के खूबसूरत नीले गुम्बदों, रेगिस्तान चौक की इमारतों को सजाने वाले प्राचीन उज्बेक कारीगरो की बेमिसाल पच्चीकारी के काम के रगीन फोटो खींच रही थीं, वाशिंगटन में साइरनो की कर्णभेदी चीखें सुनाई दी। यह सिग्नल सुनकर 2 लाख 27 हजार सरकारी कर्मचारियों ने काम बन्द कर दिया। अमरीकी राष्ट्रपति सहित ह्वाइट हाउस के कर्मचारियो को झट से राजधानी से स्थानान्तरित करके तीन दिन के लिए तीस गुप्त बचाव घरो में टिकाया गया। इस प्रकार सयुक्त राज्य अमरीका में खतरा-1955 नामक 'अभ्यास' शुरू हुआ।

सैन्य मन्त्रालय पेंटागन के अधिकारीगण, शायद अधिक प्रभाव डालने के उद्देश्य से, हेलिकाप्टरों के जरिए हवा मे उड़े।

सारे देश के पैमाने पर किसी 'अज्ञात' शत्रु के हमले का नाटक रचा गया, मानो अमरीका के 59 नगरो, हवाई द्वीप समूह, पोर्टोरिको तथा पनामा नहर के क्षेत्र पर एटम और हाइड्रोजन बम गिराए गए।

उसी दिन संयुक्त राज्य अमरीका की काग्रेस में परमाणविक अस्त्रो के लिए नये अनुदान का सवाल उठाया गया।

दो राज्य—दो राजनीतियाँ। एक राज्य सैनिक-परमाणविक तमाशे करता है, दूसरा शान्ति का ताना-बाना बुनता जाता है। सवाल उठता है—'शीत युद्ध' कौन चला रहा है ? सोवियत संघ उसमें शामिल नही होना चाहता। वइ इस 'शीत युद्ध' का प्रवर्तक नहीं, बल्कि उसका निशाना है और भारत उसके विरुद्ध इस युद्ध मे कभी भाग नहीं लेगा।

विभिन्न स्थानों के भ्रमण के बाद मास्को लौटने पर 21 जून को दिनामो स्टेडियम मे सोवियत-भारत मैत्री की विराट सभा हुई, जिसमे अस्सी हजार लोगो ने हिस्सा लिया।

एक बार फिर (जैसा कि उन दिनों मे प्रायः होता था) सोवियत जनता ने भारतीय सरकारी प्रतिनिधिमण्डल के साथ मिलकर राजनयिक वार्ताओं का सूत्र स्वय अपने हाथो में ले लिया।

किसी भी अन्य देश में ऐसा कभी नहीं हुआ था—सोवियत-भारत सम्पर्को तथा समझौतों के प्रमुख सरक्षक के रूप मे स्वय जनता सामने आई। राजनयज्ञों के विपरीत जनता की अपनी भाषा होती है, सक्षिप्त, मगर बहुत अभिव्यजनात्मक और सटीक। "दोस्ती !", "शान्ति !", "हिन्दी-रूसी भाई-भाई !" नारों से मास्को का आकाश गूँज उठा।

यह मीठी मुस्कानों तथा राजनयिक शिष्टाचार का वातावरण नहीं था, जिससे इन्दिरा भली-भाँति परिचित थीं। इस मिथ्या शिष्टाचार तथा आदर व सद्भावना के आश्वासनों का वास्तविक मूल्य वह जानती थीं और उसे कोई विशेष महत्त्व नहीं देती थीं इधर मास्को के दिनामो स्टेडियम में जनता उन्मुक्त भाव से अपना सकल

व्यक्त कर रही थी। सोवियत राज्य का जनस्वरूप उभरकर सामने आया।

सम्मानित भारतीय अतिथियो ने मास्को से विदा ली। "मै सोचता हूँ कि बहुत कुछ पाकर और बहुत कुछ खोकर भी यहाँ से जा रहा हूँ," जवाहरलाल नेहरू ने कहा। "मैं समझता हूँ कि पहले से धनी होकर जा रहा हूँ, क्योकि आपकी दोस्ती और हार्दिक स्वागत-सत्कार की बहुत-सी मीठी यादें अपने साथ ले जा रहा हूँ। मैं निर्धन होकर जा रहा हूँ, क्योंकि अपने दिल का टुकड़ा यहाँ छोड रहा हूँ.. ।"

हवाई जहाज की कुर्सी पर आराम से बैठकर इन्दिरा ने आँखे मूँद लीं। मास्को के नीले आकाश में उड़ते सैकडो श्वेत कपोतों, खुशी से चमकती बच्चो की आँखों, मग्नीतोगोर्स्क इस्पात कारखाने मे दहकती तरल इस्पात की धारा और क्रेमलिन के लाल सितारों के दृश्य उनके मन में उभर रहे थे।

अब भारत को बडी सहूलियत होगी। उसका एक शक्तिशाली तथा ईमानदार दोस्त है, जिसका वह सदा सहारा ले सकता है।

9

उत्तराधिकारी

इन्दिरा गॉधी का जीवन राजनीतिक मामलों में अधिकाधिक जुड़ता गया, जो सभी अन्य चिन्ताओं को शनैः-शनैः विस्थापित करते हुए उनके अस्तित्व का सार बनते गए। उन्हे कार्यकलाप के अधिक व्यापक क्षेत्र की आवश्यकता महसूस होने लगी, वह अपने परिवेश मे स्वतन्त्र व्यक्ति के रूप मे अपना स्थान बनाना चाहती थीं और देश के राजनीतिक तथा सार्वजनिक जीवन में आत्माभिव्यक्ति के मार्गो की खोज करने लगी। यह लक्ष्य प्राप्त करना आसान नहीं था। "मुझे सुविधा मिली शिक्षा से, जो पिताजी ने मुझे दिलाई थी, और अनेक व्यक्तियो, न केवल राजनीतिज्ञो, बल्कि लेखकों, कलाकारो आदि के साथ हुई मुलाकातों के अनुभव से," उन्होने कहा। "मगर राजनीति के क्षेत्र में यह साबित करने के लिए कि तुम केवल राजनीतिक हस्ती की मात्र पुत्री नहीं, वरन् स्वयं भी एक व्यक्तित्व हो, दुगुने प्रयत्न करने पड़ते है।"

1950 के दशक के अन्त मे इन्दिरा गॉधी ने कांग्रेस के भीतर एक युवा संगठन और एक नारी विभाग कायम किया, जिनकी प्रधान वह स्वयं बनी।

भारत के नये नारी आन्दोलन मे वह अनेक दिलचस्प विचारों को अमल में लाई तथा कांग्रेस की युवा शाखा के कार्यकलाप मे उन्होंने जुझारू भावना भरी, लेकिन उनके लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य ससद के लिए चुनाव अभियान में आम जनता के बीच प्रचार करना था।

राजनीतिक संघर्ष मे उनका खूब मन लग गया था, परन्तु उनकी रुचि परदे के पीछे के कार्यकलाप अथवा लॉबिग मे नही, बल्कि लोगों के हृदय और मस्तिष्क को जीतने के लिए लोकतान्त्रिक, खुले, सार्वजनिक, प्रतिस्पर्द्धात्मक सघर्ष मे थी।

भारत की परिस्थितियों में यह काम एक स्त्री के लिए बहुत कठिन था—खराब सडके, कभी दहकती धूप, तो कभी मूसलधार बारिशे अथवा बाढ़, सफर की असुविधाऍ।

भारत के दूरस्थ स्थानों की यात्राऍ अत्यधिक मानसिक तनाव पैदा करती थी, व्यक्तिगत साहस की अपेक्षा करती थीं और खतरे से खाली भी नही होती थी। नाना प्रकार के अन्धविश्वास तथा पूर्वाग्रह प्रचलित थे, साम्प्रदायिक द्वेष बना हुआ था, सुधारों के कारण नुकसान उठाने वाले स्थानीय सामन्तों द्वारा बदला लेने

का अन्देशा और डकैत गिरोहों के हमले का खतरा भी मौजूद था। लेकिन कुछ भी इन्दिरा को पिता के आरामदेह निवास-स्थान में नहीं रोक सकता था। उन्हें केवल तभी सच्चे सुख का अनुभव होता था, जब उन्हें देश का भ्रमण करने, कठिनाइयों को पार करने, सघर्ष करने तथा जनसाधारण के साथ सीधा सम्पर्क स्थापित करने का मौका मिलता था। आम लोगों के ससर्ग से शक्तिवर्द्धन होता था और यह विश्वास मजबूत बनता था कि समय बीतने पर समृद्ध और महान् भारत के बारे में उनका सपना साकार बनेगा।

और इसके लिए आवश्यक था कि स्वतन्त्र भारत के राष्ट्रीय तथा राजनीतिक आदर्श उसके दूर-दराज के कोनो तक पहुँचे, हर अनपढ किसान, प्रत्येक स्त्री और पुरुष अपने को गणराज्य का नागरिक महसूस करें।

इसीलिए इन्दिरा ने बड़े उत्साह से चुनाव क्षेत्रो का दौरा किया, शुरू में अपने पिता और बाद में फीरोज को मतदाताओं के बीच कार्य में सहायता दी।

ऐसी बात नही थी कि जवाहरलाल नेहरू ने इन्दिरा के राजनीतिक कार्यकलाप को प्रोत्साहित किया था, लेकिन उन्होंने बेटी द्वारा चुने गए मार्ग पर चलने से उसे रोकना उचित नही समझा। फिर भी वह नहीं चाहते थे कि उनकी बेटी दलीय राजनीति में अपना जीवन लगाए, खासतौर से पार्टी और राज्य का कोई पद सँभाले।

इस सम्बन्ध मे के. पी. एस. मेनन ने लिखा—"कुछ लोगो का कहना है कि जवाहरलाल नेहरू ने अपनी बेटी को इसके लिए धीरे-धीरे, लगातार तैयार किया था कि वह कालान्तर मे प्रधानमन्त्री के पद पर उनका स्थान ले। मैं इसमें विश्वास नहीं करता। उस समय नेहरू की बहन विजयलक्ष्मी पण्डित अन्तर्राष्ट्रीय नीति के उच्चतम शिखर पर पहुँच चुकी थीं और पण्डित नेहरू नही चाहते थे कि उनकी बहन तथा बेटी के बीच किसी अप्रिय प्रतिस्पर्द्धा की भावना पैदा हो। वह नहीं चाहते थे कि उन पर भाई-भतीजेपन का आरोप लगाया जाए। इतना ही नहीं, नेहरू के आधिकारिक सहयोगी को अपनी जिम्मेवारियाँ निभाने के लिए पूरी शक्ति लगानी पड़ती थी और नेहरू माँग करते थे कि किसी भी काम में कोई कसर न रहे। मुड़े गिलाफ, बेतरतीबी से पड़ी कुर्सी, खिडकी के ढंग से न टँगे हुए परदे, भोजन मे ज्यादा मिर्च जैसी छोटी-छोटी बातो से वह खिन्न हो जाते थे। इन्दिरा ने बराबर इस बात पर नजर रखी कि सब कुछ करीने से अपनी जगह रहे।"[1]

लेकिन इन्दिरा गाँधी का भविष्य सिर्फ उनके पिता ने ही नहीं तय किया—वह देश के राजनीतिक जीवन में सर्वाधिक प्रमुख हस्ती बनती जा रही थीं। जवाहरलाल नेहरू अपनी प्रिय बेटी के जीवन के रास्ते मे बाधक बनना नही चाहते थे।

पार्टी में इन्दिरा गाँधी के विशाल निःस्वार्थ कार्य की कांग्रेस के स्थानीय और

---

1. के. पी. एस. मेनन, *सोवियत सघ के बारे मे भारतीय राजनयज्ञ*, मास्को, प्रगति प्रकाशन, 1982 रूसी में)

केन्द्रीय नेताओं ने प्रशंसा की और नेहरूजी की राय की उपेक्षा करते हुए उन्हे इलाहाबाद काग्रेस समिति की अध्यक्ष तथा कांग्रेस पार्टी की कार्य-समिति की सदस्य निर्वाचित किया।

इस हैसियत से उन्होंने भारतीय ससद के लिए 1957 में हुए आम चुनाव मे हिस्सा लिया। उस समय लाल बहादुर शास्त्री कांग्रेस के चुनाव-अभियान के प्रधान थे और इन्दिरा गाँधी उनकी प्रमुख सहायक थी।

वह मुश्किल वक्त था—पार्टी का कार्यभार सँभालने के अलावा इन्दिरा को पिता की सेवा और बेटों की देखभाल करनी पड़ रही थी। फीरोज का भी ध्यान रखना जरूरी था। ये सभी जिम्मेदारियाँ निभाना जरूरी था, ताकि किसी का अहित न हो।

चुनाव-अभियान पूरे जोरो पर था, जब अचानक राजीव गम्भीर रूप से बीमार हो गया। अविलम्ब शल्यक्रिया की आवश्यकता थी। दिन-रात एक करते हुए इन्दिरा बेटे के सिरहाने बैठी रही।

डॉक्टर ने लड़के को तसल्ली देते हुए कहा—"तुम्हे दर्द बिल्कुल महसूस नही होगा।"

परन्तु इन्दिरा ने बालक के प्रति ऐसा व्यवहार लालन-पालन के सिद्धान्त के प्रतिकूल समझा और राजीव को साफ-साफ बता दिया कि गम्भीर ऑपरेशन कराना पड़ेगा, दर्द बहुत होगा, लेकिन उसे हिम्मत बटोरकर पीडा को बर्दाश्त करना चाहिए।

और राजीव ने चिकित्सको को हैरान कर दिया—ऑपरेशन के दौरान वह बिल्कुल नही रोया और मुस्कराने की कोशिश करता रहा, हालाँकि जबर्दस्त दर्द हो रहा था।

यह इस बात की अच्छी मिसाल है कि अपने बेटो की इन्दिरा ने कैसे परवरिश की। वह उनके साथ वयस्कों की तरह बातचीत करती थीं, उनसे कभी झूठ नही बोलती थीं और बच्चो से ऐसे ही धीरज तथा दृढ संकल्प की अपेक्षा करती थी, जिनकी वह स्वयं स्वामिनी थीं। वह अपने बच्चो के साथ बिना किसी गैरजरूरी भावुकता व मानसिक दुर्बलता के सलूक करती थीं और छोटी-छोटी बातों में सरपरस्ती नहीं करती थी, क्योंकि वह समझती थीं कि इससे उनमे स्वावलम्बन की भावना के विकास मे बाधा पड़ती है, जो जीवन मे अत्यधिक आवश्यक है। मगर इसके साथ ही लड़कों ने माँ का स्नेह, बाल सुलभ कार्यो, चिन्ताओं तथा खुशियो मे माँ का वरदहस्त बराबर महसूस किया। उनके लिए माँ सच्चाई की रक्षक, न्याय की वाणी, वह सब कुछ थी, जिसके बिना जीवन का कोई अर्थ नही होता।

फरवरी, 1959 मे भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस का नियमित अधिवेशन नागपुर में हुआ। यह अधिवेशन इन्दिरा गाँधी के जीवन और राजनीतिक उन्नति में एक महान् घटना बन गया—वह पार्टी के सर्वोच्च पद पर निर्वाचित की गई।

काग्रेस की अध्यक्ष बनकर उन्होंने स्थानीय काग्रेस सगठनों में जड़ता और

ठहराव के विरुद्ध तथा पार्टी की केन्द्रीय संस्थाओ में नौकरशाही के विरुद्ध लड़ाई छेड दी, पार्टी के 'आकाओं' की राजनीतिक चालबाजियों तथा पार्टी के भीतर गुटबन्दी का सख्त विरोध किया। कांग्रेस की कार्य-समिति वास्तव मे पार्टी का जुझारू मुख्यालय बन गई। अब कोई भी निश्चिन्त जीवन बिताने की आशा नही कर सकता था—सभी कार्यकर्ताओं को उन्होंने काम में लगा दिया।

कांग्रेस की अध्यक्ष ने पार्टी नेतृत्व को जनता के ज्यादा नजदीक लाना अपना प्राथमिक कार्यभार माना। उन्होने उन कांग्रेसी सासदो की तीखी आलोचना की, जो मतदाताओं के साथ अपने सम्पर्क को पॉच वर्षो में एक बार चुनाव-पूर्व भाषणो तक सीमित रखते थे। उनकी पहल पर और उनके व्यक्तिगत उदाहरण से पूरे देश मे 'पद-यात्राओ' का अभियान चलाया गया, जिसके दौरान सांसदों को अपने चुनाव-क्षेत्रो मे, खासतौर से ग्रामीण इलाकों मे, घूम-घूमकर साधारण लोगो से बातचीत करके तथा गॉवों और मजदूर बस्तियो के निवासियो के सामने भाषण देकर उनकी जरूरतो के बारे मे ज्यादा जानकारी प्राप्त करनी थी।

ये नयी प्रवृत्तियॉ सभी लोगों को पसन्द नहीं आई और कांग्रेस के दक्षिणपंथी नेताओं के प्रतिरोध तथा रूढ़ियों का सामना करने मे बहुत समय और शक्ति लगानी पडती थी।

15 अगस्त, 1959 को स्वाधीनता दिवस के अवसर पर कांग्रेस के नाम सन्देश मे इन्दिरा गाँधी ने दुःखी मन से दो टूक शब्दों में कहा कि बहुत-से कांग्रेसी कार्यकर्ता सुगम रास्तो को तरजीह देते हुए शिखरों की ओर खड़ी ऊँचाइयों पर चढ़ने में उनका साथ नहीं देना चाहते। "पहाड़ों पर इन्सान जितनी अधिक ऊँचाइयों पर पहुँचता हे, सभी के लिए उतने ही ज्यादा खतरे पैदा होते हैं, पगडडी उतनी ही तंग तथा दुर्गम बनती जाती है,"[1] इन्दिरा ने कहा था।

'विभिन्न मतो वाली पार्टी'[2] कांग्रेस का संचालन करना टेढ़ी खीर था। कांग्रेस अधिवेशनों मे पारित अच्छे प्रस्ताव 'पाश्चात्य विचारधारा' परस्त दक्षिणपंथी गुटों के अवरोधी व्यवहार के कारण कोरे कागज बनकर रह जाते थे। अतः कांग्रेस द्वारा प्रस्तावित आमूल भूमि सुधार को अमल में लाने के सभी प्रयत्न असफल रहे। जवाहरलाल नेहरू भी भूमि सुधार को कार्यान्वित कराने में असमर्थ रहे, हालाँकि कांग्रेस तथा देश में उनकी प्रतिष्ठा निर्विवाद थी।

पारिवारिक मामले निबटाने के लिए इन्दिरा गॉधी को बहुत कम फुरसत मिलती थी। बडे आत्मानुशासन के बावजूद वक्त पूरा नहीं पड़ता था। पहले की तरह उन्हे

1 I. Gandhi. *My Truth*
2 Ibid.

प्रधानमन्त्री निवास-स्थान की स्वामिनी की जिम्मेदारियाँ सँभालनी पड़ रही थीं। पिता की अथवा पति की सेवा—उन्हे यह कठिन चुनाव करना पड़ा। राष्ट्र के नेता तथा सरकार के प्रधान का बेहद भारी बोझ ढोने वाले पिता की सहायता न करना उनके लिए असम्भव था। लेकिन तब फीरोज की उपेक्षा होती। पति को समुचित ध्यान न दे पाने के लिए इन्दिरा अपने को दोषी अनुभव करती थीं, विशेष रूप से इसलिए कि कुछ समय से फीरोज अक्सर दिल के दर्द की शिकायत करने लगे थे। पैदा हुई इस परिस्थिति में इन्दिरा तो क्या करती ?

फीरोज गाँधी सिद्धान्तनिष्ठ और सत्यवादी व्यक्ति थे। सांसद निर्वाचित होने के बाद उन्होंने बिना किसी पक्षपात के कुछ बड़े अभियान चलाए और कांग्रेस के कुछ प्रमुख कार्यकर्ताओं पर भ्रष्टाचार का आरोप लगाया। इसमें बहुत शक्ति लगानी पड़ी थी और उनके स्वास्थ्य पर इसका बुरा असर पड़ा।

बच्चो की चिन्ता फीरोज और इन्दिरा को सबसे अधिक सूत्रबद्ध करती थी। अपने बेटों को बड़ा होते देखकर पति-पत्नी को खुशी होती थी। पिता ने लडको में तकनीक के प्रति लगाव पैदा किया और पढ़ाई से छुट्टी होने पर दोनो लडके मोटरसाइकिलें जोडने और खोलने, लोहे के कल-पुर्जो से कोई चीज बनाने में सारा वक्त लगाते थे। स्वस्थ, आज्ञाकारी, जिन्दा-दिल तथा शिष्ट बालकों से माँ-बाप प्रसन्न थे।

लेकिन मानव-जीवन ही ऐसा है कि सुख के अलावा दुःख भी होता है। चिन्ता व आशंका की घटाएँ फिर से घिर गई। वही हुआ, जिसकी इन्दिरा को आशका थी—फीरोज को दिल का गम्भीर दौरा पडा। अस्पताल में वह बहुत देर तक नहीं रहे और जब बाहर निकले, तो इन्दिरा ने सभी काम एक तरफ रखने तथा कश्मीर मे पति के साथ पूरा एक महीना बिताने का फैसला किया। वह स्वय भी बहुत थक चुकी थी और थोड़ा आराम करने की बड़ी जरूरत थी।

हिमालय के अनुपम सौन्दर्य ने इन्दिरा को सदा की भाँति मुग्ध किया। पर्वतों की शान्ति और नीरवता ने कुछ समय के लिए राजनीतिक चिन्ताओं से उनका ध्यान हटाया। फीरोज को भी काफी स्वास्थ्य-लाभ हुआ। कई वर्षो से पति-पत्नी को रोजमर्रा के जीवन की दौडधूप से दूर रहकर शान्त पहाडी घाटी मे एक साथ रहने का अवसर नहीं मिला था। दोनों इसका सपना देखते थे, लेकिन हर बार ही किसी कारणवश योजना स्थगित करनी पड़ी थी। विपदा आने पर ही उन्हे अनन्त दौड़-धूप से कुछ मुक्ति मिली और एकाएक उन्हे इसका और अधिक बोध हुआ कि एक-दूसरे की संगति के बिना उनका व्यक्तिगत सुख पूर्ण नहीं हो सकता।

कश्मीर से लौटने के बाद इन्दिरा और फीरोज फौरी कार्यो मे जुट गए। डॉक्टरो की चेतावनियों का फीरोज पर कोई असर नहीं हुआ। उनका स्वभाव ही ऐसा था कि एक दिन भी घर में निठल्ले बैठना उनके लिए असम्भव था। यही बात इन्दिरा पर भी लागू होती थी

सितम्बर, 1960 में वह केरल राज्य के दौरे पर गई और फीरोज दिल्ली में रहकर हडताली सरकारी कर्मचारियों और प्रबन्धको के बीच वार्ताओं मे मध्यस्थता कर रहे थे।

इन्दिरा की यात्रा बहुत सफल रही और वह बड़े हौसले से घर वापस लौट रही थी, मन मे बच्चो, फीरोज, पिता से मुलाकात की सुखद पूर्वानुभूति थी। लेकिन मन के किसी कोने में कोई अस्पष्ट आशंका भी बसी हुई थी। इन्दिरा को बहुत पहले ही अनुभव हो चुका था कि जीवन तो धूप-छाँह है। सौभाग्य के बाद अक्सर दुर्भाग्य आता है। इन्दिरा अन्धविश्वासी नहीं थीं, लेकिन जीवन मे अनपेक्षित सुख-दुःख उन्हें अनेक बार मिल चुके थे।

हवाई अड्डे पर इन्दिरा का स्वागत करने का अपना वचन फीरोज ने नहीं निभाया। पिता के एक सहायक ने उनके पास आकर बताया कि फीरोज की हालत गम्भीर है और वह अस्पताल में हैं। इन्दिरा फौरन अस्पताल पहुँचीं और रात-भर फीरोज की शय्या के पास बैठी रहीं, उनका शान्त, निश्चिन्त चेहरा देखती रहीं। फीरोज का जीवन-दीप बुझ रहा था। अपना अल्पकालिक जीवन वह ईमानदारी से जिये, उसे जन-हित, इन्दिरा तथा पुत्रों पर न्योछावर कर गए।

सुबह को फीरोज गाँधी का देहान्त हो गया। 48 वर्ष की आयु में वह इस दुनिया से कूच कर गए। कुछ ही समय पहले कश्मीर में आराम करते हुए पति-पत्नी पारिवारिक योजनाओं के सपने बुन रहे थे। तब उन्हे लगता था कि असली जीवन अभी उनके आगे है।

पति के निधन के साथ इन्दिरा की आत्मा के सूक्ष्म सूत्र टूट गए। उन्होंने कहा—"करारी मानसिक चोट लगी, इतनी जबर्दस्त, मानो किसी ने कुल्हाडी से मेरे शरीर के दो टुकडे कर दिए हों।"[1]

इन्दिरा गाँधी ने कांग्रेस अध्यक्ष का पद छोड दिया। भावी योजनाओं के बारे मे एक पत्रकार के पूछने पर उन्होंने जवाब में कहा—"अस्पताल।" पूर्ण शारीरिक तथा मानसिक क्लान्ति पर काबू पाने मे उन्हें कई महीने लगे।

1961 के आरम्भ में इन्दिरा गाँधी पुनः सक्रिय राजनीति के क्षेत्र में वापस आई। वह कांग्रेस की कार्य-समिति की सदस्य निर्वाचित हुई। साथ ही उन्होंने कांग्रेस के कुछ आयोगो के सचालन का कार्यभार सँभाला और कांग्रेसी सांसदों के बीच काफी काम किया। राष्ट्रीय एकता परिषद् के कार्यकलाप की ओर उन्होंने विशेष ध्यान दिया। उनकी मुख्य चिन्ता, गणराज्य की सेवा में उनका मुख्य ध्येय बन गया था धार्मिक और साम्प्रदायिक झगड़ों का निपटारा, जिनके बार-बार भड़कने से सरकार परेशान थी, तथा इस सम्बन्ध मे सभी स्तरों पर, केन्द्रीय और स्थानीय—दोनों ही स्तरों पर अल्पसख्यक जातियो के अधिकारो की रक्षा।

1 I. Gandhi, *My Truth*

जिन स्थानों में साम्प्रदायिक झगड़े होते थे, इन्दिरा गाँधी तुरन्त वहाँ जाती और स्थानीय जनता को मनाते-समझाते हुए खतरनाक संकटो की आग बुझा देती थीं, जिनसे राष्ट्रीय एकता पर आँच आती थी। इसके लिए बडे साहस की जरूरत थी। बिना किसी पहरे के, सिर्फ अपनी दलीलो के प्रभाव तथा लोगो की सहज बुद्धि और इन्सानियत का सहारा लेते हुए इन्दिरा गाँधी निर्भीकता से उत्तेजित भीड़ में घुस जाती और झगड़ने वाले सम्प्रदायो के बीच सुलह कराकर ही चैन की साँस लेती थी। कांग्रेस के नेताओं में से इने-गिने व्यक्ति ही यह जोखिम उठाते थे।

कांग्रेस पार्टी की कार्य-समिति मे विदेश नीति तथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के मामले में इन्दिरा गाँधी से अधिक योग्य और जानकार कोई दूसरा नही था। उन्हे सयुक्त राष्ट्र संघ के कार्यकलाप की पूरी-पूरी जानकारी रहती थी और यूनेस्को के कार्यकारी बोर्ड के सदस्य के रूप मे वह इस सगठन के कार्य मे भाग लेती थीं।

उन वर्षो में इन्दिरा गाँधी ने अफ्रो-एशियाई एकजुटता बढ़ाने में काफी समय और श्रम लगाया। उन्होने अफ्रीकी मुक्ति आन्दोलन तथा अरब दुनिया के अनेक नेताओं के साथ गहरे व्यक्तिगत रिश्ते कायम किए।

इन्दिरा गाँधी ने मेक्सिको, मिस्र, यूगोस्लाविया, फ्रांस, संयुक्त राज्य अमरीका, जापान तथा कई अन्य देशो की यात्राएँ कीं। हर जगह उन्होंने शान्ति, स्वतन्त्रता और समानाधिकार पर आधारित अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के लिए जनगण के साम्राज्यवादविरोधी सघर्ष का पक्ष लिया। उन्होंने कहीं भी, कभी भी स्वतन्त्र रूप से विकास करने के उत्पीडित राष्ट्रो के अधिकारो की रक्षा करने के अपने सिद्धान्त का उल्लंघन नहीं किया। दक्षिणी अफ्रीका की नसलवादी हुकूमत की तथा पश्चिमी जगत् के उसके हिमायतियो की उन्होने कटु और जोरदार भर्त्सना की।

सन् 1962 में भारत मे आम संसदीय चुनाव हुए।

पण्डित नेहरू की वृद्धावस्था और शिथिल स्वास्थ्य के कारण उनके लिए फौरी राजकीय मामले निबटाना और चुनाव अभियान तथा देश भ्रमण से सम्बन्धित शारीरिक और भावनात्मक तनाव का भारी बोझ पहले की तरह उठाना सम्भव नहीं था। बडी हद तक यह कार्यभार इन्दिरा गाँधी ने सँभाला। पिता के चुनाव क्षेत्र मे बहुत-सी यात्राएँ करते हुए वह विराट सभाओ में भाषण करती थीं, मतदाताओ से निरन्तर मुलाकातें करती रहती थी। जवाहरलाल नेहरू की ओजस्वी देशभक्त पुत्री की शोहरत सारे भारत में फैल गई। जनता के बीच उनकी लोकप्रियता तेजी से बढ़ी। इन्दिरा गाँधी राष्ट्रव्यापी पैमाने की राजनीतिक नेता के रूप में सामने आई, जिसकी प्रतिष्ठा की उपेक्षा देश के सत्तारूढ हलके नहीं कर सकते थे। संसद के लिए उम्मीदवार के रूप में इन्दिरा गाँधी खड़ी नहीं हुई लेकिन किसी को इसमें तनिक भी सन्देह नहीं था कि यदि उन्होंने चुनाव लड़ने का फैसला किया होता तो अवश्य

निर्वाचित हुई होतीं।

सन् 1962 के शरद काल मे, उन चुनावों के बाद, जिनमें कांग्रेस पार्टी की जीत हुई थी, अनपेक्षित घटना घटी—भारत-चीन सीमा पर सशस्त्र सकट शुरू हो गया। जवाहरलाल नेहरू सदैव भारत-चीन मैत्री के दृढ़ समर्थक रहे थे और अपने पडोसी की सद्भावना में उनका पक्का विश्वास था। वह हमेशा यह मानकर चलते रहे कि दो देशो की ऐतिहासिक नियतियॉ, अपनी राष्ट्रीय स्वाधीनता को मजबूत बनाने के लिए, शान्ति तथा सामाजिक प्रगति के लिए साम्राज्यवादविरोधी संघर्ष भारत और चीन को सूत्रबद्ध करते हैं।

भारत के कट्टर दक्षिणपंथियों तथा बाहरी साम्राज्यवादी तत्त्वो दोनों ने ही भारत-चीन सम्बन्धो मे संकट का लाभ उठाया।

भारत-चीन सीमा पर जगी कार्रवाइयों का प्रसार भारत के पक्ष में नहीं हुआ, जिसके परिणामस्वरूप देश के भीतर पण्डित नेहरू की राजनीतिक स्थिति डाँवाडोल हो गई। भारत के आजाद होने के बाद पहली बार नेहरू के निवास-स्थान के सामने जन-प्रदर्शन हुए, जिनमे उनके पदत्याग की माँग की गई थी।

सत्तारूढ क्षेत्रो के दक्षिणपथी तत्त्वो के दबाव से जवाहरलाल नेहरू अपनी सरकार में रद्दोबदल करने के लिए विवश हुए। उनके नजदीकी मित्र तथा सहयोगी कृष्ण मेनन को मन्त्रिमण्डल से त्याग-पत्र देना पड़ा, जो पहले रक्षा मन्त्री और बाद मे रक्षा उत्पादन मन्त्री थे।

1962 की घटनाओं ने नेहरूजी की शक्ति को कमजोर बनाया। उनका स्वास्थ्य गिरने लगा। जनवरी, 1964 मे भुवनेश्वर मे काग्रेस के वार्षिक अधिवेशन मे उन्हे दिल का दौरा पड़ा। प्रधानमन्त्री की अस्वस्थता को गुप्त रखने के कड़े उपायों के बावजूद 'नेहरू के बाद कौन है ?'—इस बैनर हेडलाइन से कुछ पत्रों मे एक कोलाहलपूर्ण और अशोभनीय अभियान छिड गया। इन्दिरा गॉधी का नाम जनमतसंग्रह मे तीसरे स्थान पर था। लाल बहादुर शास्त्री और कामराज के नाम उनसे पहले थे और मोरारजी देसाई का नाम इन्दिरा के बाद था।

मन्त्रिमण्डल के कुछ सदस्यों ने इन्दिरा गॉधी को विदेशी मन्त्री के रूप मे सरकार मे शामिल होने की सलाह दी, लेकिन उन्होंने इस सम्भावना पर विचार करने से साफ-साफ इन्कार कर दिया। उनके पिता ने भी उनसे कोई सरकारी पद न लेने की सिफारिश की। "इस वक्त नही, इन्दु, शायद कुछ वक्त बाद," अपनी बेटी से वह कहते थे।

भारत के शीर्ष नेता अच्छी तरह समझ गए थे कि नेहरूजी ज्यादा समय तक जीवित नहीं रहेगे और बहुत कुछ अब उनके उत्तराधिकारी पर निर्भर करेगा—क्या भारत नेहरू की स्वतन्त्र नीति को जारी रखेगा अथवा वह गुटनिरपेक्षता की नीति से विमुख हो जाएगा और देश के अन्दर प्रगतिशील सुधार

उस समय अनेक प्रभावशाली कांग्रेसी नेताओं तथा कुछ राज्यों के मुख्य मन्त्रियों—क. कामराज नाडर, सजीव रेड्डी, एस. के. पाटिल, अतुल्य घोष आदि ने एक गुट बना लिया था, जो 'सिंडीकेट' के नाम से जाना जाने लगा था। उस गुट का कोई भी सदस्य प्रधानमन्त्री पद के लिए व्यक्तिगत रूप से दावा नही पेश कर सका, लेकिन वे आपस मे अपनी पसन्द का प्रधानमन्त्री चुनने पर तथा कांग्रेस की नीति तय करने पर सहमत हो गए। कांग्रेस के नेतृत्व मे पहले का परोक्ष सत्ता-सघर्ष संगठित रूप लेने लगा।

जवाहरलाल नेहरू ने कांग्रेस के अन्दर मनमुटाव को खत्म करने और उस पर नौकरशाही तथा बुर्जुआ प्रभाव के बढने की प्रवृत्ति को रोकने के लिए यथासम्भव प्रयत्न किए थे। कांग्रेस के अन्दर 'पार्टी आकाओं' के प्रभावशाली ग्रुप के उभरने से वह बहुत चिन्तित थे, जो राजनीतिक चालबाजियों तथा अपने स्वार्थो की पूर्ति में लगे थे।

पण्डित नेहरू ने 'कामराज योजना' का अनुमोदन किया, जिसके अनुसार केन्द्र सरकार के छ. मन्त्रियों को पदच्युत करके उन्हे कांग्रेस के नेतृत्व को मजबूत बनाने मे लगाना था। आशा थी कि ये प्रतिष्ठित नेता स्थानीय कांग्रेस सगठनो के कार्य को जानदार बना देंगे तथा इससे जनसाधारण का हितसाधन होगा।

इन छः मन्त्रियों में से एक थे वाणिज्य एव वित्त मन्त्री मोरारजी देसाई।

मोरारजी देसाई को पण्डित नेहरू का समाजवादी रुझान पसन्द नही था, अर्थव्यवस्था के सार्वजनिक क्षेत्र के निर्माण के हेतु उनके प्रयासों तथा नियोजन की भूमिका बढ़ाने के इरादे का मोरारजी देसाई समर्थन नहीं करते थे, नेहरूजी की विदेश नीति से भी वह पूरी तरह सहमत नही थे। वस्तुतः वह कांग्रेस में दक्षिणपंथी विपक्ष का प्रतिनिधित्व करते थे, जो भारत मे 'समाजवादी नमूने के समाज' के निर्माण का विरोध करता था।

मोरारजी देसाई के विचारो से पण्डित नेहरू अनभिज्ञ नही थे, लेकिन उन्हें इस तथ्य को ध्यान मे रखना पडता था कि मोरारजी देसाई को कांग्रेस के कुछ हलको का समर्थन प्राप्त था। इसके अलावा मोरारजी देसाई के आचरण पर असन्तोष प्रकट करने का कोई अवसर नहीं मिलता था। वह अनुशासनप्रिय व्यक्ति थे और प्रधानमन्त्री की नीतियो की खुलकर आलोचना नहीं करते थे।

मन्त्री पद छोड़कर मोरारजी देसाई ने राज्यो के कांग्रेस संगठनों में, विशेष रूप से गुजरात में अपना व्यक्तिगत प्रभाव बढ़ाने के लिए एड़ी-चोटी का जोर लगाया। कांग्रेस के ऊपरी हलकों में चर्चा होने लगी कि देसाई प्रधानमन्त्री बनने के लिए कृतसंकल्प हैं।

मई, 1964 तक, दिल के दौरे के बाद पण्डित नेहरू का स्वास्थ्य काफी हद तक सुधर गया और उन्होने अखिल भारतीय कांग्रेस समिति के अधिवेशन में भाग लेने का फैसला किया जो उस समय मुम्बई में चल रहा था

नेहरूजी के पुनः सक्रिय होने से अनुदारपंथी शक्तियों की नाराजगी इन्दिरा गॉधी की पैनी दृष्टि से छिपी नहीं रही।

बेटी अपने पिता के लिए चिन्तित थी—काग्रेस कार्यक्रम के सिद्धान्तो में सन्देह प्रकट करने के अनुदारपथियो के प्रच्छन्न प्रयत्नो से भी वह बहुत विचलित थे। क्या नये भारत के लिए संघर्ष के लम्बे वर्ष, स्वतन्त्रता के आदर्शो को अर्पित उनका सारा जीवन और कार्यकलाप व्यर्थ रहा है ?

मई महीने की दहकती धूप मे मानसिक क्लान्ति और व्यथा उनके लिए घातक साबित हो सकती थीं। इन्दिरा ने पिता को कुछ दिन के लिए देहरादून जाने के लिए राजी किया, जहॉ प्राकृतिक पर्यावरण स्वास्थ्यकर है और जलवायु स्फूर्तिदायी तथा सुखद है।

खुले बरामदे में वे दोनों घण्टों बैठे रहते थे, स्वच्छ शीतल वायु का आनन्द लेते हुए पर्वतीय शिखरों की चिरन्तन शान्ति में विभोर हो जाते थे।

महान्, निस्तब्ध पहाड़ों की अपेक्षा मानव के क्षण-भगुर जीवन का भला क्या मूल्य है ? हिमालय युवा, बढ़ते हुए पहाड है और वे भारतवासियों की अनगिनत पीढियो के जीवन के साक्षी बनते रहेगे। वे भावी भारत के आत्माभिमानी तथा बुद्धिमान लोगों को भी देखेगे, जो अपने देश के इतिहास का अध्ययन करते हुए, उसकी स्वतन्त्रता के स्रोतो की जॉच करते हुए अपने पूर्वजों के कार्यकलापों का समुचित मूल्यांकन करेगे। वे वर्तमान पीढी के स्त्री-पुरुषों के पौत्र-प्रपौत्र, महात्मा गॉधी और रवीन्द्रनाथ ठाकुर के वंशज होगे। कदाचित् इन्दिरा के प्रपौत्र भी कभी देहरादून आएँगे, हिमालय के अनन्य सुन्दर दृश्यों का आनन्द लेगे।

ये नये प्रकार के लोग होंगे, जो युद्धों और भुखमरी से पीड़ित नहीं होगे, सामाजिक और धार्मिक व साम्प्रदायिक बुराइयो से मुक्त होगे, जिनके जीवन मे इन्दिरा गॉधी का स्वप्न साकार बनेगा।

पिता और वह स्वयं तब नहीं रहेगे। मगर वे और उनके कार्य विगत भूतकाल का अंग, अमर जीवन-वृक्ष की गिरी पत्तियों के समान होंगे, जो मिट्टी बनकर इस वृक्ष की जड़ों का पोषण करेंगी। इस प्रकार मानव पीढियाँ काल का ग्रास बनते हुए भावी पीढ़ियों के लिए अपनी आत्मिक निधियॉ तथा भौतिक सस्कृति छोडती जाती है, ब्रह्माण्ड की अद्वितीय मानव सभ्यता के भवन के निर्माण में अपना योगदान करती जाती है।

26 मई, 1964 को पिता-पुत्री विमान से दिल्ली लौटे। आसन्न विपदा का कोई आसार नहीं दिखाई दिया था—पिताजी स्वस्थ और प्रसन्नचित्त प्रतीत होते थे, हमेशा की तरह रात को देर तक अपनी मेज के पास बैठकर सरकार के मन्त्रियों के परिपत्र तथा राजदूतो के फौरी सन्देश पढ़ते रहे। फिर उन्होंने अपने सचिव से सन्तुष्ट भाव से कहा 'मैंने सारा काम निपटा दिया है।' यह कहकर वह उठे और अपने शयन-

अगली सुबह को पण्डित नेहरू ने तबीयत खराब होने की शिकायत की। इन्दिरा ने डॉक्टरो को बुलवा भेजा। रुधिर-आधान कराने की जरूरत पड़ी और इन्दिरा ने स्वय रक्त दान किया। मगर उनकी स्थिति मे सुधार नहीं हो सका। पिता अभी होश मे थे, पर उनकी शक्ति तेजी से क्षीण होती जा रही थी और उन्होने उपचार के सभी उपाय कर रहे डॉक्टरों से धीमी आवाज में कहा कि उनके प्रयास व्यर्थ है। उन्होंने ऑखें मूँद ली, उनकी साँसे कमजोर होती गई और अन्ततः उनके प्राण-पखेरू उड़ गए।

पिता की शय्या के पास दीवाल पर फ्रेम किया हुआ कागज था, जिस पर अग्रेज कवि राबर्ट फ्रोस्ट की कविताओं की पक्तियॉ अकित थी—

बहुत लम्बा और कठिन है मार्ग
अगम्य घने वन-खण्ड से होता हुआ,
पर चिर निद्रा में लीन होने के पूर्व
मुझे तय करना होगा यह मार्ग।

जवाहरलाल नेहरू ने इस ससार में धन सचय नही किया, पर अपनी परमप्रिय पुत्री, अपनी निष्ठावान अनुयायी और सहायिका के लिए वह अपने विचारो-आदर्शो की बहुमूल्य धरोहर छोड़ गए थे, वह मार्ग दर्शा गए थे, जिस पर वह स्वयं बढ़े थे और जिस पर उनकी पुत्री को आगे चलना था।

10

देश का नेतृत्व

अपनी माँ, पिता और पति से इन्दिरा वचित हो गई, पर परिवार की नयी पीढ़ी बढ रही थी। नेहरू-कौल-गाँधी वश परम्परा जारी रही। इन्दिरा गाँधी के बेटे इग्लैण्ड मे शिक्षा पा रहे थे। माँ बराबर उनका प्यार, विकट क्षण मे उनका समर्थन महसूस करती रही। पुत्र अक्सर पत्र लिखते थे, छुट्टियाँ बिताने भारत आते थे।

हर इन्सान के मन मे मातृभूमि की छवि माता-पिता, परिवार से अभिन्न होती है, और इन्दिरा गाँधी के पुत्र देशभक्ति के वातावरण में पले और बड़े हुए।

इन्दिरा गाँधी ने अपने पिता का वह निवास-स्थान छोड़ दिया, जिसे सरकार ने सग्रहालय का रूप देने का फैसला किया था, और नई दिल्ली के सफदरजग रोड पर एक छोटे बँगले में चली गई। सफेद बँगला बाग की हरियाली से ढका हुआ था।

इन्दिरा गाँधी के सूक्ष्म सौन्दर्यबोध, सुरुचि, उद्यान-सरचना के ज्ञान की और डिजाइन-कार्यो, कलात्मक अभिकल्प तथा पुष्प-सज्जा के प्रति अनुराग की बदौलत यह घर और बाग राजधानी का एक सबसे आकर्षक और सुव्यवस्थित स्थान बन गया था।

तीन मूर्ति भवन की तुलना में नये घर मे जीवन की व्यवस्था बहुत भिन्न थी, लेकिन एक नियम बना रहा—प्रतिदिन सुबह 8 से 9 बजे तक इन्दिरा गाँधी के निवास-स्थान के द्वार बिना किसी भेदभाव के सबके लिए खुले रहते थे। उनमे राजनीतिज्ञ और सार्वजनिक हस्तियाँ, मजदूर और किसान, छात्र और पर्यटक—सभी होते थे। कुछ लोग राज-काज के सम्बन्ध मे उनसे मिलते थे, कुछ अन्य आवेदन-पत्रो और शिकायतो के साथ अथवा उनकी राय लेने के लिए, तो कुछ सिर्फ उनके दर्शन के लिए आते थे।

सफदरजग रोड के इस बँगले पर सुबह जमा होने वाली भीड़ से यह स्पष्ट हो जाता था कि इसमे निवास करने वाली हस्ती कोई साधारण व्यक्ति नहीं, बल्कि नामी राजनीतिज्ञ थी, जिसे जनता अपनी नेता मानती थी।

सत्ताधारी पार्टी का नेतृत्व नेहरू का उत्तराधिकारी चुनने का कठिन मसला हल कर रहा था जैसा कि अनुमान था मोरारजी देसाई प्रधानमन्त्री पद के लिए

उम्मीदवार बने और इन्दिरा को भी अपनी इच्छा बताई, ताकि उनका महत्त्वपूर्ण समर्थन मिल सके। पर इन्दिरा गॉधी ने साफ-साफ बताया कि वह लाल बहादुर शास्त्री के पक्ष मे मतदान करेगी।

और जब सरकार के प्रधान का पद स्वय इन्दिरा गाँधी को सौंपने की पेशकश की गई, तो उन्होंने इस प्रस्ताव को फौरन नामंजूर कर दिया। काग्रेस के एक पुराने 'दिग्गज' के साथ प्रधानमन्त्री पद के लिए लडने का उनका कोई इरादा नही था।

शास्त्रीजी ने आग्रह किया कि वह उनके मन्त्रिमण्डल मे शामिल हो जाएँ। थोडे सकोच के बाद इन्दिरा गॉधी ने सूचना तथा प्रसारण मन्त्री का पद स्वीकार कर लिया। अगस्त, 1964 में वह पहली बार भारतीय संसद के लिए निर्वाचित हुई।

उन दिनों सोशलिस्ट काग्रेसमैन समाचारपत्र में 'इन्दिराजी की नयी भूमिका' शीर्षक सम्पादकीय में लिखा गया था—"जनता नेहरूजी के प्रति केवल इसलिए आभारी नहीं है कि उन्होंने भारत की महत्त्वपूर्ण सेवा की थी, बल्कि इसलिए भी कि वह अपने प्रतीक के रूप मे अपने पीछे इन्दिरा गॉधी को छोड़ गए।"

"वह सम्मान के योग्य और राष्ट्र की आशा हैं," लेख मे कहा गया। "नये मन्त्रिमण्डल मे उनके शामिल होने का अर्थ यह है कि सरकार नेहरू की नीति चलाएगी। शास्त्रीजी तथा नन्दाजी के साथ वह इस बात की गारण्टी हैं कि नेहरू की नीति जारी रखी जाएगी और भारत समाजवादी लक्ष्य की ओर जाने वाले मार्ग से नही भटकेगा।"

भारत में हर जगह यही भावना फैली हुई थी। इसलिए प्रतिक्रियावादी दक्षिणपथियो को फौरन सफलता पाने की आशा नही हो सकती थी। उन्होंने विलम्बकारी कार्यनीति अपनाई, जिसका मकसद पण्डित नेहरू की राजनीतिक विरासत के प्रगतिशील सार को धीरे-धीरे समाप्त करना था। इन्दिरा गाँधी को बहुत शीघ्र इस बात का विश्वास हो गया।

यह नहीं कहा जा सकता कि लाल बहादुर शास्त्री कांग्रेस के दक्षिणपंथी तत्त्वो से सहमत थे, लेकिन उनमे इतना पर्याप्त सशक्त व्यक्तित्व नहीं था कि वह दृढतापूर्वक अपने सिद्धान्तों की रक्षा कर सकते और वह प्रायः उन ताकतों के साथ समझौता करने तथा उन्हें रियायतें देने के लिए विवश होते थे, जो सरकार और काग्रेस के अन्तर्गत बडे व्यवसाय के हितो की पैरवी करती थी।

मन्त्री पद स्वीकार करके इन्दिरा गॉधी को यह मंजूर नहीं था कि नेहरू की नीति में अप्रत्यक्ष हेर-फेर के उद्देश्य से उन्हें परदे के रूप मे इस्तेमाल किया जाए। उन्होने कई बार शास्त्रीजी के सामने इस पर नाराजगी जाहिर की।

कांग्रेस के दक्षिणपथी 'आकाओं' की राजनीतिक चालों में शामिल न होते हुए और खुलकर उनकी उपेक्षा करते हुए इन्दिरा कांग्रेस के आम सदस्यो, जनसाधारण को सम्बोधित करती रहीं

सितम्बर 1964 में समाजवादी रुझान रखने वाले काग्रेसियों की सभा में भाषण

देते हुए उन्होंने समाजवादी रास्ते से काग्रेस के खतरनाक भटकाव से आगाह किया ओर उन लोगों से पार्टी को बचाने की अपील की, जो उसकी नीति मे विश्वास नही करते थे।

जवाहरलाल नेहरू और दूसरे आमूल परिवर्तनबादी कांग्रेसी कार्यकर्ताओं की तरह इन्दिरा गाँधी भी नीति-निर्धारण मे वैज्ञानिक समाजवाद के सिद्धान्तों से काम नही ले सकती थी, लेकिन इन सिद्धान्तो से प्रभावित होकर उन्होंने सामाजिक न्याय के विचारों का समर्थन किया और जनता के जीवन में सुधार पर ध्यान केन्द्रित किया।

गरीबी और भूख को मिटाने के कार्यक्रम को भारतीय पूँजी के व्यावसायिक तथा औद्योगिक हितो की खातिर अमल में लाने से इन्कार करने के लिए इन्दिरा गॉधी ने सरकार की खुले तौर पर आलोचना की। साधारण भारतवासियों की सेवा करना उनका सर्वोच्च मनोरथ था।

खूब खाते-पीते, स्वस्थ बच्चो को हॅसते-खिलखिलाते देखने, अपनी मेहनत के फल से सन्तुष्ट किसानो और उनकी पत्नियो के खुश चेहरो को देखने से बढकर प्रसन्नता की बात उनके लिए और कुछ नही थी। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वह कोई भी त्याग करने के लिए, राजनीतिक उन्नति, निजी खुशहाली, स्वयं जीवन को दॉव पर लगाने के लिए तत्पर रहती थी। यही उनके जीवन का अर्थ था और सशक्त रूप मे, बिना किसी सकोच के उन्होने इसकी घोषणा की। वह कहती थीं कि न्याय और सत्य के मामलों मे सकोच अनुचित है, उनकी रक्षा करना मानव के संकल्प तथा कार्यकलाप का सार है।

भारत-पाकिस्तान युद्ध के कारण, जो कश्मीर को लेकर छिडा था, देश की स्थिति जटिल हो गई थी।

उस समय इन्दिरा गाँधी स्वय कई बार युद्ध-क्षेत्र में पहुँची थीं। मन्त्रिमण्डल के सदस्य के रूप में उन्होंने अपनी अडिगता का परिचय दिया। उन्होंने रक्षा योजना का बारीकी के साथ अध्ययन किया, अग्रिम अड्डों का निरीक्षण किया और अपने जीवन को खतरे मे डालकर फौजी हेलिकाप्टर से युद्ध-स्थल का सर्वेक्षण किया।

सोवियत सरकार की मध्यस्थता से आयोजित ताशकन्द में हुए भारतीय-पाकिस्तानी सम्मेलन के फलस्वरूप दो देशो में सुलह हुई और कश्मीर में युद्ध समाप्त हो गया।

ताशकन्द घोषणापत्र पर हस्ताक्षर के कुछ ही घण्टे बाद अचानक दिल का दौरा पडने के कारण शास्त्रीजी का देहान्त हो गया।

इस तरह एक बार फिर प्रधानमन्त्री के निर्वाचन का प्रश्न सामने आया। इस बार मोरारजी देसाई ने इस पद के लिए उम्मीदवार बनने वाले किसी को भी चुनौती देने का निश्चय किया

देश की वास्तविक सत्ता पर कब्जा करने के प्रयास में काग्रेस में बने 'सिंडिकेट'

ने इन्दिरा गाँधी की उम्मीदवारी का समर्थन करने का फैसला किया। उसके सदस्यो का यह पक्का विश्वास था कि देसाई जैसे अनमनीय और महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति के मुकाबले अपेक्षाकृत कम आयु की और ज्यादा अनुभव न रखने वाली महिला पर अपनी राजनीतिक इच्छा थोपना ज्यादा आसान होगा। इसके अलावा, नेहरू की लोकप्रिय नीति की वाहक इन्दिरा गाँधी के सरकार के प्रधान के रूप मे निर्वाचन का काग्रेस के सामान्य सदस्यों तथा जनता द्वारा स्वागत किया जाएगा। यह भी एक प्रतिष्ठित सरकार को, जिसके पीछे पूर्ण शक्तिशाली 'सिडिकेट' होगा, कायम करने के लिए महत्त्वपूर्ण पग होगा।

ऐसा काग्रेस के 'आकाओं' ने सोचा और इस तरह अपनी योजना बनाई। लेकिन उन्होने इस बात को ध्यान में नही रखा कि स्वय इन्दिरा गाँधी के राजनीतिक विचार क्या है।

परन्तु मोरारजी देसाई टस से मस नहीं हुए और चुनाव में खडे रहे। ससदीय नेता, अर्थात् नये प्रधानमन्त्री के चुनाव के दिन भव्य चक्राकार ससद भवन के सामने इन्दिरा गाँधी की प्रतीक्षा में हजारों लोग जमा थे।

वह भारत में बनी साधारण गाड़ी (राष्ट्रीय उद्योग का समर्थन करने का चिह्न) मे पहुँचीं। वह सफेद खादी की साड़ी पहने हुए थीं (गाँधी की परम्परा के प्रति निष्ठा का लक्षण), कन्धों पर कश्मीरी शाल ओढे थीं (प्राचीन कश्मीरी वश से सम्बन्ध का सकेत) और शाल पर छोटा लाल गुलाब लगा था (नेहरू का प्रतीक)।

इन्दिरा गाँधी की आयु 48 वर्ष थी। सुडौल शरीर, सुन्दर नाक-नक्श, सजीव आँखे, जिनमें बुद्धिमत्ता टपक रही थी, मन-मोहक मुस्कान—वह भारतीय नारी सुलभ गरिमा की साक्षात् प्रतिमा थीं।

इन्दिरा गाँधी को देखते ही लोगो ने आजादी के लिए लडाई के वर्षों की तरह 'इन्कलाब जिन्दाबाद !' नारा बुलन्द किया। यह उमंग भरी मुलाकात देखने वाले हर व्यक्ति के लिए साफ था कि इन्दिरा गाँधी के नाम से जनता ने आजादी, बेहतर जिन्दगी, सामाजिक न्याय के लिए अपने संघर्ष को जोड़ दिया।

उन्होंने हाथ जोड़कर संसद भवन के सामने इकट्ठे हुए जन-समूह का अभिवादन किया और फाटक में प्रवेश किया। बड़े शान्त भाव से वह संसद के मुख्य सभा-कक्ष मे दाखिल हुई। सांसदों ने खड़े होकर उनका स्वागत किया। इन्दिरा के होठो पर मुस्कान खिल उठी और उन्होंने अपने प्रतिद्वन्द्वी मोरारजी देसाई का स्नेहपूर्वक अभिवादन किया। देसाई ने भी उनका अभिवादन किया और सातवीं पंक्ति की अपनी कुर्सी पर बैठ गए।

मतदान शुरू हुआ। महात्मा गाँधी, मोतीलाल तथा जवाहरलाल नेहरू के बडे छविचित्रों के नीचे मतपेटी रखी हुई थी। बालकनी पर बैठे विपक्षी दलों के सदस्य और कांग्रेसी सांसदों को वोट देते हुए देख रहे थे

मतदान के परिणाम की प्रतीक्षा में हॉल में सन्नाटा छा गया द्वार

से संसदीय मामलों के मन्त्री निकले। उसी क्षण किसी सांसद के मुँह से सहसा निकला—"लड़का या लडकी ?" मन्त्रीजी मुस्कराए, बोले—"लडकी !" और इसके बाद गम्भीर आवाज़ में मतदान मे वोटो की गिनती की अधिकृत घोषणा सुनाई—"श्रीमती इन्दिरा गॉधी की जीत हुई है। उन्हें 355 वोट प्राप्त हुए है और श्री मोरारजी देसाई को 169 वोट।"

नवनिर्वाचित प्रधानमन्त्री पर फूलों की बौछार की गई।

'नेहरू जिन्दाबाद !' हॉल इस नारे से गूँज उठा और सभी लोग समझ गए कि इन्दिरा गॉधी के निर्वाचन के साथ इस हॉल मे मानो जवाहरलाल नेहरू का पुनर्जन्म हुआ है, जिन्होने स्वातन्त्र्य-संग्राम में भारतीय जनता का और फिर 17 वर्ष तक लगातार भारत सरकार का नेतृत्व किया।

संसद भवन से बाहर निकलकर इन्दिरा गॉधी ने उल्लसित जन-समूह का अभिनन्दन किया।

खुली मोटरगाडी में बैठकर वह राष्ट्रपति भवन के लिए रवाना हुई, जहॉ भारत के राष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन ने उनसे भेंट की और उन्हें नयी सरकार का गठन करने का कार्यभार सौंपा।

श्रीमती गॉधी ने अत्यन्त जटिल आन्तरिक तथा विदेशी समस्याओं में उलझे विशाल देश के शासन-सचालन की जिम्मेदारी स्वीकार की। इसके पीछे उनका व्यक्तिगत मिथ्याभिमान नहीं था और न सम्मान और सत्ता पाने की भूख थी। पर न ही वह नाममात्र की प्रधानमन्त्री बनना चाहती थीं, 'सिडिकेट' द्वारा उनके लिए पूर्वनिश्चित यह भूमिका उन्हें कतई मजूर नही थी। वह राष्ट्र की सच्ची नेता बनना चाहती थीं और प्रधानमन्त्री पद के लिए संघर्ष शुरू करते हुए उन्होंने देशभक्तिपूर्ण लक्ष्य अपने सामने रखा। उनके पास स्पष्ट राजनीतिक कार्यक्रम था। अपने लक्ष्य का स्पष्टीकरण करते हुए इन्दिरा गॉधी ने कहा—"श्री मोरारजी देसाई के प्रधानमन्त्री बनने की सम्भावना से मैं इसलिए चिन्तित थी कि उनकी नीति हमारे प्रयासों के सर्वथा प्रतिकूल थी और मुझे डर था कि भारत फौरन ही अपनी नीति की दिशा बदल देगा।"[1]

इन्दिरा गॉधी ने प्राप्त हो चुकी स्थिति से भारत की विमुखता को रोकने और नेहरू की राजनीतिक लाइन को बनाए रखने तथा उसका विकास करने का लक्ष्य अपने समक्ष निर्धारित किया। अपने पहले वक्तव्य में उन्होंने कांग्रेसियो तथा पदाधिकारियों के इरादों तथा व्यवहार मे शोचनीय अन्तर का उल्लेख किया।

कांग्रेसी आकाओ का प्रतिरोध दबाना, 'सिंडिकेट' के दावों को ठुकराना, स्थानीयवादी प्रवृत्तियों तथा नौकरशाही पर अकुश लगाना बहुत कठिन काम था।

दिवगत पिता की तरह वह रोज 18 घण्टे काम करती थी। असाधारण

1 Gandhi, *My Truth*.

कार्यक्षमता, आत्म-त्याग की भावना, प्रकृति प्रदत्त बुद्धि और विशाल अनुभव, स्वतन्त्र चिन्तन, धैर्य और साहस तथा दृढ़ संकल्प के फलस्वरूप वह अपनी राजनीतिक लाइन के निष्पादन में सफल हुई।

मन्त्री बहुत जल्दी समझ गए कि एक सशक्त नेता से उनका साबिका पड़ा है, जो उनके राजनीतिक भटकावों तथा मन्त्रिमण्डल में असामजस्य को बर्दाश्त नही करेगी। वह लोकतान्त्रिक नियमो और शिष्टाचार का पालन करती थीं तथा अपने सहयोगियो के विचारों का आदर करती थीं, परन्तु अन्तिम निर्णय सदैव उनका ही होता था।

श्रीमती गाँधी को अनेक ज्वलन्त समस्याओं को हल करना था, जिनमे घोर खाद्य संकट से देश को उबारना प्रमुख था। सरकार की विदेश नीति की ओर भी उचित ध्यान देना जरूरी था। नये भारत के निर्माण की सफलता अन्तत: युद्ध और शान्ति की समस्याओ के समाधान पर, पराधीन देशों के स्वतन्त्र होते जाने की प्रक्रिया पर, राज्यो के बीच सहयोग और अन्तर्राष्ट्रीय तनाव-शैथिल्य पर निर्भर करती थी। यदि भिन्न सामाजिक-राजनीतिक व्यवस्थाओ वाले राज्यों के बीच शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति असफल होगी, तो भारत की सारी शान्ति-योजनाएँ विफल हो जाएँगी और उसे भीतरी तथा बाहरी प्रतिक्रियावादी तत्त्वों के सामने पराजय स्वीकार करनी पड़ेगी—यही नेहरूजी का विश्वास था और इन्दिरा गाँधी भी इसी निष्कर्ष पर पहुँची थीं। यह नहीं होने दिया जा सकता था। इस उद्देश्य से सत्ता में आने के बाद आरम्भिक महीनों में ही वह यूगोस्लाविया के राष्ट्रपति टीटो और मिस्र के राष्ट्रपति नासिर से मिलीं। उनके संयुक्त प्रयास से गुटनिरपेक्षता की नीति को नयी प्रेरणा और सुस्पष्ट साम्राज्यवादविरोधी तथा युद्धविरोधी दिशा मिली।

विदेश यात्राएँ करके इन्दिरा गाँधी ने फ्रास के राष्ट्रपति दिगाल, ब्रिटेन के प्रधानमन्त्री विलसन, सयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति जानसन के साथ बातचीत की।

अमरीका की यात्रा के समय उनका यह विश्वास मजबूत बन गया कि भारत के प्रति अमरीकी प्रशासन की नीति निष्कपट नही है—प्राप्त हो चुके समझौते के बावजूद भारत को अमरीकी अनाज वक्त पर हासिल नहीं हुआ और इसके नतीजे मे खाद्य सकट और अधिक गम्भीर हो गया। यदि संयुक्त राज्य अमरीका ने अनाज मुहैया करने का वायदा न किया होता, तो भारत सरकार ने समय रहते अकाल न होने देने के लिए दूसरे आवश्यक उपाय किए होते। लेकिन वक्त गँवाया जा चुका था और अब खाद्य संकट से निबटना कही अधिक कठिन था।

ऐसी महाशक्ति की सरकार के व्यवहार को कैसे न्यायोचित ठहराया जा सकता था, जिसने दूसरे देश के साथ हुए समझौते के अन्तर्गत अपने वचन को इतनी आसानी से भंग कर दिया?

इन्दिरा गाधी के नजदीकी लोग कहते थे कि सयुक्त राज्य अमरीका की उस

असफल यात्रा से उन्हे भारी ठेस लगी थी। यह अनाज काण्ड उनके लिए एक खेदजनक सबक साबित हुआ, उन्हें एक बार फिर विश्वास हो गया कि महासागर पार से सहायता पाने की सम्भावना के प्रति सतर्क रहना चाहिए, क्योकि यह सहायता हमेशा राजनीतिक दबाव और आर्थिक ब्लैकमेल से जुडी रहती है।

दूसरी ओर, सोवियत सघ के साथ भारत के सम्बन्धो का स्वरूप भिन्न था--कभी भी ऐसा नही हुआ कि सोवियत सघ ने भारत के साथ अपने सहयोग से कोई राजनीतिक शर्त जोडने की कोशिश की हो अथवा उसके आन्तरिक मामलो मे हस्तक्षेप किया हो। विषम काल मे सोवियत सघ ने सदैव भारत की सहायता की। जैसा कि मास्को मे कहते हैं, नवस्वतन्त्र देशों के साथ सर्वहारा एकजुटता के सिद्धान्त ने मूर्त्त रूप ग्रहण किया और हर बार इन्दिरा गाँधी इस बात की कायल हुई कि यह महज नारेबाजी नहीं है, बल्कि इस पर अमल किया जाता है।

जून, 1966 मे इन्दिरा गॉधी प्रधानमन्त्री के रूप मे सोवियत सघ की यात्रा के लिए तैयारियाँ कर रही थी। सोवियत नेताओ के साथ पुराने सम्बन्ध सुदृढ़ बनाने तथा नये व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करने थे, दो देशों के आपसी सम्बन्धों के विकास के सवालो पर गौर करना, मुख्य अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओ पर विचार-विनियम करना आवश्यक था।

जवाहरलाल नेहरू की सोवियत सघ की पहली सरकारी यात्रा के बाद दस वर्ष से अधिक समय बीत चुका था। उसके बाद इन्दिरा गॉधी कई बार मास्को आई, लेकिन ये सक्षिप्त कामकाजी यात्राएँ थीं। अबकी बार मास्को में न केवल शिखर वार्ताएँ, बल्कि सोवियत जन-समुदाय के साथ मुलाकातें भी होने वाली थीं। स्वाधीनता के वर्षो में भारत की उपलब्धियों, भारत-सोवियत मैत्री और सहयोग के परिणामो के बारे में वह सोवियत लोगो को क्या बताएँगी ? निःसन्देह यह कि आजादी के 19 वर्षो मे भारत का जीवन बहुत काफी बदल गया है। अब देश में विभिन्न मशीनों, खरादो, यातायात और ऊर्जा उद्योग के साज-सामान, तेल के पदार्थो, रासायनिक मालों, आम खपत की मुख्य चीजों का उत्पादन किया जाता है। इस अवधि में कुल औद्योगिक उत्पादन ढाई गुना बढ गया था। विद्युत् ऊर्जा उत्पादन में सात गुनी वृद्धि हुई। इस्पात का वार्षिक उत्पादन 12 लाख टन से बढ़कर करीब 90 लाख टन के बराबर हो गया।

ये 'शुष्क' ऑकडे इन्दिरा गॉधी के लिए जनता की शान्तिपूर्ण श्रम-सफलताओ के जयगान सदृश थे। समृद्ध भारत के बारे में उनका सपना साकार होने लगा था और उन्हे विश्वास था कि सोवियत लोग इस सुख में भागीदार बनेंगे, भारतवासियों की भावनाओं को भली-भाँति समझेगें। उन्होंने स्वयं भी ऐसा ही मार्ग तय किया था और अपनी पंचवर्षीय योजनाओं की उपलब्धियो पर उन्हें उतना ही गर्व था।

श्रीमती गाँधी ने सोचा कि सोवियत लोगो के लिए यह जानना दिलचस्प होगा कि भारतीय उद्योग की प्रमुख शाखाओ ऊर्जा उत्पादन तथा यातायात का विकास केन्द्रीयकृत नियोजन के माध्यम से सार्वजनिक क्षेत्र में हो रहा है

भारतवासियो के जीवन मे सुधार हुआ—बीते काल में उनकी औसत जीवन-अवधि लगभग दुगुनी हो गई (27 से 50 वर्ष तक), मलेरिया का अन्त कर दिया गया, जो पहले प्रतिवर्ष दस लाख तक लोगो की जानें लेता था।

शिक्षाप्रसार के हेतु बहुत कुछ किया गया—सात करोड लडके-लडकियॉ स्कूल मे पढ़ रहे थे और तकनीकी विद्यालयो में भर्ती पॉच गुनी बढ़ गई।

ये भारत के स्वतन्त्र विकास के सुखद परिणाम थे।

भारतीय-सोवियत सहयोग का फल भिलाई मे विशाल इस्पात कारखाना और रॉची का विराट इंजीनियरिंग सयत्र है। सोवियत संघ के उरालमाश जैसा ही मशीन-निर्माण कारखाना अब भारत में चालू है, जिसे 1955 में देखकर इन्दिरा गाँधी तथा उनके पिता चकित हुए थे।

सोवियत सघ के सहयोग से बोकारो में दूसरे इस्पात कारखाने का निर्माण होने लगा था। उसे चालू होने पर भारत की आर्थिक आत्मनिर्भरता मजबूत बननी थी, जिसके बिना देश की पूर्ण राजनीतिक स्वाधीनता असम्भव थी।

लेकिन भारत को अनेक समस्याओं का भी सामना करना पड़ रहा था और इन्दिरा गाँधी सोवियत लोगों से कुछ भी न छिपाते हुए उन्हें अपने देश की कठिनाइयो के बारे मे बताना चाहती थी।

स्वाधीन भारत में खाद्यान्न के उत्पादन में 75 प्रतिशत वृद्धि हुई, लेकिन सूखे व बाढ़ो की वजह से और साथ ही अविकसित कृषि विधियों तथा आपूर्ति एव वितरण की त्रुटिपूर्ण व्यवस्था के कारण देश के बड़े क्षेत्रों की जनता की दुर्दशा होती रहती थी। भुखमरी और गरीबी को हटाना अभी तक सम्भव नहीं हुआ था और एक सबसे महत्त्वपूर्ण तथा मानव हितकारी सघर्ष—गरीबी के विरुद्ध संघर्ष—जारी था।

इन्दिरा गॉधी की मास्को यात्रा बहुत सफल रही—द्विपक्षीय सम्बन्धों के व्यावहारिक प्रश्नों के हल से दोनों पक्षो को सन्तोष हुआ, सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर लाभदायक विचार-विनिमय हुआ।

इन्दिरा गॉधी उन गिने-चुने राजनीतिज्ञों में थीं, जो किसी राजनीतिक षड्यन्त्र के परिणामस्वरूप अथवा सयोगवश सत्ता की ऊँचाई पर नही पहुँचते। उनका चयन स्वयं इतिहास द्वारा, अपने जनगण के सच्चे नेताओ के रूप में किया जाता है।

ऐसे नेताओं की विशिष्टता यह होती है कि वे जनता का सहारा लेते है और अच्छी तरह जानते है कि आज के अन्तर्राष्ट्रीय कार्य तथा राजनयिक गतिविधियॉ सरकारों का विशेषाधिकार नहीं रह गए है। जनगण राजनीतिक संघर्षो मे अधिकाधिक सक्रिय होते जा रहे हैं और वे दुनिया की स्थिति के बारे मे प्रत्यक्ष सूचना पाना चाहते हैं।

इन्दिरा गॉधी ने विशाल क्रेमलिन प्रासाद मे भाषण दिया और उनका एक और भाषण केन्द्रीय सोवियत टेलीविजन द्वारा प्रसारित किया गया। भारत की सफलताओ और कठिनाइयों के बारे में सोवियत लोगों को विस्तारपूर्वक बताने का निर्णय सही

था—इन्दिरा की बातो मे उन्होंने बड़ी दिलचस्पी ली। अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना मे पले सोवियत लोग मित्र भारतीय जनता के जीवन के प्रति उदासीन नही थे।

सोवियत टेलीविजन पर अपने भाषण मे इन्दिरा गॉधी ने कहा—"हमारी विदेश नीति गुटनिरपेक्षता तथा शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के सिद्धान्तों पर आधारित है। ये सिद्धान्त विकासमान देशो की स्वाधीनता और अखण्डता की सर्वोत्तम गारण्टी हे। सोवियत सघ तथा दूसरे मित्र देशो के साथ हमारे सम्बन्ध गुटनिरपेक्षता की नीति को सुदृढ बनाने मे सहायक हैं। यह निष्क्रिय नहीं, वरन् सक्रिय नीति है।

"युद्ध और मानव दुखों की समस्या हमे बहुत चिन्तित करती है और आज हम वियतनाम की परिस्थिति के शान्तिपूर्ण नियमन के लिए अपील मे अपनी आवाज मिलाना चाहते है। हमारी पूरी सहानुभूति साहसी वियतनामी जनता के साथ है. ।

"नस्लवाद तथा उपनिवेशवाद की समस्या के प्रति हमारा दृष्टिकोण, पूर्ण निरस्त्रीकरण कराने की हमारी इच्छा, अमीर और गरीब देशो के बीच खतरनाक रूप से बढती हुई खाई को पाटने की हमारी अभिलाषा सुविदित है।

"इन और दूसरे मुद्दो पर सोवियत सघ और भारत के दृष्टिकोण बहुत हद तक मिलते-जुलते है। मन्त्रिपरिषद् के अध्यक्ष श्री कोसीगिन तथा उनके साथियो के साथ मेरी वार्ताएँ लाभदायक रहीं। भारत-सोवियत मैत्री का स्नेहमय प्रकाश मै अपने साथ लेती जाऊँगी। मै जानती हूँ कि सोवियत संघ के रूप मे हमे अच्छा मित्र प्राप्त हुआ है और मै आपको आश्वासन देना चाहती हूँ कि भारतीय जनता भी आपकी निष्ठावान मित्र है। यह मैत्री मात्र एक वास्तविकता नहीं है। यह अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो का एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है।"[1]

नेहरूजी की मृत्यु के बाद पहली बार 1967 में भारत मे चुनाव हुए। काग्रेस पार्टी फिर विजयी हुई, लेकिन बडी कठिनाई से और उसे नुकसान भी उठाने पडे। विपक्षी दलो ने संसद मे अपनी स्थिति मजबूत बना ली और पॉच राज्यो मे वे सत्ता मे आ गए, जहॉं उन्होने गैरकाग्रेसी सरकारें बनाई। इन्दिरा गॉधी इसके लिए जिम्मेदार नही थीं—भारतीय तथा विदेशी पर्यवेक्षकों का यह समान निष्कर्ष था। स्वय उन्हे चुनावो मे निर्विवाद विजय मिली थी। चुनाव के निराशाजनक परिणाम एक और ही बात की ओर—जनता के बीच सत्ताधारी पार्टी की घटती हुई प्रतिष्ठा की ओर—संकेत कर रहे थे। अपने बीस वर्षो के शासन-काल में वह अपने कुछ राष्ट्रीय-जनवादी लक्ष्यो को, जिनकी घोषणा उसने ब्रिटिश उपनिवेशवाद के विरुद्ध स्वतन्त्रता आन्दोलन की अवधि में की थी, गॅवाने लगी थी।

पिछले वर्षो में काग्रेस मे भारतीय बुर्जुआ वर्ग के हितों को व्यक्त करने वाले

1 इन्दिरा गाधी लेख *भाषण तथा भेंटवार्ताएँ* मास्को 1975 रूसी में)

नेताओ ने पार्टी कार्यक्रम के लक्ष्य—"समाजवादी नमूने के समाज" का निर्माण करने के लक्ष्य—को वास्तव मे त्याग दिया था। यह नारा गोल-मोल, लेकिन फिर भी जनता के बीच बहुत लोकप्रिय था और उससे इन्कार किए जाने के परिणामस्वरूप जनता की व्यापक श्रेणियॉ काग्रेस से विमुख हो गई, जो मुख्यतः इस पार्टी मे नही, बल्कि उसके नेता जवाहरलाल नेहरू मे विश्वास करती थीं। पण्डित नेहरू के निधन के बाद जनसाधारण कांग्रेस की नीति से निराश होने लगे। कहना चाहिए कि यह विरक्ति अकारण नहीं थी—जनता से अलग हो जाने तथा पार्टी के आदर्शो के साथ विश्वासघात करने के लिए काग्रेस के ऊपरी स्तरो की स्वय इन्दिरा गाँधी ने खुलेआम आलोचना की।

प्रधानमन्त्री ने मतदाताओ की मनोदशा को दृढ़ कार्यवाइयॉ करने की मॉग के रूप में देखा।

दक्षिणपंथ की ओर से धमकियों और शोर-शराबे के बावजूद उन्होंने 'समाजवादी नमूने के समाज' के गँवा दिए गए आदर्श को फिर से जीवित करने के उद्देश्य से 'बीस सूत्री कार्यक्रम' की घोषणा की।

इन्दिरा गॉधी ने अल्पावधि के भीतर स्थिर राष्ट्रीय अर्थतन्त्र के निर्माण का एक ऐसा लक्ष्य निर्धारित किया, जो देश की गरीबी की समस्या को हल करने मे समर्थ हो। इस कार्यक्रम के उद्देश्य थे—बीमा व्यवस्था का राष्ट्रीयकरण, बैंको पर सार्वजनिक नियन्त्रण, विदेशी व्यापार पर राज्य का एकाधिकार, अनाज तथा आम इस्तेमाल की चीजो के राजकीय और सहकारी व्यापार का प्रबन्ध, ताकि अनाज, चावल, मिट्टी के तेल जैसी चीजों की चोरबाजारी को खत्म किया जा सके। कार्यक्रम में इजारेदारियो का बोलबाला खत्म करने, भू-स्वामित्व पर अंकुश लगाने तथा सम्पत्ति से प्राप्त होने वाली आयों की उच्चतम सीमा तय करने, भूमिहीन किसानो की सहायता करने, खेतिहर मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी की गारण्टी करने और भारतीय राजाओ के बचे-खुचे सामन्ती विशेषाधिकारों को समाप्त करने के पग सम्मिलित थे।

न केवल सिद्धान्त मे, बल्कि व्यवहार में भी भारी परिवर्तनकारी सामाजिक सुधारो के क्रियान्वयन के लिए इन्दिरा गॉधी के प्रयासो ने भारतीय विशिष्ट वर्ग, वित्तपतियों और काला धन्धा करने वालो के बीच आतंक पैदा कर दिया और उनकी साहसपूर्ण स्वतन्त्र नीति को 'सिडिकेट' तथा अन्य काग्रेसी 'आकाओं' द्वारा नियन्त्रित काग्रेस की संस्थाओं के प्रतिरोध का सामना करना पडा। काग्रेस के भीतर तीव्र संघर्ष शुरू हो गया।

इस तरह के सघर्ष मे कूद पड़ने के लिए अपनी शारीरिक और आत्मिक क्षमताओ पर, अपनी सच्चाई में गहन विश्वास की आवश्यकता थी।

इन्दिरा गाँधी में राजनीतिक यथार्थवाद का कभी अभाव नहीं रहा। वह अपने सुधारों के मार्ग पर कांग्रेस में नेहरू की राजनीतिक लाइन के प्रति निष्ठावान लोगों को लेकर जनता के साथ और जनता की खातिर आगे बढ़ीं जनता पर उनका पूरा

भरोसा था, उससे वह शक्ति तथा साहस प्राप्त करती थीं। बुनियादी सामाजिक सुधारो के लिए आन्दोलन में उन्हे भारतीय कम्युनिस्टो का भी सक्रिय समर्थन प्राप्त था।

सोवियत पत्रकारो के साथ बातचीत करते हुए इन्दिरा गॉधी ने बताया कि "अनेक आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं पर कांग्रेस मे मतभेद हैं। इन समस्याओं को लेकर नेहरू की नीति में विश्वास रखने वाले लोगो और उन लोगो के बीच सघर्ष चल रहा है, जो कथनी मे तो इस नीति को स्वीकार करते है, परन्तु वास्तव मे उसे अमल मे लाने न देने के लिए हरचद कोशिश करते रहे है। नेहरू की नीति के समर्थको तथा विरोधियो के बीच टक्करे नेहरूजी के जीवन काल मे ही शुरू हो गई थीं। लेकिन उस समय नेहरू के विरोधी खुलेआम सामने आने का साहस नही करते थे, वे गुप्त रूप से पार्टी की नीति को नाकाम करने की कोशिश करते थे . इसलिए आज जो कुछ हो रहा है, यह कोई नयी प्रवृत्ति नहीं, वरन् पुराने सघर्ष तथा पुराने मतभेदो का सिलसिला है।"[1]

'स्वेच्छाचारी' इन्दिरा गॉधी को दी गई धमकियों को अमली जामा पहनाने मे काग्रेस के शीर्ष नेता कामयाब नहीं हो सके, क्योकि श्रीमती गॉधी को साधारण काग्रेसियों का समर्थन प्राप्त था और उनका सहारा पाने के लिए वह सीधे उन्हे सम्बोधित किया करती थीं।

खेद की बात थी यह कि अपने निकटतम परिवेश मे इन्दिरा गॉधी ने अपने प्रति वैमनस्य महसूस किया। उन्होने शिकायत की—"हर बार ससदीय दल की कार्य-समिति की सभाओ मे तनातनी का आभास होता था और कुछ लोग मेरा अपमान करने की कोशिश करते थे, हालॉकि मै यह नही कहना चाहती कि ऐसा वे जानबूझकर करते थे, लेकिन वास्तव मे कुछ ऐसा ही होता था, किसी भी तुच्छ बहाने से वे चुटकी लेते थे और ऐसा इस तरह करने की कोशिश करते कि मुझे ज्यादा-से-ज्यादा ठेस लगे।"[2]

8 नवम्बर, 1969 को प्रकाशित हुए कांग्रेस के सदस्यो के नाम एक सन्देश मे इन्दिरा गॉधी ने लिखा—"जिस घटनाक्रम के हम साक्षी बने हैं, वह व्यक्तिगत झगड़ा और सत्ता के लिए संघर्ष नहीं है। बात संसदीय तथा सगठनात्मक ग्रुपों के बीच टक्कर तक ही सीमित नही है। यह दो अलग विचारधाराओ, काग्रेस के लक्ष्यों तथा विधियो के प्रति दो दृष्टिकोणो के बीच संघर्ष है. .महात्मा गॉधी और मेरे पिता ने सामाजिक परिवर्तनों के मुख्य साधन के रूप मे कांग्रेस बनाई थी...अपने जीवन के अन्तिम वर्षो मे मेरे पिता इससे बहुत परेशान थे कि काग्रेस मे ऐसे लोग शामिल थे, जो परिवर्तनों के विरोधी थे। चौथे आम चुनावों से पहले भी मुझे अपने निजी अनुभव

---

1 इन्दिरा गॉधी लेख *भाषण तथा भेंटवार्ताएँ* मास्को 1975 (रूसी में)

2 I Gandhi, *My Truth.*

से पता चला था कि मौजूदा वस्तुस्थिति को बनाए रखने में दिलचस्पी लेने वाली तथा प्रभावशाली आर्थिक तबको के हितों से घनिष्ठ सम्पर्क रखने वाली ताकतो ने मेरे खिलाफ कदम उठाने के लिए साँठगाँठ कर ली है।''

कांग्रेस के सदस्यो से इन्दिरा गाँधी की खुली अपील के बाद अविश्वसनीय घटना हुई—उनकी कार्रवाइयो से आग-बबूला होकर कांग्रेस नेतृत्व ने पार्टी से प्रधानमन्त्री के निष्कासन की घोषणा कर दी।

'सिडिकेट' और कांग्रेस में उसके अनुयायियो का यह उग्र और विवेकहीन पग था। फलस्वरूप कांग्रेस का विभाजन हो गया और कांग्रेस का देशभक्तिपूर्ण भावनाएँ रखने वाला अधिकांश हिस्सा इन्दिरा गाँधी के साथ आ गया।

'सिडिकेट' और देसाई ने प्रधानमन्त्री की प्रगतिशील नीति का विरोध करने के लिए एक विपक्षी गुट कायम किया, लेकिन वे सब मिलकर भी कांग्रेस को अपने पक्ष मे नही ले सके, थोड़े-से लोग उनके साथ रहे और यह हिस्सा भी अस्थिर था। अधिकांश कांग्रेस सदस्य अपने नेता के प्रति निष्ठावान बने रहे।

इन्दिरा गाँधी ने अपनी नीति के लिए जनता का समर्थन प्राप्त करने का प्रयत्न किया। 27 दिसम्बर, 1970 को उन्होंने आकाशवाणी से जनता को सम्बोधित किया—''...सामाजिक और आर्थिक सुधारों मे तेजी लाने के प्रयत्नों का स्वभावतया बड़ी पूँजी ने प्रतिरोध किया... ।''

दिसम्बर महीने में दिल्ली में मौसम बहुत लुभावना होता है। बाग मे अनगिनत गुलाब मनोरम छटा बिखेर रहे हैं, शाम को उनकी पंखुड़ियों से निर्मल ओस की बूँदे गिरती है, हवा चमेली की सुगन्ध से सुवासित है। शीतल वातावरण फूलों और लॉन की ताजी घास की महक से ओतप्रोत है।

जीवन का आनन्द लेने के लिए कितना अच्छा माहौल है, पल्लवित उद्यान का सौन्दर्य जीवन को कितना आकर्षक बना देता है ! उसका हर पेड़ प्रकृति का गूढ रहस्य है, जीवन की अद्भुत अभिव्यक्ति है।

मगर प्रकृति की तीक्ष्ण अनुभूति करने वाली इन्दिरा गाँधी उसके सौन्दर्य का रसपान करते हुए शान्ति क्यों अनुभव नही कर पाती ?

इन्दिरा गाँधी को प्रतिदिन लड़ाई लडनी पड़ी, किसलिए ? सत्ताधिकार, मिथ्याभिमान, अथवा व्यक्तिगत खुशहाली या किसी तरह के लाभ के लिए ? नही, वह सत्ता की भूखी नहीं थी, मिथ्याभिमान उनके स्वभाव का अंग नही था, उन्होने सम्पत्ति पहले कभी नहीं अर्जित की और धनी होने की चाह उनके मन में नहीं रही, परन्तु भारत के प्रति प्रेम के बिना वह अपने अस्तित्व की कल्पना तक नहीं कर सकती थी। उनके लिए भारत का अर्थ था—यह उद्यान, हिमालय, पुत्र, माता-पिता की स्मृति, महात्मा गाँधी और रवीन्द्रनाथ ठाकुर की स्मृति और, निःसन्देह, मुस्कराहटों

और आँसुओं से भरे तथा अपने सुखी भविष्य मे आस्था से भरे भारतीय जन। उनकी आशाओ और उनकी स्मृति के प्रति विश्वासघात न हो, इसलिए उन्हे आगे बढ़ना था, कठिनाइयो पर विजय पानी थी, खोज करनी थी तथा अपनी सच्चाई साबित करनी थी। उनका कर्तव्य था सघर्ष करना तथा जीत हासिल करना, चाहे इसके लिए बडे से बड़ा बलिदान क्यों न करना पडे।

इन्दिरा गाँधी के विवेक और लक्ष्य के प्रति निष्ठा ने उन्हें इस निष्कर्ष पर पहुँचाया—जनता के जीवन-स्तर में तब तक सुधार नही लाया जा सकता, जब तक इजारेदारियो और बड़े पूँजीपतियो की आमदनी को सीमित न किया जाए। सभी साधनो को जुटाकर समाज के लिए हितकर उत्पादन मे लगाना चाहिए, ताकि वे निजी पूँजीवादी मुनाफे का स्रोत मात्र न रह जाएँ। सबसे पहले कृषि व्यवस्था मे लगे छोटे उत्पादको को सुविधाजनक शर्तो पर कर्ज की राशि बढाना आवश्यक था।

इन्दिरा गाँधी ने 14 सबसे बडे व्यापारिक बैकों के राष्ट्रीयकरण का साहसपूर्ण फैसला किया। 'दस सूत्री कार्यक्रम' की अपेक्षा यह कही अधिक आमूलगामी कार्रवाई थी, क्योकि उस कार्यक्रम मे निजी बैको पर केवल सामाजिक नियन्त्रण स्थापित करने का प्रावधान था।

अपने निर्णय का स्पष्टीकरण करते हुए प्रधानमन्त्री ने कहा कि देश के आर्थिक जीवन मे नियन्त्रणकारी भूमिका अदा करने वाली बैंक व्यवस्था को सामान्य सामाजिक धारणाओं पर स्थापित होना और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अखिल राष्ट्रीय लक्ष्यों तथा कार्यभारो द्वारा निर्धारित होना चाहिए।

इन्दिरा गाँधी विश्वास करती थी कि "समाजवादी नमूने के समाज" की धारणा के अनुसार अर्थतन्त्र की प्रमुख शाखाएँ राज्य की सम्पत्ति होनी चाहिए और राज्य द्वारा नियन्त्रित होनी चाहिए।

जैसा कि इन्दिरा गाँधी को उम्मीद थी, जनता ने उनके निर्णय का स्वागत किया। लेकिन जब जनता ने प्रधानमन्त्री की कार्रवाइयों के समर्थन मे प्रदर्शन आयोजित किए, काग्रेस के ऊपरी स्तर ने भारतीय बैकरों, उद्योगपतियों तथा राजाओ के साथ साँठ-गाँठ करके उनकी कार्रवाइयो को असवैधानिक घोषित कर दिया। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने, जिसे सविधान के पालन का निरीक्षण करने का अधिकार प्राप्त है, निजी सम्पत्ति के सिद्धान्त की रक्षा की तथा भारतीय राजा-रजवाडो के, जिन्हें सरकार की प्रधान सभी विशेषाधिकारों, साथ ही भारी प्रिवी-पर्सो से वंचित करने का इरादा रखती थी, सामन्ती अधिकार मिटाने के सरकारी निर्णयो को असवैधानिक घोषित किया।

इस स्थिति में इन्दिरा गाँधी के सामने एक ही रास्ता रह गया था—जनता के समक्ष अपनी नीति पेश करना और काग्रेस मे विपक्ष तथा सत्ताधारी हलकों के गुट के प्रतिरोध को जनमतसंग्रह द्वारा विफल बनाना।

उन्होंने निर्धारित समय से पहले ही ससद के लिए आम चुनाव कराने का

निश्चय किया। 27 दिसम्बर, 1970 को जनता के नाम सन्देश मे श्रीमती गाँधी ने कहा—"समय का तकाजा है और रोटी, मकान और रोजगार पाने की इच्छा रखने वाले कोटि-कोटि जन की माँग है कि तत्काल सक्रिय कार्रवाइयाँ की जाएँ . इसीलिए हमने जनता को सम्बोधित करके उससे हमें पूर्णाधिकार पुन सौपने का अनुरोध करने का निश्चय किया।"[1]

जैसा कि प्रेस ने लिखा, यह सिर्फ एक और चुनाव अभियान न रहकर सच्चा जन-आन्दोलन बन गया।

इन्दिरा गाँधी ने सैकडो गाँवो और शहरो की यात्रा की। वह जहाँ भी जाती, उन्हे देखने और सुनने के लिए विशाल जन-समुदाय उमड़ आता।

अखबारो ने जनता के दिलों को जीतने की प्रधानमन्त्री की असाधारण क्षमता की चर्चा की। उन्होने 'गरीबी हटाओ' नारे के साथ चुनाव अभियान चलाया और जनसाधारण को यह कार्यक्रम पसन्द आया। लेकिन यह भी सच है कि उस समय इन्दिरा गाँधी निःसन्देह भारत मे सबसे लोकप्रिय राजनीतिक हस्ती थी। उनके आकर्षक व्यक्तित्व ने लोगो को मोहित किया, लेकिन सबसे अधिक वे उनके विलक्षण आत्मबल, दृढ सकल्प से प्रभावित होते थे। उन्हे देखने तथा सुनने वाले प्रत्येक भारतवासी के लिए वह देशभक्ति की साक्षात् प्रतिमा थीं।

इन्दिरा गाँधी ने एक बार कहा—"मुझे लोगों के बीच रहना अच्छा लगता है। उनसे मिलकर मै थकावट की चादर उतार फेंकती हूँ। अपने सामने इकट्ठे हुए लोगो को मैं जन-समूह के रूप मे नहीं, अलग-अलग व्यक्तियों के रूप मे देखती हूँ, मै उनके मुँह देखती हूँ और जिन लोगो को भारी भीड में शामिल हुए मै एक बार देख चुकी होती हूँ, उन्हे तुरन्त पहचान लेती हूँ...।

"उनमें से प्रत्येक को मेरे साथ अपने सम्पर्क का अहसास हुआ होगा।"[2]

चुनाव में इन्दिरा गाँधी की भारी विजय हुई—उनकी नीतियों के समर्थकों ने ससद में दो-तिहाई सीटे प्राप्त कीं। उन्होने नयी सरकार गठित की। लोगों को बेहतर दिशा मे परिवर्तनों की उम्मीद थी, जबकि प्रतिगामी तत्त्व बदले की तैयारी मे जुट गए। देश के भीतरी प्रतिक्रियावादियो को बाहर से समर्थन पाने की बड़ी आशा थी।

हिन्दुस्तान उपमहाद्वीप में स्थिति बेहद चिन्ताजनक होती जा रही थी—अमरीका और अन्य पश्चिमी राज्यों के बढावे से इस्लामाबाद ने पूर्वी बंगाल की आबादी पर बडे पैमाने पर जुल्म ढाना शुरू किया, जहाँ के निवासियों ने अपना राज्यत्व प्राप्त करने का निश्चय करके स्वतन्त्र बाग्लादेश गणराज्य की स्थापना की घोषणा कर दी थी।

बगालियों का सहार करने की पाकिस्तान की नीति के कारण लाखों बंगाली लोग शरणार्थियों के रूप में बांग्लादेश से भारत आए। उनका पीछा करते हुए

इन्दिरा गाँधी लेख *भाषण तथा भेंटवार्ताएँ*
2. I Gandhi, *My Truth*

पाकिस्तानी फौजी टुकड़ियों ने भारत की सीमा का बेहिचक अतिक्रमण किया। उसकी सुरक्षा के लिए गम्भीर खतरा पैदा हो गया।

पाकिस्तान की आक्रामक तैयारियो तथा सीधे फौजी उकसावो के कारण भारत की स्थिति अस्थिर बन रही थी और इन्दिरा गॉधी की सरकार ने अन्तर्राष्ट्रीय समर्थन पाने के लिए कारगर कदम उठाए।

परन्तु इन्दिरा गॉधी को शीघ्र यकीन हो गया कि भारत-पाकिस्तान मुठभेड को रोकने में पश्चिमी जगत् की तनिक भी रुचि नही है, बल्कि उल्टे वह इस स्थिति को और बिगाड़ने पर आमादा है।

इन्दिरा गॉधी अपनी विवेकपूर्ण व्यवहारकुशलता के लिए भारत मे और उससे बाहर विख्यात थी। वह यह मानकर काम करती थी कि "राजनीति सम्भावनाओं के उपयोग की कला है", पर वह साथ ही निर्भीक राजनेता भी थी, अपने देश के सच्चे हितों के लिए साहसपूर्ण, निर्णायक पग उठाने में समर्थ देशभक्त थी।

9 अगस्त, 1971 को दिल्ली मे सोवियत संघ और भारत के बीच शान्ति, मैत्री एव सहयोग की सन्धि हस्ताक्षरित हुई, जो सोवियत-भारत सम्बन्धो के विकास का राजनीतिक परिणाम थी।

हिन्दुस्तान उपमहाद्वीप की स्थिति को देखते हुए इस सन्धि के निष्पादन को सर्वत्र इन्दिरा गॉधी की सरकार के लिए सोवियत संघ का समर्थन माना गया।

सन्धि की मूलभावना इसका प्रमाण थी। उसकी प्रस्तावना में अपनी मित्रता और सहयोग मे वृद्धि करने के भारत और सोवियत संघ के इरादे की पुनर्पुष्टि की गई और जोर देकर कहा गया कि यह दोनो देशो के मूल हितों और एशिया तथा सारी दुनिया मे सुदृढ़ शान्ति के हितो के अनुरूप है।

सन्धि के परिच्छेद 9 में कहा गया कि यदि कोई पक्ष आक्रमण अथवा आक्रमण के खतरे का निशाना बनेगा, तो दोनो सन्धि-प्रतिबद्ध पक्ष ऐसे खतरे का निवारण करने के हेतु और अपने देशो की शान्ति एवं सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक प्रभावी पग उठाने के उद्देश्य से तत्काल पारस्परिक परामर्श आरम्भ करेगे।

सोवियत-भारत सन्धि की पश्चिमी दुनिया मे नकारात्मक प्रतिक्रिया हुई, क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भारत को उसके स्वतन्त्र मार्ग से हटाने और उसे वाशिंगटन तथा लन्दन के पीछे चलने के लिए मजबूर करने की उसकी साजिशों को यह सन्धि नाकाम करती थी।

पश्चिमी राजनीतिज्ञ स्वय जिस मनसूबे के पीछे थे, उसके लिए वे उल्टे स्वय इन्दिरा गॉधी पर आरोप लगाते थे, कहते थे कि भारत गुटनिरपेक्षता आन्दोलन के, जिसके प्रवर्तकों में जवाहरलाल नेहरू थे, सिद्धान्तों को तिलाजलि दे रहा है।

संयुक्त राज्य अमरीका के नेशनल रेडियो ब्रॉडकास्टिंग कार्पोरेशन के प्रतिनिधि ने इन्दिरा गॉधी से भेंटवार्ता में पूछा था इस आशय की आलोचनात्मक टिप्पणियॉ की जा रही हैं कि निर्गुट राज्य के रूप में अब भारत भरोसे लायक नहीं रहा है

क्योकि सकट के समय रूस द्वारा भारत के समर्थन और शान्ति, मैत्री एव सहयोग की नयी भारत-सोवियत सन्धि के परिणामस्वरूप भारत सोवियत सघ के बहुत ज्यादा निकट हो गया है। इन आलोचकों को आप क्या उत्तर देना चाहेंगी ?''

''मुझे ये बाते हास्यास्पद लगती है,'' मुस्कराते हुए प्रधानमन्त्री ने कहा। ''और यह दावा करने वाले कौन हैं ?'' इन्दिरा गाँधी गम्भीर हो गई और उनकी ऑखे क्रोध से चमक उठीं। ''सयुक्त राज्य अमरीका ने क्या कभी गुटनिरपेक्षता के सिद्धान्त का पालन किया ? तो उसे यह निर्णय करने का भला क्या हक है कि कौन निर्गुट नीति चलाता है और कौन नही ? सयुक्त राज्य अमरीका ने कभी भी गुटनिरपेक्षता सिद्धान्त का अनुमोदन नहीं किया। अत्यधिक विनम्रतापूर्वक मैं ऐलान करना चाहती हूॅ कि हमारे लिए उसका महत्त्व नही है, जो अमरीका हमारे बारे में सोचता है, अपितु उसका महत्त्व है, जो वस्तुत विद्यमान है। हमने गुटनिरपेक्ष रहने की प्रतिज्ञा ली है ओर अपनी इस प्रतिज्ञा का पालन करने के लिए दृढसंकल्प है। इसका मतलब क्या है ? यह नही कि आप किसी से दोस्ती करते है अथवा नही करते, बल्कि यह कि आपको अपना स्वतन्त्र मत रखने का अधिकार है या नही। कुछ समय पहले हम अपनी आजादी के लिए लड़े थे और उसकी याद अभी ताजा है। मैंने स्वयं इस संघर्ष में भाग लिया था। और मै किसी भी हालत मे यह नहीं होने दूँगी कि निर्णय लेने तथा कार्य करने की हमारी स्वतन्त्रता पर जरा भी ऑच आए। मेरे लिए यह सबसे मुख्य बात है, जो नि.सन्देह मेरे लिए अपने जीवन से भी अधिक महत्त्वपूर्ण है। मुझे विश्वास है कि सभी भारतवासी भी ऐसा ही सोचते हैं। सोवियत सघ के साथ हमारी दोस्ती पहले भी थी और यह सन्धि हमारी दोस्ती के विकास की एक मजिल है।''

''क्या सोवियत संघ ने आपकी सरकार पर कोई दबाव डालने की कोशिश की ?'' पत्रकार ने पूछा।

''नही,'' इन्दिरा गॉधी ने दो टूक जवाब दिया। ''वरना हम दोस्त न रहे होते।''

दिसम्बर, 1971 के आरम्भ मे पाकिस्तान ने भारत पर खुला आक्रमण कर दिया, उसकी वायुसेना ने भारतीय फौजी ठिकानों पर जबर्दस्त बमबारी की।

भारत सरकार को गम्भीर अग्नि-परीक्षा से गुजरना पड़ा—क्या वह आक्रमण का सामना करने में समर्थ होगी ? इन्दिरा गाँधी की तेज और जोरदार कार्रवाइयो ने साबित कर दिया कि विदेशी प्रतिक्रियावादियों का अन्दाजा गलत था। भारत ने पाकिस्तान के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी और नवोदित बाग्लादेश गणराज्य को मान्यता प्रदान की।

इन्दिरा गॉधी ने राष्ट्र के नाम सन्देश मे हमलावर को मुँहतोड़ जवाब देने की अपील की और उनके सैनिक पदाधिकारियों ने बांग्लादेश की जनता के व्यापक समर्थन के आधार पर अल्प समय में अभियान को सफल बनाने की रणनीति तैयार की

सिर्फ 14 दिनों में पाकिस्तान ने युद्ध में हार स्वीकार कर ली। यह भारत और उसकी सरकार की प्रधान के लिए शानदान राजनयिक तथा सैनिक विजय थी। उन दिनो इन्दिरा गॉधी की संगठनात्मक क्षमता, राजनेता के रूप में उनकी दूरदर्शिता तथा फौजी संकट की परिस्थितियों में दृढ़तापूर्वक कार्रवाई करने की उनकी क्षमता उभरकर सामने आई।

लेकिन युद्ध तो युद्ध होता है। इसमे भारी व्यय की जरूरत पडी और भारत के पहले से ही कमजोर अर्थतन्त्र पर अतिरिक्त बोझ पड गया। यही नही, करीब एक करोड बंगाली शरणार्थी पूर्वी पाकिस्तान से भारत आ गए थे। उनके लिए रिहायश, कपडों, भोजन, चिकित्सा सेवा का प्रबन्ध करना जरूरी था। शरणार्थियो के विशाल जन-समूह के भरण-पोषण पर सरकार को प्रतिदिन तीस लाख डालर खर्च करने पड रहे थे। इसके अलावा भारत ने अपने नये पडोसी—बांग्लादेश—को नि:स्वार्थ सहायता दी। यह सब कुछ उस समय मे हो रहा था, जब लगातार तीन वर्षों से पडे जबर्दस्त सूखे की वजह से स्वय भारत की आन्तरिक स्थिति बेहद तनावपूर्ण थी। हजारो-हजार भारतवासियों के सामने अकाल मुँहबाये खडा था।

ऐसे हालात मे इन्दिरा गाँधी की सरकार विदेशों से भारी मात्रा मे अनाज खरीदने के लिए मजबूर हुई, जबकि विश्व मंडी मे उस वक्त अनाज के दाम बहुत ऊँचे थे। विश्व ऊर्जा संकट का भी भारत के बजट पर बहुत बुरा असर पडा।

मुद्रास्फीति की अनियन्त्रित प्रक्रिया शुरू हुई, महॅगाई तेजी से बढने लगी। चोरबाजारियों और मुनाफाखोरों ने खाद्य आपूर्ति की समस्या को और अधिक विषम बना दिया।

इस निराशाजनक वातावरण में गरीब-अमीर का फर्क बढ गया, सामाजिक अन्तर्विरोधों ने उग्र रूप ले लिया।

गरीबी हटाने का इन्दिरा गॉधी द्वारा घोषित कार्यक्रम नाकाम हो गया। सरकार और कांग्रेस की नीतियों से जनता निराश होने लगी। समाजवादी नारे भारत की पूँजीवादी अर्थव्यवस्था की दलदल में धॅस गए, निजी व्यवसाय की अराजकता के भूलभुलैया मे खो गए, राजनीतिक हलचल के अशान्त सागर में डूब गए।

इन्दिरा गॉधी के लिए भी वह समय कठिनाइयों से भरा था। उन्हें जोखिम-भरे निर्णयों, कड़ुवे विचारों, निराशाजनक निष्कर्षो की अवधि से, कष्टदायक खोजो, पराजयों और आत्मिक आघात की अवधि से गुजरना पड़ा।

उन्हे अक्सर ख्याल आने लगा कि जनता को कोई भी खिला-पिला नहीं सकता, वह तो स्वयं सभी के पेट भरती है और समस्त निधियों का निर्माण करती है। लेकिन वे ही लोग, जिनकी मेहनत जीवन की बुनियाद है, प्राय: दो जून खाना भी नहीं पाते और इसके लिए दोषी है समाज मे भौतिक निधियो के उत्पादन तथा वितरण की पूँजीवादी समाज के विकास की आरम्भिक में ही कुटिल बुद्धि ने मानव को गुलाम बनाने की का आविष्कार किया था और में उसे

परिष्कृत कर दिया। किसी प्राचीन ग्रन्थ मे इन्दिरा गॉधी ने कभी पढा था—"मानव विवेक हर प्रकार की दासता का स्रोत है, मगर वही मुक्ति पाने का स्रोत भी है।" यदि लोग उत्पीडन की बेडियॉ तोड दे, तो वे आगे बढ सकते हैं।

"हम अपनी जनता की बढती हुई अधीरता को अच्छी तरह महसूस करते है," इन्दिरा गॉधी ने कहा। "और यह समझते है कि अगर हमारी व्यवस्था लोगो की न्यायसगत मॉगें पूरी नही कर सकेगी, तो वे दूसरे तरीको को तरजीह दे सकते है।"

प्रधानमन्त्री के प्रति अपनी राजनीतिक घृणा के आधार पर सभी दकियानूसी पार्टियॉ, कांग्रेस के दक्षिणपथी और धार्मिक-साम्प्रदायिक प्रतिक्रियावादी एकजुट हो गए—उनका एकमात्र उद्देश्य उन्हे अपदस्थ करना था।

व्यक्तिगत रूप से इन्दिरा गॉधी तथा देश के सचालन की उनकी कार्यविधि को भारत की सभी सामाजिक तथा राजनीतिक समस्याओ के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता था। प्रतिक्रियावादी नेता तथा उनके दलाल इन्दिरा गॉधी के हर पग पर नजर रखते थे, वे किसी भी मोके की ताक मे बैठे रहते थे, ताकि जनता की ऑखो मे प्रधानमन्त्री को बदनाम किया जा सके। इन्दिरा गॉधी के बारे में गन्दी-गन्दी अफवाहे उडाई जाती थीं, उन पर निराधार आक्षेप लगाए जाते थे। 'सोशलिस्ट' राजनारायण ने, जो ससदीय चुनावों मे रायबरेली क्षेत्र में इन्दिरा गॉधी के मुख्य प्रतिद्वन्द्वी थे, इन्दिरा गॉधी पर चुनाव के नियमो के उल्लघन का आरोप लगाया तथा 1971 के चुनावो के परिणाम अवैध घोषित करने के सम्बन्ध में अदालत में याचिका पेश की। इलाहाबाद के हाईकोर्ट के एक न्यायमूर्ति ने इन्दिरा गॉधी के विरुद्ध आरोपो की पुष्टि की।

देश मे कानून और व्यवस्था बहाल करने की सरकार की अपीलो को राजनीतिक विपक्ष ने नाकाम करने की हरचद कोशिश की। लगता था कि सरकार देश पर नियन्त्रण खोती जा रही है। कानून और व्यवस्था की कारगरता खत्म हो रही थी। सरकार के किसी भी समय पदत्याग की प्रतीक्षा की जाने लगी।

लेकिन इन्दिरा गॉधी उन नेताओ में नही थीं, जो हथियार डाल देते हैं अथवा बिना सघर्ष के अपने आदर्शो को छोड देते है। उन्होंने ठीक ही सोचा कि अगर सरकार जनता के हित मे दृढ़ कार्रवाइयॉ करने में असमर्थ साबित होती है, तो प्रतिक्रियावादी ताकतो की बन आएगी और जनता की सारी सामाजिक तथा लोकतान्त्रिक उपलब्धियॉ नष्ट हो जाऍगी। जवाहरलाल नेहरू की नीति ॲधेरे के गर्त में लुप्त हो जाएगी। अतः कठोर पग उठाने आवश्यक हो गए थे।

26 जून, 1975 को भारत मे आपात्काल की घोषणा कर दी गई। साथ ही प्रधानमन्त्री ने एक नये 'बीस सूत्री कार्यक्रम' की घोषणा की, जिसका उद्देश्य आबादी की दीन-हीन श्रेणियों को घोर तंगहाली से बाहर निकालना था। इस कार्यक्रम ने पूर्ववर्ती 'दस सूत्री कार्यक्रम' को ही क्रान्तिकारी ढग से आगे बढ़ाया, जिसे धनी वर्गो के प्रतिरोध के कारण वह पूरा करने में सफल नहीं हो पाई थीं

आपात्कालिक कानूनों के बल पर और विरोधी तथा परोपजीवी तत्त्वों (सट्टेबाजो, कालाबाजारियो और गबनकारो) पर कठोर अकुश लगाकर इन्दिरा गॉधी देश मे कानून-व्यवस्था बहाल करना चाहती थी तथा काग्रेस के सत्ताधारी क्षेत्रों को सामाजिक-आर्थिक सुधारों के लिए जनता से किए गए वायदों को पूरा करने के वास्ते विवश करना चाहती थी।

उनके नये कार्यक्रम मे इन बातों का प्रावधान था—कृषि-सुधार पूरा करना, ग्रामीण इलाको का विकास सुनिश्चित करना, गरीब किसानो को सहायता प्रदान करना, उनके कर्जो को मंसूख करना तथा कर्जो के बदले काम को निषिद्ध करना, खाद्यान्नो तथा जीवन के लिए नितान्त आवश्यक वस्तुओं की कीमतें कडाई के साथ निश्चित करना, खेत-मजदूरों की न्यूनतम उजरत में वृद्धि करना, दस्तकारो को प्रोत्साहन देना।

अपने निर्णय के पक्ष में इन्दिरा गॉधी ने कहा कि भारत मे धार्मिक-साम्प्रदायिक पार्टियॉ मौजूद है, जिनके पास अपने गुप्त संगठन है और इन संगठनों के माध्यम से वे अपने अपराधपूर्ण उद्देश्यो से जनता पर अत्याचार करने तथा उसे आतंकित करने, सामाजिक व्यवस्था को अस्त-व्यस्त करने के लिए जनवाद का दुरुपयोग कर रही है। जब ये लोग जनवाद की दुहाई देते हैं, तो उस लडके की कहानी की याद हो जाती है, जिसने अपने मॉ-बाप की हत्या करके जज से इस आधार पर माफी मॉगी थी कि वह अनाथ हो गया है।

लेकिन इन्दिरा गॉधी पश्चिमी राज्यों के उच्च पदस्थ अधिकारियों के व्यंग्य-कटाक्षो से सबसे अधिक क्षुब्ध थीं। अमरीकी और ब्रिटिश समाचारपत्रों में छपने वाले लेखो मे भारत की प्रधानमन्त्री पर निरंकुश शासन लागू करने के आरोप लगाए जा रहे थे।

आश्चर्य की बात तो यह थी कि समाचारपत्र, जो भारतीय लोकतान्त्रिक व्यवस्था के हनन का दुखडा रो रहे थे, दूसरे देशों की प्रतिक्रियावादी तानाशाहियो की खुलेआम भूरि-भूरि प्रशसा कर रहे थे।

इन्दिरा गॉधी ने कहा कि बी.बी.सी. और पश्चिमी पत्र-पत्रिकाओ ने हमेशा हमारा विरोध किया है।

"पश्चिमी राज्यो की सरकारें भारत पर इसलिए आक्षेप करती हैं कि उन्हें उसकी स्वतन्त्र नीति अखरती है," इन्दिरा गॉंधी ने कहा और एक घटना का जिक्र किया। एक बार उनके साथ वार्ता में अमरीकी राष्ट्रपति निक्सन ने इस सिलसिले में नाराजगी जाहिर की कि भारत संयुक्त राज्य अमरीका के हितों को ध्यान में न रखते हुए अफ्रीका के नवस्वतन्त्र राज्यो का समर्थन करता है। इन्दिरा गॉंधी ने तब निक्सन से पूछा कि अमरीका पाकिस्तान की शिकायत क्यों नहीं करता, जो इजराइल की आक्रमणकारी कार्रवाइयों के विरुद्ध संघर्षरत अरब देशो का समर्थन करता है।

इस पर राष्ट्रपति निक्सन ने साफ-साफ जवाब दिया—"हॉं, यह ठीक है, लेकिन पाकिस्तान हमारी सुनता है और भारत नहीं सुनता।'

आपात्काल डेढ़ वर्ष तक लागू रहा और इस अवधि मे इन्दिरा गॉधी अपनी नीति दृढतापूर्वक क्रियान्वित करती रहीं। अराजकता का अन्त किया गया और देश मे स्थिरता लाई गई। जनता की जीवन-परिस्थितियो में आमतौर पर सुधार हुआ, लेकिन आबादी के कमजोर तबको की हालत में कोई बडे परिवर्तन नहीं हुए।

इन्दिरा गॉधी समझती थी कि आपात्काल की स्थिति हमेशा नहीं रखी जा सकती। उन्होंने उस लोकतन्त्र को, जिसके लिए उनके पिता ने आजीवन संघर्ष किया था, नष्ट करने के लिए लागू नही किया था, ऐसा करने का उद्देश्य प्रतिक्रियावादियो के हमलो से लोकतन्त्र को बचाना ही था।

लेकिन जब देश मे राजनीतिक स्वतन्त्रताओं पर अकुश लगाया गया और सूचना-समाचारो पर कड़ी सेसर व्यवस्था लागू कर दी गई, तो इन्दिरा गॉधी पर सविधान का हनन करने तथा व्यक्तिगत निरंकुश शासन स्थापित करने का आरोप लगाया गया।

वस्तुत' उनकी नीति के बहुत-से विरोधी जेलो में बन्द थे, जिनमें इन्दिरा गॉधी के पुराने प्रतिद्वन्द्वी मोरारजी देसाई भी शामिल थे।

लेकिन इन्दिरा गॉधी की सरकार द्वारा लागू कठोर पगों के बावजूद विपक्ष ने देश में आपात्काल की अलोकप्रियता को इस्तेमाल करते हुए अपना प्रतिरोध जारी रखा।

बचपन से ही उदात्त राजनीतिक नैतिकता की भावना में पलकर बडी हुई इन्दिरा गॉधी बदनामी के अभियान और अपने विरुद्ध सीधे उकसावों के प्रति सवेदनशील थीं। लेकिन अपने आहत सम्मान और कष्ट के बावजूद उन्होंने अपनी मर्यादा और साहस को बराबर बनाए रखा। सिर्फ उनकी थकी हुई आँखें और सुन्दर केशराशि के बीच कुछ सफेद लटें उनके कष्ट को प्रदर्शित करती थीं।

यह जानते हुए भी कि देश की स्थिति ससदीय चुनाव के लिए अनुकूल नहीं है, उन्होंने अब उसे टालना उचित नही समझा। 18 जनवरी, 1977 को आपात्कालिक नियम काफी हद तक रद्द कर दिए गए। सरकार ने ऐलान किया कि उसी वर्ष मार्च मे देश की संसद के लिए चुनाव कराए जाएँगे। राजनीतिक बन्दियों–प्रधानमन्त्री के व्यक्तिगत विरोधियों–को रिहा कर दिया गया, प्रेस और चुनाव अभियान चलाने की आजादी बहाल कर दी गई।

अनेक लोगों के लिए इन्दिरा गॉधी का निर्णय अनपेक्षित समझ में न आने वाला तथा दुस्साहसिक लगा की पार्टी के लिए खतरा बिल्कुल स्पष्ट

तथा विदेशी ताकतो का दबाव, इन्दिरा गॉधी के आस-पास के लोगो तथा बुर्जुआ बुद्धिजीवी वर्ग में आपात्काल से असन्तोष, आम निर्वाचकों के बीच अपनी शेष लोकप्रियता के सहारे चुनाव जीतने की आशा, आदि। मगर इस निर्णय का मुख्य कारण था—लोकतान्त्रिक आदर्शो में इन्दिरा गॉधी की आस्था, राजनीतिक ईमानदारी और जनता के प्रति अपनी जिम्मेदारी की भावना।

कालान्तर में स्वय इन्दिरा गॉधी ने अपने निर्णय का इस प्रकार स्पष्टीकरण किया—"आपात्काल लागू करने तथा चुनाव स्थगित करने का कारण था देश मे स्थिरता तथा सुव्यवस्था का अभाव। हमने अव्यवस्था को समाप्त कर दिया और मै समझ गई कि चुनावों के लिए समय आ गया। मुझे तनिक भी विश्वास नहीं था कि हम जीत जाएँगे। मै जानती थी कि भारी बहुमत हमे प्राप्त नहीं होगा। मगर मै सोचती थी कि सम्भवत· चुनावों के परिणाम हमारे लिए अनुकूल निकले, मै अपनी जीत-हार के बारे मे नही सोचती थी, इतना ही समझती थी कि कुछ कारणो से चुनाव नहीं हुए थे और अब ये कारण न रहने की हालत मे चुनाव कराने चाहिए। वास्तव मे ऐसा हुआ। यह स्वाभाविक लोकतान्त्रिक निर्णय था।"[1]

स्पेन की पत्रकार रोजा मोटेरो के साथ भेंटवार्ता में स्थिति का स्पष्टीकरण करते हुए इन्दिरा गॉधी ने कहा—"आपात्काल ने लोकतन्त्र को उसकी सही दिशा पुन· प्रदान की। मुझे यकीन है कि यदि हमने आपात्काल की घोषणा नहीं की होती, तो भारत में लोकतान्त्रिक व्यवस्था हमेशा के लिए समाप्त हुई होती।"[2]

इन्दिरा गाँधी के सम्पर्क में आए अधिकांश स्त्रियों और पुरुषो की तरह भेंटवार्ता शुरू होते ही रोजा मोटेरो ने उनके प्रति गहन सम्मान की भावना अनुभव की। केवल इसलिए नही कि उसका साक्षात्कार एक महान् एशियाई देश की राजनेता से हुआ—उसके सामने ऐसी महिला बैठी थी, जिसके व्यक्तित्व में राजसी गरिमा तथा सादगी, राजनेता की प्रखर बुद्धिमत्ता तथा नारी सुलभ कोमलता का अद्भुत सगम था।

सदा की भॉति इन्दिरा गॉधी साड़ी-ब्लाउज पहने थीं। जरीदार किनारी वाली पीले रग की साडी उन पर बहुत फबती थी। चाँदी की दो अँगूठियों के अलावा कोई आभूषण शरीर पर नही। करीने से सँवरे, कटे बालों मे ललाट के ऊपर सफेद लट, बडी-बड़ी उजली, चमकती हुई आँखें और मोहक मुस्कान। अपने अध्ययन कक्ष, ससद, राजनयिक दावतों में, देश की यात्राओ तथा विश्व भ्रमण के समय ऐसे ही रूप मे इन्दिरा गॉधी लोगों के सामने आती थी।

इने-गिने सगदिल, असंवेदनशील लोग ही इन्दिरा गॉधी के व्यक्तित्व के आकर्षण से अछूते रह सकते थे। उन्हें महज सुन्दर महिला नहीं कहा जा सकता था।

---

1 I Gandhi, op cit.

2 इन्दिरा गाँधी *भारत की विदेश नीति। सकलित भाषण।* 19.0-82 मास्को 1982 (रूसी मे)

उनके लिए यह विशेषण उपयुक्त नही लगता था। वह उनकी विलक्षण आत्मीयता को अभिव्यक्त नहीं कर सकता था। उनकी सहज गरिमा उनके सौन्दर्य का लक्षण थी, मगर वह तो उनकी आत्मा की उपज थी और इन्दिरा गाँधी के आकर्षक व्यक्तित्व मे पूरा निखार ला देती थी।

रोजा मोंटेरो के साथ बातचीत करते हुए इन्दिरा गाँधी ने कहा—"सामयिक प्रघात चिकित्सा के माध्यम से हमने लोकतन्त्र को बचा लिया। हमने यह कदम उठाकर ऐलान किया कि आपात्काल का उद्देश्य यही है। हमारे अखबार साधारण समाचारपत्र नही है। उनमे से अधिकाश बडे उद्योगपतियो के हाथों मे हैं, जो हमारे लक्ष्यो का विरोध करते है। वे नही चाहते कि जनता का जीवन-स्तर ऊपर उठे। आजादी बहुत अच्छी चीज है। वह सब कुछ लिखना, जिसकी इच्छा हो, बेशक अच्छा है। मगर सूचनाओ को झुठलाना ठीक नही है परन्तु सूचनाएँ तोड़-मरोडकर पेश की जाती थी। यह प्रेस की आजादी नही, बल्कि अराजकता है। इसके अलावा कुछ तथाकथित 'स्वतन्त्र' देशो की सरकारों के काम से मैं परिचित हूँ और मै दावे के साथ कह सकती हूँ कि उनमें से किसी भी देश मे पूरी तरह आजाद प्रेस नहीं है।"

"अपनी एक भेटवार्ता मे आपने कहा था कि आपके शत्रु जो नुकसान आपको पहुँचाने की कोशिश करते है, उसका फल उन्हे स्वयं भुगतना पड़ता है। क्या आपको इतना आत्म-विश्वास है ?" रोजा मोटेरो ने पूछा।

"जी हाँ, मैं स्वयं इसके लिए प्रयत्न नही करती हूँ। जब व्यक्ति अपने स्वार्थ की सोचता है, तो अपने प्रयत्नों के परिणामों के लिए वह परेशान होता है। मैं अपना कोई स्वार्थ सिद्ध करने की कोशिश नहीं करती हूँ। मै समझती हूँ कि हम जो कुछ करते हैं, भारत की खातिर करते हैं। मैं जानती हूँ कि अपने जीवन काल में अपना लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पाऊँगी। पर इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए भरसक कोशिश करना मै अपना कर्तव्य मानती हूँ। यह पहाड पर सामूहिक चढ़ाई के समान है—सभी लोग पहाड़ की चोटी पर नहीं पहुँचेंगे, लेकिन सभी मिलकर काम करते हैं और परिणामस्वरूप कोई-न-कोई कभी शिखर पर अवश्य पहुँच जाएगा। सक्षेप में, यही मेरे व्यवहार का सार है और कोई भी मुझे नहीं रोक सकेगा। सरकार के सदस्य के रूप में और सरकार के बाहर भी मै इस दिशा में बढ सकती हूँ।"[1]

सरकारविरोधी विपक्षी नेता 'लोकतन्त्र के लिए शहीदों' की शोहरत लिये जेल से बाहर निकले। मोरारजी देसाई भी रिहा हो गए। प्रधानमन्त्री के सभी विरोधी दक्षिणपंथी राजनीतिक तत्त्वों का द्रुत एकीकरण शुरू हुआ।

पुराने-हिन्दुस्तान से विरासत में भारत गणराज्य को जो पिछडापन, दासता, अन्याय तथा जनविरोधी प्रवृत्तियाँ मिली थीं, जिनके विरुद्ध विगत वर्षो मे जवाहरलाल नेहरू की सरकार ने संघर्ष किया था और फिर जिनके विरुद्ध इन्दिरा गाँधी ने सघर्ष

---

1 इन्दिरा गाँधी *भारत की विदेश नीति। सकलित भाषण* 1980-82 मास्को 1982 रूसी में)

जारी रखा था, वे सब उभरकर सामने आई और उनकी उफनती हुई धारा किशोर भारतीय लोकतन्त्र की नदी मे मिल गई। साधारण मतदाता हक्के-बक्के रह गए, राजनीति के मामलो से अनजान जनसाधारण के बीच अवाछनीय भावनाएँ फैलाई गई। देश की असली स्थिति के बारे मे जानकारी झूठी सूचनाओ तथा साजिशो मे डूब गई, जिनका एकमात्र उद्देश्य स्वाभिमानी, स्वतन्त्रता-प्रिय प्रधानमन्त्री को अपदस्थ करना था।

विभिन्न बुर्जुआ तथा भूस्वामियों की पार्टियो और ग्रुपों में, जो जनता गुट मे सम्मिलित हुए थे, एक-समान राजनीतिक विचारो तथा जनता के लिए सामाजिक कार्यक्रम का अभाव था। उनमें एक ही बात समान थी—कांग्रेस सरकार के प्रगतिशील आदर्शों की वाहक—व्यक्तिगत रूप से इन्दिरा गाँधी—के प्रति घृणा।

उन लोगों ने अपना पूरा चुनाव अभियान ही इन नारो के साथ चलाया—"रानी को गद्दी से हटाओ" और "तानाशाही का नाश हो"।

अधिकांश मतदाताओ ने जनता पार्टी नामक गठजोड के पक्ष मे मतदान किया। कांग्रेस, जो दक्षिणपथियो द्वारा विभाजित कर दी गई थी तथा जनता के साथ जिसके सम्बन्ध कमजोर पड़ गए थे, हार गई—तीस वर्ष पहले सत्तारूढ़ बनने के बाद पहली बार। मोरारजी देसाई ने नयी सरकार बनाई।

11

परिवार, भारत, संसार

इन्दिरा गॉधी के जीवन काल मे पृथ्वी ने सूर्य के इर्द-गिर्द साठवी बार परिक्रमा पूरी की। सौर परिवार के अस्तित्व काल का यह नगण्य अश है, लेकिन मानव के जीवन काल का अधिकांश। परन्तु इन्दिरा गॉधी ने अपनी आयु का भार आसानी से ढोया, उनकी आत्मिक शक्ति और सक्रिय जीवन मे रुचि तनिक भी कम नही हुई। बढ़ती हुई आयु इसमें बाधक नही बनी। उनके दृढ़ मनोबल पर ख्याति तथा अनेक विजयो का प्रतिकूल प्रभाव नही पडा। वह आत्मतुष्ट तथा अभिमानी नही बनी और न ही पराजयों तथा अपूरणीय क्षतियो के कारण हतोत्साहित हुई। एक विशाल देश के शासन के अधिकार ने जीवन के प्रति इन्दिरा गॉधी का दृष्टिकोण नहीं बदला, न ही लोगो के प्रति उनकी सद्‌भावना में इससे कोई कमी आई।

श्रीमती गॉधी ने 1977 के आम चुनाव में अपनी राजनीतिक पराजय को बिना किसी क्षोभ और शिकायत के दृढतापूर्वक सहन किया। उन्होने अपने जीवन के आदर्शो को भी नहीं छोडा। वह भविष्य के प्रति भयभीत नहीं थीं, परन्तु एक बात वह पक्के तौर पर जानती थी। वह उसी तरह रहेगी, जिस तरह पहले रहती आई थी और उन्हीं लक्ष्यों के लिए काम करती रहेगी। जहॉ तक राजनीतिक जीवन-पथ का सम्बन्ध है, जीवन में उसका महत्त्व अस्थायी है।

इन्दिरा गॉधी ने आत्मविश्वास नही गँवाया और भूलकर बैठे लोगो की निन्दा नहीं की। जैसा कि रवीन्द्रनाथ ठाकुर के एक गीत में कहा गया है—"तुम्हें वे बावला समझें--आने वाले कल की प्रतीक्षा करो और शान्त रहो। वे तुम पर कीचड उछालें--आने वाले कल की प्रतीक्षा करो। वे ही तुम्हे फूल भेट करेंगे।"

इन्दिरा गाँधी को कलकित करने के लिए नयी सरकार का मिथ्या प्रचार, उनके विरुद्ध षड्‌यन्त्र, ब्लैकमेल और सीधे-सीधे दमन की कार्रवाइयॉ तक उनके मनोबल को तोड़ नहीं सकीं। और मिथ्या प्रचार से अपेक्षित प्रभाव भी देश के जनमत पर नहीं पड़ा—इन्दिरा गॉधी भारत में सबसे ज्यादा लोकप्रिय नेता बनी रहीं।

नये शासनाधिकारियो के प्रत्यक्ष आदेशो पर उन्हे दो बार गिरफ्तार किया गया। जिस जेल मे उन्हें रखा गया उसमें ताले बहुत बड़ी संख्या में थे—उन्होंने

लगभग दो सौ की गिनती की। सभी दरवाजों, खिड़कियों, रोशनदानो और दरारों को बन्द कर दिया गया था। जेल कोठरी मे दाखिल होने के लिए कई बन्द दरवाजो में से गुजरना पड़ता था। दरवाजों की भयावह चरचराहट, सिटकिनियों की खड़खडाहट सुनाई पडती थी। चारों तरफ कडा पहरा था—"क्या आप सोचते हैं कि मै कोई ताला तोड सकती हूँ ?" बन्दिनी ने जेलरो से पूछा।

कोई जवाब नही मिला। साफ था कि शासनाधिकारियों ने इन्दिरा गॉधी को डराने की कोशिश की, लेकिन वास्तव मे वे खुद उनसे भयभीत थे।

भूतपूर्व प्रधानमन्त्री को फौजदारी अपराधियों के साथ रखा गया। बगल वाली कोठरी में एक आस्ट्रेलियाई महिला बन्द थी, जिस पर कुछ हत्याओ तथा नशीले पदार्थो के बड़े पैमाने पर व्यापार में हाथ बँटाने का आरोप लगाया गया था। स्वय इन्दिरा गॉधी के विरुद्ध भारत के विभिन्न राज्यो में कई मुकदमे दायर किए गए। उनमे से अनेक पूरी तरह बेबुनियाद और हास्यास्पद थे। उदाहरण के लिए, मणिपुर राज्य की एक अदालत मे उन पर छः अण्डो तथा दो मुर्गियो अथवा छः मुर्गियो तथा दो अण्डों की चोरी में शामिल होने के आरोप पर मुकदमा दायर किया गया था।

लेकिन इन्दिरा गॉधी पर भ्रष्टाचार और सत्ता के दुरुपयोग के सारे मनगढत आरोप लगाकर उन्हें सजा देने की तमाम कोशिशे बुरी तरह नाकाम हो गई। वह केवल दो सप्ताह तक जेल मे रही, परन्तु उनकी गिरफ्तारी के विरुद्ध राष्ट्रव्यापी विरोध की आँधी उठ खडी हुई और भारत की इस यशस्विनी देशभक्त, अविस्मरणीय जवाहरलाल नेहरू की बेटी के प्रति लोगो के मन में सद्भावना की पहले से ज्यादा अनुभूति पैदा हुई।

कांग्रेस सरकार के पतन के बाद व्यक्तिगत रूप से इन्दिरा गॉधी की लोकप्रियता कम होने के बजाय बढती ही चली गई।

दूसरी ओर, सरकार बौखलायी हुई थी और एक के बाद दूसरा गलत कदम उठाती रही।

अपना राजकीय निवास-स्थान छोड़कर इन्दिरा गॉधी 12, विलिगडन क्रेसेंट मे रहने लगी। पहले की तरह, मानो स्थिति में कोई परिवर्तन हुआ न हो, उनसे मिलने के लिए भारत के कोने-कोने से लोग आते रहते।

सुबह का दृश्य। पेडो की छाया मे रात की शीतल ताजगी बनी हुई है, बाग में कलियॉ खिली हुई है और तितलियो के बीच सुधा-पराग बाँटने को तैयार हैं...।

इन्दिरा गॉधी के घर के सामने बाग में, बरामदे पर प्रेस संवाददाता, कांग्रेसी कार्यकर्ता, सांसद और किसान जमा हो चुके हैं।

छोटे दुकानदारो ने स्थिति से फायदा उठाकर पानी, चाय, आइसक्रीम, फूलो के व्यापार का प्रबन्ध किया। विलिंगडन क्रेसेंट में फोटोग्राफरों को खूब पैसा कमाने का मौका मिला जो सैकड़ों मुलाकातियों के साथ इन्दिरा गाँधी के फोटो खींचते थे इस सिलसिले में इन्दिरा गाधी ने मजाक किया कि वह 'दिल्ली की एक दर्शनीय

केन्द्र-बिन्दु बन गई है।"

उस दिन मुलाकातियो के बीच डोम मोरास भी थे—कुछ पडे अमरीकी तथा ब्रिटिश समाचारपत्रो के लिए लिखने वाला सफल तथा आत्मविश्वासी युवक भारतीय लेखक, इन्दिरा गॉधी की जीवनी लिखने वालो मे से एक।

ठीक आठ बजे इन्दिरा गाँधी बरामदे मे निकली।

स्नेहपूर्वक मुस्कराते हुए और हाथ जोड़कर उन्होंने अपने अतिथियों का स्वागत किया।

"नमस्ते, मैडमजी, सलाम, मेम साहबा, गुड मोर्निंग, मैडम !" मुलाकातियो ने उनका अभिवादन किया।

किसान झुककर प्रणाम करते हैं। धूप मे झुलसे, झुर्रियों से ढके उनके चेहरो पर श्रद्धा की छाप पडी हुई है—उनकी नजरों में इन्दिरा गॉधी भारत-माता की प्रतीक है। उन्हे सरकार के बदलने से कोई मतलब नही है, वे इन्दिराजी पर भरोसा रखते है और इसलिए वे यहॉ आते हैं।

उनसे धरती तथा पसीने की गध आ रही है, उनकी विनम्र, थकी हुई ओर जिज्ञासु ऑखो मे पीड़ा और आशा झलकती है, यह भारत का असली रूप है।

"आपको मानना पड़ेगा, मैडम, कि ये अधिकांश लोग मदबुद्धि लगते है," किसानों की ओर इशारा करते हुए डोम मोरास ने कहा।

इन्दिरा गॉधी की भौंहें चढ गई। वह बुरी तरह झुँझला उठी।

"बिलकुल नही। ये वे ही लोग है, जो छोटे गाँवों और कस्बो से समाचार लाते हे, जिन्हें देखने-सुनने का सदा मेरा मन करता है। नहीं तो देश के हालात का मुझे भला कैसे पता चलता ?"

जनता से अलग-थलग रहते, अच्छा खाते-पीते, अभिमानी लोगों को उस धरती की स्वाभाविक गंध रास नही आती, जो सबका पेट भरती है। उन्हे कृत्रिम सुगधियॉ ज्यादा पसन्द होती हैं। किसानो और मजदूरो की मेहनत को वे उपेक्षा की नजरो से देखते है, हालॉकि इस मेहनत के फलो का वे बडी खुशी से उपयोग करते है। अपने मॉ-बाप से विरासत मे सम्पत्ति तथा सामाजिक हैसियत पाकर ये लोग अपने को विशिष्ट वर्ग के प्रतिनिधि समझते हैं, समाज में अपनी स्थिति मजबूत बनाने, अपने अह को तृप्त करने की चेप्टा करते है और जनता की सेवा करने की नही सोचते।

जनता के हित को सर्वोपरि मानने वाले सच्चे राजनीतिक कार्यकर्ता तथा अपने स्वार्थ की सोचने वाले कुटिल राजनीतिज्ञ के बीच, सच्चे बुद्धिजीवी तथा चरित्रहीन नोकरशाह के बीच कदाचित् यही फर्क है।

इन्दिरा गॉधी के आस-पास कितने ही जीवनी-लेखक, 'सरकार के निकटवर्ती' सवाददाता तथा पत्रकार मँडराते रहते थे ! उनमें से कुछ लोग अपने लेखो मे राजनीतिक सत्य और उच्च नैतिकता की दुहाई देते हुए वास्तव मे 'मसालेदार' तथ्यो की तलाश में रहते थे की अफवाहें उडाते थे और बेशर्मी से इन्दिरा गाँधी

के व्यक्तिगत जीवन में दखल देते थे। सूचना-प्रसार के ये ठेकेदार जनता की आकांक्षाओ की घोर उपेक्षा करते थे, झूठ, अफवाहो तथा सनसनीखेज खबरो पर जीते थे। इन्दिरा गॉधी उनसे निष्पक्ष सूचनाओ की अपेक्षा नही करती थी और वह अपने बारे मे बहुत सारे लेख तथा मोटी जीवन-कथाऐं पढ़ना जरूरी नही समझती थी।

निःसन्देह यह आरोप सभी पत्रकारों पर लगाया नहीं जा सकता। उनके बीच ईमानदार, बुद्धिमान व सत्यवादी व्यक्ति भी थे, जो सच्चाई जानने तथा जनता को उससे अवगत कराने के लिए उत्सुक थे। लेकिन ऐसे पत्रकारो की अपनी सीमाएँ थीं।

इन्दिरा गाँधी की जीवनचर्या पहले जैसी बनी रही। वह केवल 4-5 घण्टे सोती थी और बाकी समय मे सक्रिय रूप से काम करती रहती थी। बीच-बीच में अपने परिवार के लोगो के लिए कुछ वक्त निकाल लेती थीं।

राजीव और सजय ने शिक्षा पूरी कर ली थी। राजीव विमान चालक बन गए और संजय सार्वजनिक कार्यो में लग गए।

दोनो पुत्रो ने विवाह किया। राजीव ने इतालवी युवती सोनिया से विवाह किया। उनका परिचय 1965 की गर्मियों में कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी की, जिसमें सोनिया अग्रेजी भाषा का अध्ययन करती थी, कैंटीन मे हुआ था। राजीव गाँधी के मन मे तुरन्त विश्वास पैदा हो गया कि यही युवती उसकी नियति की सहभागिनी है। जनवरी, 1968 में उनकी शादी हुई और सोनिया ने यूरोपीय पोशाक को त्याग कर भारतीय साडी पहननी शुरू की। जून, 1970 में उनके बेटे राहुल और जनवरी, 1972 में बेटी प्रियंका का जन्म हुआ।

संजय ने 1974 मे भारतीय सिख सैनिक अफसर की बेटी मेनका से विवाह किया। उस समय मेनका फैशन मॉडल थी और कालान्तर में उसने पत्रकारिता तथा राजनीति में रुचि ली। कहना चाहिए कि इन्दिरा गॉधी को बहू के ये काम और रुझान पसन्द नहीं थे। सजय और मेनका का बेटा हुआ, जिसे नाना के सम्मान मे फीरोज वरुण नाम दिया गया।

ये सभी लोग एक घर में रहते थे, लेकिन खाने की मेज पर उतना अक्सर नहीं मिल पाते थे, जितना चाहते थे। आमतौर पर वे नाश्ता एक साथ करते थे और फिर दिन-भर अपने-अपने कामों में लगे रहते।

अपने पोती-पोतों को इन्दिरा गाँधी बहुत प्यार करती थी, जिनके होने पर उनकी जीवन-शक्ति तिगुनी हो गई। इन्दिराजी का व्यक्तिगत जीवन नयी सशक्त भावना से आलोकित हुआ, पोतो के बारे मे चिन्ता ने उसमे नया अर्थ भर दिया।

इन्दिरा गॉधी और परिवार के अन्य सदस्यो विशेष रूप से सजय पर, जिसकी अनुभवहीनता तथा भावुकता के कारण विरोधियों को कई बार आक्षेप

करने का मौका मिला, सरकार द्वारा अत्याचार के बावजूद 12, विलिगडन क्रेसेंट मे प्रेम और सुख का वातावरण व्याप्त रहता।

घर की सज्जा परिवार की प्रमुख—इन्दिरा गॉधी—की रुचि के अनुरूप थी—साफ-सुथरे आरामदेह कमरे, जिनमें सिर्फ जरूरी फर्नीचर रखा रहता था। बैठकखाना, जिसमे इन्दिरा गॉधी अतिथियो के साथ लम्बी और गम्भीर वार्तालाप करती थीं (बहुसख्य ग्रुपों से वह बाग में अथवा खुले बरामदे में मिलती थी), दो सोफे, चार आरामकुर्सियाँ तथा एक छोटी नीची मेज से सजा रहता था। मेज पर सदा ताजे फूलों सहित गुलदान रखा था, जिन्हे इन्दिरा गॉधी स्वय काटती और सजाती थी। बैठक की एक दीवार मे सर्दियो के लिए खुली अँगीठी बनी थी। अँगीठी के ऊपर मेक्सिकन चित्रकार रफाएल नवार्रो का बडा चित्र लगा था—मुरली बजाने वाला लडका, जिसके कन्धे पर कबूतर बैठा है। दूसरी दीवारों पर महात्मा गॉधी, जवाहरलाल नेहरू, रवीन्द्रनाथ ठाकुर के छोटे छविचित्र और भारतीय वास्तुकला स्मारको के एकाध स्कैच टॅगे रहते थे। खाने का कमरा और भी सादा था। शयन-कक्ष इन्दिरा गॉधी का कार्य-कक्ष भी था। उसमें पुस्तक संग्रह तथा लिखने की मेज थी, साथ ही व्यायाम के लिए जगह भी थी—सुबह और शाम को वह 15-20 मिनट के अन्दर कई योगासन अवश्य करती थी। शयन-कक्ष में वह अपने कपड़े भी रखती थी। अपने रूप का बराबर ख्याल रखते हुए वह बडी सावधानी से पोशाको का चयन करती थी, खासतौर पर रंगों के मेल की ओर ध्यान देती थीं, लेकिन सौन्दर्य-प्रसाधनो का उपयोग बिल्कुल नही करती थी।

जैसे कि इन्दिरा गॉधी को आशंका थी, देसाई सरकार ने अर्थतन्त्र के सार्वजनिक क्षेत्र पर कुठाराघात करके, आर्थिक नियोजन से इन्कार करके तथा निजी पूँजी, साथ ही विदेशी पूँजी को बढ़ावा देकर अपनी हानिकारक नीति चलाई।

शीघ्र ही बेलगाम मूल्य-वृद्धि तथा मुनाफाखोरी ने व्यापार की व्यवस्था को पूरी तरह नाकाम कर दिया। एक ओर, बेरोजगारी, जरूरी चीजो तथा खाद्य-पदार्थो का अभाव और, दूसरी ओर, व्यवसायियो के बेहद मुनाफे, व्यापारियों तथा सट्टेबाजो के पास अपार 'काले धन' का संचय—इसके परिणामस्वरूप भारत की अर्थव्यवस्था, वित्त प्रणाली, घरेलू और विदेशी व्यापार बुरी तरह अस्त-व्यस्त हो गए।

देसाई सरकार जवाहरलाल नेहरू की विदेश नीति से, जो श्रीमती इन्दिरा गॉधी के प्रयास से स्वतन्त्र भारत के लिए एक परम्परा बन चुकी थी, पूरी तरह हटने लगी।

परन्तु यह मानना होगा कि राष्ट्रीय हितों को और भारतीय जनता की इच्छा तथा देश की विभिन्न राजनीतिक शक्तियों की मॉगों को ध्यान मे रखते हुए मोरारजी देसाई की सरकार ने सोवियत सघ के साथ परस्पर सहयोग की नीति की परम्परा को जारी रखा परन्तु गुटनिरपेक्षता की नीति का स्वरूप

कुण्ठित कर दिया गया, सयुक्त राज्य अमरीका तथा सोवियत सघ से 'समान दूरी' रखने की धारणा पेश की गई, जिसके नतीजे मे साम्राज्यवादी पश्चिमी राज्यो को रियायते दी जाने लगीं और निर्गुट देशो के आन्दोलन मे, शान्ति, राष्ट्रीय स्वाधीनता तथा सामाजिक प्रगति के लिए उनके अभियान मे भारत की भूमिका कमजोर पड़ गई। इन्दिरा गाँधी ने इस बारे मे चिन्ता व्यक्त की। इस नीति के परिणामस्वरूप भारत की अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा गिरने लगी।

स्वभावतः, इन्दिरा गाँधी चुप नही बैठी रह सकी और उस ध्येय पर कुठाराघात सहन नही कर सकती थी, जो उनके जीवन का अर्थ था और जिसके लिए आवश्यकता पडने पर वह अपना जीवन बलिदान करने को तैयार थी।

सन् 1978 के आरम्भ में उन्होंने नयी पार्टी की स्थापना की घोषणा कर दी, जिसका नाम रखा गया भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस (इ)। सरकार द्वारा निर्मम अत्याचार के बावजूद वह भूतपूर्व कांग्रेसियो के श्रेष्ठ भाग को अपने साथ लाने में सफल रहीं। उन्होने नये लोगो को भी अपनी पार्टी की ओर आकृष्ट करके साबित कर दिया कि उसमे शामिल होकर वे विभाजित काग्रेस की लोकतान्त्रिक परम्पराओ के सच्चे वाहक बन गए है। नयी पार्टी की अध्यक्ष के रूप मे दक्षिण भारत के एक ग्रामीण क्षेत्र से उपचुनाव मे वह विजयी हुई और 1978 मे उन्होंने ससद मे पुनः प्रवेश किया।

विपक्ष की नेता के रूप में इन्दिरा गाँधी को ससद में प्रवेश करते देखकर देसाई सरकार, जिसने इन्दिरा गाँधी के 'राजनीतिक निधन' की घोषणा की थी, सुध-बुध खो बैठी। उसे इन्दिरा गाँधी तथा उनके समर्थको पर अत्याचार बढाने के सिवाय और कोई उपाय नही सूझा। लेकिन भ्रष्टाचार तथा सत्ता के दुरुपयोग के पुराने बेबुनियाद आरोप पुनः लगाने के ये बेदम प्रयत्न, इन्दिरा गाँधी के शब्दो में—"मरे हुए घोडे को चाबुक मारने" के बराबर थे।

नयी पार्टी की प्रतिष्ठा और प्रभाव मे तेजी से वृद्धि होती गई। बहुत हद तक इसका कारण देसाई सरकार के भीतर कलह और देश की स्थिति मे बढते संकट को रोकने मे उसकी असमर्थता थी। देशव्यापी भ्रष्टाचार और अव्यवस्था भयावह रूप ग्रहण कर रहे थे। सरकार भारी संकट मे फँस गई थी। सन् 1980 के आम चुनावो मे पुनर्जीवित काग्रेस पार्टी की प्रभावशाली विजय हुई। भारत ने, जो विद्यमान स्थिति से क्षुब्ध था, इन्दिरा गाँधी और उनके सहयोगियो के पक्ष मे मतदान किया। सिर्फ गरीबो ने ही नही, बल्कि राष्ट्रवादी विचार रखने वाले धनी वर्गो ने भी इन्दिरा गाँधी का साथ दिया, क्योकि वे उन्हें ऐसी दबग हस्ती मानते थे, जो राष्ट्र को एकताबद्ध करके उसे उज्ज्वल भविष्य की ओर ले जाने मे समर्थ थी।

इस तरह इन्दिरा गाँधी एक बार फिर भारत सरकार की प्रधानमन्त्री बन गईं। लोगों को उनसे उम्मीद थी कि वह देश के गरीब तबकों के हित मे सामाजिक-आर्थिक सुधारो को अमल में लाएँगी। प्रधानमन्त्री का पद सँभालते ही उन्होंने अपने पहले के घोषित पर अधूरे रह गए 'बीस सूत्री कार्यक्रम' को अमल में लाना शुरू कर दिया

इस कार्यक्रम को वह गरीबी हटाने, भुखमरी का अन्त करने तथा देश को सामाजिक-आर्थिक विकास की राह पर ले जाने की समस्या को हल करने का सबसे विश्वसनीय साधन समझती थीं।

इन्दिरा गॉधी के पास, कहा जा सकता है, अब खाद्य पदार्थो, सबसे पहले अनाज का उत्पादन बढ़ाने के साधनो की कुजी थी, अतः भुखमरी की जटिल समस्या उतनी भयावह नही रह गई थी। लेकिन वह भारत की एकता तथा क्षेत्रीय अखण्डता के विरुद्ध भीतरी और बाहरी प्रतिक्रियावाद की ताकतो की आम साजिशो को नही रोक सकी। भारत के अन्तर्राष्ट्रीय साजिशों तथा अन्तर्विरोधो का केन्द्र बनने का खतरा बढ़ता ही चला गया।

सन् 1958 मे पण्डित नेहरू समझते थे कि आबादी को खाद्यान्न मुहैया करना भारत की सबसे बडी समस्या थी ओर लगभग चौथाई सदी बाद, इन्दिरा गॉधी के ख्याल मे, देश की आबादी को घुल-मिलकर रहने के लिए प्रेरित करना सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण समस्या थी।

इन्दिरा गॉधी के समकालीनों के मतानुसार, यथार्थवादी दृष्टिकोण रखने वाली प्रधानमन्त्री भली-भॉति समझती थी कि नरम तरीकों से काम लेते हुए इस घातक खतरे को टाला नहीं जा सकता था, न उसका निवारण उन देशभक्तिपूर्ण नारो से सम्भव था, जो स्वतन्त्रता आन्दोलन के वर्षो में काफी कारगर साबित हुए थे, लेकिन जिनका भावनात्मक प्रभाव अब घट चुका था। जनता विचारो को कार्यरूप में परिणत किए जाने की प्रतीक्षा कर रही थी। इस तथ्य को ध्यान मे रखना जरूरी था कि आम ब्रिटिशविरोधी अभियान के योद्धाओ की जगह भारतवासियों की नयी पीढ़ी ने ले ली थी, जो उपनिवेशवादियों द्वारा उत्पीड़न के अपमान तथा उस ग्लानि से अपरिचित थी, जिसे स्वतन्त्रता सेनानियों को बर्दाश्त करना पड़ा था और जो उनके लिए भूख, गरीबी और जेल से बदतर थी। नयी पीढी को वह असली ऐतिहासिक मूल्य नहीं मालूम था, जिसे पूर्वगामी पीढ़ी ने देश की एकता तथा आजादी के लिए चुकाया था। जनता पर भावनात्मक प्रभाव डालने के जिन उपायो का महात्मा गॉधी तथा जवाहरलाल नेहरू ने प्राय: उपयोग किया था, अब वे उतने असरदार नहीं रह गए थे। विशाल बहुजातीय देश का शासन कर सकने के लिए व्यवहारवादी राजनीतिक-आर्थिक और प्रशासनिक पग आवश्यक थे।

इन्दिरा गॉधी की प्राय: इसलिए कटु आलोचना की जाती थी कि देश का शासन करने के उनके तरीके निर्ममतापूर्ण हैं, कि अपने राजनीतिक विरोधियों के प्रति वह बहुत अधिक 'असहिष्णु' है। इस सन्दर्भ में विशेष रूप से पार्टी तथा सरकार के अपने सहयोगियों के प्रति उनके पिता को 'भावात्मक-काव्यात्मक' रवैये से शासन की उनकी विधि की तुलना की जाती थी।

"उनकी अपेक्षा मै कम भावुक कम रोमाण्टिक हूँ," इन्दिरा गॉधी ने मान और मजाक के लहजे में कहा पुरुषों की तुलना में स्त्रियों का दृष्टिकोण अधिक

यथार्थवादी हुआ करता है।"

"मै राजनीतिज्ञ हूँ," अपना स्तर मानो नीचा मानते हुए वह बोलीं—"पिताजी राजनेता थे. .वह एक सन्त थे, जो भटककर राजनीतिक मच पर आ पहुँचे थे।" यह भावना स्वाभाविक थी—इन्दिरा गॉधी के लिए पिता के रूप मे नेहरूजी जन-नेता के रूप मे नेहरूजी से अधिक स्पष्ट तथा सुबोध थे। परिवार की मान्यता और विश्व के राष्ट्र समुदाय की मान्यता मे अन्तर हुआ करता है।

इन्दिरा गॉधी की नजर में राजनीति व्यावहारिक, कठिन, श्रमसाध्य, आभारहीन कार्य है, लेकिन इस दृष्टिकोण का अर्थ यह नही था कि उन्हे राजनेता का कार्य नीरस ओर अनाकर्षक लगता था। प्रधानमन्त्री का अपना कार्यभार वह बड़े उत्साह और उमग के साथ सँभालती थी, पग्न्तु राजनीनि छोटे-मोटे, मामूली कामो से अभिन्न होती है। राजनीति सिद्धान्तकार की अमूर्त धारणा और कवि की प्रेरणा नही, वग्न् कठोर वास्तविकता है। पर इसके साथ ही राष्ट्रीय नीति चाहे कितनी ही यथार्थवादी तथा व्यावहारिक क्यो न हो, वह आदर्शवाद से मुक्त नही होती, उसमे कल्पना के लिए भी गुजाइश रहती है। इन्दिरा गॉधी की नीति देशभक्ति के आदर्शों से देदीप्यमान थी, जिनकी पूर्ति के लिए उन्होने अपना जीवन पूर्णत- समर्पित कर दिया था। मगर जब कभी उदात्त लक्ष्य की ओर मार्ग में उनका टकराव विश्वासघात तथा नीचता से हुआ, उन्होंने सख्ती से काम लिया। इसलिए बुद्धिजीवी वर्ग तथा राजनीतिक हलकों मे उन्हे उदारभावना से रहित, व्यवहारवादी महिला माना जाता था, जो विचार-विमर्श की अपेक्षा कार्य को प्रधानता देती है, संशय बहुत कम करती है, प्रश्न नही उठाती, बल्कि निर्णय लेती है।

इन्दिरा गाँधी सशक्त केन्द्रीय सरकार समेत भारतीय संघ के सिद्धान्तों की रक्षा की नीति का अडिगतापूर्वक अनुसरण करती थी। वह संघ के स्थान पर राज्यों व क्षेत्रो की ढीली-ढाली एकता की स्थापना के विरुद्ध थीं, क्योकि इससे सिर्फ अपकेन्द्री प्रवृत्तियो को बल मिलता और महान् एशियाई देश के विघटन का खतरा पैदा हो जाता।

इन्दिरा गॉधी के जीवन में राजनीतिक आघातो की अवधि खत्म हो गई लगती थी—जीवन का प्रवाह सामान्य हो गया था। इन्दिरा गॉधी का परिवार सफदरजंग रोड के निवास-स्थान मे लौट आया। अनन्त कठिन परिश्रम तथा राजकीय चिन्ताओं से भरा-पूरा जीवन अपने स्वाभाविक ढर्रे पर आ गया। अपनी कोई विशेष व्यक्तिगत योजनाएँ इन्दिरा गाँधी के पास नही थीं—उनकी सभी कल्पनाएँ तथा योजनाएँ भारत के भाग्य के साथ एकाकार हो गई थीं, जिसका भविष्य अकेले प्रधानमन्त्री पर निर्भर नही करता था। देश के भविष्य की सुन्दर कल्पना को कार्यरूप प्रदान करने के लिए इन्दिरा गाँधी जी-जान से प्रयत्नशील थीं लेकिन वह जानती थीं कि भारत का भावी

रूप वह स्वयं नहीं देख सकेगी, उनके पुत्रों, भारत के बच्चो को ही उसे देखने का अवसर मिलेगा।

इन्दिरा गॉधी के व्यक्तिगत जीवन का केन्द्र-बिन्दु घर का वह हिस्सा बन गया, जहॉ अपने परिवारो सहित दोनो पुत्र रहते थे। यह मॉ के सुख का स्रोत था।

राजीव नागरिक उड्डयन विभाग मे नौकरी करते थे। विमान चालक का काम कभी खतरे से खाली नही होता। हर उडान से पहले पति से विदा होते हुए सोनिया हमेशा बेचैन हो जाती थी। वह बहुत चिन्ताशील पत्नी सिद्ध हुई। राजीव और सोनिया के गहन आपसी स्नेह से इन्दिरा गॉधी प्रसन्न थी। पति-पत्नी में पूर्ण एकात्म्य था। कभी-कभी लगता था कि पति के पास न होने की हालत मे भी सोनिया उनके विचारो और भावनाओ को भॉप लेती थी।

सजय का मामला भी कुछ हद तक हल हो गया था। अब उसका नाम पहले की तरह नहीं उछाला जाता था, अपनी कार्रवाइयों तथा वक्तव्यों में वह अधिक सयत व गम्भीर हो गया था, जीवन का अनुभव अर्जित कर चुका था और देश के राजनीतिक हलको मे उसकी स्थिति मजबूत बन रही थी। वह सुखी-सन्तुष्ट तथा सक्रिय था और अनेक परियोजनाओ की पूर्ति में जी-जान से लगा हुआ था।

दोनों पुत्रो को विमानन का शौक था। शायद अपने नाना जवाहरलाल नेहरू से विरासत के रूप में उन्होने यह शौक पाया था, जो वृद्धावस्था तक ग्लाइडिग मे रुचि लेते रहे। कदाचित् इसलिए राजीव पेशेवर विमान चालक बन गए और सजय को स्पोर्ट विमान उड़ाने का बडा शौक हो गया था।

पोते बड़े हो रहे थे। उनके होने से घर मे स्नेह-सौहार्द का वातावरण व्याप्त रहता था—आयु के साथ बढती हुई मानसिक थकावट का बोझ बच्चे हल्का कर देते है और उनकी उपस्थिति से जीवन का ज्ञान और अनुभव उतना बोझिल नहीं रह जाता, जितना कि वृद्धावस्था में एकाकीपन से होता है।

ऐसा प्रतीत होता था कि 1, सफदरजग रोड में पूर्ण सुख साम्राज्य स्थापित हो चुका है। इन्दिरा के हृदय के घाव भर चुके थे, लेकिन उनके भाग्य में एक और प्रचण्ड मानसिक आघात झेलना बदा था, उन्हे अपूरणीय क्षति उठानी थी—1980 मे स्पोर्ट विमान मे उड़ान के समय दुर्घटना हो गई, जिसमें सजय की मृत्यु हो गई...।

शाम को इन्दिरा गॉधी बाग की पगडडियो पर देर तक अकेली घूमती रहतीं। किसी को देखने, किसी से बात करने की उन्हे इच्छा नहीं होती थी। चॉदनी रात की रोशनी मे उनके सिर के बालों की रजत लट चमकती रहती और गुलाबो के पुष्प-कुज धीमी चाल से चलने वाली अधेड़ महिला के लिए रास्ता बनाते, जो अपार दुःख मे डूबी हुई उनके सौन्दर्य से बेखबर रहती।

फिर वह अपने शयन-कक्ष में चली आती और पौ फटने के समय तक खिडकी मे रोशनी नहीं बुझती थी—एक माता की आत्मा ऐसी अस्वाभाविक स्थिति को कभी स्वीकार नहीं कर सकती कि वह जीवित है जबकि बेटे की जीवन-लीला समाप्त हो

चुकी है, यह दुखद विचार नींद को भगा देता है। असह्य मानसिक पीडा के ऐसे क्षणो मे यह सोचकर कुछ सात्वना प्राप्त होती है कि इस दुनिया मे सभी लोगों का अस्तित्व क्षण-भगुर है।

इन विषादपूर्ण विचारो ने इन्दिरा गॉधी को वसीयतनामा लिखने के लिए प्रेरित किया। "समय के अभाव के कारण मैं समुचित रूप में वसीयतनामा नही बनवा पाई और अब इस सम्बन्ध मे अपनी इच्छा को स्पष्टतः व्यक्त करने के लिए जल्दी-जल्दी ये पंक्तियॉ लिख रही हूँ। मुझे आशा है कि मेरा यह वसीयतनामा कानूनी माना जाएगा और मेरे अन्तिम इच्छा-पत्र के रूप मे उसका आदर किया जाएगा," इस प्रकार उन्होने अपना वसीयतनामा शुरू किया।

"तीस एक वर्षो से हमारा परिवार सरकार के निकट रहा है अथवा उसमे शामिल हुआ है और इस अवधि में परिवार के सार्वजनिक जीवन की विशेषता यह रही कि हमारी सम्पत्ति न केवल नही बढ़ी, बल्कि घट गई। आंशिक रूप से इसका कारण यह है कि 'आनन्द भवन', बडा प्लाट और कीमती फर्नीचर, पुस्तक संग्रह तथा दूसरी वस्तुओ सहित अन्य मकान मैंने जवाहरलाल नेहरू स्मृति कोष को दानस्वरूप दे दिए। इसके अलावा अपने स्वर्गीय पिता के निजी कागजात का बड़ा सग्रह भी मैने इस कोष के नेहरू मेमोरियल म्यूजियम तथा लाइब्रेरी को भेंट कर दिया...।

"इस समय मेरे पास मेहरौली के निकट छोटा-सा फार्म और एक अधूरा मकान है। इग्लैण्ड से वापस लौटने के बाद मेरे पुत्र राजीव ने अपना धन, समय और मेहनत खर्च करते हुए फार्म की देखभाल की। इसलिए यह सम्पत्ति मैं राजीव तथा सोनिया के बच्चों, यानी राहुल तथा प्रियंका को विरासत में छोड़ना चाहती हूँ। इस सम्पत्ति को बराबर बॉटना चाहिए और मैं उनके माँ-बाप को समुचित ढंग से इसका प्रबन्ध करने का आदेश देती हूँ।"

आगे चलकर इन्दिरा गॉधी ने पोतों और पोती को अपने रायल्टी राइट्स, कला विषयक पुस्तको तथा कुछ पुरातन वस्तुओ का उत्तराधिकारी घोषित किया।

उन्हें यह बहुत अच्छा लगता था कि राजीव और सोनिया संजय के बेटे फीरोज वरुण को अपने बच्चों की तरह चाहते हैं और वह विश्वास रखती थीं कि वे उसके हितों की यथासम्भव रक्षा करेगे।

"अपने पुत्र राजीव गॉधी को मै इस वसीयत को पूरा करने का अधिकार सौपती हूँ," अन्त मे उन्होंने लिखा—"और इस इच्छा-पत्र के सार, उसके अर्थ की व्याख्या तथा उसमें अनुल्लिखित प्रश्नों के सम्बन्ध मे उनका निर्णय अन्तिम माना जाना चाहिए। यदि किन्ही कारणों से, जो उन पर निर्भर न करते हों, मेरे पुत्र राजीव गॉधी इस वसीयत को पूरा करने का दायित्व नही निभा सकेंगे, तो यह दायित्व उनकी पत्नी सोनिया गॉधी को सौपा जाना चाहिए, जिसे राजीव गॉधी को प्राप्त सभी अधिकार दिए जाएँगे ।'

इन्दिरा गॉंधी के पास कोई बडी आर्थिक सम्पत्ति नहीं थी उसके सम्बन्ध में

वसीयत लिखने की जरूरत भी नही थी, क्योंकि नेहरू-गाँधी के देशभक्त परिवार की मुख्य सम्पदा मेहरौली का फार्म नही, बल्कि वह आत्मिक निधि थी, जो कानून के तहत नहीं थी और वह अमूल्य धरोहर राजीव गाँधी को प्राप्त हो चुकी थी।

कुछ समय बीतने पर राजीव गाँधी ने नागरिक उड्डयन विभाग की नौकरी छोड दी और जीवन के कही अधिक कठिन और कँटीले मार्ग पर—नये भारत के हेतु राजनीतिक सघर्ष के मार्ग पर—पदार्पण किया, जिस पर उनके परनाना, नाना तथा पिता आगे बढे थे और अब देशभक्ति का उनका ध्वज साहसपूर्वक ऊँचा उठाए उनकी माँ इसी मार्ग पर अग्रसर हो रही थी।

1980 के दशक के आरम्भ में अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति गम्भीर रूप से बिगड़ गई थी। नीति-परिवर्तन करके वाशिंगटन प्रशासन ने तनाव-शैथिल्य के सकारात्मक परिणामो को नाकाम करने, अस्त्र-परिसीमन तथा परमाणविक युद्ध के खतरे के निवारण से सम्बन्धित कई प्रश्नो पर सोवियत सघ के साथ हो चुके समझौतों पर पुनर्विचार करने की नीति अपनाई। मध्य पूर्व, फारस की खाडी, कैरीबियन सागर तथा एशिया के कई क्षेत्र घोर संकट की लपेट मे आए। संयुक्त राज्य अमरीका ने समाजवाद तथा राष्ट्रीय मुक्ति की शक्तियो के विरुद्ध विचारधारात्मक तोड़-मोड़ तथा 'मनोवैज्ञानिक युद्ध' का पैमाना बढा दिया। अन्तर्राष्ट्रीय तनाव मे वृद्धि करते हुए हस्तक्षेपकारी द्रुत कार्रवाई सेना का गठन किया जा रहा था। पेटागन के जनरलो और केन्द्रीय गुप्तचर एजेंसी के सरगनों ने विदेश मन्त्रालय के कैरियर राजनयज्ञों को हटाकर नि सकोच रूप से अपनी दुस्साहसिक कार्रवाइयाँ आरम्भ कर दीं, वे विमानवाहक जहाजो, मैरीन कोर तथा अमरीकी फौजी अड्डो के विश्वव्यापी जाल को राजनीतिक उद्देश्यों के लिए इस्तेमाल करने लगे।

पश्चिमी जगत् की गुप्तचर सेवाओं ने भारत के विरुद्ध प्रचार-साजिशे तेज कर दी थीं। वे देश की स्थिति को अस्थिर बनाने और उसकी राष्ट्रीय एकता तथा अखण्डता को भग करने पर तुली हुई थीं। इसी कारण भारत और उसके जनगण की स्वतन्त्रता तथा एकता को सुरक्षित रखने के लिए आवश्यक भीतरी और बाहरी परिस्थितियो के निर्माण के वास्ते सघर्ष करना वक्त का तकाजा था।

फौजी और राजनीतिक गुटों के प्रति निरपेक्षता की नीति का सुसंगत रूप से पालन करते हुए इन्दिरा गाँधी भली-भाँति समझती थी कि सोवियत संघ के साथ मैत्री और व्यापक सहयोग भारत के सच्चे राष्ट्रीय हितों के अनुकूल है और यह मैत्री राष्ट्रो के आम साम्राज्यवादविरोधी संघर्ष, खासतौर पर शान्ति की रक्षा और एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमरीका के देशों मे राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के लिए समर्थन से अविच्छेद्य रूप से जुडी हुई है

'सोवियत सघ के साथ मित्रता पर हमें सन्तोष और गर्व है इन्दिरा गाँधी ने

कहा। "वह समय की कसौटी पर खरी उतरी और कठिनाई के समय में वह विश्वसनीय सहारा रही है।"

सितम्बर, 1982 में अपने पुत्र राजीव के साथ इन्दिरा गाँधी ने एक बार फिर सोवियत सघ की यात्रा की।

विमान के पखों के नीचे मानो रग-बिरगी चादरें ओढ़ी धरती थी। विमान जितना ऊँचा आकाश मे उठता गया, पृथ्वी की सतह उतनी ही अधिक नीरस तथा निर्जन लगने लगी। जीवन के सब चिह्न अदृश्य हो गए। खेतो मे मेहनतकश किसान, शहरों की सडकों पर चहलकदमी, पशु-पक्षी, ध्वनि या गति—सब लुप्त हो गए प्रतीत होते थे। लोगो ने मानो धरती छोड दी हो। कुछ समय बीतने पर हिमालय के निर्जन विस्तार का दृश्य उभरा—तलहटी के वन, पहाड़ी नदियाँ, लोगो के बसेरे नजरों से ओझल हो गए थे।

समय, भूक्षेत्र, द्रव्य, जीवन, अर्थात् वह सब कुछ, जो मनुष्य को घेरे रहता है, अचानक अपने भौतिक लक्षणो से वचित हो गया, गति मानो रुक गई और विमान उस अमूर्त भूसतह के ऊपर हवा में मानो निश्चल-सा लटक गया, जो अपना ठोस स्वरूप, मानव की भावनाओं, विवेक और अस्तित्व के साथ सम्बन्ध खो बैठा।

पार्थक्य की यह अनुभूति कितनी भयावह होती है। आधुनिक प्रविधि पार्थिव जीवन से सम्बन्ध-विच्छेद का भ्रम पैदा करती है, बटन दबाकर नीचे फैले इस अमूर्त विस्तार को नष्ट करने का निर्णय लेने की मनोवैज्ञानिक दुविधा का हल आसान बना देती है।

"दुनिया कठिन संक्रमणकालीन दौर से गुजर रही है, जो भारी खतरे पैदा करता है और हमारे सामने जटिल समस्याएँ उपस्थित करता है," मास्को क्रेमलिन मे प्रीतिभोज के समय अपने भाषण मे इन्दिरा गाँधी ने कहा। "पर इसके साथ ही यह बडी सम्भावनाओं का भी काल है, यद्यपि यह मानने के लिए साहस की आवश्यकता है। इस सम्बन्ध में व्ला. इ. लेनिन के कथन को याद करना उचित होगा, जिन्होने कहा था कि हम इतिहास से वर्तमान में और आशिक रूप में भविष्य की ओर कदम उठाते है।"

इन्दिरा गाँधी को भारत से जिन्दगी की तरह और जिन्दगी से भी अधिक प्यार था। लेकिन दुनिया मे अपने देश की समुचित भूमिका तथा स्थान के बिना, भारत के सच्चे मित्र—सोवियत संघ—के बिना वह अपनी मातृभूमि की कल्पना नहीं कर सकती थी। लोगो की तरह देश भी अकेले नहीं रह सकते, अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय तथा सहयोग से अलग नही हो सकते है। यह न केवल मानव वश का प्राकृतिक गुण, वरन् उसके अस्तित्व का अर्थ, उसके सुख का स्रोत भी है।

"बचपन से मैंने अक्टूबर क्रान्ति और आपके देश में बन रहे नये समाज के बारे में सुना और पढ़ा था केन्द्रीय सोवियत टेलीविजन पर भाषण देते हुए उन्होंने कहा अमर रूसी लेखकों की रचनाओं में जिनके अनुवाद मैंने पढे और आपके

सगीत मे मुझे अत्यधिक रुचि थी...।"

भारत और उसकी जनता के प्रति सोवियत लोगो की हार्दिक भावनाओं को जानते हुए इन्दिरा गाँधी ने उनके सामने अपने विचार, आकांक्षाएँ और चिन्ताएँ खुलकर व्यक्त की।

"क्रान्ति और स्वाधीनता--केवल शुरूआत ही है, उनके फल सिर्फ निरन्तर परिश्रम के परिणामस्वरूप प्राप्त होते है। भारत गणराज्य के प्रथम प्रधानमन्त्री मेरे पिता जवाहरलाल नेहरू ने सभी भारतवासियो का आह्वान किया था कि वे 'नये भारत के निर्माण की रोमाचकारिता' से प्रेरित हो।

"हमने देशव्यापी पैमाने पर नियोजन कार्य का आपका अनुभव अपनाया, मगर अपनी वस्तुस्थितियों के अनुरूप उसे बदल दिया है। हमने अथक परिश्रम किया, विशाल बॉध खडे किए है, धातुकर्म कारखाने, रसायन उद्योग के केन्द्र, इंजीनियरिंग उद्यम बनाए है, लाखो युवा लोगो को वैज्ञानिक-तकनीकी शिक्षा दी है। तकनीकी विशेषज्ञों की सख्या की दृष्टि से आज भारत केवल आपके देश और सयुक्त राज्य अमरीका के पीछे है।"

इन्दिरा गाँधी ने गर्व के साथ बताया कि भारत में अनाज का उत्पादन बहुत बढ गया और अब अनाज का आयात करने की जरूरत नही रही, लेकिन प्रधानमन्त्री ने स्वीकार किया कि "यह हासिल करके हमने अपने समस्याओ का समाधान करना अभी शुरू ही किया है। हमें जनता की खुशहाली का स्तर इतना ऊँचा करने के लिए कि प्रत्येक परिवार को आवश्यक न्यूनतम खाद्य पदार्थ, चिकित्सा सेवा तथा शिक्षा प्राप्त हो, अभी बहुत लम्बा सफर तय करना है।"

द्विपक्षीय सहयोग के प्रश्नों के अलावा, विश्व शान्ति को बनाए रखने तथा सुदृढ बनाने की दो देशो के नेतागण की चिन्ता मास्को में हुए परामर्शो तथा विचार-विनिमय का मुख्य विषय थी।

इन्दिरा गॉधी को पुन· विश्वास हुआ कि मास्को के शासनाधिकारी शान्ति को विश्व के राष्ट्रो की सर्वोपरि निधि मानते हैं और सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी शान्ति को सोवियत संघ के मजदूरों तथा सभी श्रमिकों का प्रमुख लक्ष्य समझती है, जिनके हितो की वह संरक्षक है।

क्रेमलिन मे हुई वार्ताओं के बाद इन्दिरा गॉधी ने कहा--"आपके नेताओ के साथ बातचीत ने एक बार फिर दिखा दिया कि हम सभी विश्व शान्ति तथा राष्ट्रो की मैत्री के शुभाकाक्षी हैं। सोवियत संघ और भारत की राजनीतिक प्रणालियॉ भिन्न है। आपकी अर्थव्यवस्था अग्रणी और हमारा अर्थतन्त्र विकासमान है। एक गुटनिरपेक्ष राज्य होने के नाते भारत चाहता है कि पश्चिम, पूर्व, उत्तर तथा दक्षिण मे विभाजित विश्व में विभिन्न चिन्तनधाराओं का सगम हो।

"हम चिन्ताजनक घड़ी में रह रहे हैं विश्व के कई क्षेत्रों में शान्ति के लिए खतरा मौजूद है भारत और सोवियत सघ की सरकारें शान्तिपूर्ण पहलें करती हैं

हमारे देशो की जनता तथा सभी अन्य देशो के जनगण की आशाएँ-आकाक्षाएँ उनमे प्रतिबिम्बित होती है। दुनिया के एक प्रमुख राज्य सोवितय संघ को भविष्य में भी टकरावो का रास्ता बन्द करने और शान्ति की दिशा में निर्णायक अभियान शुरू करने की अपनी कोशिशें जारी रखनी चाहिए। सैन्यीकरण के बढते हुए पैमाने और विशेष रूप से परमाणविक हथियारों तथा युद्ध के अन्य बर्बर साधनों के उपयोग के खतरे से हम चिन्तित हैं। राष्ट्रों के विकास के स्तरो में बढ़ते हुए अन्तर को देखकर भी हम परेशान है। पर्यावरण का प्रदूषण और वनस्पति तथा जीव-जन्तु जगत् का नाश देखते हुए हमे बडा दुःख होता है। इन बुराइयों के विरुद्ध संघर्ष करना आवश्यक है।

"हमे आशा है कि अपनी और भावी पीढियो की खातिर अपने बच्चो तथा उनकी सन्तानों की खातिर सुखमय जीवन के निर्माण की आपकी योजनाएँ सफल होकर रहेगी," अपने भाषण के अन्त मे इन्दिरा गॉधी ने कहा और भारत-सोवियत दोस्ती जिन्दाबाद का नारा बुलन्द किया।

प्रतिष्ठित भारतीय अतिथियों ने दो सोवियत जनतन्त्रों की राजधानियाँ—कीयेव और ताल्लिन की यात्रा की। हर जगह स्नेहपूर्ण मुलाकातें, भाषण और हार्दिक बातचीतें हुई।

सोवियत संघ और भारत की मैत्री मजबूत बन रही थी, जो एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि थी, अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर स्थिरता को सुनिश्चित करने का एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व थी।

"सुरक्षा की गारण्टी कैसे की जाए ?" इन्दिरा गॉधी ने एक बार इस यात्रा के दौरान सवाल किया और स्वयं जवाब दिया—"शत्रुता नही, बल्कि मित्रता इसकी अधिक प्रभावी गारण्टी है। दोस्ती सबसे मजबूत कवच है।"

"सदियो पहले दार्शनिक पास्कल ने कहा था—'किसी मनुष्य को मुझे मारने का अधिकार केवल इसलिए प्राप्त होता है कि वह जलाशय के उस पार रहता है और उसके स्वामी का मेरे स्वामी से झगड़ा हो गया, हालॉकि हमारे बीच कोई झगड़ा नहीं हुआ। इससे अधिक हास्यजनक और क्या हो सकता है ?' आज दुनिया मे अधिकाधिक लोग ये शब्द दोहराते हैं।"

पृथ्वी पर मानव वंश की पीढियों का अनवरत बदलाव होता रहता है। एक पीढ़ी दूसरी पीढी को अपना अनुभव और ज्ञान सौंपती जाती है। आज की युवा पीढ़ी का सर्वोच्च दायित्व पृथ्वी को परमाणविक तथा पारिस्थितिकी महासंकट से बचाना है। युवजन को ही मानव समाज की साम्राज्यवाद के अभिशाप तथा वैचारिक दोषो के कुप्रभाव से रक्षा करना है, मानव के मुख्य नैसर्गिक गुण—मानवीयता—को बनाए रखना है।

इन्दिरा गॉधी को विश्वास था कि दार्शनिक-नैतिक त्रयी—"मनुष्य-मानवीयता-मानव-जाति"—मे मानव सभ्यता के भविष्य का गहन अर्थ निहित है। अपने विवेक तथा अपने सामाजिक स्वरूप के माध्यम से मानव जो पृथ्वी में सर्वाधिक

मूल्यवान है, अपनी अद्वितीय सम्भावनाओ को साकार रूप देता है। परन्तु साम्राज्यवाद विश्व जन-समुदाय के मानवतावादी स्वरूप को विकृत करता है और युद्धो तथा अन्तर्राष्ट्रीय अत्याचार के दूसरे रूपों को मानव-जाति द्वारा ठुकराए जाने के रास्ते मे मुख्य बाधक है।

इन्दिरा गॉधी यह मानती थी कि अन्तर्राष्ट्रीयतावाद और भारतीय तथा सोवियत युवजन की मैत्री मे दुनिया के शान्तिपूर्ण भविष्य, पिछडेपन, गरीबी और राष्ट्रीय सकीर्णता तथा अलगाव की समस्याओं का समाधान हो सकता है।

कीयेव राजकीय विश्वविद्यालय के छात्रो के साथ मुलाकात के समय उन्होने कहा—"महासागर द्वीपों को एक-दूसरे से अलग करता है, लेकिन वही उन्हे आपस मे और महाद्वीपो से जोडता भी है। हमे अपनी शक्ति-सामर्थ्य को कमजोर ओर असमर्थ जनता की सेवा में लगाना चाहिए। क्या गरीवी को देखकर हम अविचलित रह सकते हैं ? क्या युद्ध की काली घटाओ को घिरते देखकर हमारे लिए शान्ति की खातिर आवाज बुलन्द न करना सम्भव है ? हमारा न केवल अपने प्रति, बल्कि दूसरो के प्रति, न केवल अपनी पीढ़ी, वल्कि आने वाली पीढियों के प्रति भी कर्तव्य है ..जिसे हमे निभाना है...।

"बुद्धिमत्ता ज्ञान तथा अनुभव, अपने और दूसरों के ज्ञान तथा अनुभव का सम्मिश्रण है, उसकी बदौलत देश-काल तथा अस्तित्व के पार झॉकना सम्भव है। केवल तभी लोग अपनी तथा सामाजिक समस्याओ से निबट सकेगे, केवल तभी उन्हे वह मनोबल और गतिमान विवेक प्राप्त होगा, जो अनपेक्षित, विपम तथा खतरनाक घटनाओं का सामना करने के लिए आवश्यक है।"

इन्दिरा गॉधी विश्व के भविष्य के बारे में ज्यादा-से-ज्यादा चिन्तित और बेचैन रहती थी—संयुक्त राज्य अमरीका का नया प्रशासन अन्तर्राष्ट्रीय तनाव-शैथिल्य के उस अमूल्य भवन को गिराने लगा, जिसकी दीवाले सत्तर के दशक में सोवियत सघ तथा अन्य देशो के कठिन शान्ति-प्रयासो के फलस्वरूप खड़ी हुई थीं। परमाणविक गतिरोध की स्थिति में यह गारण्टी नहीं रह गई थी कि विश्व राजनीति रूपी शतरज के खेल में पहले की तरह किसी की हार-जीत नही होगी। उसमें सभी राष्ट्रों, समूची मानव-जाति की हार अनिवार्य थी। राकेट-नाभिकीय हथियारों की अनियन्त्रित होड, उन्हें अन्तरिक्ष में तैनात करने की योजनाओं और पश्चिमी दुनिया की कूटनीति की चिन्तन प्रणाली के ही सैन्यीकरण ने मानव-जाति की सामूहिक बुद्धि को संकट की ॲधेरी बन्द गली मे पहुँचा दिया था। आत्मरक्षा की अपनी मूल प्रवृत्ति को वह गॅवा बैठी प्रतीत होती थी।

इन्दिरा गॉधी ने देखा कि नाभिकीय महानाश का वास्तविक खतरा है, परन्तु उन्होंने अपना ऐतिहासिक आशावादी दृष्टिकोण नहीं खोया ससार में

महाप्रलय' के भय के कारण चुपचाप नही बैठा जा सकता। फिर भी केवल आशावादिता ही काफी नहीं होती। निःशस्त्रीकरण और शान्ति के लिए प्रयासों मे दुगुनी-तिगुनी वृद्धि करना आवश्यक है। आइए, आशा करे कि खतरे की घण्टी प्रत्येक को सही ढग से सोचने-समझने के लिए प्रेरित करेगी, उन लोगों की वास्तविकता का साक्षात् कराएगी, जो नाभिकीय अस्त्र-शस्त्रो के उत्पादन से मुनाफा कमाने के लोभ में मानव-जाति को सर्वनाश के अगाध गर्त में पहुँचा रहे हैं। जिस गतिरोध की स्थिति मे विश्व जन-समुदाय ने अपने को फँसा पाया है, उससे बाहर निकला जा सकता है और अवश्य निकलना चाहिए।

जोखिम-भरी तथा निर्णायक 20वीं सदी से, जो दो विश्व युद्धो और सामाजिक तथा मुक्ति क्रान्तियों की सदी रही है, गुजरने के बाद मानव-जाति 21वीं सदी की कृतज्ञ पीढियो को अपनी महानतम उपलब्धि—विश्व शान्ति—सौपेगी। और तभी पृथ्वी समग्र रूप मे धरतीवासियो का सच्चा घर बनेगी और वे उसके सच्चे भक्त, शान्ति के उत्साही सरक्षक बनेगे। मनुष्य की सृजनात्मक प्रतिभा की अभूतपूर्व उन्नति का समय आएगा और वह संसार का विनम्र और गौरवान्वित स्वामी बनेगा। पृथ्वी पर सुख-समृद्धि का रामराज्य स्थापित होगा।

"आइए, निराश और उदास न हो," इन्दिरा गॉधी ने आह्वान किया। "जैसा कि यूरिपिडीज ने कहा था—

'जीवन में अनवरत आते है उतार-चढ़ाव
सच्चा वीर वही है, जो भयकर विपदा
के समय मे आस्थावान् रहता है
केवल कायर ही हतोत्साहित होकर
निर्णय नही कर पाता. .' "

मार्च, 1983 में दिल्ली में गुटनिरपेक्ष राज्यो तथा सरकारो का सातवॉ शिखर सम्मेलन हुआ। उसमे इन्दिरा गॉधी गुटनिरपेक्ष आन्दोलन की अध्यक्ष बनीं। "मै वर्तमान काल के कुछ सर्वप्रमुख नेताओ की उत्तराधिकारी हूँ और विश्वव्यापी पैमाने के राजनेता, क्रान्तिकारी सघर्ष के प्रतिष्ठित सेनानी फिदेल कास्त्रो से यह पद ग्रहण कर रही हूँ," उन्होने कहा।

सम्मेलन में भाग लेने वालों और समग्र रूप से सारी दुनिया के लोगों को सम्बोधित करते हुए उनका स्वर दृढ और विश्वासोत्पादक था। उन्होंने पश्चिमी राज्यो से उदारता अथवा परोपकार की मॉग नहीं की, बल्कि साधारण समझदारी का परिचय देने का आग्रह किया।

"विकास, स्वाधीनता, नि शस्त्रीकरण और शान्ति घनिष्ठ रूप से अन्तर्सम्बन्धित हैं," उन्होने निष्कर्ष निकालते हुए कहा। "क्या नाभिकीय अस्त्रो के बने रहने की हालत मे शान्ति कायम हो सकती है ? जैसा कि मेरे पिता ने कहा था यदि शान्ति नहीं होगी तो विकास के बारे में हमारे सभी सपने धूल में मिल जाएँगे

"शान्ति की अभिलाषा सार्विक है। वह उन देशो के लिए भी लाक्षणिक है, जो नाभिकीय अस्त्रो का निर्माण करते हैं, तथा उनके लिए भी, जिनके क्षेत्र मे ये हथियार रखे जाते हैं। गुटनिरपेक्षता आन्दोलन शान्ति की रक्षा के हेतु इतिहास मे सबसे बडा अभियान है...।

"हमारे युग का विरोधाभासपूर्ण लक्षण यह है कि जबकि जमाने का स्वरूप हथियारो की तरह ज्यादा-से-ज्यादा जटिल बनता जा रहा है, मानव का विवेक गुजरे जमाने की कुछ पुरानी मान्यताओ से छुटकारा नहीं पा सका है। यों तो उपनिवेशवाद का जमाना लद चुका है, लेकिन आधिपत्यकारी प्रवृत्ति अभी तक बनी हुई है। नवउपनिवेशवाद विभिन्न रूप धारण करके अपना काम कर रहा है, वह टेक्नोलाजी, सूचना-प्रसार, व्यापार और सस्कृति का उपयोग करता है। उसका मुकाबला कर सकने के लिए साहस और ईमानदारी की जरूरत है...।

"अस्तित्व केवल सहअस्तित्व की परिस्थितियों मे सम्भव है।"

युद्ध और शान्ति की समस्या इन्दिरा गाँधी के अन्तर्राष्ट्रीय कार्यकलाप का मूल तत्त्व थी। पश्चिमी जर्मनी के समाचार-पत्र 'फ्रांकफूर्तेर अलगेमाइने' के संवाददाता के यह पूछने पर कि इस समय उनका ध्यान किस विषय पर केन्द्रित है, उन्होंने जवाब दिया—"मै विश्व की स्थिति से चिन्तित हूँ।"

इसके फौरन बाद उन्होंने एक नयी महत्त्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय कार्रवाई शुरू की—अर्जेंटाइना, तंजानिया, भारत, मेक्सिको, यूनान और स्वीडन—इन छ देशों के राज्याध्यक्षों तथा प्रधानमन्त्रियों ने परमाणविक शक्तियो से नाभिकीय हथियारो के परीक्षण बन्द करने, उनके निर्माण, विकास और तैनाती को रोकने तथा उनके उपयोग से बिना शर्त इन्कार करने की सयुक्त अपील जारी की।

छ देशों की इस घोषणा का विश्व जनमत ने जोरदार स्वागत किया और उसे व्यापक समर्थन प्राप्त हुआ। लेकिन, जैसा कि श्रीमती गाँधी ने कटुतापूर्ण स्वर मे कहा, खेदवश, सोवियत सघ को छोडकर किसी भी अन्य नाभिकीय शक्ति ने स्पष्ट रूप से सकारात्मक उत्तर नही दिया है।

फिर भी वह कठिनाइयो से हताश नहीं हुई और अन्त तक सघर्ष करने के लिए तैयार थीं—"कुछ दूसरी सरकारों के हठपूर्ण रवैये की वजह से हमें बहुत सारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। इन सरकारो को विश्वास दिलाना जरूरी है कि हमारी अपील को दुनिया के राष्ट्रों की माँग समझना चाहिए।"

इस उत्साहपूर्ण तथा ओजस्वी भारतीय नारी का सशक्त स्वर, उनकी उज्ज्वल और जीवनदायी मुस्कान लोगों के मन में दृढ़ विश्वास भरती थी—उनमें अपनी शक्ति मे, अच्छाई में और विवेक में दृढ़ विश्वास उत्पन्न करती थी। इन्दिरा गाँधी का नाम देश-देश मे फैल गया, बहुत-से लोगो ने शान्ति की आम आकांक्षा से उनका नाम जोड़ते हुए अपनी नवजात बेटियों को इन्दिरा नाम दिया

श्रीमती गाँधी की विश्व प्रसिद्धि और के कारण उनके व्यक्तित्व में

प्रेस ने सदा बड़ी दिलचस्पी ली। पत्रकार सब कुछ—उनकी रुचियाँ, आदतें, भावनाएँ—जानने को उत्सुक रहते थे। तरह-तरह के सवाल उनसे पूछे जाते थे—अनपेक्षित, उद्दण्डतापूर्ण, सीधे-सादे, भोले-भाले और नि.सन्देह उकसावे-भरे भी।

गुटनिरपेक्ष देशो के राज्याध्यक्षो तथा प्रधानमन्त्रियों के शिखर सम्मेलन के समय ब्रिटिश दैनिक 'डेली एक्सप्रेस' के संवाददाता ने इन्दिरा गाँधी से पूछा कि वह सुबह कितने बजे उठती हैं। प्रधानमन्त्री ने धैर्यपूर्वक उत्तर दिया—''इन दिनों, गुटनिरपेक्ष देशों के शिखर सम्मेलन के समय, प्रातः चार बजे से पहले घर पहुँचने का एक बार भी मौका नही मिला। चार बजकर पाँच या दस मिनट पर मैं सो जाती हूँ ओर पौने आठ बजे तक गहरी नींद मे सोयी रहती हूँ...।''

''सदा इतनी आकर्षक और चुस्त-दुरुस्त नजर आने में आप कैसे सफल होती है ?''

''इस प्रशसा के लिए धन्यवाद,'' इन्दिरा गाँधी ने मुस्कराते हुए कहा। ''काश कि मुझे भी ऐसा लगता !''

''क्या एक असाधारण सवाल पूछने की इजाजत है ?'' पत्रकार ने पूछा। ''लोग कहते हैं कि आपकी केशराशि मे यह रजत लट रँगने की कला की देन है .।''

''नही, मैंने कभी भी अपने बाल नही रँगे।''

''और यह लट कैसे निकल आई ?''

''एकदम नहीं—बाल पर बाल,'' इन्दिराजी मुस्कराई।

''आपको बहुत बड़ा कार्यभार सँभालना पड़ता है। क्या कभी आपने मन-ही-मन अपने से यह नहीं कहा—'बस, काफी हो गया। तुम काफी काम कर चुकी हो। अवकाश ले लो' ?''

प्रधानमन्त्री ने ऑखें नीची कर दीं, थोडा सोचकर जवाब दिया—''अवकाश लेकर कहाँ जाऊँगी ? ऐसी कोई जगह नही, जहाँ मैं छिप सकूँ। जब पिताजी जिन्दा थे, मैंने कहीं जाकर रहने की सोची थी। लेकिन उस वक्त भी मै बहुत व्यस्त रहती थी। वह जहाँ कहीं भी क्यों न जाएँ, हर जगह समस्याएँ उठ खडी होती, स्थानीय लोग मिलने आते.. मेरा स्वभाव ही ऐसा है कि मैं सब कुछ समझने की कोशिश करती हूँ... !''

कुछ विदेशी समाचार-पत्र इन्दिरा गाँधी को प्रश्न-पत्र भेज देते थे और उनकी जिज्ञासा-पूर्ति से इन्कार करना उन्हे अनुचित लगता था। राजनीतिज्ञो को चाहे-अनचाहे प्रेस के हितो को ध्यान में रखना पडता है।

''आपको कहाँ रहना पसन्द है ?''

''पहाड़ो में, बड़े छायादार पेड़ों के बीच, झरने के निकट। जाहिर है कि भारत मे।''

'पूर्ण सासारिक सुख की आपकी क्या है ?'

"वह नही होता, लेकिन सुख के क्षण मेरे जीवन मे भी आए थे।"

"कौन-सी कमजोरियों को आप माफ करने को तैयार होती है ?"

"उन्हें, जिनका कारण संकोच होता है," इन्दिरा गाँधी ने कहा, क्योंकि अपनी नैसर्गिक सकुचाहट से पार पाने के लिए उन्हे स्वय भी बहुत कोशिश करनी पडी थी।

"नारी के किन गुणो की आप सबसे अधिक कद्र करती है ?"

"सच्चाई और दूसरे लोगो को समझने तथा उनकी मदद करने की इच्छा।"

"लोगो मे कैसा चारित्रिक गुण आपको सबसे ज्यादा अच्छा लगता है ?"

"पुरुषो और नारियो में—नैतिक, आत्मिक और शारीरिक साहस।"

"आप क्या बनना चाहती ?"

"मै खुद," इन्दिरा गॉधी मुस्कराई।

"किस चीज से आपको सबसे ज्यादा नफरत है ?"

प्रधानमन्त्री की मुस्कान लुप्त हो गई—"नीचता, पाखण्ड और लालच।"

"ऐतिहासिक हस्तियो मे से किससे आप घृणा करती है ?"

"हिटलर से, जिसकी मनोविकारपूर्ण महत्त्वाकाक्षा, परपीडन प्रवृत्ति और नृशस कार्रवाइयों के हम साक्षी रहे।"

पत्रकार के इस सवाल के जवाब मे कि उनके लिए सबसे भारी विपत्ति क्या होगी, उन्होने कहा—"वह सब कुछ, जिससे भारत की स्वतन्त्रता और अखण्डता का खतरा हो।"

यह खतरा कपोलकल्पित नहीं, वास्तविक था। पाकिस्तान की सीमा से लगे पजाब राज्य मे सिख जनता के एक भाग में चिन्ताजनक उत्तेजना बढ़ रही थी।

बडी संख्या में विवेकहीन हत्याओं तथा खून-खराबी, सिख उग्रवादियो द्वारा 'हिट लिस्टो' के, जिनमे पदाधिकारियो, शासक पार्टी के सक्रिय कार्यकर्ताओं, कम्युनिस्टो, विख्यात जन-नेताओ के नाम शामिल थे, वितरण के परिणामस्वरूप पंजाब मे अस्थिरता और भय का वातावरण फैल गया था। आतकवादियों के बम दिल्ली मे भी फटने लगे थे।

इन्दिरा गाँधी ने पंजाब में और उसके इर्द-गिर्द पैदा हुई परिस्थिति का गहन अध्ययन किया, सिख समुदाय के प्रमुख प्रतिनिधियो तथा विभिन्न पार्टियो के नेताओ से बातचीत की, मन्त्रिमण्डल की बैठकों में विचार-विनिमय किया, वाशिंगटन, लन्दन, ओटावा, बोन और इस्लामाबाद से भारतीय राजदूतों द्वारा भेजी गई रिपोर्टो का विश्लेषण किया, गुप्तचर सेवाओं की सूचनाएँ पढी व सुनी। इसमें कोई शक नहीं रह गया था कि पंजाब में हिसा और द्वेष भारत की एकता के विरुद्ध गम्भीर साजिश का परिणाम हैं, जिसे देश के बाहर से बढावा दिया जाता है।

सिखों का समुदाय 'उत्पीड़ित' नहीं है, वह भारत मे एक सबसे खुशहाल समुदाय है। सिखों को सरकार तथा शासक पार्टी में कई महत्त्वपूर्ण पद प्राप्त है भारत के राष्ट्रपति पद पर ज्ञानी जैल सिह थे जो स्वय सिख थे सेना में उनका

अनुपात खासतौर से बडा है। देश की आबादी मे सिखो का हिस्सा केवल 2 प्रतिशत है, परन्तु सेना मे सिपाहियो और मुख्यतया सैनिक अफसरों के पदों पर आसीन लोगो मे उनका भाग 11 प्रतिशत है।

भारत में विश्व के सभी मुख्य धर्म प्रचलित हैं, बहुत-सी भाषाएँ बोली जाती हे। देश में नाना लिपियाँ है, विभिन्न भागों मे संस्कृति, रहन-सहन, वेशभूषा, पाक कला की अपनी-अपनी खास परम्पराएँ है।

परन्तु इन्दिरा गॉधी को विश्वास था कि वह विविधता सदियो से चली आई देश की एकता को कमजोर नही बनाती है। ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन कायम होने से पहले भी भारत एकजुट था, हालाँकि उसकी भूमि पर बहुत-से छोटे राज्य मौजूद थे। 'भारत' विषयक अवधारणा शताब्दियो से विद्यमान एक ऐतिहासिक वास्तविकता है।

बीती सदियों मे कई बार भारत पर विदेशी हमलावरों ने आक्रमण किए, राजा-रजवाड़ो के बीच झगडो की वजह से उसे भारी नुकसान पहुँचा, लेकिन आम जन-परम्पराएँ हमेशा बनी रहीं, अनेकता में अद्‌भुत एकता विद्यमान रही। सारे हिन्दुस्तान उपमहाद्वीप मे भारतीय सस्कृति व्याप्त थी और देश का कोई भी अग पराया नही था। दक्षिण में कन्याकुमारी से लेकर उत्तर में हिमालय तक एक जैसे विचारो का प्रसार था और यदि किसी एक स्थान में आफत आती. तो सारा देश उसकी पीडा महसूस करता। जवाहरलाल नेहरू ने इन्दिरा से कहा था—"हमारे देश ने भारत-माता का रूप धारण किया है, वह वृद्धा, पर युवा नजर आने वाली सुन्दरी के रूप में सामने आता है, जो एकाकी तथा उदास है, विदेशी उत्पीड़कों के कुचक्रों से वह बहुत पीडित है और अपने बच्चो से उसकी रक्षा करने का आह्वान करती है।"

भारत आजाद हुआ और शान्तिपूर्ण विदेश नीति को अमल मे लाता आ रहा है। उधर, साम्राज्यवादी क्षेत्रों ने राष्ट्रीय मुक्ति तथा सामाजिक प्रगति का पक्ष-पोषण करने वाले महान् एशियाई देश की एकता को भंग करने और इस प्रकार शान्ति अभियान की एकता के समर्थक तथा सोवियत संघ के मित्र के रूप मे उसकी भूमिका पर चोट करने का निश्चय किया।

पजाब के क्षेत्र मे 'स्वाधीन राज्य' खालिस्तान कायम करने की भारतविरोधी योजना भारत के बाहर विदेशों मे बनाई गई। महासागर पार से अपने को 'खालिस्तान का प्रवासी राष्ट्रपति' घोषित करने वाला चौहान भी मैदान में उतरा। उसका मददगार भारतीय मूल का अमरीकी निवासी ढिल्लों बन गया। उन्हे धन मुहैया किया गया, उनके वक्तव्य समाचार-पत्रो मे छपने तथा रेडियो व टेलीविजन द्वारा प्रसारित किए जाने लगे, संयुक्त राज्य अमरीका के विदेश मन्त्री अलेक्साडर हेग तथा कांग्रेस की विदेशी सीनेट समिति के अध्यक्ष चार्ल्ज पेर्सी ने उनसे भेंट करने के लिए समय निकाला, वे पाकिस्तान के सदर जिया उल हक से भी मिले। और फिर वही हुआ, जो नवस्वतन्त्र देशों के विरुद्ध विध्वसक कार्रवाइयो की पटकथा के अनुसार होता है और तोड-फोड प्रचार तथा विध्वस के 'विशेषज्ञों'

को ट्रेनिग देने तथा भारत मे पहुँचाने का काम शुरू हुआ।

सिखो का धर्मस्थल—अमृतसर का स्वर्ण मन्दिर—आधुनिक हथियारों का अस्त्रागार बन गया, जो तस्करी के गुप्त रास्तो से वहाँ पहुँचाए गए। स्वर्ण मन्दिर उग्रवादियों का सदरमुकाम और किला बन गया।

"स्वर्ण मन्दिर के फाटक पर कभी पट्टी लगी थी, जिस पर लिखा होता था कि छडी व छाता जैसी नुकीली वस्तुओं सहित मन्दिर में प्रवेश करना मना है," इन्दिरा गाँधी क्रुद्ध होकर बोली। "इसलिए मेरी समझ में नही आता कि अपने को सिख धर्म के प्रतिपादक मानने वाले लोगों ने स्वर्ण मन्दिर परिसर मे इतने सारे हथियार जमा करने की भला क्यों और कैसे इजाजत दी ? एक और सवाल भी मन मे पैदा होता है—ये हथियार उन्होने किसलिए जमा कर रखे हैं ? किस तरह और किसके खिलाफ वे ये हथियार इस्तेमाल करने का इरादा रखते हैं ?"

2 जून, 1984 की शाम को इन्दिरा गाँधी ने राष्ट्र के नाम सन्देश जारी किया। उन्होने बताया कि वार्ता तथा बुद्धिसगत रियायतों के माध्यम से पंजाब की स्थिति का नियमन करने के सरकार के सभी प्रयास निष्फल हुए। पजाब मे पृथकतावादी आन्दोलन की बागडोर धर्मांध नेताओं तथा आतकवादियों ने अपने हाथ में ले ली है।

ऐसी हालत मे केन्द्र सरकार की अनुमति से पजाब के राज्यपाल ने भारतीय सेना के दस्तों को स्वर्ण मन्दिर घेरने का आदेश दिया। 'ब्लू स्टार' कार्रवाई शुरू हुई।

स्वर्ण मन्दिर के बडे परिसर मे कई इमारतें, साथ ही दो बुर्ज शामिल हैं। आतंकवादियो ने उन्हे मजबूत मोर्चाबन्दी का रूप दे दिया था। लाउडस्पीकरो के जरिए स्वर्ण मन्दिर छोड़ने की सैनिक कमान की अपीलें प्रसारित की गई, ताकि मन्दिर को नुकसान न पहुँचे। लेकिन इसके जवाब में सबमशीनगनों से गोलियाँ चलीं। सशस्त्र मुठभेड हुई, खून बहा। 'ब्लू स्टार' कार्रवाई सफल रही। आम जनता ने स्वर्ण मन्दिर से आतकवादियों को खदेडने और भारत की एकता को तोडने की कोशिशो को नाकाम करने के लिए सरकार के दृढ़ उपायों का स्वागत किया।

हर प्रकार की हिंसा से इन्दिरा गाँधी को सख्त नफरत थी और इस रक्तपात से उन्हें गहरा सदमा पहुँचा। मगर क्या प्रधानमन्त्री के रूप में वह मानसिक दुर्बलता प्रदर्शित कर सकती थीं और राष्ट्रीय आदर्शो के आगे व्यक्तिगत भावनाओ को तरजीह दे सकती थी ? क्या नारीसुलभ करुणा का भाव दिखाना और गणराज्य के हितों तथा भारत के भविष्य को खतरे में डालना उनके लिए सम्भव था ? नहीं, उन्होंने दृढ़ आत्मबल का परिचय दिया। कालान्तर मे स्वय इतिहास अपना निर्णय देगा।

12

रात्रि और अनन्तकाल

30 अक्टूबर, 1984 को उड़ीसा की लम्बी और थकान-भरी यात्रा के बाद प्रधानमन्त्री इन्दिरा गाँधी दिल्ली वापस आई।

वह सदा देश यात्रा करती रहती थी। इधर, कुछ समय से तो उन्होने बिल्कुल आराम नही किया था, बराबर दौरे पर रहती, प्रतिदिन विशाल जन-सभाओ मे भाषण करती, प्रेस-सम्मेलनो और भेटवार्ताओं में प्रश्नो के उत्तर देती, आम लोगों से बातचीत करती। वह जनता को जल्द कुछ कहने की जल्दी में थी, मानो उन्हें कुछ भूल जाने या अपने पास समय कम होने की आशंका रही हो।

1, सफदरजग रोड पर अपने घर पहुँचकर प्रधानमन्त्री ने स्नान किया, ढीला-ढाला गाउन पहना और अपने को तरोताजा महसूस करते हुए सारे दिन मे पहली बार बरामदे में एक आरामकुर्सी पर बैठकर आराम किया।

दिन मे अच्छी-खासी धूप थी, किसानो के खेतो के ऊपर सूरज चमकता रहा। लेकिन अब अँधेरा छा रहा था, देखते-देखते सितारे आसमान मे जगमगाने लगे थे और अव चाँद भी प्रकट हो गया था।

इन स्निग्ध क्षणों को नीद मे बिताने को मन नही करता था। दिल्ली मे दिन के उज्ज्वल आसमान मे नहीं, बल्कि ऐसी ही रातों में, जब आकाश बिल्कुल अन्धकारमय हो जाता है, ब्रह्माण्ड की गहराइयाँ खुलती जाती है। ऐसे समय में मन मे तुच्छ और साधारण बातो के बारे में नहीं, बल्कि शाश्वत सत्य, अस्तित्व के सर्वोच्च अर्थ के बारे मे विचार उत्पन्न होते है।

अनन्त ब्रह्माण्ड मे खोया हुआ द्वीप—पृथ्वी ग्रह—मानव-जाति का कर्मक्षेत्र है। लोग रहस्यमय सूत्रों से ब्रह्माण्ड से जुड़े होते है। पृथ्वी मानव-जाति को अपनी गोद मे लिये डुलाती है, झीलो-नदियों के स्वच्छ जल से उनकी प्यास बुझाती है, अनाज, साग-सब्जियाँ और स्वादिष्ट फल खिलाती है। पृथ्वी पर बसे ढोर-डगर लोगो की सेवा करते हैं प्राकृतिक पर्यावरण वनों महकती चरागाहों भव्य से

मे विचरती रहती है। उसके हरे महाद्वीप नीली जलराशि से घिरे हुए है। स्वच्छ, कोमल रगो मे रँगी, ध्रुव क्षेत्रों पर जमा हुई श्वेत हिम राशियों से सुशोभित हमारी पृथ्वी अतिसुन्दर और ब्रह्माण्ड मे अनन्य है।

कुछ समय पहले इन्दिरा गॉधी ने प्रथम भारतीय अन्तरिक्षनाविक राकेश शर्मा की रोचक कहानी सुनी, जिन्होंने सोवियत साथियों सहित अन्तरिक्षीय यात्रा की थी। उनकी कहानी सुनते हुए इन्दिरा गॉधी के मन में अनन्त अन्तरिक्षमण्डलो मे एक छोटे प्यारे द्वीप के रूप में हमारी पृथ्वी का विम्ब उभरा था।

कुछ लोग यह कहते हुए गलती करते हैं कि इन्दरा गॉधी ने अपने पिता का ससार के प्रति काव्यात्मक दृष्टिकोण, उनका भावुक चरित्र विरासत में नही पाया और उनका ध्यान पूरी तरह रोजमर्रा के कार्यो पर केन्द्रित रहा।

उस रात को उनका चिन्तन उन्मुक्त और व्यापक हो गया। दिन-भर उन्होने राष्ट्र के नेता का कार्यभार निभाया, लोगो के सामने फौरी समस्याओं की चर्चा करते हुए उनका सही और स्पष्ट राजनीतिक विवेचन किया और अब एकान्त में वह रूपको एव अन्योक्तियो से परिपूर्ण ठाकुर के काव्य ससार मे प्रविष्ट हुई, जिसमें देवता ओर मनुष्य, धरती और आकाश, नदियॉ और पर्वत, नेकी और बदी, वास्तविकता और कल्पना—ये सब प्रतिभाशाली मानव विवेक के अनन्त और सर्वव्यापी नाटक के पात्र है।

पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के बन्धनों को तोडकर मनुष्य अन्तरिक्षीय ऊँचाइयो पर पहुँच गया। पहली बार वह अपने गृह—पृथ्वी—को दूरी से देख सका और यह देखकर दग रह गया कि वह इतनी बडी नहीं है, जितनी कि पहले प्रतीत होती थी। वह यह समझकर डर गया कि पृथ्वी पर जीवन के लिए आवश्यक स्थितियो का अनुकूल सयोग क्षण-भगुर है। धडकते हुए हृदय अथवा कोमल फूल की तरह पृथ्वी आसानी से आहत हो सकती है।

हालॉकि यह विरोधाभासी लग सकता है, लेकिन सच यह है कि स्वयं मनुष्य ही पृथ्वी पर जीवन के लिए खतरे का मुख्य स्रोत है। अन्तरिक्षीय ऊर्जा के, जो सूर्य और तारो मे धधकती रहती है और जो हाल-हाल तक द्रव्य पदार्थ के परमाणुओ की गहराई में छिपी थी, रहस्यों को जान लेने के बाद मनुष्य ने प्रकृति को सृजनात्मकता पर एकाधिकार से वंचित कर दिया है।

मनुष्य की बुद्धि प्रेम और सृजन के क्षेत्र में सर्वशक्तिमान है, किन्तु दुष्टता, रक्तपात, युद्धो के, जो मानव-जाति की आत्मिक और भौतिक सस्कृति की अमूल्य उपलब्धियों को, उसके सम्पूर्ण इतिहास को वीभत्स रूप से विकृत कर देते है, अधोन्माद में वह त्रासदी और भयावह बन जाती है। क्या घटनाओ से भरपूर हमारी सदी में लोग नव-आविष्कृत ऊर्जा की अद्‌भुत क्षमताओं को समस्त मानव-जाति की सेवा मे लगाने के वास्ते तथा पश्चिमी जगत् के विशिष्ट हलकों को विज्ञान के महान् आविष्कारों का उपयोग केवल अपने को और समृद्ध बनाने तथा दुनिया में आतक

का राज्य कायम करने से रोकने के लिए मिल-जुलकर आवश्यक कार्रवाई करेंगे ? अथवा लोग इतिहास के सबकों की उपेक्षा करते हुए तथा अपनी सतर्कता गॅवाते हुए इन हलकों से अपने को संत्रस्त होने और छले जाने देगे ? क्या वे उन्हे विभिन्न राष्ट्रो के बीच सन्देह के बीज बोने देगे ? नया युद्ध छेड़ने और कम्युनिज्म के विरुद्ध तथा राष्ट्रीय मुक्ति क्रान्तियों के विरुद्ध 'जेहाद' के झण्डे तले मानव-जाति को सर्वनाश के कगार की ओर धकेलने देगे ?

सहस्राब्दियो से धरती मॉ ने बडे प्यार से अपनी स्वतन्त्र सन्तान--मानव-जाति--को पाला-पोसा है। मानव के सुखी जीवन के लिए पृथ्वी पर सब कुछ मौजूद है। अपने परिश्रम के द्वारा और ज्ञान-पिपासा बुझाने तथा सौन्दर्य-बोध करने की अपनी आकांक्षा के द्वारा प्राकृतिक सम्पदा का संवर्द्धन करते हुए लोग शान्ति और मेल-मिलाप के वातावरण में रह सकते हैं। लेकिन पुरातन काल में मासूम और भोले-भाले लोगो के समुदायो में स्वार्थ की घातक भावना जम गई थी और तब से 'शान्ति', 'न्याय' तथा 'समानता' के सिद्धान्त मानव-जीवन के अपरिहार्य नियम नही रह गए। कुछ लोगो ने धन अर्जित किया, तो अन्य लोग निर्धन बन गए और अधिकांश लोगों की गरीबी तथा अधिकारहीनता कुछ लोगों के मालामाल होने की अनिवार्य शर्त बन गई।

सहस्राब्दियो के दौरान किसी भी देश की जनता स्वार्थ के कुप्रभाव से अछूती नही रही। इसके कारण लोग ढेरों कष्ट उठाते हुए, लेकिन फिर भी विनाशकारी युद्ध और नरसहार करते हुए नहीं समझ पाते थे कि इस सामाजिक बुराई के विरुद्ध कैसे सघर्ष किया जाए।

केवल अक्टूबर, 1917 में, जब खूनी विश्व-युद्ध चल रहा था और उपनिवेशो का पुनर्विभाजन करने के लिए यूरोप के विकसित पूँजीवादी राज्य एक-दूसरे की शक्ति क्षीण कर रहे थे, रूस में पूँजीपतियो का प्रभुत्व खत्म कर दिया गया और उत्पादन के साधनों तथा भूमि पर निजी स्वामित्व का अन्त हो गया।

"जिस वर्ष मे तुम पैदा हुई, सन् 1917 का वह वर्ष," ब्रिटिश औपनिवेशिक जेल से अपनी पुत्री इन्दिरा को भेजे गए पत्र में जवाहरलाल नेहरू ने लिखा--"इतिहास मे एक सर्वाधिक विलक्षण वर्ष था, जब उत्पीड़ित गरीब लोगो के प्रति प्यार तथा सहानुभूति रखने वाले एक महान् नेता ने अपनी जनता को मानव इतिहास मे ऐसे महान् पृष्ठ जोड़ने के लिए प्रेरित किया, जो कभी विस्मृति के गर्त में नही समाएँगे। जिस महीने मे तुम इस दुनिया में आई, उसी महीने मे लेनिन ने महान् क्रान्ति आरम्भ की, जिसने रूस की सूरत बदल दी है...।"[1]

यह चिट्ठी इन्दिरा को तब मिली, जब वह 13 वर्ष की थी। उसके बाद मानव-जाति बहुत आगे बढ़ी दुनिया में बदलाव बल्कि सुधार हुआ विश्व समाजवादी राज्य की हुई एशिया अफ्रीका लैटिन अमरीका के देश

नये जीवन के निर्माण में लगे हुए है, उनमें से अनेक राज्यों ने गैर पूँजीवादी विकास का मार्ग अपनाया। भारत ने भी 'समाजवादी नमूने के समाज' के निर्माण का लक्ष्य अपने सामने रखा।

दुनिया बदल गई, लेकिन वह अधिक निरापद नहीं बन पाई। मानव-जाति को भूमण्डलीय समस्याओ का सामना करना पड रहा है, जो कई गुना ज्यादा जटिल हो गई है। निःसन्देह, इसका कारण प्रगति नहीं है, इसका कारण अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिक्रियावाद की सयुक्त ताकतो द्वारा किया जा रहा जबर्दस्त प्रतिरोध है, जो दुनिया के सामाजिक नवीकरण के विरुद्ध है। नाभिकीय युद्ध का हौवा खडा करके अमरीकी फौजशाहो ने आतकवाद तथा राष्ट्रो को डराने-धमकाने के काम को राजकीय नीति का दर्जा दिया है।

इन्दिरा गाँधी अँधेरे बरामदे में बैठी थीं। केवल निवास-स्थान के फाटक के पास बत्तियाँ जल रही थीं। पहरेदार अभ्यस्त चाल से दीवार के पास चहलकदमी कर रहे थे। कही निकट से चाँदी के कगनों की छन-छन सुनाई दी—रात को फाटक के बाहर मैदान मे देश के विभिन्न स्थानों से आने वाले लोग इकट्ठे होने लगते है और सुबह होते-होते आगन्तुको की भीड़ लग जाती है—वे प्रधानमन्त्री से प्रणाम करने, उन्हे देखने तथा उनकी आवाज सुनने के लिए आते है।

रात्रिकालीन उद्यान के मद स्वर शान्तिदायी हैं। गुलाबों की खुशबू फैली हुई। सोये हुए पेड निश्चल हैं। उनके घने शीर्ष भाग नि.शब्द है। कुछ भी नहीं हिलता-डुलता, केवल कभी-कभार आसमान से तारे टूटकर गिरते है और विचारों तथा स्मृतियो की शृखला मन मे उभरती तथा टूट जाती है। रात की स्निग्ध ऊष्मा रोम-रोम मे पहुँच जाती है, दिल में मीठी-सी कसक पैदा होती है।

ऐसी शान्त रात्रियाँ पिताजी को बहुत पसन्द थी। जेलखाने की ऊँची बदरग दीवारों के पीछे से केवल आकाश नजर आता था और वह घण्टों उसकी रहस्यमय अगाध गहराई को एकटक देखते हुए बैठे रहते थे। इसी प्रकार उनके जीवन के दस लम्बे वर्ष बीते थे। पिता ने...कितने कष्ट उठाए थे उन्होने, कितने बलिदान किए थे, कितनी बार उन्हे निराशा, पराजय झेलनी पडी थी और अन्ततः उन्हें और सभी भारतवासियों को अपार सुख प्राप्त हुआ—उनका देश आजाद हुआ!

मनुष्य की जीवन अवधि अत्यल्प होती है। लेकिन यदि उसे उसके लाखों-करोडो समकालीनों की जीवन-अवधियो से जोड़ दिया जाए, तो वह बहुत बडी हो जाती है। सचमुच, यदि किसी राष्ट्र का नेता अपने जीवन की आकांक्षा को सम्पूर्ण राष्ट्र की इच्छा-आकाक्षा के साथ एकाकार करने में सफल हो जाता है, तब उसकी जीवन-अवधि को सही ढंग से वर्षो मे नहीं, बल्कि उसके देशबन्धुओं की सम्पूर्ण पीढ़ी के जीवन के कुल योग में ही मापा जा सकता है। क्या इन्दिरा महात्मा गाँधी और जवाहरलाल नेहरू की तरह जनता की आकांक्षाओं के साथ अपने जीवन को घुला-मिला देने मे सफल हुईं? क्या उन्होंने भी उन दोनों नेताओं की तरह भारत की आशाओं को

व्यक्त किया ?

दादा मोतीलाल, पिता और माता, पूरे नेहरू परिवार की देशभक्ति इन्दिरा गाँधी ने आत्मसात् कर ली थी। उनके लिए यह अपने आचरण-व्यवहार की सर्वोच्च कसौटी थी। इन्दिरा गाँधी ने एक महान् एशियाई देश का नेतृत्व करने का दायित्व ग्रहण करने के नियति के आदेशो का साहसपूर्वक पालन किया। उन्होंने सत्ता 'वंशगत' अधिकार के रूप मे नहीं पाई थी, जैसा कि उनके शत्रु दावा करते थे, बल्कि उनका चयन नवस्वतन्त्र भारत के इतिहास ने ही किया था। वह देश की राष्ट्रीय स्वतन्त्रता प्राप्त करने मे तथा भारतीय लोकतन्त्र के निर्माण में देशभक्त नेहरू-गाँधी परिवार की असाधारण भूमिका को प्राप्त राष्ट्रव्यापी मान्यता के बल पर राष्ट्र की नेता बनी थीं। वह राज्य सत्ता अथवा प्रसिद्धि, जिसे लेकर वह हमेशा तनिक संकोच से व्यंग्य किया करती थीं, पाने के कारण नहीं, बल्कि अपनी जनता के प्रति, सामाजिक प्रगति और विश्व शान्ति के ध्येय के प्रति निष्ठा के कारण ऐतिहासिक हस्ती बनी थी और उनके जीवन को अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व प्राप्त हुआ था।

इन्दिरा गाँधी ने ऐक्यबद्ध समृद्ध भारत, अपनी जनता के सुखी जीवन का स्वप्न सदा अपने मन मे सँजोया। इस स्वप्न ने नाजुक देह और विनम्र स्वभाव की इस नारी को कठिनतम अग्नि-परीक्षाओं से गुजरने में--सहयोगियों के विश्वासघात, पत्रकारों के कपटपूर्ण आक्षेपों, राजनीतिक विरोधियों द्वारा अत्याचार तथा उकसावो, अपमानजनक आरोपो तथा कलंकपूर्ण अभियानों, व्यक्तिगत असफलताओ का सामना करने और बेटे संजय की दुखद मृत्यु को बर्दाश्त करने में--सहायता दी।

अपने जीवन में इन्दिरा गाँधी को बहुत-सी मुसीबतें झेलनी पडी। लेकिन कोई भी दुर्भाग्य, असहनीय व्यक्तिगत दु:ख तक उनके गहन आत्मबल को क्षीण करने मे समर्थ नहीं हुआ। सभी कठिनाइयो, असफलताओं के बावजूद वह सौभाग्यशाली थी। फीरोज गाँधी के प्रति उनका गहन अनुराग था, वह उनकी जीवनसंगिनी बनीं। उनके पारिवारिक जीवन मे उतार-चढ़ाव जरूर आए, लेकिन अधिकांश भारतीय महिलाओ की तरह वह हमेशा अपने पहले प्रेम के प्रति निष्ठावान बनी रही। अपने पुत्र राजीव और सजय पर उन्हे गर्व करने का पूरा अधिकार था।

कहते है कि स्वभाव की दृष्टि से संजय मोतीलाल नेहरू पर और राजीव जवाहरलाल नेहरू पर गए।

बहुत जल्दी वर्ष बीत गए और अब वह दादी बन गई, हालाँकि अपने बचपन की याद अभी धूमिल नहीं हो पाई थी। ठीक ही कहते है कि केवल पोते-पोतियों, नाती-नातिनों के जन्म के साथ लोगो को जीवन की निरन्तर परम्परा, अमरत्व का आभास मिलता है। अपने प्यारे पोतों-पोती--राहुल, प्रियंका और फीरोज वरुण—के साथ रहने के लिए वह कुछ समय अवश्य निकाल लेती।

आयु परिवर्तन मानव-जीवन को रोचक बना देता है—क्या उमगों से भरपू जवानी को वह सासारिक ज्ञान वह अनुभव मिल सकता है जो विवेकपूर्ण प्रौढ़ावस्थ

में प्राप्त होता है ?

प्रधानमन्त्री ने घडी पर नजर डाली--आधी रात हो चुकी थी। कल सुबह को बहुत सारे काम निबटाने होगे। अच्छी तरह आराम करना जरूरी है। वह शयन-कक्ष मे चली आई। बत्ती जला दी। लैम्प के ऊपर परवाने नाचने लगे। मेज पर रखे गुलदान में ताजे गुलाब सजे हुए थे। इन्दिरा गॉधी के होठों पर मृदु मुस्कान खिल उठी। ये फूल सोनिया ने रख दिए होंगे। बहू लाजवाब है ! राजीव सौभाग्यशाली है। ऐसी पतिव्रता पत्नी के साथ वह सदा सुखी रहेगा।

चारो तरफ नजर दौडाकर उन्होंने घर लौटने पर उतारी गई बुल्लेटप्रूफ जाकेट सोफे पर से उठा ली और अलमारी मे रख दी। कुछ समय मे अगरक्षक दल के प्रधान के आग्रह पर उन्हे साड़ी के नीचे यह जाकेट पहननी पडती थी।

कहॉ गुलाब और कहाँ बुल्लेटप्रूफ जाकेट...उनमे कोई मेल नही। नही, कल वह यह जाकेट नहीं पहनेंगी.. ।

इन्दिरा गॉधी सोफे पर बैठ गई और अखबार उठा लिये। सरसरी तौर पर शीर्षक पढ़ डाले। देश के अन्दर और दुनिया की स्थिति पहले की तरह तनावपूर्ण बनी हुई थी। 'पाकिस्तान को अमरीकी हथियारों की सप्लाई', 'पाकिस्तानी सैनिकों द्वारा भारतीय सीमा चौकियों पर गोलाबारी', 'पंजाब में सिख उग्रवादियो के नये अस्त्रभण्डारों की खोज', इत्यादि।

अखबारों में लन्दन में सिख प्रवासियो के स्वयंभू नेता चौहान के रेडियो भाषण की चर्चा जारी थी, जिसने ब्रिटिश शासनाधिकारियो की बेपरवाही से फायदा उठाकर खुलेआम ऐलान किया कि भारत की प्रधानमन्त्री तथा उनके परिवार के सदस्यों के विरुद्ध आतंकवादी कार्रवाइयो का प्रबन्ध किया जाएगा। और अब अमरीका तथा कनाडा में जडे जमाए पृथकतावादियों के सरगनों ने भी ऐसी ही धमकियॉ दीं।

प्रधानमन्त्री ने अखबार एक तरफ रख दिए—उनमें न कोई नयी सूचना थी और न कोई खुशखबरी। नाटो राज्यो में नियुक्त भारतीय राजदूतों की रिपोर्टो से उन्हे यह सब कुछ मालूम था। इन राज्यों के शासनाधिकारियों को भारत सरकार की घरेलू और विदेश नीति फूटी ऑखो नहीं सुहाती थी। गुटनिरपेक्ष देशों के आन्दोलन मे भारत की स्थिति, राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के लिए संघर्षरत नवोदित राज्यों को उसके द्वारा समर्थन, सोवियत संघ के साथ भारत के मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों से वाशिंगटन और लन्दन नाराज थे। इन्दिरा गॉधी भली-भाँति समझती थीं कि पश्चिमी राज्य विश्व जनमत को यह विश्वास दिलाने की हरचद कोशिश कर रहे थे कि भारत घोर आन्तरिक सकट तथा अराजकता के भॅवर मे फॅस गया है। धार्मिक-साम्प्रदायिक द्वेष भड़काते हुए, पजाब में पृथकतावादी भावनाओं को बढ़ावा देते हुए तथा तनाव पैदा करते हुए वे भारत सरकार की प्रतिष्ठा को गिराने, उसे भयभीत करने का प्रयत्न कर रहे थे।

भारत और विदेशो में भारतीय प्रवासी हलकों में राष्ट्रविरोधी और पश्चिमपरस्त तत्त्वों की सरगर्मियाँ सिर्फ इसलिए इतने बड़े पैमाने पर बढ़ गई थीं कि

राज्यों की सरकारें व्यापक रूप से उनका समर्थन कर रही थीं, जो लोकतान्त्रिक भारत की एकता तथा आण्डता को भंग करने और इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर उसकी शान्तिपूर्ण स्थिति को शिथिल बनाने पर आमादा थे। अब भारत गणराज्य की सरकार के नेताओं के विरुद्ध हिंसा, ब्लैकमेल और हत्या की धमकियो का इस्तेमाल किया जा रहा था।

इन्दिरा गॉधी ने सत्य का सामना किया--दुनिया में हर तरह की गुप्तचर सेवाएँ होती हैं, जो राजनीतिक हत्याओ और राज्य सत्ता-परिवर्तनो में माहिर होती हैं। 'पश्चिमी लोकतन्त्र' के योद्धाओ के 'कारनामो' में मुजीबुर्रहमान, पैट्रिस लुमम्बा, सल्वादोर अलेन्दे और मार्टिन लूथर किंग की हत्या तथा फिदेल कास्त्रो की हत्या के बारम्बार प्रयत्न और ऐसे ही कुछ अन्य उदाहरण उल्लेखनीय है।

कल उड़ीसा मे विशाल जन-सभा को सम्बोधित करते हुए उन्होने कहा था–"अपने देश की सेवा करते हुए मर जाने मे मुझे गर्व होगा। मेरा पक्का विश्वास है कि मेरे खून की प्रत्येक बूँद मेरे देश में काम आएगी, उसे मजबूत और गतिशील बनाने में सहायक होगी।"

कुछ दिन पहले भारतीय गुप्तचर सेवा के प्रधान ने बताया था कि प्राप्त सूचनाओ के अनुसार, गुप्त साजिश रची गई है, प्रधानमन्त्री की हत्या के प्रयत्न की तैयारियॉ की जा रही है और आतंकवादी ग्रुप का पता लगाने तथा नाकाम करने के लिए जरूरी कदम उठाए जा रहे है। फिलहाल उन्होंने आग्रह किया कि प्रधानमन्त्री की व्यक्तिगत निरापदता को सुनिश्चित करने के लिए पग उठाए जाएँ, खास तौर पर अंगरक्षक दल से सभी सिखों को फौरन निकाल दिया जाए।

इन्दिरा गॉधी यह सुनकर निश्चिन्त भाव से मुस्कराई और यह माँग पूरी करने से उन्होंने साफ-साफ इन्कार कर दिया--भारत धर्मनिरपेक्ष राज्य है, जिसमें सभी जातियों और धर्मो को समान अधिकार प्राप्त हैं। क्या प्रधानमन्त्री के लिए सरकारी कर्मचारियो के प्रति साम्प्रदायिक भेदभाव करना उचित होगा? नही, वह अपने सिद्धान्तों को तिलांजलि नही देंगी और अपनी आत्मिक शान्ति की खातिर संविधान की भावना पर ऑच आने नहीं देंगी।

इन्दिरा गाँधी ने एयर कंडिशनर बन्द कर दिया और खिडकी खोल दी। सुगन्धित समीर कमरे मे फैल गई–यह भारत की सुगन्ध थी।

अपने ख्यालों में डूबी हुई वह शय्या पर बैठ गई। उनकी बड़ी शान्त ऑखें किसी अदृश्य बिन्दु पर टिक गई, सुन्दर मुखाकृति भावशून्य हो गई, मानो बेजान संगमरमर की बनी हो। उन्हे कोई अनोखी अबोध्य पूर्वानुभूति हो रही थी, जिसे समझना अथवा शब्दों से व्यक्त करना असम्भव था।

"खैर, मेरे खून की बूँद-बूँद से नयी इन्दिराएँ जन्म लेंगी और वे भारत के लिए वही कर सकेंगी जो मैं खुद नही कर पाऊँगी" यह सोचते हुए उन्होने इस अद्भुत मनोदशा से छुटकारा पाया और इत्मीनान से बिस्तर पर लेट गई

प्रधानमन्त्री के शयन-कक्ष में रोशनी गुल हो गई। भारत के ऊपर ताराजटित नभ की चादर फैली हुई थी और पृथ्वी सूर्य की कक्षा में अपनी चिरन्तन परिक्रमा करती जा रही थी।

विश्वास किया जाता है कि प्रत्येक मनुष्य का अपना नक्षत्र होता है। जैसे लोगो का जन्म और देहान्त होता है, वैसे ही नक्षत्र भी प्रज्वलित होते और बुझ जाते है। बुझे नक्षत्र का प्रकाश अनादि-अनन्त ब्रह्माण्ड में देर तक फैलता जाएगा और मानव-जाति की भावी पीढियॉं यह प्रकाश देखेगी।

वे भारतवासी बहुत समय पहले काल का ग्रास बन चुके थे, जिन्होने अजन्ता तथा एल्लोरा की गुफाओ को सुन्दर मूर्तियो तथा भित्तिचित्रो से सजाया था, लेकिन विश्व संस्कृति के कला-भण्डार मे उनके अमूल्य योगदान से लोग आज भी विस्मित होते है। 'रामायण' और 'महाभारत' के रचयिता इस दुनिया में नहीं हैं, पर ये अमर महाकाव्य आज भी भारतवासियो के मन में श्रद्धा भाव उत्पन्न करते है। गौतम बुद्ध के नाम से प्रसिद्ध राजकुमार सिद्धार्थ का जन्म ढाई हजार वर्ष पहले हुआ था, मगर बीसवीं सदी के एक सबसे सुशिक्षित व्यक्ति, लब्धप्रतिष्ठ भारतीय जवाहरलाल नेहरू उनका आदर करते थे। प्रसिद्ध सम्राट् अशोक का देहान्त बहुत पहले हुआ था, लेकिन वह अपना 'चक्र' छोड गए, जो कि प्रगति और सुख की जनता की चिरन्तन अभिलाषा का प्रतीक है।

भव्य हिन्दू तथा सिख मन्दिरो, मस्जिदों, वास्तुकला के अनमोल मोती ताजमहल के निर्माता काल की गोद में न जाने कब समा गए थे, परन्तु उनके परिश्रम के फल, मानव विवेक तथा सौन्दर्य बोध की उपलब्धियॉं आज के भारत, स्वतन्त्र बहुजातीय राज्य के वर्तमान रूप को उजागर करते है, उसके इतिहास तथा संस्कृति, उसके वर्तमान तथा भविष्य को सूत्रबद्ध करते है।

मानव तथा जीवन के प्रति प्यार की भावना द्वारा प्रज्वलित हृदय-ज्योति युग-युगों तक नहीं बुझेगी।

●●●

उपसंहार

35 वर्ष पहले स्वतन्त्र भारत के प्रधानमन्त्री जवाहरलाल नेहरू और उनकी पुत्री इन्दिरा गॉधी ने सोवियत सघ की और सोवियत नेताओ ने भारत की सरकारी तौर पर यात्राएँ की थी। सन् 1955 में तब दो राष्ट्रो की मैत्री के वृक्ष का पौधा रोपा गया था और सोवियत लोगो तथा भारतवासियों ने स्नेहपूर्वक और ध्यानपूर्वक उसे सीचा और बडा किया। इन्दिरा गॉधी ने भी इस बात के लिए बहुत यत्न किया कि यह भाग्यशाली वृक्ष बढता जाए और मजबूत बने, बरगद के पेड़ की तरह नयी जड़ें जमा ले, फलते-फूलते वन-खण्ड को जन्म दे, जिससे लोगों को सुफल और सुख प्राप्त हों।

जवाहरलाल नेहरू संसार से विदा हो चुके थे। इन्दिरा गाँधी भी अब हमारे बीच नही रही, जो सजग प्रहरी की तरह दो देशो की जनता की अमूल्य निधि—उनकी मैत्री एव उनके सहयोग, स्वतन्त्रता तथा शान्ति के आदर्शो के प्रति उनकी निष्ठा—की रक्षा करती रहीं।

लेकिन वे इसलिए नहीं जिये थे कि इस निधि को अपने साथ ले जाएँ, वे अपने देशवासियो की नयी पीढी के लिए उसे विरासत में छोड़ गए हैं। उन्होने भारत-सोवियत मैत्री को सुरक्षित करने तथा सुदृढ़ बनाने, हमारे देशों के बीच कल्याणकारी सहयोग वढाने, भारतवासियो तथा सोवियत लोगो के बीच व्यावहारिक, सृजनात्मक तथा आत्मिक सम्पर्को को कई गुना बढ़ाने, शान्तिपूर्ण सृजन, सामाजिक न्याय, आत्मिक उन्नति और सामाजिक प्रगति की दो पडोसी देशो के जनगण की अभिलाषा को सूत्रबद्ध करने की इच्छा प्रकट की थी।

मई, 1985 मे मास्को मे दो देशों के नेता मिखाईल गोर्बाचोव और राजीव गॉधी मिले, जो आत्मबल, उत्साह, सद्‌भावना से भरपूर थे और जिनकी यह दृढ़ इच्छा थी कि सोवियत-भारत मैत्री फलती-फूलती जाए, भिन्न सामाजिक व्यवस्थाओं वाले देशो के शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व का उदाहरण बने।

सोवियत संघ और भारत—एक अरब से अधिक लोगो का विशाल जन-समूह। सभी अन्य समाजवादी तथा नवस्वतन्त्र देश, दूसरे शान्तिप्रिय राष्ट्र भी उनकी आशाओं-आकाक्षाओ मे सहभागी है। यदि वे नहीं, तो और कौन मानव-जाति के सामने उठे युद्ध और शान्ति के सवाल को हल करेगा यह फैसला करेगा कि पृथ्वी मानव वश का निवास बनी रहेगी अथवा निर्जन खगोलीय पिड बनकर रह जाएगी ?

का समय। असाधारण निर्णय लेने, असामान्य उपायो की आवश्यकता है। मानव-जाति को नया चिन्तन अपनाना चाहिए। इस सदी के अन्त तक पूर्ण नाभिकीय निरस्त्रीकरण के सोवियत कार्यक्रम का भारत पूरी तरह समर्थन करता है। मगर साधारण विवेक-बुद्धि का प्रतिरोध करने वाली शक्तियो का प्रभाव कम नही है। नाभिकीय अस्त्र-परीक्षण जारी हैं और क्षत-विक्षत पृथ्वी कॉप रही है।

पृथ्वी ब्रह्माण्ड में अपनी धुरी पर घूमती जाती है और मानव-जीवन, जिसे सदा अल्पकालीन, सायोगिक तथा क्षण-भगुर माना गया है, इस अनादि-अनन्त काल का अग है, पीढ़ी-दर-पीढी चला आ रहा है। विवेक-बुद्धि लोगों से मॉग करती है कि वे इस परम्परा को भग न होने दें।

भारत का इतिहास पॉच सहस्त्राब्दी पुराना है। प्राचीन काल से लोग अहिंसा का आदर्श मन मे सॅजोए हुए हैं। हिसा और रक्तपात में यह आदर्श नष्ट होता रहा, लेकिन मनुष्य जाति की नयी पीढियो में, गौतम बुद्ध के उपदेशो तथा अशोक के निर्देशो मे, कवियों की रचनाओं तथा महर्षियो की भविष्यवाणियो मे वह पुनर्जन्म लेता रहा। सुखमय शान्तिपूर्ण काल की याद दिलाने वाली अनन्य कलाकृतियों तथा अनगिनत पुरातन स्मारको मे शान्ति एवं अहिंसा की यह आकाक्षा मूर्तिमान हुई है। हमारे युग में, बीसवीं सदी मे भारत मे ब्रिटिश उपनिवेशवादियों ने महात्मा गॉधी की अहिंसात्मक सेना के स्वयसेवकों को गोलियो से भूना था, बीसियो हजार भारतवासियों ने औपनिवेशिक जेलों में कष्ट उठाए और कालान्तर में भारतीय जनता ने अन्तत स्वतन्त्रता प्राप्त की तथा इन्दिरा गॉधी नव भारत की माँ बन गई। भारत मे ही 27 नवम्बर, 1986 को मिखाईल गोर्बाचोव तथा राजीव गॉधी ने अपने दो महान् राष्ट्रो की ओर से और उनकी इच्छा से दिल्ली घोषणा पर हस्ताक्षर किए, जो नाभिकीय अस्त्रों एव हिसा से मुक्त ससार के निर्माण का ओजस्वी आह्वान है।

मानव सभ्यता के पूरे अस्तित्व-काल में पहली बार एक ऐसा अन्तर्राष्ट्रीय दस्तावेज स्वीकार तथा जारी किया गया, जिसके अनुसार बल-प्रयोग निषेध तथा शान्ति को अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो का नियम बनाना चाहिए और मानव-जीवन को विश्व के सर्वोपरि मूल्य के रूप में मान्यता दी जानी चाहिए। विश्वव्यापी सुरक्षा की व्यवस्था को हिंसा तथा घृणा, भय तथा सन्देह की जगह लेनी चाहिए और पृथ्वी को नाभिकीय अस्त्रो से सदा के लिए मुक्त होना चाहिए।

इस सोवियत-भारत दस्तावेज को दुनिया की सभी भाषाओं, पाठ्य-पुस्तको तथा विश्वकोशों में, मानव-जाति के इतिहास में दिल्ली घोषणा-पत्र के नाम से जाना जाएगा। उस पर इन्दिरा गॉधी के हस्ताक्षर नहीं हैं, लेकिन उसमे उनकी आत्मिक तथा राजनीतिक धरोहर मूर्त रूप से विद्यमान है, जिसे भारतीय जनता ने आत्मसात् किया और राजीव गॉधी ने व्यक्त किया।

इन्दिरा गॉधी की समाधि पर सोवियत नेता फूल-माला चढाते हैं होकर श्रद्धाजलि अर्पित करते हैं

2 जुलाई, 1987–सोवियत संघ में भारत महोत्सव के उद्घाटन का दिन। जीवन के उल्लास और सुखद आशाओ से परिपूर्ण, देश में शुभ परिवर्तनो से प्रेरित मास्को हर्षमग्न है, आदरणीय भारतीय अतिथियो की प्रतीक्षा कर रहा था।

राजधानी निर्मल-स्वच्छ हवा मे झूमते, ग्रीष्मकालीन वर्षा की फुहारों मे नहाते पार्कों और तरुपथों पर हरियाली ओढे वृक्ष खडे थे, अलेक्सान्द्रोव्स्की उद्यान में फूलो की क्यारियॉ क्रान्तिकारी लालिमा बिखेर रही थीं, नगर की सडकों पर भॉति-भॉति के वृक्ष फूलो से लदे हुए थे।

क्रेमलिन के लाल सितारे निरभ्र आकाश में चमक रहे थे, उस्पेन्स्की गिरजे तथा इवान महान् के घण्टाघर के स्वर्णिम गुम्बदो से ऑखे चौंधिया रही थीं, सन्त बाजिल कैथीड्रल अपने अनोखे सौन्दर्य से दर्शको को मन्त्रमुग्ध कर रहा था। लाल मैदान अधीरतापूर्वक अतिथियो का इन्तजार कर रहा था। क्रेमलिन के महलो के द्वार खुले हुए थे। विशाल क्रेमलिन प्रासाद के सन्त जार्ज हॉल मे दो देशो के नेताओं की भेंट हुई।

और अगले दिन मोटरो का कारवॉ मास्को विश्वविद्यालय की ओर बढ चला, लोमोनोसोव तथा मिचूरिन राजमार्गों के चौराहे पर, इन्दिरा गॉधी चौक में पहुॅचा।

उजली सुहानी सुबह थी। हजारों मास्कोवासियों और नगर के अतिथियों ने मिखाईल गोर्बाचोव तथा राजीव गॉधी का तालियो की गडगड़ाहट से हार्दिक स्वागत किया। वे विलक्षण महिला के स्मारक का अनावरण करने के लिए आए थे, जिसे सभी सोवियत लोग जानते-मानते हैं। लाल फीता कटा, धीरे-धीरे चादर गिरी और लोगों के सामने साडी पहने तथा अभिनन्दन के तौर पर हाथ उठाए भारतीय महिला की प्रतिमा दृष्टिगोचर हुई। यह कांस्य मूर्ति अब सोवियत लोगों को इन्दिरा गॉधी की सदा याद दिलाती रहेगी।

अनगिनत मास्कोवासी और दूसरे देशों तथा नगरो से आने वाले लोग इस स्मारक के पास से गुजरते रहेंगे और उनके हृदय में भारत की सुपुत्री का नाम सदा गुजायमान होता रहेगा। बीसवीं शताब्दी की इस विलक्षण महिला का बिम्ब आने वाली पीढ़ियों के स्मृति-पटल पर हमेशा अकित रहेगा। वह उन लोगों की अगली पॉत में साहसपूर्वक आ खडी हुई, जिन्होंने मानव-प्रेम से प्रेरित होकर, भय और अंधविश्वासों को ठोकर मारकर, अपनी पूरी शक्ति लगाने में जरा भी हिचकिचाहट न करते हुए तथा अपनी जिन्दगी की परवाह न करते हुए दुनिया को युद्धों तथा राष्ट्रीय उत्पीडन के अभिशाप से मुक्त करने का दृढ सकल्प किया था, जो सोवियत जनगण से मिलकर महानतम लक्ष्य–शान्ति, समानता, स्वतन्त्रता–के हेतु प्रयत्नशील रहे।

"सोवियत लोगों की नजरो में इन्दिरा गॉधी की छवि भारत की छवि से अभिन्न है," मिखाईल गोर्बाचोव ने कहा। "उनका जीवन और क्रियाकलाप प्राचीन देश के समृद्ध, पुरातन इतिहास का एक उज्ज्वल अध्याय है। लगभग दो दशकों तक इन्दिरा गॉधी ने राज्य के संचालन का कार्यभार सॅभाला था। सच्ची देशभक्त होने के नाते उन्होंने महान् तथा भारत का सपना देखा था और इस सपने को साकार

बनाने मे अमूल्य योगदान किया...।

"शान्ति की अभिलाषा सदा ही हमारी आपसी समझ तथा विदेश नीति के क्षेत्र मे हमारी स्थितियो के सामीप्य की नींव रही है ..।

"तो आइए, आज इन्दिरा गॉधी की पावन-स्मृति मे श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए घोषणा करे—सोवियत-भारत मैत्री, जिसके हेतु उन्होंने इतना अधिक किया था, युग-युगो तक बढती और सुदृढ होती जाएगी।" इन शब्दो के साथ सोवियत नेता ने अपना भाषण समाप्त किया और उनके बाद राजीव गॉधी बोले—"युवावस्था मे उन्होंने भारत की स्वतन्त्रता की खातिर और बाद मे इस स्वतन्त्रता को मजबूत बनाने के लिए सघर्ष किया था। परन्तु उनका दर्शन भारत तक ही सीमित नहीं था। वह सम्पूर्ण पृथ्वी को अपना घर मानती थी। शान्ति के वातावरण मे रहने और अपनी प्रतिभा को पूर्णतः उजागर करने के सभी राष्ट्रो के अधिकार के लिए वह अनथक संघर्ष करती रहीं। उत्पीडितों और अवमानितो के प्रति वह सहानुभूति रखती थी और इसलिए उन्हें जनसाधारण का हार्दिक प्रेम प्राप्त हुआ।"

जी हॉ, शान्ति हेतु सघर्ष में विजय प्राप्त करना सम्भव है, यदि वह इन्दिरा गॉधी की तरह दुनिया के प्रत्येक व्यक्ति के लिए जीवन का ध्येय बन जाए।

एकीकृत तथा परस्पर निर्भर संसार में व्यापक अन्तर्राष्ट्रीय चिन्तन मे आस्था, राष्ट्रीय हितो के अलावा आम मानवीय, विश्वव्यापी हितों को देखने की क्षमता, विवेक-बुद्धि का मानवतावाद से, राजनीतिक लक्ष्यो का सामाजिक नैतिकता से, आत्मिक मानको का अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो से समन्वयन—सारतः यही अपनी जनता, वर्तमान और भावी पीढ़ियो के लिए इन्दिरा गॉधी का बौद्धिक तथा आत्मिक सन्देश है।

सैन्यवादी शक्तियों के विरुद्ध नागरिक अवज्ञा आन्दोलन सारी दुनिया मे फैलता जा रहा है। दुनिया के राष्ट्र संकीर्ण राष्ट्रवाद के बन्धनो, विद्वेष तथा युद्धप्रिय अन्धराष्ट्रवाद की रुग्ण भावना से मुक्त हो रहे हैं। विश्व के प्रतिक्रियावादी हलको तथा सैन्य-राजनीतिक गठबन्धनों के स्वार्थगति हितों की अपेक्षा मानव-जाति के विश्वव्यापी हितो की प्राथमिकता को वे स्पष्टतः समझने लगे हैं। मानव तथा मानव-जाति के भाग्य की तुलना में ये स्वार्थ तुच्छ और नगण्य हैं।

मिखाईल गोर्बाचोव ने कहा—"हम देखते हैं कि विश्व लोक मानस मे परिवर्तन हो चुका है। राजनीतिक यथार्थवाद की आवाज अधिक प्रबल व प्रभावी बन रही है। अधिकाधिक लोग विवेकपूर्ण नीतियों का समर्थन कर रहे हैं। अधिकारों की समानता पर आधारित विचार-विनिमय, शस्त्रीकरण की होड़ को बन्द करने तथा नाभिकीय युद्ध के खतरे को टालने के रास्तों की खोज से विमुख होने वाले व्यक्तियो पर से विश्वास उठ रहा है।"

दुनिया के लोगों को विश्वास है—कल भी प्रभात-वेला आएगी, हमारी पृथ्वी का अनुपम मौलिक सौन्दर्य सुरक्षित रहेगा और सूर्य जीवन कमल के फूल पर ओस की स्वच्छ बूँदें देखकर वे जीवन के आनन्द का उपभोग करेंगे